

क्या आप वेदका रहस्य जानना चाहते हैं ?

→ तो ←

५) भेजकर आजही "गंगा" के ग्राहक बन जाइये

✧ फिर ✧

चार रु० के दो-दो विशेषांक मुफ्त लीजिये !

"गङ्गा" ने जो अपने द्वितीय वर्षका प्रथमांक "वेदांक" नामसे विशेषांक निकाला है, उसमें विद्वत्-प्रसिद्ध वेदज्ञोंके लिखे वेदपर मौलिक और मार्मिक लेख हैं। उसको पढ़नेपर आप वेदकी अथसे इतिहासकी बातें जान जायेंगे। "वेदांक"का मूल्य तो २) रु० है; परन्तु "गङ्गा"का वार्षिक मूल्य ५) रु० भेजकर ग्राहक बननेवालेको वह मुफ्त मिलेगा। द्वितीय वर्षमें ही "गङ्गा"का "पुरातनवांक" भी सम्मिलित है। उसका भी मूल्य २) रु० है। वह भी ग्राहकोंको मुफ्त मिलेगा। उसके सम्पादक हैं काशी-विद्यापीठ ( बनारस )के आचार्य नरेन्द्रदेव एम० ए० और विशालङ्कार कालेज ( लंजा ) के प्रोफेसर त्रिपिटकाचार्य राहुल सांकृत्यायन। "गंगा"के ग्राहकोंको ऋग्वेदका प्रथम अष्टक भी २) को जगह १।।।) में ही मिलेगा।

—"गङ्गा"—कार्यालय, कृष्णगढ़, सुलतानगंज, भागलपुर

**वैदिक-पुस्तकमालाकी नियमावली**

- ( १ ) इस मालामें हिन्दी-अनुवाद-सहित चारो वेद और विशेषतः वैदिक ग्रन्थ ही गूँथे जायेंगे।
- ( २ ) ॥ भेजकर मालाके स्थायी ग्राहक बननेवालोंको किसी भी पुस्तकपर डाकखर्च नहीं लगेगा।
- ( ३ ) स्थायी ग्राहकोंको मालामें प्रकाशित सभी पुस्तकोंको खरीदना होगा।
- ( ४ ) मालामें प्रकाशित पुस्तकें, सूचना देकर, धी० पी० से भेजी जायेंगी।

मैनेजर, वैदिक-पुस्तकमाला, कृष्णगढ़, सुलतानगंज, भागलपुर

© 1954

# ऋग्वेद-संहिता

( हिन्दी-टीका-सहित )

प्रथम अष्टक







श्रेमोपहार

---

---

---







# ऋग्वेद-संहिता

( सरल हिन्दी-टीका-सहित )

प्रथम अष्टक

टीकाकार

प० रामगोविन्द त्रिवेदी वेदान्तशास्त्री

[ “दर्शनपरिचय”, “हिन्दी-विष्णुपुराण”, “राजर्षि प्रह्लाद”, “महासती मदालसा” आदिके लेखक, “सेनापति”, “विश्वदूत” आदिके भूतपूर्व सम्पादक, “गीताप्रचारक-महामण्डल” ( मोरियास ) के जन्मदाता, “दक्षिण अफ्रीकन सनातनधर्म-महामण्डल” ( डरबन, नेटाल ) के आजीवन सभापति, “गंगा” के प्रधान सम्पादक तथा सनातनधर्मके महोपदेशक ]

—और—

प० गौरीनाथ झा व्याकरणतीर्थ

( प्राइयेट सेक्रेटरी, कुमार कृष्णानन्द सिंह बहादुर तथा “गङ्गा” और “वैदिकपुस्तकमाला” के अन्यतम जन्मदाता और सम्पादक )

प्रकाशक

प० गौरीनाथ झा व्याकरणतीर्थ,

संचालक, “वैदिकपुस्तकमाला,” कृष्णगढ़, सुलतानगंज, भागलपुर

मूल्य २)

आश्विन, १९८८ विक्रमीय

प्रथम बार ५०००

# ऋग्वेद-संहिता



वनेली-राज्याधिपति

कुमार कृष्णानन्द सिंह बहादुर

# समर्पणा

जिन्होंने नाहित्यिक दान-योगता द्वारा अपने राज-वंशकी कीर्ति अक्षय की, जिन्होंने एक लाख रुपये दान कर "गंगा" जैसी श्रेष्ठ हिन्दी-पत्रिका और "वैदिकपुस्तक-माला" का जन्म दिया, जो संस्कृत और अंग्रेजीकी शिक्षाके लिये अनेक विद्यालय चला रहे हैं और जो सदाचार, साधुता, धार्मिकता तथा निरहंकारिताकी दिव्य मूर्ति हैं, उन

मैथिलब्राह्मण-कुलभास्कर, आदर्श राजकुमार

—धर्मलोराज्याधिपति—

कुमार कृष्णानन्द सिंह बहादुर

—० के ०—

कमनीय कर-कसलोंमें

—सादर समर्पित—

—रामगोविन्द त्रिवेदी,  
गौरीनाथ भा



## वेदरहस्य

संस्कृतसाहित्यके किसी भी ग्रन्थका अर्थ-निर्णय करनेमें उतना विवाद नहीं है, जितना वेद-संहिताओंका अर्थ-निर्णय करनेमें। नैरुक्त, याज्ञिक, ब्रह्मवादी, स्वर-मुक्तिवादी, ऐतिहासिक, नैदान, परिवाजक, नास्तिक आदि आदि कितने ही ऐसे दल हैं, जो वेदार्थके सम्बन्धमें विभिन्न मत रखते हैं। औपमन्यु, कौत्स, यास्क, स्कन्द स्वामी, रावण, सायण, भट्टभास्कर, वेङ्कट माधव, भरत स्वामी, महीधर, उव्वट, सत्यवत, दयानन्द, ए० सी० दास, तिलक, एस० पी० पण्डित, रमेशचन्द्र दत्त, राजेन्द्रलाल मित्र, लाहिड़ी, राय, त्रिफिथ, मैक्डानल, रेले, दाराशिकोह आदि दर्जनों वेदालोककों और वेद-टीकाकारोंको दर्जनों अर्थ-सम्बन्धिनो सम्मतियाँ हैं! कोई ब्राह्मण-ग्रन्थोंका अर्थ पसन्द करता है, कोई यास्कका, कोई उद्गीथभाष्यकी शैली पसन्द करता है, कोई सायणकी, किसीको रायकी अर्थ-मीमांसा अभीष्ट है, किसीको रेलेकी, कोई दयानन्दकी आलोचनाका अनुधावन करता है, कोई कीथकी। वेदके एक-एक शब्दके अनेकानेक अर्थ किये जाते हैं—और ये अर्थ करनेवाले साधारण जन नहीं, ब्राह्मण-ग्रन्थ, यास्क, सायण आदि जैसे हैं। इन्द्रका अर्थ देव, ईश्वर, ज्ञान और विजली तक किया जाता है और वृत्रका अर्थ असुर, दैत्यराज, अज्ञान और मेघतक! अनेक वैदाभ्यासो तो यह भी कहते हैं कि, “वेदके हजारो शब्दोंका आजतक अर्थ ही नहीं लगा!” ऐसी दशामें हमारे जैसे अल्पबोके लिये वेदार्थका निर्णय करना दुस्साध्य कार्य है।

यद्यपि भारतवर्षके अधिकांश वेदानुयायी सायणके मतका ही अनुधावन करते हैं, तथापि सायण-विरोधियोंकी संख्या भी नगण्य नहीं है। पाश्चात्य विद्वानोंमें तो सायणके कट्टरसे कट्टर द्रोही हैं, और हो गये हैं। विलायती पण्डितोंमें “Los Von Sayan” (सायणका बहिष्कार करो) की आवाज कई बार उठायी गयी है। सम्पूर्ण सायण-भाष्य प्रकाशित करनेवाले स्वयं मैक्समूलरने सायणको “Blind man's stick” (अन्धेको लकड़ी) कहा है। वैदिक कोप लिखनेवाले राय और ग्रासमानका सायण-द्रोह तो सर्वोपरि है ही। यह सब कुछ है, परन्तु कई ऐसे कारण हैं, जिनसे सायणके अर्थका अनुगमन करना घुप नहीं कहा जा सकता। कारणोंको पहिचये—

(१) वेदार्थ निर्णय करनेमें सायणने आर्य-जातिकी प्राचीन धार्मिक और सामाजिक परम्पराका अनुगमन किया है।

(२) सायणने अपने विहित अर्थको, अधिकांश स्थलोंमें, वैदिकसंहिताओं, ब्राह्मण-ग्रन्थों, निरुक्त, प्रातिशाख्य, बृहदेवता, पाणिनीय व्याकरण एवं अन्यान्ध संस्कृत-ग्रन्थों और आर्यजातिके प्राचीन इतिहासों तथा आचार-विचारोंसे समर्थित रखा है।

(३) ऋग्वेदकी प्राचीन टीकाओं—स्कन्द स्वामीके भाष्य, वेङ्कट माधवके भाष्य और उद्गीथ भाष्य—के अनुकूल ही सायणका भाष्य है।

(४) संसारकी भाषाओंमें वेदके सम्बन्धमें जितनी पुस्तकें निकली हैं, उनके अधिकांश प्रणेता सायणानुयायी हैं।

(५) सायणके सिवा सम्पूर्ण ऋग्वेदसंहितापर किसीका भी भाष्य या अर्थ सुलभ नहीं है, न था; इसलिये सायण न रहते, तो कदाचित् ऋग्वेदसंहिताका भाषान्तरानुवाद असाध्य कार्य हो पड़ता। यदि सायण नहीं रहते, तो कदाचित् रोडरार्च्यकी “पीटर्सबर्ग डिक्शनरी” (St. Petersburg Dictionary—by Roth and Boehltingk, 7 vols, price Rs. 1000/-/-) भी अचूरी रहती। ग्रासमानके “ऋग्वेदक कोष” की तो कौन कथा !

(६) भूतकालीन और वर्तमानकालीन—सभी सनातनधर्मावलम्बी विद्वान् सायण-भाष्यको आर्य-जातिकी सभ्यता, संस्कृति, इतिहास और आचार-विचारके अनुकूल मानते हैं।

यहाँ यह लिख देना हम आवश्यक समझते हैं कि, हम भी सनातनधर्मावलम्बी हैं; इसलिये हम भी सायणके अर्थके ही अनुमोदक हैं। यद्यपि हम प्रकरण और युक्तिसे हीन सायण-भाष्यके अंश-विशेषको माननेके पक्षपाती नहीं हैं; परन्तु ऐसे अंश-विशेष नगण्य हैं। पहले अवश्य हो हमारा यह विचार था कि, अपने हिन्दी-अनुवादके साथ सायण-भाष्य, सायणके विरुद्धार्थवादियोंके पक्ष, उनका यथाशक्य निराकरण, स्वर, पद-पाठ, विशद हिन्दी-व्याख्या, शब्दोंकी व्युत्पत्ति आदि भी प्रत्येक मंत्रपर रखें; परन्तु यह कार्य अतीव श्रम-समय-साध्य था; और, ऐसा करनेसे इस पुस्तकका मूल्य इतना अधिक हो जाता कि, साधारण जनके लिये यह पुस्तक दुर्लभ हो रहती। इसलिये ऐसा व्यापार-वैशद्य करनेका हमने साहस नहीं किया और हमने केवल सायण-भाष्यका मथितार्थ लेकर सरल हिन्दीमें मंत्रोंका अनुवाद करना ही उचित समझा। ऐसा ही किया भी। इसी रूपमें ऋग्वेदसंहिताके आठ अष्टकोंमेंसे प्रथम अष्टक निकल रहा है। मंत्रोंपर यत्र तत्र आवश्यक टिप्पणियाँ भी दी गयी हैं। आगे भी ऐसा ही होगा।

इसके सिवा हम “वेद-रहस्य” नामका एक ऐसा ग्रन्थ लिखने की चेष्टामें भी हैं, जिसमें वेद-सम्बन्धिनी प्रत्येक ज्ञातव्य बातकी साङ्गोपाङ्ग आलोचना रहे और जिसमें सायण-मतका विस्तृत समीक्षण भी रहे। यह “वेद-रहस्य” प्रायः १००० पृष्ठोंका होगा। इसके अनेक अंश लिखे भी जा चुके हैं। यह ग्रन्थ जब कभी लिखकर तैयार हो जायगा, तभी प्रकाशित कर दिया जायगा—आदि, मध्य और अन्तकी कोई बात नहीं। “वेद-रहस्य” में जिन विषयोंपर आलोचना रहेगी, उनकी अत्यन्त संक्षिप्त सूची इस प्रकार है—

- |  |  |                                |
|--|--|--------------------------------|
| १ वेद क्या है ?                                  | १० वेदकी नित्यता और हिन्दू-दर्शन       | २० वेद और वेदाङ्ग              |
| २ वेदके, मण्डल, अनुवाक, सूक्त और वर्ग            | ११ वेद-काल-निर्याय                     | ११ वैदिक यज्ञ                  |
| ३ वेद और पद, क्रम, धन, जटा प्रभृति               | १२ वेदार्थके अधिकारी                   | २२ वेद और विज्ञान              |
| ४ वेदोंके देवता, ऋषि, छन्द और विनियोग            | १३ वेदका शाखा-भेद                      | २३ वैदिक धर्म                  |
| ५ वेद और प्रातिशाख्य, अनुक्रमणी तथा बृहदेवता आदि | १४ यूरोपियनोंके वैदिक कोष और व्याकरण   | २४ वैदिक-देवतावाद              |
| ६ वेद और यास्क                                   | १५ वेदपर यूरोपियनोंकी आलोचनाएँ         | २५ वेदमें सोमरस                |
| ७ वेदके प्राचीन टीकाकार                          | १६ सायण-भाष्यपर विविध मत               | २६ वैदिक सभ्यता                |
| ८ वेद और शब्द-विद्या                             | १७ सायण-भाष्यकी श्रेष्ठता              | २७ वेद और हिन्दू-समाज-व्यवस्था |
| ९ क्या वेद नित्य है ?                            | १८ वेदके आधुनिक टीकाकार                | २८ वेदमें जाति-विभाग           |
|  | १९ क्या उपनिषद् और ब्राह्मण भी वेद हैं | २९ वैदिक आचार-विचार            |
|  |  | ३० वेद-धर्म और अन्य धर्म       |

३१ वेद और ईश्वर	३६ संसारके प्रसिद्ध वेदज्ञ	४६ ऐनियोंके वेद
३२ वेद और सृष्टि	४० वेदका यूरोपीय भाषाओंमें अनुवाद	५७ वेदपर अन्यान्य सम्प्रदायोंकी धारणा
३३ वेद और बलि	४१ वैदिक साहित्यका विग्व-साहित्यपर प्रभाव	४८ वेदके अप्राप्य ग्रन्थ
३४ वेदमें इतिहास	४२ विग्वकी भाषाओंमें वैदिक साहित्य	४९ वेदपर धार्मिक भारतीयोंका मत
३५ वेद और अक्वस्ता	४३ वेद और समुद्रयात्रा	५० वेदपर धार्मिक यूरोपियनोंका मत
३६ वेद और भूगोल	४४ वेद और स्वर्ग-नरक	५१ चार उपवेद
३७ वेद और गणित	४५ वेद और धार्यसमाज	५२. तामिल वेद आदि, आदि
३८ वेदमें प्राचीन धार्य-निवास		

आवश्यकतानुसार यह सूची घट-बढ़ और कट-छूट भी सकती है। हमारे द्वारा सम्पादित "गंगा" नामकी मासिक पत्रिकाके "वेदांक"में भी इस विषय-सूचीके अनेक विषय आ गये हैं।

अन्तमें हम बड़ी नम्रताके साथ इस ग्रन्थमें विद्यमान त्रुटियोंके लिये विद्वानोंसे क्षमा-याचना चाहते हैं। हम यह लिखना भी भलना नहीं चाहते कि, साहित्याचार्य प० महेन्द्र शिश् "मग"ने इस ग्रन्थका प्रूफ देखनेमें बहुत परिश्रम किया है। द्वितीय अष्टक भी छप रहा है।

कृष्णगढ़,  
महालया, १९८८ विक्रमीय

{ रामगोविन्द त्रिवेदी,  
गौरीनाथ भा





ऋग्वेद-सम्यन्धी उल्लेखनीय ग्रन्थ

जिन सज्जनोंको ऋग्वेदसंहिताके सम्यन्धमें अन्य अनुवाद, समालोचनाएँ आदि देखनेकी इच्छा हो, वे निम्न लिखित ग्रन्थ देख सकते हैं—

लेखकोंके नाम—	विवरण—	मूल्य—
१ सायणचार्य—संस्कृत-भाष्य । प्रो० मैक्समूलर और श्रीयुत पशुपति आनन्द गजपति द्वारा सम्पादित और प्रकाशित । सम्पूर्ण । ( १८४६-७५ ) द्वितीय संस्करण । चार भाग । ( १८६०-६२ )		३००
२ राजाराम शिवराम शास्त्री—सायण-भाष्य । सम्पूर्ण । ( शकाब्द १८१०-१२ )		१५०
३ दुर्गादास लाहिड़ी—सायण-भाष्य । सम्पूर्ण । एक अष्टक्रका स्वतंत्र बँगला अनुवाद । १६ भाग । पद-पाठ-सहित । ( १६२५ )		२५२
४ एफ० रोजन—यूरोपमें सर्व-प्रथम ऋग्वेदके प्रथम अष्टक्रका लैटिन भाषामें अनुवाद । ( १८२८ )		३६
५ अल्फ्रेड लुडविक—जर्मन अनुवाद । ६ भाग । सम्पूर्ण । ( १८७६-८८ )		२००
६ एच० ग्रासमान—जर्मन-भाषामें पद्य-रुद्ध अनूदित । दो भाग । रोमन-लिपि । सम्पूर्ण । ( १८७६-७७ )		३०
७ हारमन ओल्डेनबर्ग—जर्मन अनुवाद । दो भाग । सम्पूर्ण । ( १६०६-१२ )		३५
८ थ्युडर आउफोस्ट—सम्पादित । दो भाग । रोमन-लिपि । सम्पूर्ण । ( १८७७ )		३५
९ एस० ए० लॉंगलोआ—फ्रेंच अनुवाद । चार भाग । ( १८४८ )		२०
१० एच० एच० विल्सन—अंग्रेजी अनुवाद । छ भाग । सम्पूर्ण । ( १८५०-८८ )		१२५
११ टी० एच० ग्रिफिथ—अंग्रेजी-पद्यानुवाद । दो भाग । सम्पूर्ण । ( १८८६-६२ )		१४
१२ विधानिधि प० सिद्धेश्वर शास्त्री चित्राव—केवल मराठी अनुवाद । सम्पूर्ण ।		१०
१३ कोल्हटकर और पटवर्धन—मराठी अनुवाद ।		१०
१४ रमेशचन्द्र दत्त—बँगला अनुवाद । दो भाग । सम्पूर्ण । ( १८८५-८७ )		२०
१५ महामहोपाध्याय प० आर्यमुनिजी—ऋग्वेद-भाष्य । सप्तम-भाग-रहित ।		३७
१६ एस० पी० पण्डित—तीन मण्डल तक । मराठी और अंग्रेजी ।		७५
१७ राथ और बोहर्टलियाक—“पीटर्सवर्ग संस्कृत-जर्मन-महाकोष ।” सात भाग ।		
	पृष्ठ १०००० ( १८५५-७५ )	१०००
१८ एच० ग्रासमान—ऋग्वेदिक कोष । जर्मन भाषा । ( १८७३-७५ )		५०
१९ हंसराज—वैदिक कोष ।		१२
२० मैक्रडानल—वैदिक ग्रामर । अंग्रेजी । ( १६१० )		६
२१ शौनक—ऋग्वेद-प्रातिशाख्य । उज्वट-भाष्यके साथ ।		६
२२ आर्नाल्ड—वैदिक मोटर ( १६०५ )		५
२३ ए० वेबर—इण्डिस स्टडियन ( पत्रिका )		६
२४ शौनक—सर्वानुक्रमणी । संस्कृत । मैक्रडानल द्वारा प्रकाशित । वेदार्थ-दीपिका-सहित ।		१६
२५ शौनक—बृहद्देवता । मैक्रडानल द्वारा सटिप्पन प्रकाशित ।		२५
२६ शौनक—ऋग्विधान । रुडाल्फ मेयर द्वारा जर्मन भूमिकाके साथ प्रकाशित ।		४
२७ सी० वी० वैथ—हिस्ट्री आफ् संस्कृत लिटरेचर ( वैदिक पीरियड ) । अंगरेजी । ( १६३० )		१०

२०	पी० पी० एम० चाव्री—वैदिक-साहित्य-चरित्रम् । संस्कृत ।	३१
२१	इन्डोलिण्ड—वैदिक कंकाटेल्ल । ११९ ग्रन्थोंके आधारपर यह "मंत्र-महासूची" बनायी गयी है । (१९०६)	६०
३०	मैकडानल और कौथ—वैदिक-द्वयचं कस ।	१०
३१	सायण—संस्कृत-भाष्य । ऐतरेय ब्राह्मण । ( कलकत्ता )	१८
३२	सायण—संस्कृत-भाष्य । ऐतरेय ब्राह्मण । दो भाग ( पूना )	१०
३३	सत्याग्रत सामधरमी—ऐतरेय ब्राह्मण । सायण-भाष्य-सहित ।	२०
३४	प्युटर आठफोलेस्य—ऐतरेय ब्राह्मण । सम्पादित । रोमन लिपि । ( १८०६ )	१०
३५	मार्तिन हाग—ऐतरेय ब्राह्मण । अंग्रेजी अनुवाद । दो भाग । सम्पूर्ण । ( १८६३ )	६
३६	सत्याग्रत सामधरमी—ऐतरेयब्राह्मण । ( १८६३ )	५
३७	प० बो० कौथ—शुक्लेद-ब्राह्मण ( ऐतरेय-कौपीतकीय ) । अंग्रेजी अनुवाद ।	२२
३८	सायण—संस्कृत-भाष्य । ऐतरेय आरमयक ।	५
३९	गो० गिल्ल—आर्कटिक होम टून दि वेदाज । अंग्रेजी ।	८
४०	गो० गिल्ल—ओरायत । अंग्रेजी और हिन्दी ।	३, १
४१	श्विमायचन्द्र दाम—शुक्लेदिक द्विविधया । अंग्रेजी ।	१२
४२	हा० रमे—द्वि वैदिक गार्हपत्य । अंग्रेजी । ( १९३६ )	६॥
४३	प० बर्नान —विमर्चन एपाट्टर शुक्लेद । जर्मन भाषा । दो भाग ।	१२
४४	प्युटर रनेो - पाठ्यप्रयोआयाफिया वैदिक । नौ भाग । फ्रेञ्च भाषा । ( १९३१ )	१२
४५	पी० एम० चाव्री—शुक्लेदपर व्याख्यान । अंग्रेजी ।	३
४६	न्यामां दयानन्द—शुक्लेदविभाष्य-शुद्धिका ।	१६
४७	शिवराम आशुतामि—शुक्लेद-सार-संग्रह ।	३
४८	पी० जी० बीजापुरकर—शुक्लेद-संग्रह ।	२
४९	नरदेव चाव्री—शुक्लेदालोचन ।	१॥
५०	प० भागवत—शुक्लेदपर व्याख्यान ।	११
५१	मंगेशचन्द्रराम तदर्थनिधि—शुक्लेदको समालोचना । बंगला भाषा ।	५

इन ग्रन्थोंके मूल्यका ठिकाना नहीं रहता । कई ग्रन्थ तो अप्राप्तमें हो रहे हैं, परन्तु जो मिलते हैं, उनका मनमाना मूल्य प्रकाशक चमूट करे हैं ।

शुक्लेदपर क० एम० गेल्लर, प्रत्युंठ हिमेमान्द्र, अटार्लफ केगी, प्रिस ओल्ड, पी० पिटर्सन, एमिल सेग, स्ट मेयर, ई० वे० टामस, जेट० ए० वेर्गांगिन, आर० पी० छोटो, ए० बी० फीथ, टयल्यू० फेलेण्ड, एम० विण्टनिड्रज आदि आदिके भी आंशिक तथा खण्डित अनुवाद और समालोचना-ग्रन्थ हैं; परन्तु विस्तारके भयसे इनके ग्रन्थोंकी सूची यहाँ नहीं दी गयी ।

उपर्युक्त पुस्तकें निम्न लिखित स्थानोंपर मिल सकती हैं :—

1. Otto Harrassowitz, Leipzig, Germany.
2. B. H. Blackwell Ltd. 50/51, Broad Street, Oxford, England.
3. The Oriental Book Agency. 15, Shukrawar, Poona.
4. The Sanskrit Book Depot, Said Mitha Bazar, Lahore.

## ऋग्वेदके अष्टक, मण्डल आदि

अध्यायोंकी संख्या	अनुवाकोंकी संख्या	श्लोकोंकी संख्या	अष्टकोंकी संख्या	वर्गोंकी संख्या
१	२४	१६१	१	२६५
२	४	४३	२	२२१
३	५	६२	३	२२५
४	५	५८	४	२५०
५	६	८७	५	२३८
६	६	७५	६	३३१
७	६	१०४	७	२४८
८	१०	६२	८	२४६
९	७	११४		२०२४७
१०	१२	१६३		
	<u>८६</u>	<u>१०१७</u>		

७ बारखिल्य भी इसमें सम्मिलित हैं और इसी कारण १६ का अन्तर है। आठ अध्यायोंका एक अष्टक होता है। ऋग्वेदमें सब ६४ अध्याय हैं।



**ऋग्वेद-संहिताकी मंत्र-संख्या**

मंत्रोंकी संख्याके सम्बन्धमें पद्येष्ट मत-भेद है। शौनकाकी "अनुकमणो"के मतसे ऋग्वेदमें १०५८०३ मंत्र, १५३८२६ शब्द और ४३२००० अक्षर हैं अर्थात् औसतन प्रत्येक सूक्तमें दस मंत्र और प्रत्येक मंत्रमें १५ अक्षर हैं। जो हो, परन्तु अपने पासकी पुस्तकोंके मंत्रोंकी गणना करने पर हमें अक्षरोंके अनुसार जो मंत्रोंकी संख्या विदित हुई है, उसे भी पढ़ लीजिये—

अ १४३८, आ ६०६, इ ५४३, ई ३३,  
उ ४०२, ऊ ३४, ए ६३, ए ३०८, ऐ १०,  
ओ २६, औ २, अं २६, क २०६,  
ख १४, ख १, ग ६०, घ २०, च ५३,  
ङ २, ज ८०, ङ ११३७, ट २६६, थ ४७,  
न ३८८, प ८२२, य ६६, म ८२, म ३५१,  
व १११३, र ७८, र ५७१, ष २२६, ष ४,  
स ६००२, ह १०३

स्वर ३५८६, कर्म ४०७, चरु १४२,  
सर्व १८३३, पर्या १३७७, अन्तःस्थ  
१७६३, उपा १३५६।

सब मंत्रोंकी पूर्ण संख्या १०४६७

ऋग्वेदके विभिन्न छन्दों और उनके मंत्रोंकी संख्या इस प्रकार है,

छन्दोंके नाम	मंत्रोंकी संख्या
१ गायत्री	२४६७
२ वर्ष्मिण्	३४१
३ अनुष्टुप	८५५
४ सुमती	१८६
५ यमि	३१२
६ त्रिष्टुप	४२५३
७ जगती	१३४८
८ अतिजगती	१७
९ षाक्यरी	१६
१० अतिशाक्यरी	६
११ अष्टि	६
१२ अत्यष्टि	८४
१३ छति	२
१४ अतिछति	१
पूर्ण संख्या ६८८५	
१ फेचल एक ही चरणवाले मंत्र	६
२ फेचल दो चरणवाले मंत्र	१७
३ प्रगाथा वार्हत	१६४
४ फकुभ्र	६५
५ महावार्हत	२५७

सारे मंत्रोंकी संख्या १०४६४

ऋग्वेदके प्रथम मण्डलके ऋषि और उनके सूक्त तथा ऋचाएँ—

ऋषियोंके नाम	सूक्तोंकी संख्या	ऋकोंकी संख्या
१ मधुच्छन्द और उनके पुत्र	११	११३
२ मेधातिथि कण्व	१२	१४३
३ शुनःशोष अजीगर्ति	७	६७
४ हिरण्यस्तम आंगिरस	५	७१
५ घोर कण्व	८	६६
६ प्रत्काव कण्व	७	८२
७ सत्र्य आंगिरस	७	७२
८ नोधा गौतम	७	७४
९ पराशर शक्य	१०	६१
१० गौतम रहुग	२०	२०४
११ कुत्स आंगिरस	५	४२
१२ कश्यप मारीच	१	१
१३ ऋजाश्व आश्वरीष	१	१६
१४ कुत्स आंगिरस	४	३६
१५ आश्वत्य त्रित कुत्स	१	१६
१६ कुत्स आंगिरस	१०	१०७
१७ दीवतमस	१२	१६०
१८ परच्छेप दीवोदासी	१३	१००
१९ दीवतमस औत्तथ्य	२४	२३६
२० अगस्त्य	१३	१०३
२१ लोपासुदा	१	६
२२ अगस्त्य	११	६६
२३ विषयान्ति अगस्त्य	१	१६



## सायणाचार्यके मतानुसार प्रथम अष्टकमें पौराणिक कथाओंका संकलन

(प्रत्येक कथाके आगे सूक्त और मंत्रकी संख्याएँ हैं)	२९ इन्द्र द्वारा नमुचिका वध	५३०	
१ पणिने गाथें सुरार्याँ, इन्द्रने उन्हें हूँड़ा	६१५	३० अतिथिवर राजाके शत्रु करंज और पर्णय अशुरोंका वध तथा ऋजिरवान् राजा द्वारा वेष्टित वृंगद अशुरके नगरोंका इन्द्र द्वारा विनाश	५३८
२ बल देत्यका गो-हरणः	११५	३१ सुश्रवाके साथ वीस नरपतियोंके युद्धमें इन्द्रद्वारा साहाय्य	५३६
३ कक्षीवानकी कथा	१८१	३२ नर्य, तुर्वश और यदुकी रक्षा करके पृथग् ऋषिके लिये इन्द्रने शम्बरके निन्यानत्र नगरोंका विनाश किया	५४६
४ हरि घोड़ेकी उत्पत्ति	२०२	३३ तुर्वीतका जलमग्न होना	६१११
५ ऋभुओंने माँ-बापका जवानो दो	२०४	३४ पर्वतका इन्द्रसे डरना	६११४
६ ऋभुओं द्वारा देवशिल्पीका चमस तोड़ा जाना	२०६	३५ सरमा कुतियाकी सहायतासे गौओंका उद्धार	६१२
७ ऋभुगणकी देवत्वप्राप्ति	२०८	३६ इन्द्रने तृण कुत्सकी सहायता की और शुष्णको मारा	६३३
८ देव-नमणियोंका यज्ञमें आना	२१६,१०	३७ अग्नि कुमारियोंके जार हैं	६६४
९ वामनावतारकी कथा	२२१७,६०६	३८ अशिका राक्षसोंको मारना	७१५
१० किसानोंका खेत जोतना	२३१५	३९ अग्निका देवोंको सम्पत्ति सुराना	७२४
११ पूषा-द्वारा सोमका पाया जाना	२३१४	४० अग्निका देवोंका दूत होना	७ १६ से ७
१२ औषधियोंको खबर रखनेवाले चन्द्र	२३२०	४१ अथवाँ, मनु और दध्यङ्का यज्ञ सफल करना	८०१६
१३ शुनःशेपकी कथा	२४१ से १५	४२ दधीचिकी कथा	८४१३
१४ वरुण द्वारा सूर्य-पथका विस्तार	२४८	४३ गौतमकी पिपासा-शान्ति	८५१०
१५ सोमरसोत्पादन	२८ सूक्त पूरा	४४ उषाके कर्म	९३ सूक्त पूरा
१६ मनुकी स्वर्गकी कथा छानावा और पुस्तवा द्वारा अग्निका अनुगृहीत होना	३१४	४५ अग्नि और सोमका वायु तथा वाज चिड़िया द्वारा लाया जाना	९३६
१७ पुत्रवाके पौत्र नहुषका वृत्तान्त	३१११	४६ अग्नि-अपनी भाताके जन्मदाता हैं	९५४
१८ विश्वकर्मा द्वारा इन्द्रका वज्र-निर्माण	३२२	४७ इन्द्रका बायें हाथ द्वारा शत्रु-निवारण और दाहिने हाथ द्वारा हव्य-ग्रहण	१००६
१९ इन्द्र-वृत्र-युद्ध	३२३ से १५	४८ कृष्णाशुरकी गर्भवती स्त्रीको इन्द्रका मारना	१०११
२० विजेता इन्द्रका सेनाओंमें पुरस्कार-वितरण	३३३	४९ शुष्ण, शम्बर और व्यंसका वध	१०१२
२१ वृत्र-वध	३३४ से १५	५० इन्द्र द्वारा दस्युओंका वध	१०१५
२२ सूर्योपाख्यान	३५१ से ११		
२३ अग्नि द्वारा प्रल्हादका जीवित होना	४४६		
२४ अग्निका पित्रवन्-पुत्र सदासका सेनापति होना	४७६		
२५ स्वर्गपुत्री उषा	४८१,४६१ से ४		
२६ राजा शार्यातकी कथा	५११२		
२७ बृहदे कक्षीवानने युवती पायी	५११३		
२८ त्रितका कुटुम्बमें गिरना	५२५		

५१ रौहिण अक्षरका वध	१०३२	७३ उपाकी अदितिते स्पर्धा	११३।१६
५२ कुम्भ अक्षर और उसकी दोनों खियां	१०४।३	७४ स्वयंवरमें विमदको खी-लाभ	१६।१
५३ वृक द्वारा पराभूत कुम्भमें पतित अत्रिकी कथा	१०५।१७	७५ यंत्रगृहमें फँसे हुए अत्रि	११६।८
५४ कुम्भमें गिरे हुए कुत्स	१०६।६	७६ मरुभूमिमें गौतमका पानी पाना	११६।९
५५ ऋषुओंने मरी गौको लिलाया	११०।८	७७ घुड़-दौड़की राजी जीतकर अश्विद्वयका	
५६ समर-विजयी बाज	१११।५	सूर्यको पाना	११६।१७
५७ हाथ-पैर बांधकर कुम्भमें फँके हुए रेभ ऋषि	११२।५	७८ जाहुपकी रक्षा	१११२०
५८ आलोषेच्छु कण्व	११२।५	७९ पृथुश्रवाका उपाख्यान	१११।२१
५९ अन्तक राजर्षिकका उद्धार	११२।६	८० धरको पानी पिलाना, प्रसव-शून्या गौको	
६० शुचन्तिको धनदान और पुत्रकुत्सकी रक्षा	११२।७	दुग्धवती करना	११६।२२
६१ समुद्रमें डूबते हुए गुणपुत्र शुन्युकी रक्षा	११२।६	८१ कोढ़ी श्यावको अच्छा करना,	
६२ वृकद्वारा पराभूत वर्तिका चिद्वियाकी रक्षा	११२।८	फिर उनकी शादी कराना	१७८
६३ दूटी जांघवाली विष्णुलाकी कथा	११२।१०	८२ कोढ़िन और बूढ़ी घोषाका व्याह	११७७
६४ दीर्घश्रवाको जलदान	११२।११	८३ बहरे मृग-पुत्रको अच्छा करना	११७८
६५ मान्याताका उपाख्यान	११२।१३	८४ दृकके सुँहसे वर्तिकाको बचाना, जाहुपको	
६६ वज्र, कलि तथा धनकी रक्षा	१२।१५	पहाड़पर ले भागना, विज्वाड़ बहुरके पुत्रको	
६७ शयु, अत्रि और मनुको मार्ग दिखाना तथा		तीखे तीरोंसे मारना	११७।१६
स्वूम रश्मिपरतीखे तीरोंकी घर्षा	११२।१६	८५ वृकोके लिये ऋजायव द्वारा सौ भेड़ोंका वध	११७।१७
६८ पट्यां ऋषिकी देहमें आगकी चमक	११२।१७	८६ नपुंसककी स्त्री वधिमतीका पुत्र पाना	११७।२४
६९ विमदको भायांदान	११२।१९	८७ बूढ़े बन्धनको जवान करना	११६।२७
७० शुन्यु और अश्रिणुको सान्त्वनादान	११२।२०	८८ गर्भमें ही वामदेवकी स्तुति करना	११९।७
७१ पुत्रकुत्सके काहिल घोड़ेको तेज करना और		८९ घोषापुत्र सहस्तिकी स्तुति	१२०।५
मधुमक्खीको मधुदान	११२।२१	९० अन्धे ऋजाश्वने आंखें पार्यो	१२०।६
७२ अर्जुनपुत्र कुत्सका बचाया जाना	११२।२३	९१ घोड़ीसे गायका जन्म	१२१।२



किस मंत्रको टिप्पनीमें क्या है ?

विषय	सूक्त	मंत्रकी टिप्पनी	विषय	सूक्त	मंत्रकी टिप्पनी
१ अग्निको कौन क्या मानता है ?	१	१ और ६	२७ त्यागिनी महाशयके मतसे		
२ ईरानी, ग्रीक और रोमनके वायु	२	१	गुनःशेषका बन्धन	२५	२१
३ सोमरसका परिचय	२	१	२८ सोमरस बनानेकी विधि	२८	३
४ ऋग्वेदमें इन्द्रकी प्रधानता	२	४	२९ उषाकी भक्त जातियाँ	३०	२२
५ विदेशियोंके मतसे मित्र और वरुण	२	७	३० 'जीवयाजम्' का अर्थ टिप्पनी नहीं	३१	१५
६ अश्विनीकुमारद्वयका विवरण	३	१	३१ देवका अर्थ भी अछर है	३२	१२
७ सरस्वतीका नदीत्व	३	१२	३२ अर्थ शब्दके अर्थ	३३	३
८ इन्द्र-शत्रुकी बात	४	५	३३ अनार्योंका विरोधा कुत्स	३३	१५
९ इन्द्र और वृत्र-बध	४	८	३४ मीतिस देवता	३४	११
१० ऋग्वेदको नित्यता और सामवेद	५	८	३५ यम या 'यमशिदु' का अर्थ	३५	६
११ पणि और गो-धरणकी कथा	६	५	३६ सात प्रकारके ऋत्विज	३६	७
१२ चार वर्णों और निपाद	२७ ८६	६	३७ छूतकी यात	४१	६
		१०	३८ पाश्चात्य तथा पौरस्त्य पूजा	४२	१
१३ आसीसूक्त	१२	१२	३९ सूर्यवंशी और चन्द्रवंशी उद्गात	४७	६
१४ आदित्यके भेदोपभेद	१४	३	४० अर्जुनि शब्दका विवरण	४६	३
१५ दासीके गर्भले कक्षीवान्	१८	१	४१ सूर्योपासनाके मंत्र	५०	१३
१६ ऋभुओंको मनुष्यत्वसे देवत्व-प्राप्ति	२०	१	४२ यिमदकी स्त्रीकी फँसे रक्षा हुई ?	५२	३
१७ विभवकर्माकी कृति और परिवार	२०	६	४३ इन्द्रका मेना स्त्री बनना	५१	१२
१८ पाक्यज्ञ और सोमयज्ञ	२०	७	४४ च्यवनका उपाख्यान	५१	१३
१९ राक्षस कौन थे ?	२१	५	४५ इन्द्र-वृत्र-सुद	५२	२
२० विदेशियोंके सूर्यदेव	२२	५	४६ त्रितकी कथा	५२	५
२१ प्राचीन आर्य-निवास और			४७ नमी ऋषि	५३	७
"सप्तधामभिः"की खींचातापी	२२	२१	४८ आयु आदि राजा	५३	१०
२२ सप्तर्षि कौन हैं ?	२४	१०	४९ अछर शब्दके विषय अर्थ	५४	३
२३ शुनःशेष और नर-बलि	२४	१	५० सोने और लोहेके कवच	५६	३
२४ अछरका अर्थ देवता भी है	२४	१४	५१ वृत्र और शम्बरका विनाश	५६	६
२५ आर्य ज्योतिःशास्त्र (मलमास आदि)			५२ क्या मातरिखाका अर्थ वायु नहीं ?	६०	६
और नाविक विद्याके ज्ञाता थे	२५	८	५३ गोवधका प्रसंग	६१	१२
२६ सर्वश्रेष्ठ वरुण	२५	१०	५४ ऋग्वेदकी सात नदियाँ	७१	७

विषय	सूक्त संक्रकी	टिप्पनी	विषय	सूक्त संक्रकी	टिप्पनी
४५ अग्नि का उपाख्यान	७२	४	६२ मनुष्य की आयु	७६	८
५६ इकीस प्रकारके यज्ञ	७२	६	६३ होता, पोता और अश्वयुं	६४	६
५७ कुल-सम्बन्ध-पुरोहित गौतम	८०	३	६४ त्रितका कुर्प में गिरना	१०५	११
५८ अग्ने-पक्षि-रूपिणी गायत्री की कथा	८१	२	६५ अक्षरका एक अर्थ श्रुत्विक्	१०८	६
६५ इषीचिकी कथा	८४	१३	६६ कुत्स और श्रुत्सुका भाईचारा	११०	२
६० आर्षाका ज्योतिर्ज्ञान	८४	१५	६७ अक्षरका अर्थ त्वष्टा	११०	३
६१ व्यासे गौतमको मस्तुनि पानी पिलाया	८५	१०	६८ गौकी क्षुष्टि	११०	८
			६९ देवोंकी सुबहोड़	११६	१०





# वेद क्यों पढ़ना चाहिये ?

इसलिये कि—

- (१) वेद हिन्दूधर्मकी मूल पुस्तक है।
- (२) वेद मनुष्यजातिकी सबसे प्राचीन पुस्तक है।
- (३) सदाचार, वीरता, परोपकार, देश-सेवा, सत्य, त्याग आदि मनुष्यजातिकी जितनी उच्चतम गुणावली है, सबका वेदमें बड़ा ही सुन्दर विवरण है।

(४) वेद हमारी जातिका प्राचीन इतिहास, कला, विज्ञान, धर्म-प्रेम, समाज-व्यवस्था, राष्ट्र-धर्म, यज्ञ-रहस्य आदि आदिको दर्पणकी तरह दिखाता है।

इसलिये जिस प्रकार हर एक ईसाई बाइबिलको और हर एक मुसलमान कुरानको, गाढ और खुदाकी विमल वाणी जानकर, अपने पास रखता है, उसी प्रकार ईश्वरका पवित्र उपदेश समझ कर वेदको अपने पास रखना हर एक हिन्दूका आवश्यक कर्त्तव्य है।

लज्जाकी बात है कि, जर्मनी, फ्रान्स, अमेरिका, इङ्ग्लैण्ड आदिके विद्वानोंने तो वेदकी सारी पुस्तकोंको छपा डाला और हिन्दीमें एक भी ऋग्वेदका सरल अनुवाद नहीं। इसी अभावकी पूर्तिके लिये हमने "वैदिक-पुस्तकमाला" द्वारा सरल सरल हिन्दीमें चारो वेदोंका अनुवाद कराना निश्चित किया है, जिसका प्रथम पुष्प आपके सामने है। इसका मूल्य केवल लागत भर २) रु० रखा गया है; क्योंकि इसके प्रधान संरक्षक भारतप्रसिद्ध वनैलीराज्यके अधीश्वर हैं।

॥) देकर "वैदिक-पुस्तकमाला" के स्थायी ग्राहक बननेवालोंको आगे कभी भी डाकखर्च नहीं देना होगा और पुस्तक निकलते ही, सूचना देकर, वी० पी० से भेज दी जायगी।

मैनेजर, वैदिक-पुस्तकमाला, कृष्णागढ़, सुलतानगंज, भागलपुर





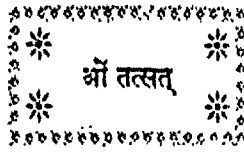
नारायण

अग्निदेव

“यज्ञके पुरोहित, दीप्तिमान्, देवोंको बुलानेवाले ऋत्विक्  
और रत्नधारो अग्निर्को मैं स्तुति करता हूँ।”

(ऋग्वेद-संहिताका प्रथम मंत्र)





सानुवाद

# ऋग्वेद-संहिता

१ अष्टक । १ मांडल । १ अध्याय । १ अनुवाक ।

१ मूलः । यहांसे लेकर १० सूक्तों तकके विश्वामित्रके पुत्र मधुच्छन्दा ऋषि हैं । यहांसे गायत्री छन्दके मंत्र प्रारम्भ हैं । इस सूक्तके देवता अग्नि हैं ।

ओं अग्निमीले पुरोहितं यमस्य देवमृद्धिवजं । होतारं रत्नधातमम् ॥ १ ॥  
अग्निः पूर्वोभिर्ऋषिभिरीड्यो नृत्तनीरुत । स देवां षड् चक्षति ॥ २ ॥

१. वज्रके पुरोहित, दीप्तिमान्, देवोंको बुझानेवाले ऋषियक् और रत्नधारी अग्निमीं स्तुति करता हूँ । २.

२. प्राचीन ऋषियोंने जिनकी स्तुति की थी, आधुनिक ऋषि लोग जिनकी स्तुति करते हैं, वह अग्नि देवोंको, इस ऋषि, मुझसे ।

• संसारके अधिकांश विद्वान् हिन्दू, ग्रीक, रोमन, परिशियन आदि जातियोंको आर्यजातिकी शाखाएं मानते हैं और इन सबमें सदासे अग्निकी पूजा प्रचलित है । ग्रीकोंकी रायसे जो देवता, मनुष्यकी भलाईके लिये, स्वर्गसे, पहले पहल, अग्नि द्वारा लाया, उसका नाम प्रोमैथियस (Prometheus) या प्रमन्य (मंस्युत) है । उस देवताके ग्रीक (यूनानी) अनन्य उपासक हैं । रोमनोंमें वल्कन (Vulcan) या उल्कानके नामसे अग्निकी पूजा प्रचलित है । एादिनभाषाभाषी अग्निको इग्निस् (Ignis) और स्लाव लोग ओग्नि (Ogni) कहते हैं । ईरानी या परिशियन लोग "अतर" नामसे अग्निकी उपासना करते हैं । हिन्दूओंके तो प्रसिद्ध देवता अग्नि हैं ही । निरुक्त (७।५) का मत है कि, "दृष्टीपर अग्नि, अन्तरीक्षमें घायु या इष्ट्र और आकाशमें सूर्य देवता है ।" इनमें प्रचल देवता अग्नि हैं—ऋषयोंको देखनेसे यह बात स्पष्ट विदित होती है । ऋग्वेदमें अग्नि-सम्बन्धीनी जिनकी कथाएं हैं, उतनी, इन्द्रको छोड़कर, किसी भी देवताके सम्बन्धकी नहीं ।

अग्निना रयिमश्रवत्पोमेष दिवेदिवे । यशसं वीरवत्तमम् ॥ ३ ॥  
 अश्रे यं यज्ञमध्वरं विश्वतः परिभूरसि । स इद् देवेषु गच्छति ॥ ४ ॥  
 अग्निर्होता कविक्रतुः सत्यश्चित्रश्रवस्तमः । देवो देवेभिरागमत् ॥ ५ ॥  
 यद्गङ्गा दाशुषे त्वमग्ने भद्रं करिष्यसि । तवेतत्सत्यमङ्गिरः ॥ ६ ॥

३ अग्निके अनुग्रहसे यजमानको धन मिलता है और वह धन अनुदिन बढ़ता और कीर्तिकर होता है तथा उससे अनेक वीर पुरुषोंकी नियुक्ति की जाती है ।

४ हे अग्निदेव ! जिस यज्ञको तुम चारों ओरसे घेरे रहते हो, उसमें राक्षसादि द्वारा हिंसा-कर्म सम्भव नहीं है और वही यज्ञ देवोंको तुम देने स्वर्ग जाता है या देवताओंका सन्निकर्ष प्राप्त करता है ।

५ हे अग्नि ! तुम होता, अशेषबहुद्विसम्पन्न या सिद्धकर्मा, सत्यपरायण, अतिशय कीर्त्तिसे युक्त और दीप्तिमान् हो । देवोंके साथ इस यज्ञमें आओ ।

६ हे अग्नि ! तुम जो हविष्य देनेवाले यजमानका कल्याण-साधन करते हो, वह कल्याण, हे अङ्गिरः ! वास्तवमें तुम्हारा ही प्रीति-साधक है ।\*

ऋग्वेदके अनेक स्थानोंमें अग्निको पुरोहित कहा गया है । वह पुरोहित या अग्रणी इसलिये है कि, उनके बिना यज्ञ ही नहीं हो सकता । अग्नि होता या देवोंको बुलानेवाले इसलिये है कि, उनका जलना ही देवोंके आगमनका कारण है । होता, पोता, अर्घ्य आदि कई तरहके कर्मानुसार पुरोहित या ऋत्विक् होते हैं । उनमें होता या देवाह्वानकारी ऋत्विक्का ही यहाँ उल्लेख है । ऋत्विक् शब्दका अर्थ है निदिष्ट समयपर यज्ञ करानेवाला । अग्नि रत्नधारी इसलिये है कि, यज्ञफलरूप रत्नों (धनों) के धारण या पोषण करनेवाले हैं ।

ऋग्वेद जैसे प्राचीनतम ग्रन्थमें सर्व-प्रथम अग्निपूजाका मन्त्र देखकर अनेक पश्चिमी विद्वान् आर्योंको जड़ोपासक, असभ्य और खरं कहते हैं; और, कुछ विद्वान् यहाँ अग्निका अर्थ प्रकाश-स्वरूप ईश्वर करते हैं । वे कहते हैं कि, इस मंत्रमें तेजोमय ईश्वरकी अभ्यथना है । ईश्वर ही पुरोहित ( संसार-हितैषी ), दीप्तिमान् ( तेजोरूप या दाता ), ऋत्विक् होता ( देवाह्वानकारी ) और रत्नधारी ( निखिल-सम्पत्ति-स्वामी ) हैं ।

हमारी राय है कि, कोई भी जड़ पदार्थ स्वयम् कार्य करनेमें असमर्थ है । हां, यदि उसका कोई चैतन्य अधिष्ठाता हो, तो वह कार्य करनेमें समर्थ हो सकता है । इसी विचारसे आर्य लोग जड़ अग्नि, वायु आदिके सिवा उनके अधिष्ठातृ-रूपसे एक-एक चेतन अग्नि, वायु आदि चैतन्य देव भी मानते थे । ऐसे असंख्य देव हैं और चूंकि परमात्मा सबके अधिष्ठाता हैं ; इसलिये इन सब देवोंको ईश्वर-अंश माना जाता है । फलतः शासक-रूपमें, कर्मानुसार, देवोंके अनेक नाम अवश्य ह ; परन्तु सबके चेतन-रूप होनेसे सामुदायिक रूपसे सब देव एक हैं और वही परमात्मा हैं ।

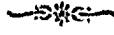
यहाँसे प्रारम्भ कर नौ ऋकों, ऋचाओं या मंत्रोंमें अग्निकी स्तुति-प्रशंसा है ; इसलिये इनके देवता अग्नि हैं और इन मंत्रोंका एक नाम आग्नेय सूक्त है ।

\* अङ्गिरा या अङ्गिरा अग्नि और ऋषि—दोनोंका नाम है । यास्कने निरुक्तमें अङ्गिरिको ही अङ्गिरा लिखा है । ऐतरेय ब्राह्मणमें भी यही बात है । उसमें यह भी लिखा है कि, अङ्गिरोवशज ऋषिगण पहले अंगारों ही थे । विल्सन और म्योरकी राय है कि, अङ्गिरा ऋषि लोग प्रख्यात वंशके थे और बहुत करके उन्हीं ही भारतवर्षमें अग्नि-पूजाका प्रथम प्रचार किया । यह निर्विवाद है कि, अङ्गिरोवशके ऋषि लोग वेद-मंत्रोंके स्मारक थे ।

उपत्याग्रो द्विधेद्विधे दोषावस्तर्धिया वयम् । नमो भरन्त पमसि ॥ ७ ॥

राजन्तमश्वराणां गोपामृतस्य दीद्विधिम् । वर्धमानं स्ये दमे ॥ ८ ॥

स नः पितेव सूनवेऽशो सूपायनो भव । सन्नस्वा नः स्वस्तये ॥ ९ ॥



२ सूक्तं । वायु आदि देवता हैं ।

वायवायादि दर्शने सोमा अरङ्गकृताः । तेषां पाहिं शुधी हवंचम् ॥ १ ॥

वाय उक्त्वैभिर्जरन्ने त्वामच्छा जर्गितारः । सुतसोमा अहर्विदः ॥ २ ॥

७ हे भूमि ! हम अनुदिन, दिन-रात, अन्तःस्थानों साथ तुम्हें नमस्कार करते-करते तुम्हारे पास आते हैं ।

८ हे भूमि ! गुरु प्रकाशमान, यज्ञ-रक्षक, कर्मफलके शौचक और यज्ञशालाके वरुं नशाली हो ।

९ जिस तरह पुत्र पिताको आपानोसे पा जाता है, उसी तरह हम भी तुम्हें पा सकें या तुम हमारे अनायास-रूप्य बनो और हमारा संगठ करनेके लिये हमारे पास निपास करो ।

१ हे प्रियदर्शन वायु ! आओ । सोमस तैयार है । इसे पान करो और पानके लिये हमारा आह्वान सुनो । \*

२ हे वायुदेव ! पशुजाना स्तोत्रा श्लोक अभिरुत या अभिरवादि संस्कार-रूप प्रकृत्या-विशेष द्वारा परिस्रोधित सोमसके साथ तुम्हारे उरें दयने म्युनि-वचन कर कर तुम्हारा स्तव्य करते हैं ।

वायुके निकट ( ७ । १ ) से मादृश होता है कि, अर्थात् प्राचीन देशोंमें वायु भी हैं । अनेक मंत्रोंसे वायुकी म्युनि कां गयी है । ईरानियोंमें भी यह वायु-रूपा प्रचलित है । ग्रीक और रोमन लोग पान ( Pan ) ( संस्कृत-पचन ) शब्दमें वायुको उपासना करते थे । परन्तु भारतमें, वर्तमान समयमें, एक ऐसा द्रव है, जो वायु शब्दका भी अर्थ ईश्वर करता है । पदवी श्रवा ( १ म सूक्त ) का शिष्यगर्भ हम अपना राय लिख चुके हैं ।

सोमसके सम्यन्त्रमें वषेष्ट मतपाद है । एक द्रवकी राय है कि, सोमलताको पीसनेसे खट्टापन लिये हुए दूधकी तरह मादा रस निकलता है, जिसे मंत्राने मादृकता निकलती है और जो सोमसके नामसे यज्ञमें व्यवहृत होता था । साफ मन्त्र यह है कि, सोमस एक मन्त्रिका नाम है, जिसे आर्यलोग पीते थे । संनरेय ब्राह्मणकी अनुक्राणिकामें मार्टिन हागने लिखा है कि, उन्होंने सोमस तैयार करके पान किया था । ईरानी लोग भी सोमसका व्यवहार करते थे । उनके यहां इसका नाम " इटमा " है । ईरानी सोमसका कथा ही पान कर जाते थे । उनके जेन्दु भाषाके " अथत्या " ग्रन्थमें इसकी प्रशंसा लिखी है । चन्द्रको भी रस-संयुक्त मानकर हमारे यज्ञ अथर्ववेद और वातव्य ब्राह्मणमें चन्द्रमाका भी नाम सोम रखा गया है । शिष्णुपुराणमें ये दोनों अर्थ हैं । चरक-संहितामें लिखा है कि, सोम नामकी पेसी लता है, जिसके पन्द्रह पत्ते हैं । यह लता चन्द्रमाकी तरह दोनों पक्षोंमें घटती-बढ़ती है । ओषध और मूसकसे कृत्क इसका रस निकाला जाता था । प्रातः मयन, माध्यन्दिन मयन और नृतीय मयन नामके यज्ञोंमें इसका दूध व्यवहार किया जाता था । सैक्समूलरकी राय है कि, हिमालयके उत्तर, मध्य पृथिव्यामें, सोमलता होती थी । मैडम ब्लाचान्कीकी सम्मति है कि, वेदका सोम और बाइबिलका ज्ञान-वृक्ष ( Tree of Knowledge ) एक ही वस्तु है । फ्रकरोके बेलगछिया नामक स्थानमें एक बार एक धनियालाल प्राधानी नामक संन्यासेने एक पत्रा कथा लिखायी थी, जो परीधायक लखन भेजी गयी थी और जिसे हुट्टिन विड कम्पनीने

वायो तत्र प्रपृञ्चती धेना जिगाति दाशुपे । उरुची सोमपीतये ॥ ३ ॥  
 इन्द्रवायु इमे सुता उप प्रयोभिरागतम् । इन्द्रवो वामुशन्ति हि ॥ ४ ॥  
 वायश्चिन्द्रश्च चेतथः सुतानां वाजिनीवसू । तावा यातमुपद्रवत् ॥ ५ ॥  
 वायश्चिन्द्रश्च सुन्रत वा यातमुप निष्कृतं । मश्चित्रत्थाधियानरा ॥ ६ ॥  
 मित्रं हुवे पूतदक्षं वरुणं च रिशादसं । धियं घृताचीं साधन्ता ॥ ७ ॥  
 ऋतेन मित्रावरुणावृतावृधावृतस्पृशा । क्रतुं बृहन्तमाशायि ॥ ८ ॥  
 कवी नो मित्रावरुणा तुविजाता उरुक्षया । दक्षं दधाते अपसम् ॥ ९ ॥

—३—

३ हे वायु ! तुम्हारा सोमगुण-प्रकाशक वायु सोमरस पीनेके लिये हव्यदाता यजमान और अनेक लोगोंके निष्कृत जाता है ।

४ हे इन्द्र और वायु ! दोनों अन्न लेकर आओ ; सोमरस तैयार है ; यह तुम दोनोंकी अभिलाषा करता है ।\*

५ हे वायु और इन्द्र ! तुम सोमरस तैयार जानो । तुम अन्नसहित हव्यमें रहनेवाले हो । शीघ्र यज्ञ-श्रेष्ठमें आओ ।

६ हे वायु और इन्द्र ! सोमरसके दाता यजमानके छसंस्कृत सोमरसके पास आओ । हे देवद्वय ! आगमनसे यह कर्म शीघ्र सम्पन्न होगा ।

७ मैं पवित्र-त्रल मित्र और हिंसक-रिपु-विनाशक वरुणको यज्ञमें बुलाता हूँ । वे दोनों घृताहुति-दान-स्वरूप कर्म करते हैं ।x

८ हे यज्ञ-यर्द्धक और यज्ञ-स्पर्शी मित्र और वरुण ! तुम लोग, यज्ञ-फल देनेके लिये, इस विशाल यज्ञको व्याप्त किये हुए हो ।

९ इन्द्र और वरुण बुद्धिसम्पन्न, जनहितकारी और विविध-लोकेश्वर हैं । वे हमारे बल और कर्मकी रक्षा करें ।

सोमलता बताया था । यह सब कुछ है ; परन्तु प्रसिद्ध वेदज्ञ पण्डित दुर्गादास लाहिड़ीने लिखा है कि, सोमलता और सोमरस क्रमशः विशुद्ध बुद्धि और निष्कण्ठ ज्ञानका नाम है—वस्तुतः वह कोई लता या बल्ली नहीं है ।

हमारा मत है कि, ज्ञान-काण्डमें लाहिड़ी नदाशयका अर्थ ठीक है ; परन्तु कर्मकाण्डके लिये लाहिड़ीजीका अर्थ ठीक नहीं है । वस्तुतः सोमलता नामकी एक लता है और आर्य लोग यज्ञमें सोमरसका पान करते थे ।

\* ऋग्वेदमें इन्द्रके सम्बन्धके जितने मंत्र हैं, उतने किसीके भी नहीं । इन्द्र आर्योंके प्रधान-देवोंमें हैं ।

x मित्र भी आर्योंके प्राचीन देवता हैं । ईरानी लोग मित्र नामसे मित्रकी पूजा करते हैं । वरुण तो मित्रसे भी प्रसिद्ध देव हैं । ईरानी वरुण नामसे वरुणका पूजा करते हैं । ग्रीक तो वरुण या उरानोस ( Uranos ) को सब देवताओंका पिता भी मानते हैं । अलेक्जेंडर वानकी राय है कि, वरुण पृथ्वी आकाश-देव थे, पीछे जल-देव हुए । रोषका कहना है कि, वरुण समुद्र-देव ही हैं । ब्रेलगाईकी भी यही सम्मति है । वेदमें, अधिकांश मंत्रोंमें, मित्र और वरुणका एक साथ ही प्रसङ्ग आया है । इनारा नत है कि, आर्योंके मित्र और वरुण अत्यन्त-प्रतिष्ठित और प्राचीनतम देवता हैं ।

३ सूक्त । अश्विद्वय आदि देवता हैं ।

अश्विना यज्वरीरियो द्रवत्पाणी शुभरूपती । पुरुभुजा चनस्यतम् ॥ १ ॥

अश्विनां पुरुदंससा नरा शवीरया श्रिया । श्रिष्ण्या वनतं गिरः ॥ २ ॥

दक्षा युवाकवः सुता नासत्या वृत्तवर्हिषः । आ यातं रुद्रवर्तनी ॥ ३ ॥

इन्द्रायाहि चित्रमानो सुता इमे त्वायवः । अण्वीभिस्तना पूतासः ॥ ४ ॥

इन्द्रायाहि श्रियेपितो विप्रजूतः सुतावतः । उप ब्रह्माणि वाघतः ॥ ५ ॥

इन्द्रायाहि तुतुजान उप ब्रह्माणि हरिचः । सुते दधिन्व नश्चनः ॥ ६ ॥

१ हे श्रिप्रबाहु, एकमंपालक और विस्तारिण-भुज-संयुक्त अश्विद्वय ! तुम लोग यज्ञीय अन्नको ग्रहण करो ।\*

२ हे विषिषकमां, नेता और पराक्रमशाली अश्विद्वय ! आदर-युक्त घुड़िके साथ हमारी स्तुति सुनो ।

३ हे मनुनाशन, सत्यभाषी और शत्रुदमनकारी अश्विद्वय ! सोमरस तैयार कर छिन्न कुशों पर रखा हुआ है ; तुम आओ ।

४ हे विविप्र-दीप्ति-शाली इन्द्र ! अंगुलिधर्मि बनाया हुआ नित्य-शुद्ध यह सोमरस तुम्हें चाहता है ; तुम आओ ।

५ हे इन्द्र ! हमारी भक्तिसे आकृष्ट होकर और ब्राह्मणों द्वारा आहूत होकर सोम-संयुक्त घावत् नामके पुरोहितकी प्रार्थना ग्रहण करने आओ ।

६ हे अश्वशाली इन्द्र ! हमारी प्रार्थना सुनने शीघ्र आओ । सोमरस-संयुक्त यज्ञमें हमारा अन्न धारण करो ।

\* अश्विद्वय या अश्विनी-इमारद्वयके सम्बन्धमें ऋग्वेदमें अनेकानेक मंत्र हैं । इस सूक्तका तो नाम ही अश्विसूक्त है । परन्तु इस विषयमें यदा जयदंष्ट्र मतवाद है कि, ये दोनों कौन थे । यास्ककी राय है कि, “ इन्हें कोई छायापृथिवी नामता, कोई दिन-रात कहता, कोई मृत्यु-घन्टमा बतताता और कोई प्रणयान् राजा कहता है । म्योसं संस्कृत टेम्प्लर प मोट लिबनेवाले डाक्टर गोल्डस्ट्रकका मत है कि, ये दोनों ऋभुगणकी तरह प्रसिद्ध मनुष्य थे । अश्विनीकुमारोंकी तरह ग्रीसमें क्रेटर और पोल्क नामके दो देवता हैं । संस्कृतकी राय है कि, ये दोनों आलोक और अन्वकार हैं । पुराणोंमें ये यमज भागे गये हैं और मानसिक और वैदिक तापकि प्राता भी कहे गये हैं । ऋग्वेदमें दम्भ और नासत्य भी इनके नाम हैं । ऋग्वेद-के १० वें मण्डलके १७ वें सूक्तमें इनकी उत्पत्तिकी घात यां लिखी गई है—त्वष्टाकी कन्या सरण्युसे सूर्य द्वारा अश्विनीकुमारोंकी उत्पत्ति हुई है । प्रथम मण्डलके ११६ वें सूक्तमें पता चलता है कि, ये षट्के भारी चिकित्सक थे । खेल नामके राजाकी विशिष्टता नामकी क्रीडा पर या घण्ट हो गया था । सो, इन्होंने उसे लोहेकी जंघा दे दी और घट्ट चंगी हो गयी । ऋजाश्व राजाके पिताकी अन्वयां भांशों भी इन्होंने अच्छी की थीं । इसी मण्डलके ११७ वें सूक्तमें लिखा है—कक्षिवान्की बलवादिनी यौवा नामकी कन्याका इन्होंने कुण्ट दूर किया था । इसी प्रकार १ म मण्डलके १७ वें और ३४ वें सूक्तोंमें भी इनकी असाधारण प्रतिभाका उल्लेख है । २० वें सूक्तकमें तो इनके बारेमें मंत्र हैं, उनसे मालूम पड़ता है कि, ‘दोनों’ भाई व्याधि और चिपत्तिके भी देवता थे ।



ओमासश्चर्यणीधृतो विश्वेदेवास्त आ गत । दाश्वानो दाशुपः सुतम् ॥७॥  
 विश्वेदेवासो असुरः सुतमागन्त तूर्णयः । उस्ता इव स्वसराणि ॥ ८॥  
 विश्वेदेवासो अस्त्रिध एहिमायासो अद्बुहः । मेधं जुपन्तु बहयः ॥९॥  
 पावका नः सरस्वती वाजेभिर्वाजिनीवती । यज्ञं वष्टु धियावसुः ॥ १०॥  
 चोदयित्री सन्तानां जेतन्ती सुमतीर्जा । यज्ञं द्रष्ट्रे सरस्वती ॥ ११॥  
 महो अर्णः सरस्वती प्र चेतयति केतुना । धियो विश्वा वि राजति ॥ १२॥

२ अनुवाक । ४ सूक्त । इन्द्र देवता हैं ।

सुरूपकस्तुमृतये सुदुधामिव गोदुहे । जुहूमसि द्यविद्यवि ॥ १ ॥

७ हे विश्वेदेवगण ! तुम रक्षक हो तथा मनुष्योंके पालक हो । तुम हव्यदाता यज्ञमानके प्रस्तुत सोमरसके लिये आओ । तुम यज्ञ-फल-दाता हो ।\*

८ जिस तरह सूर्यको किणें दिनमें आती हैं, उसी तरह वृष्टिदाता विश्वेदेव शीघ्र प्रस्तुत सोमरसके लिये आगमन करें ।†

९ विश्वेदेवगण अक्षय, प्रत्युत्पन्नमति, निर्वर और धन-वाहक हैं । वे इस यज्ञमें पधारें ।

१० -पतितपावनी, अन्न-युक्त और धनदात्री सरस्वती धनके साथ हमारे यज्ञकी कामना करें ।

११ सत्यकी प्रेरणा करनेवाली, छबुद्धि पुरुषोंको शिक्षा देनेवाली सरस्वती हमारा यज्ञ प्रद्वग्न कर चुकी हैं ।

१२ प्रवाहित होकर सरस्वतीने जलराशि उत्पन्न की है और इसके सिवा समस्त ज्ञानोंका भी जागरण किया है ।‡

१ जिस तरह दूध दूहनेवाला दोहनके लिये गायको बुझाता है, उसी प्रकार अपनी रक्षाके लिये हम भी सत्कर्मद्वारा इन्द्रको प्रति दिन बुझाते हैं ।

\* विश्वेदेवास्त एतन्नामका देव-विशेषः । सायण ।

† इस मंत्रके मूल शब्द "उस्ता इव स्वसराणि" का अर्थ रमानाथ सरस्वतीने "जिस तरह गायें घर आती हैं" किया है ।

‡ नदी और ज्ञानदात्री—इन दोनों अर्थोंमें यहां सरस्वती शब्दका प्रयोग हुआ है । यास्कने भी इन दोनों रूपोंको स्वीकार किया है । मैक्समूलरकी राय है कि, आर्य लोग सरस्वती नदीके किनारे यज्ञ करते थे । कुछ दिनोंके अनन्तर उच्चारित मंत्रोंकी अधिष्ठात्री और वाक्प्रवर्तिनी देवी सरस्वती मान ली गयीं । कुछ लोग यह भी कहते हैं कि, आर्य लोग जब मध्य एशियासे भारतवर्ष आ रहे थे, तब रास्तेमें सरस्वतीका स्रवाहु जल पीकर उसपर लड्डू हो गये और उसकी स्तुति करने लगे । परन्तु सच बात यह है कि, संसारकी सब विभूतियोंको ईश्वर-रूप मानकर आर्य लोग उनका सम्मान करते थे । ब्रह्मरूप जड़ पदार्थकी सरस्वतीकी अधिष्ठात्री देवी माननेका जो कारण है, उसका उल्लेख हम १ म सूक्त १ म मंत्रकी टिप्पणीमें कर आये हैं । हम आर्यों और मनुष्य-मात्रकी उत्पत्तिको स्थान भारतको ही मानते हैं—मध्य एशियाको नहीं । इसका विचार "वेद-रहस्य" नामके प्रकरणमें किया गया है ।

उप नः सवनागहि सोमस्य सोमपाः पिव । गोदा इदुरेवतो मदः ॥ २ ॥  
 अथा ते अन्तमानां विद्याम सुमतीनां । मानो अतित्य आगहि ॥ ३ ॥  
 परेहि विप्रमस्त्वुतमिन्द्रं पृच्छाविपश्चितं । यस्ते सविभ्य आचरम् ॥ ४ ॥  
 उत ब्रुवस्तु नो निदो निरन्यतश्चिदारत । दधाना इन्द्र इद्दुवः ॥ ५ ॥  
 उत नः सुभगा अरिर्वोच्येयुर्दस्म कृष्टयः । स्यामेदिन्द्रस्य शर्मणि ॥ ६ ॥  
 एमाशुमाशवे भव यज्ञश्रियं नृमादनं । पतयन्मन्दयत्सकम् ॥ ७ ॥  
 अस्य पीत्वा शतकतो धनो वृत्राणामभवः । प्राचो वाजेषु वाजिनम् ॥ ८ ॥

२ हे सोमपानकर्ता इन्द्र ! सोमरस पीनेके लिये हमारे त्रियषण-यज्ञके निकट आओ । तुम धनशाली हो ; प्रसन्न होनेपर गाय देते हो ।

३ हम तुम्हारे पास रहनेवाले बुद्धिशाली लोगके बीच पढ़कर तुम्हें जानें । हमारी उपेक्षा कर दूसरोंमें प्रकानित नहीं होता । हमारे पास आओ ।

४ हिंसा-द्वे-परहित और प्रतिभाशाली इन्द्रके पास जाओ और मुझ मेधाधीकी कथा जाननेकी चेष्टा करो । वही तुम्हारे बन्धुओंको उत्तम धन देते हैं ।

५ सदा इन्द्र-सेषक हमारे सम्यग्धी पुरोहित लोग इन्द्रकी स्तुति करें और इन्द्रके निन्दक इस देश और अन्य देशोंसे भी दूर हो जायें ।

६ हे त्रिपुमर्दन इन्द्र ! तुम्हारी कृपासे शत्रु और मित्र—दोनों हमें सौभार्यशाली कहते हैं । हम इन्द्रके प्रवाद-प्राप्त एवमें निपास करें ।

७ यह सोमरस धीमं मातृक और यज्ञका सम्पत्त्वस्वरूप है । यह मनुष्यको प्रफुल्ल करता, कार्य-साधन करता और हर्ष-प्रदाता इन्द्रका मित्र है । यज्ञ-व्यापि इन्द्रका इसे दो ।

८ हे शत्रुध्वञ्चका इन्द्र ! इसी सोमरसका पान कर तुमने वृत्र आदि शत्रुओंका विनाश किया था और रणाङ्गण अपने योद्धाओंकी रक्षा की थी ।

\* इस मंत्रमें जो इन्द्र-निन्दकोंके लिये देश-निर्वासनकी बात कही गयी है, उसको ध्यानमें रखकर अनेक विद्वानोंने निश्चय किया है कि, " यद्यपि पारसी लोग वृत्रघ्न या धर्मध्वजके पूजक थे ; परन्तु इन्द्रके कहर शत्रु थे ; क्योंकि "अवल्या" ( इन्द्रके पराजित ) में इन्द्रको पापमति कहर गया है और दूसार भस्ते इन्द्र-पूजकोंको निकाल देनेकी बात कही गयी है । इसके प्रतिवाद-स्वरूप इस मंत्रमें भी इन्द्र-शत्रुओं ( पारसियों ) को संसार-निर्वासनकी बात कही गयी है ।" जो हो ; परन्तु इस मंत्रमें यह बात अवश्य प्रमाणित होती है कि, उन दिनों संसारमें जो इन्द्र-शत्रु थे, वे आर्य-रिपु भी थे ।

× इन्द्र द्वारा वृत्राणक घृषकी बात यहाँ ध्यान देने योग्य है । देवीभागवत आदि कई पुराणोंमें लिखा है कि, ब्रह्मासे पर पाकर वृत्राणक त्रिलोक-विजयी हो गया था । अन्तको आदर्श ब्राह्मण महर्षि देवीचिकी छद्मसे विश्वकर्मा द्वारा वज्र-निर्माण किया गया, जिससे इन्द्रने वृत्र-ध्वज किया । यह कथा धर्म-धर प्रचलित है । हृष्य प्रसिद्ध वेद्वंज रमानाथ सरस्वतीने ३२वें सूक्तकी टीकामें लिखा है कि, " वृत्र असीरियाका नामो द्रव्यति था । "अवल्या" से माल्लस पद्वता है कि, बेबीलोन नगरको आर्य-शत्रुत्व करनेके लिये वृत्रने अहिन्द्रा नामक देवीकी उपासना की ; परन्तु प्रपलमें अस्तकल रहा । अन्तको आर्य इन्द्रने उसे ध्वस्त कर

तं त्वा वाजेषु वाजिनं वाजयामः शतक्रतो । धनानामिन्द्र सातये ॥ ६ ॥  
यो वायोऽवनिर्महान्तसुपारः सुन्वतः सखा । तस्मा इन्द्राय गायता ॥ १० ॥

५ सूक्त । इन्द्र देवता हैं ।

आत्वैता निपीदतेन्द्रमभिप्रगायत । सखायः स्तोमवाहसः ॥ १ ॥  
पुरुतमं पुरुणामीशानं वार्याणां । इन्द्रं सोमे सचासुते ॥ २ ॥  
स घानो योग आ भुवत्स राये स पुरन्ध्यां । गमद्राजेभिरा स नः ॥ ३ ॥  
यस्य संस्थे न वृषवते हरी समत्सु शत्रवः । तस्मा इन्द्राय गायत ॥ ४ ॥  
सुतपाव्ने सुता इमे शुचयो यन्ति वीतये । सोमासो दध्याशिरः ॥ ५ ॥  
त्वं सुतस्थ पीतये सद्यो वृद्धो अजायथाः । इन्द्र ज्यैष्ठ्याय सुक्रतो ॥ ६ ॥

९ हे शतक्रतु इन्द्र ! तुम संग्राममें वही बौद्धा हो । इन्द्र ! धन-प्राप्तिके लिये हम तुम्हें हविष्य देते हैं ।

१० जो धनके घाता और महत्पुरुष हैं, जो सत्कर्म-पालक और भक्तोंके मित्र हैं, उन इन्द्रको लक्ष्य कर गाओ ।

१ हे स्तुतिकारक सखा लोग ! शीघ्र आओ और घैठो तथा इन्द्रको लक्ष्य कर गाओ ।

२ सोमरसके तैयार हो जाने पर सब लोग एकत्र होकर बहु-दान-विध्वंसक और श्रेष्ठ धनके धनपति इन्द्रको लक्ष्य कर गाओ ।

३ अनन्तगुण-सम्पन्न वे ही इन्द्र हमारे उद्देश्योंका साधन करें, धन दें, बहुविध बुद्धि प्रदान करें और अन्नको साथ लेकर हमारे पास आगमन करें ।

४ युद्धके समयमें जिन देवताके रथ-युक्त अश्वोंके सामने शत्रु नहीं आते, उन्हीं इन्द्रको लक्ष्य कर गाओ ।

५ यह पवित्र, स्नेहगुण-संयुक्त और विशुद्ध सोमरस सोमपान करनेवालेके पानार्थ उसके पास आप ही जाता है ।

६ हे शोभनकर्मा इन्द्र ! सोमपानके लिये, सदासे ज्येष्ठ होनेके कारण, तुम सवके आगे रहते हो ।

डाला । वृत्र आयौका घोर शत्रु था; इसलिये उसके वधपर आयौने परमानन्द अनुभव किया । फारसके राजा साइरस (Cyrus) ने जिस तरह टाइग्रिस नदीका प्रवाह रोक कर घेबीलोनको जीता था, उसी प्रकार वृत्रने भी आर्यभूमि दखल करनेकी सोची थी । परन्तु यह अत्यन्त प्राचीन कथा है; इसलिये तथ्य-निर्णय कठिन है; तो भी ऋग्वेद और “अवस्था” की बातोंसे इतना तो विदित ही हो जाता है कि, इन्द्र-वृत्र-युद्ध हुआ था ।” कुछ लोगोंकी ऐसी भी धारणा है कि, “ऋग्वेदके वृत्र और अहि शब्द मेघके नामान्तर-भर हैं । इन्द्रने मेघको आहत कर वृष्टि करायी थी; इसी कथा-रूपना पर वृत्रासुर-वध काली बात है ।” परन्तु ऋग्वेदको देखने पर यह धारणा तर्क-शून्य मारुस पड़ती है ।

ग्रीसके जियस और अपोलो देवताओंकी कथाएँ भी इन्द्र-कथा-सुलभ हैं । मैक्समूलरकी राय है कि, वृत्र-युद्धके ऊपर ही होमरके इलियड ग्रन्थमें दाय-युद्धकी कल्पना है । वेदका पणिगण दाय-युद्धका पैरिस है । इस प्रकार यहाँ खूब “सुन्दरे-सुन्दरे सतिभिन्ना” कहावत चरितार्थ हो रही है । परन्तु यह बात निःसन्दिग्ध है कि, इन्द्र आयौके सर्व-श्रेष्ठ वायुमण्डल-शासक अन्तरिक्ष-देव हैं और उन्होंने वृत्रका वध कर भारतमें सुखद आर्य-राज्य स्थित रहनेमें सहायता की थी । वृत्रासुर-वधकी नकलमें प्रायः सभी प्राचीन जातियोंमें अनेक कल्पना-कथाएँ गढ़ ली गयी हैं ।

आ त्वा विशन्त्वाशत्रवः सोमास इन्द्र गिर्वणः । शन्ते सन्तु प्रचेतसे ॥ ७ ॥  
 त्वां स्तोमा अवीवृधन्त्वामुक्था शतक्रतो । त्वां वद्धन्तु नो गिरः ॥ ८ ॥  
 अक्षितोतिः सनेदिमं वाजमिन्द्रः सहस्रिणं । यस्मिन्निश्वानि पौंस्थ्या ॥ ९ ॥  
 मा नो मर्ता अभिद्रुहन्तनूनामिन्द्र गिर्वणः । ईशानो यवथा वधम् ॥१०॥

—ॐ—

६ सूक्त । इन्द्र और मरुद्गण देवता हैं ।

युञ्जन्ति ब्रह्मरूपं चरन्नं परितस्थुषः । रोचन्ते रोचना दिवि ॥ १ ॥  
 युञ्जन्त्यस्य काम्या हरा विपक्षसा रथे । शोणा धृष्णू नृवाहसा ॥२ ॥  
 केतुं कृषन्तकेतवे पेशो मर्या अपेशसे । समुपद्गिरजायथाः ॥ ३ ॥  
 आद्रह स्वधामनु पुनगं यत्वमेरिरे । दधाना नाम यदियम् ॥ ४ ॥  
 धीलु चिद्राजन्तः अभिद्रुहन्तः । अविन्द्रः कलिः । अमिन्द्र उस्त्रिया अनु ॥ ५ ॥

- \* हे स्तुति-पात्र इन्द्र ! सधनयय-व्यास सोमरस तुम्हें प्राप्त हो और उच्च ज्ञानकी प्राप्तिमें तुम्हारा मंगलकारी हो ।  
 † हे सौ यशोके कनेघाले इन्द्र ! तुमका सोमसंय और ऋक्-संय—दोनों प्रतिष्ठित कर चुके हैं । हमारी स्तुति भी तुमको प्रतिष्ठित या सम्बद्धित करे ।\*  
 ‡ इन्द्र रक्षामें सदा सत्वर रहकर यह सहस्र-संख्यक अन्न प्रहण करे । इसी अन्न या सोमरसमें पौष्ट्य रहता है ।  
 § हे स्तवनीय इन्द्र ! तुम सामव्यवधान हो । ऐसा करना कि, विरोधी हमारे शरीर पर आघात न कर सकें । हमारा धन नहीं होने देना ।

- १ जो प्रतापान्वित सूर्य-रूपने, दिवा-शून्य अग्नि-रूपसे और विहरण-कर्ता वायु-रूपसे अवस्थित हैं, उन्हीं इन्द्रसे सब लोकोंमें रहनेवाले मनुष्य सम्यन्त्र स्थापित करते हैं ।  
 २ ये मनुष्य इन्द्रके रथमें सन्त्रा, तेजस्वी, लाल और पुरुष-बाहक हरि नामके घोड़ोंको संयोजित करते हैं ।  
 ३ हे मनुष्यो ! सूर्यात्मा इन्द्र घेद्योगको मोक्षमें करके और रूप-विरहितको रूप दान करके प्रचण्ड किरणोंके साथ उग रहे हैं ।  
 ४ इसके अनन्तर मरुद्गणने यज्ञोपयोगी नाम धारण करके अपने स्वभावके अनुकूल, वादलके मध्य, जलकी गर्भाकार रचना की ।  
 ५ इन्द्र ! विकट स्थानको भी भेदन करनेवाले और प्रवहमान मरुद्गणके साथ तुमने गुफामें छिपी हुई गायोंको गोत्रकर टनका उदार किया था ।\*

\* इस संयमें, मूलमें, स्तोम और उक्थ शब्द हैं, जिनका क्रमशः अर्थ साम-संय और ऋक्-संय है । जो लोग वेदोंको नित्य नहीं मानते और ऋग्वेदके बाद सामवेदकी रचना मानते हैं, वे, रमेद्राचन्द्रक्षत आदि, यहां बड़े धरारथ हैं । परन्तु सायणाचार्यके इस अर्थका ये प्रणदन भी नहीं कर सके हैं ।

\* सायणाचार्यने लिखा है कि, पण नामके देवोंने देवलोकसे गायें लुकाकर अन्धकारमें रख दी थीं, जिनका

द्वैवयन्तो यथा मतिमच्छा विद्वसु गिरः । महामनूपत शुतम् ॥ ६ ॥  
 इन्द्रेण सं हि द्वक्षसे संजग्मानो अविभ्युया । मन्दू समानवर्चसा ॥ ७ ॥  
 अनवद्यैरभिवृभिर्मखः सहस्वदर्चति । गणैरिन्द्रस्य काम्यैः ॥ ८ ॥  
 अतः परिज्जन्नागहि दिवो वा रोचनादधि । समस्मिन्नुक्षते गिरः ॥ ९ ॥  
 इतो वा सातिर्मामहे दिवो वा पार्थिवादधि । इन्द्रः महो वा रजसः ॥ १० ॥

—॥॥॥॥—

७ सूक्त । इन्द्र देवता हैं ।

इन्द्रमिद्रगाथिनो बृहदिन्द्रमर्केभिरकिणः । इन्द्रं वाणीरनूपत ॥ १ ॥  
 इन्द्र इद्वर्य्योः सचा सम्मिश्र आ वन्नोयुजा । इन्द्रो वज्री हिरण्ययः ॥ २ ॥  
 इन्द्रो दीर्घाय चक्षस आ सूर्य्य रोहयद्रिवि । वि गोभिरद्रिमैरयत् ॥ ३ ॥  
 इन्द्र वाजेषु नोहव सहस्रप्रधनेषु च । उग्र उग्रभिरुतिभिः ॥ ४ ॥  
 इन्द्रं वयं महाधन इन्द्रमर्भे हवामहे । युजं वृत्रेषु वज्रिणम् ॥ ५ ॥

६ स्तुति करनेवाले, देव-भाषकी प्रासिके लिये, धन-सम्पन्न, महान् और विल्यात मरुद्गणको लक्ष्यकर इन्द्रकी तरह स्तुति करते हैं ।

७ हे मरुद्गण ! तुम लोगोंकी इन्द्रसे संकोच-रहित अभिन्नता देखी जाती है । तुम लोग सदा प्रसन्न और स-मान-प्रकाश हो ।

८ निर्दोष, सुल्लोकाभिगत और कामनाके विषयीभूत मरुद्गणके साथ इन्द्रको वलिष्ठ समझकर यह यज्ञ पूजा करता है ।

९ सर्वदिशा-व्यापक मरुद्गण ! अन्तरिक्ष, आकाश या ज्वलन्त सूर्यमण्डलसे आओ । इस यज्ञमें पुरोहित लोग तुम लोगों की भली भांति स्तुति करते हैं ।

१० हम इन इन्द्रके निकट इसलिये याचना करते हैं कि, ये पृथिवी, आकाश और महान् वायु-मण्डल ( अन्तरिक्ष ) से हमें धन-दान दें ।

१ सामवेदियोंने साम-गान द्वारा, ऋग्वेदियोंने वाणी द्वारा और यजुर्वेदियोंने वाणी द्वारा इन्द्रकी स्तुति की है ।

२ इन्द्र अपने दोनों घोड़ोंको, बातकी बातमें, जोतकर सबके साथ मिलते हैं । इन्द्र वज्रयुक्त और हिरण्यमय हैं ।

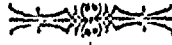
३ दूरस्थ मनुष्योंको देखनेके लिये ही इन्द्रने सूर्यको आकाशमें रखा है । सूर्य, अपनी किरणों द्वारा, पर्वतोंको आलोकित किये हुए हैं ।

४ उग्र इन्द्र ! अपनी अप्रतिहत रक्षण-शक्ति द्वारा युद्ध और लाभकारी महासमरमें हमारी रक्षा करो ।

५ इन्द्र हमारे सहायक और शत्रुओंके लिये वज्रधर हैं; इसलिये हम धन और महाधनके लिये इन्द्रका आह्वान करते हैं ।

मरुद्गणके साथ इन्द्रने उद्धार किया था । गायोंको खोजनेके लिये इन्द्रने सरमा नामकी एक देव-कुक्कुरीको नियुक्त किया था और सरमाने दैत्योंके साथ भाई-चारा बढ़ाकर गायोंका पला लगाया था । वायुदेवका नामान्तर मरुद् अथवा मरुद्गण है ।

सनो वृषन्नमं चरुं सत्रादावन्नपावृधि । अस्मन्म्यमप्रतिष्कृतः ॥ ६ ॥  
 तुञ्जे तुञ्जे य उत्तरे स्तोमा इन्द्रस्य वज्रिणः । न विन्त्रे अस्य सुष्टुतिम् ॥ ७ ॥  
 वृषा यूथेव वंसगः कृष्टीरियस्योजसा । ईशानो अप्रतिष्कृतः ॥ ८ ॥  
 य एकश्चर्यणीनां वसूनामिरज्यति । इन्द्रः पञ्च क्षितोनाम् ॥ ९ ॥  
 इन्द्रं वो विप्रयतस्परि हवामहे जनेभ्यः । अस्माकमस्तु केवलः ॥ १० ॥



३ अनुवाक । ८ सूक्त । इन्द्र देवता हैं ।

एन्द्र सानसिं रयिं सजितवानं सदासहं । वर्षिण्टमूतये भर ॥ १ ॥  
 नि येन मुष्टिहंत्यया नि वृषा रुणधामहे । त्वोतासोन्यर्धता ॥ २ ॥  
 इन्द्र त्वोतास आ वयं वज्रं धना ददीमहि । जयेम सं युधि स्पृधः ॥ ३ ॥  
 वयं शूरेभिरस्तुभिरिन्द्र त्वया युजा वयं । सासह्याम पृतन्यतः ॥ ४ ॥  
 मह्यं इन्द्रः परश्च नु महिन्वमस्तु वज्रिणे । धीर्न प्रथिना शवः ॥ ५ ॥

६ अर्भाष्ट-मन्त्रादाता और वृष्टिप्रद इन्द्र ! तुम हमारे लिये इस मेघको भेदन करो । हमने कभी भी हमारी प्रार्थना अर्प्याकार नहीं की ।

७ जो विविध स्तुति-प्राप्त्य विभिन्न देवताओंके लिये प्रयुक्त होते हैं, सो सब वज्रधारी इन्द्रके हैं । इन्द्रकी योग्य स्तुति में नहीं जानता ।

८ जिस तरह विशिष्ट-गनियाला बेल अपने गों-दलको बलवान् करता है, उसी प्रकार इच्छित-वितरण-कर्ता इन्द्र मनुष्योंको धनदाली करते हैं । इन्द्र शक्ति-सम्पन्न हैं और तिनकी याचनाको अग्राह्य नहीं करते ।

९ जो इन्द्र मनुष्यों, धन और पञ्चक्षितिसे ऊपर शासन करनेवाले हैं ।\*

१० सबके अग्रगण्य इन्द्रको तुम लोगोंके लिये हम आह्वान करते हैं । इन्द्र हमारे ही हैं ।

१ इन्द्र ! हमारी रक्षाके लिये भोगों योग्य, विजयी और शत्रु-जयी यथेष्ट धन दो ।

२ उस धनके बलसे सदा-सर्वदा मुष्टिकावात करके हम शत्रुको दूर करेंगे या तुम्हारे द्वारा संरक्षित होकर हम घोड़ोंसे शत्रुको दूर करेंगे ।

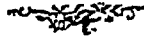
३ इन्द्र ! तुम्हारे द्वारा रक्षित होकर हम कठिन अन्न धारण करके आद करनेवाले शत्रुको पराजित करेंगे ।

४ इन्द्र ! तुम्हारी सदायतासे हम हथियारबन्द लड़ाकोंकी सजी-धनी सेनावाले शत्रुको भी जीत सकेंगे ।

५ इन्द्रदेव महान् और सर्वोप हैं । वज्रवाही इन्द्रको महत्त्व आश्रय करे । इन्द्रकी सेना आकाशके समान विशाल है ।

\* सायणाचार्यने "पञ्चक्षिति"का अर्थ चार पर्ण और निपाद किया है । रमानाथ सरस्वतीने पञ्चनद अर्थ लिखा है । मैरुमूल्या, रमेराधन्द्र दत्त, प्रेम्बर आदि सायणका अर्थ नहीं मानते । परन्तु सायणका अर्थ हमें युक्ति-विरुद्ध नहीं जँघता ।

समोहे वा य आशत नरस्तोकस्य सनिती । विप्रासो वा धियायवः ॥ ६ ॥  
 यः कुक्षिः सोमपातमः समुद्र इव विन्यते । उर्व्वीरापो न काकुदः ॥ ७ ॥  
 एवा ह्यस्य सूनृता विरपूशी गोमती महो । पक्वा शाखा न दाशुपे ॥ ८ ॥  
 एवा हि ते त्रिभूतय ऊतय इन्द्र मावते । सद्यश्चिन् सन्ति दाशुपे ॥ ९ ॥  
 एवा ह्यस्य काम्या स्तोम उक्थञ्च शंस्या । इन्द्राय सोमपीतये ॥ १० ॥



९ सूक्त । इन्द्र देवता हैं ।

इन्द्रे हि मत्स्यन्धसो विण्वेभिः सोमपर्वाभिः । महौ अभिष्टिरोजसा ॥ १ ॥  
 एमेनं सृजता सुते मन्दिमिन्द्राय मन्दिने । चक्रिं विण्वानि चक्रये ॥ २ ॥  
 मत्स्यशा सुशिप्र मन्दिभिः स्तोमेभिर्विध्वन्वर्षणे । सचैपु सवनेष्या ॥ ३ ॥  
 असृथमिन्द्र ते गिरः प्रति त्वामुदहासन । अजोषा वृषमं पतिम् ॥ ४ ॥  
 संचोदय चित्रमर्वाप्राध इन्द्र वरेण्यं । असदित्ते विभु प्रभु ॥ ५ ॥  
 अस्मान् सु तत्र चोदयेन्द्र राये रभस्वतः । तुविद्युन्न यशस्वतः ॥ ६ ॥

६ जो पुरुष रग-स्यलोमें जानेवाले हैं, पुत्र-प्राप्तिके इच्छुक हैं अथवा जो विंशपन्न ज्ञानाकाङ्क्षामें तत्पर हैं, वे सब इन्द्र की स्तुति द्वारा सिद्धि प्राप्त करते हैं ।

७ इन्द्रका जो उददेश सोमस-पानके लिये तत्पर रहता है, वह सागरकी तरह विशाल है । वह उदर जीमके जलकी तरह कभी नहीं सूखता ।

८ इन्द्रके मुखसे निकला हुआ वाक्य सत्य, वैचित्र्य-विशिष्ट, महान् और गो-प्रदाता है और हन्यदाता यजमानके पक्षमें तो वह वाक्य पके हुए फलोंसे संयुक्त वृक्ष-शाखाके समान है ।

९ इन्द्र ! तुम्हारा ऐश्वर्य ही ऐसा है । वह हमारे जैसे हन्यदाताका रक्षक और शीघ्रफलदायी है ।

१० इन्द्रके सामवेदीय और ऋग्वेदीय मंत्र इन्द्रको अभिलषित हैं और इन्द्रके सोमपानके लिये वक्तव्य हैं ।

१ इन्द्र ! आओ । सोमस-रूप खाद्योंसे हृष्ट बनो । मद्भावलशाली होकर शत्रुओंमें विजयी बनो ।

२ यदि प्रसन्नतादायक और कार्य-सम्पादनमें उरोजक सोमस तैयार हो तो, हर्ष-युक्त और सकल-कर्म-साधक इन्द्र-को उत्सर्ग करो ।

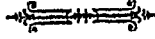
३ हे छन्दर नासिकावाले और सबके अधोश्वर इन्द्र ! प्रसन्नता-कारक स्तुतियोंसे प्रसन्न हो और देवोंके साथ इस सवन-यज्ञमें पधारो ।

४ इन्द्र ! मैंने तुम्हारी स्तुति की है । तुम इच्छित-वर्षक और पालन-कर्ता हो । मेरी स्तुति तुम्हें प्राप्त हुई है ; तुमने उसे ग्रहण कर लिया है ।

५ इन्द्रदेव ! उत्सव और नाना विध सम्पत्ति हमारे सामने भेजो । पयांस और प्रचुर धन तुम्हारे पास ही है ।

६ अन्न-सम्पत्तिवालो इन्द्र ! धन-सिद्धिके लिये हर्षे इस कर्ममें संयुक्त करो । हम उद्योगी और यशस्वी हैं ।

संगोमदिन्द्र चाजवदस्मे पृथु श्रवो बृहत् । त्रिश्वायुर्धेहाक्षितम् ॥ ७ ॥  
 अस्मे धेहि श्रवो बृहद्दयुन्न सहस्रसातमं । इन्द्र ता रथिनोरिपः ॥ ८ ॥  
 वसोरिन्द्रं वसुपतिं गीर्मिर्गृणन्त ऋग्मियं । होम गन्तारमूतये ॥ ९ ॥  
 सुते सुते न्योकसे बृहद्बृहत् पदरिः । इन्द्राय शूपमर्चति ॥ १० ॥



१० सूक्त । इन्द्र देवता हैं । अनुष्टुप् छन्द है ।

गायन्ति त्वा गायत्रिणोऽर्चन्त्यर्कमर्किणः । ब्रह्माणस्त्वा शतक्रत उद्वंशमिव येमिरे ॥ १ ॥  
 यत्सानोः सानुमारुहद्भूर्यस्पष्ट कर्त्वं । तदिन्द्रोऽर्थं चेतति यूथेन वृष्णिरेजति ॥ २ ॥  
 युश्वा हि केशिना हरो वृषणा कक्ष्यथा । अथा न इन्द्र सोमपा गिरामुपश्रुति चर ॥ ३ ॥  
 एहि स्तोमौ अभि स्वराभि गृणीह्यारुच । ब्रह्म च नो वसो सचेन्द्र यज्ञं च वर्धय ॥ ४ ॥  
 उक्थमिन्द्राय शंस्यं वर्धनं पुहन्यपिथे । शक्रो यथा सुतेषु नो रारणत् सख्येषु च ॥ ५ ॥  
 तमित् सखित्च ईमहे तं राये तं सुवोर्व्ये । स शक्र उत नः शक्रदिन्द्रो वसु दयमानः ॥ ६ ॥  
 सुचिवृतं सुनिरजमिन्द्र त्वादातमिद्र्यशः । गवामप ब्रजं वृधि कृणुष्व राधो अद्रिवः ॥ ७ ॥

- ७ इन्द्रदेव ! गौ और अन्न से युक्त, प्रचुर और विस्तृत, सारी आयु चलने योग्य और अक्षय धन हमें दो ।  
 ८ इन्द्र ! हमें मदती कीर्ति, बहुदान-सामर्थ्ययुक्त धन और अनेक-व्यपूर्ण अन्न दान करो ।  
 ९ धनकी रक्षाके लिये हम स्तुति काके इन्द्रको बुलाते हैं । इन्द्र धन-रक्षक, ऋचा-प्रिय और यज्ञ-गमन-कर्ता हैं ।  
 १० प्रत्येक यज्ञमें यज्ञमान लोग सत्राधिवासी और प्रौढ़ इन्द्रके महान् पराक्रमकी प्रशंसा करते हैं ।

१ शतक्रतु इन्द्र ! गायक तुम्हारे उद्देश्यसे गान करते हैं । पूजक पूजनीय इन्द्रकी अर्चना करते हैं । जिस प्रकार नर्तक वंश-खण्डको उन्नत करते हैं, उसी प्रकार स्तुति कालेवाले ब्राह्मण तुम्हें उंचा उठाते हैं ।

२ जब सोमलत्रा के लिये एक पर्वत-मार्गसे दूसरे पर्वत-प्रदेशको यज्ञमान जाता और अनेक कर्म सिरपर उदाता है, तब इन्द्र यज्ञमानका मनोरथ जानते और इच्छित-वर्षणके लिये उत्सुक हो कर मक्षदलके साथ यज्ञ-स्थलमें आनेको प्रस्तुत होते हैं ।

३ अपने केशर-संयुक्त, पाकमी और पुष्टांग दोनों घोड़ोंको रथमें जोड़ो । इसके बाद हमारी स्तुति सुननेके लिये आओ ।

४ हे जनाश्रय इन्द्र ! आओ । हमारी स्तुतिकी प्रशंसा को; समर्थन करो और शब्दोंसे आनन्द प्रकाश करो । इसके सिवा हमारा अन्न और यज्ञ एक साथ ही बढ़ाओ ।

५ अनन्त-शत्रु-निवारक इन्द्रके उद्देश्यसे ऋग्वेदके गीत परिवर्द्धमान हैं, जिनसे शक्तिशाली इन्द्र हमलोगोंके पुत्रों और बन्धुओंके बीच महानाद करें ।

६ हमलोग सैत्री, धन और शक्तिके लिये इन्द्रके पास जाते हैं और शक्तिशाली इन्द्र हमें धन देकर हमारी रक्षा करते हैं ।

७ इन्द्र ! तुम्हारा दिया हुआ धन सर्वत्र फैला हुआ और सुख-प्राप्य है । हे बज्रधारक इन्द्र ! गौका धनति-द्वार उद्-

घाटन करो और धन सम्पादन करो ।



न हि त्वा रोदसी उभे ऋवायमाणमिन्द्रतः । जेपः खर्वतीरपः सं गा अस्मन्व्यं ध्रुनुहि ॥ ८ ॥  
 आभ्रुत्कर्णं श्रुधी हवं नू चिद् दधिष्व मे गिर । इन्द्र स्तोममिमं मम कृन्वायुजश्चिदन्तरम् ॥ ९ ॥  
 विष्वा हि त्वा वृपन्तमं वाजेषु हवनभ्रुतम् । वृपन्तमस्य हूमह ऊर्ति सहस्रसातमाम् ॥ १० ॥  
 आ तू न इन्द्र कौशिक मन्द्रसानः सुतं पिब । नव्यमायुः प्रसूतिर कृधी सहस्रसामृपिम् ॥ ११ ॥  
 परि त्वा गिर्वणो गिर इमा भवन्तु विश्वतः । वृद्धायुमनुवृद्धयो जुष्टा भवन्तु जुष्टयः ॥ १२ ॥



११ सूक्त । इन्द्र देवता हैं । मधुच्छन्दा ऋषिके पुत्र जेता ऋषि हैं ।

इन्द्रं विश्वा अश्वीधनत्समुद्रव्यचसं गिरिः । रथीतमं रथीनां वाजानां सत्पति पतिम् ॥ १ ॥  
 सख्ये त इन्द्र धिजितो मा मेम शयस्सपते । द्यात्मभि प्र नोनुमो जेतरग्रगजितम् ॥ २ ॥  
 पूर्वीरिन्द्रस्य रातयो वि दस्यन्त्यूतयः । यदी वाजस्य गोमतः स्तोतृभ्यो मंहते मद्यम् ॥ ३ ॥  
 पुरां भिन्दुर्युवा कचिरमितौजा अजायत । इन्द्रो विश्वस्य कर्मणो धर्ता वज्री पुरुष्टुतः ॥ ४ ॥

८ इन्द्रदेव ! शत्रु-बधके समयमें स्वर्ग और मर्त्य दोनों ही तुम्हारी महिमाको धारण नहीं कर सकते । स्वर्गीय जल वृष्टि करो और हमें गौ दो ।

९ इन्द्र ! तुम्हारे कान चारों तरफ छन सकते हैं; इसलिये हमारा आह्वान शीघ्र सुना । हमारी स्तुति धारण करो । हमारा यह स्तोत्र और हमारे मित्रका स्तोत्र अपने पास रखो ।

१० इन्द्र ! हम तुम्हें जानते हैं । तुम यथेप्सित वषां करते हो । लड़ाईके मैदानमें तुम हमारी पुकार सुनते हो । इष्ट-साधक तुमको अशेष-सख-साधक रक्षणके लिये हम बुलाते हैं ।

११ इन्द्र ! शीघ्र हमारे पास आओ । हे कुशिक ऋषिके पुत्र ! प्रसन्न होकर सोमस्य पान करो । कार्यकारी शक्ति बढ़ाओ । इस ऋषिको सहस्र-धन-सम्पन्न करो ।

१२ हे स्वतन्वीय इन्द्र ! चारों ओरसे यह स्तुति तुम्हारे पास पहुंचे । तुम चिरायु हो; तुम्हारा अनुगमन करके यह स्तुति बड़ती पावे । तुम्हारा सन्तोष-साधन करके यह स्तुति हमारे लिये प्रीतिकर हो ।

१ सागरकी तरह व्यापक, रथि-श्रेष्ठ, अन्नपति और साजु-रक्षक इन्द्रको हमारी सारी स्तुतियां परिवर्द्धित कर चुकी हैं ।

२ बलपति इन्द्र ! तुम्हारी मित्रतासे हम ऐसे शक्तिशाली हों कि, हमें भय न मालूम पड़े । इन्द्र ! तुम जयशाली और अपराजेय हो । हम तुम्हारी स्तुति करते हैं ।

३ इन्द्रका धन-दान चिर प्रसिद्ध है । यदि इन्द्र प्रार्थी लोगोंको गो-संयुक्त और सामर्थ्य-सम्पन्न धन-दान करें तो प्रार्थियोंकी चिर रक्षा होगी ।

४ युवा, मेधावी, प्रभूत-बलशाली, सब कर्मोंके परिपोषक, वज्रधारी और सर्व-स्तुत इन्द्रने अंडरोंके नगर-विदारक रूपसे जन्म ग्रहण किया था ।

त्वं बलस्य गोमतोऽपावरद्विवो विलं । त्वां देवा अविभ्युपस्तुज्यमानास आविपुः ॥ ५ ॥  
 तथाहं शूर रातिभिः प्रत्यायं सिन्धुमावदन् । उपातिष्ठन्त गिर्वणोविदुष्टे तस्य कारवः ॥ ६ ॥  
 मायाभिरिन्द्र मायिनं त्वं शुष्णमवातिरः । विदुष्टे तस्य मेधिरास्तेषां श्रवांस्युत्तिर ॥ ७ ॥  
 इन्द्रमीशानमोजसाभि स्तोमा अनूपत । सहस्रं यस्य रातय उत वा सन्ति भूयसीः ॥ ८ ॥



४ अनुवाक । १२ सूक्त । अग्नि देवता हैं । यहाँसे २३ सूक्तों

तकके ऋग्वेके पुत्र मेधातिथि ऋषि हैं । गायत्री छन्द है ।

अग्निं दूतं वृषीमहे होतारं विश्ववेदसं । अस्य यज्ञस्य सुकृतम् ॥ १ ॥

अग्निमग्निं ह्ययीमभिः सदा हवन्त विश्पतिं । हव्यवाहं पुरुप्रियम् ॥ २ ॥

अग्ने देवाँ इहावह जज्ञानो वृत्तवर्हिषे । असि होता न ईड्यः ॥ ३ ॥

ताँ उशतो विवोधय यदग्ने यासि दूत्यं । देवैरासत्सि वर्हिषि ॥ ४ ॥

घृताहवन दीद्वित्रः प्रति ष्म रिपतो दह । अग्ने त्वं रक्षस्विनः ॥ ५ ॥

अग्निनाग्निः समिभ्यते कविर्गृहपतिर्युवा । हव्यवाद् जुहास्यः ॥ ६ ॥

१. यज्ञ-युक्त इन्द्र ! तुमने गो-हरण-कर्ता बल नामके अरुकी गुहा उद्घाटित की थी । उस समय बलाहरके निपीड़ित होनेपर देव लोगोंने निर्भय हो कर तुम्हें प्राप्त किया था ।

२. वीर इन्द्र ! मैं चूते हुए सोमरसका गुण सर्वत्र व्यक्त करके और तुम्हारे धन-प्रदानसे आकृष्ट हो कर लौटा हूँ । स्ववनीय इन्द्र ! यज्ञ-कर्ता तुम्हारे पास आते थे और तुम्हारी सत्युत्पत्ता जानते थे ।

३. इन्द्र ! तुमने मायावी शुष्णका माया द्वारा षध किया था । तुम्हारी महिमा मेधावी लोग जानते हैं । उन्हें शक्ति प्रदान करो ।

४. अपने अरुके प्रभावसे जगत्के नियन्ता इन्द्रको प्रार्थियोंने स्तुत किया था । इन्द्रका धन-दान हजारों या हजारोंसे भी अधिक तराकौसे होता है ।

१. देवदूत, देवाह्वानकारी, निखिल-सम्पत्संयुक्त और इस यज्ञके ससम्पादक अग्निको हम भजते हैं ।

२. प्रजा-रक्षक, हव्यवाहक और बहुलोक-प्रिय अग्निको यज्ञकर्ता आवाहक संघों द्वारा निरन्तर आह्वान करते हैं ।

३. हे काष्ठोत्पन्न अग्नि ! छिन्न-तुड़ांवाले यज्ञमें देवोंको बुलाओ । हम हमारे स्तोत्र-पात्र और देवोंको बुलानेवाले हो ।

४. अग्निदेव ! चूँकि देवताओंका दूत-कर्म तुम्हें प्राप्त हो चुका है; इसलिये हव्यकाङ्क्षी देवोंको जगाओ । देवोंके साथ इस कुदा-युक्त यज्ञमें घैशे ।

५. हे अग्नि ! तुम घासे बुलाये गये और प्रकाशमान हो । हमारे द्रोही लोग राक्षसोंसे मिल गये हैं । उन्हें तुम जला दो ।

६. अग्नि अग्निसे ही प्रज्वलित होता है । अग्नि मेधावी, गृह-रक्षक, हव्यवाहक और कुहू-(घृतपात्र)-मुख हैं ।

१. वेदोपेठ कुष्णमोहन चन्द्रोपाध्यायने अपने "Aryan witness" में लिखा है कि, ऋग्वेदका बल ही वेदीलोगाधि-पति बल था ।

कविमग्निमुपस्तुहि सत्यधर्माणमश्वरे । देवममीवचातनम् ॥ ७ ॥  
 यस्त्वामग्ने हविष्यतिर्दत्तं देव सपर्यति । तस्य स्म प्राविता भव ॥ ८ ॥  
 यो अग्निं देववीतये हविष्मां आविवासति । तस्मै पावकं मृडय ॥ ९ ॥  
 स नः पावकं दीदिवोऽग्ने देवाँ इहावह । उपयज्ञं हविश्चनः ॥ १० ॥  
 स नः स्तवान् आ भर गायत्रेण नवीयसा । रयिं वीरवतीमिपम् ॥ ११ ॥  
 अग्ने शुक्रेण शोचिषा त्रिभवाभिर्द्वेवहृतिभिः । इमं स्तोमं जुपस्व नः ॥ १२ ॥

१३ सूक्त । अग्नि देवता हैं ।

सुसमिद्धो न आवह देवाँ अग्ने हविष्यते । होतः पावकं यज्ञि च ॥ १ ॥  
 मधुमन्तं तनूनपाद् यज्ञं देवेषु नः कवे । अद्या कृणुहि वातये ॥ २ ॥  
 नराशंसमिह प्रियमस्मिन् यज्ञ उपह्वये । मधुजिह्वं हविष्कृतम् ॥ ३ ॥  
 अग्ने सुखतमे रथे देवाँ ईद्वित आवह । असि होता मनुर्हितः ॥ ४ ॥  
 स्तुणीत बर्हिरानुपगृष्टतपृष्टं मनोपिणः । यत्रामृतस्य चक्षणम् ॥ ५ ॥  
 वि श्रयन्तामृतावृधो द्वारो देवोरसश्चतः । अद्या नूनं च यष्ट्वे ॥ ६ ॥

७ मेधावी, सत्यधर्मा और शत्रु-नाशक देव अग्निके पास आकर यज्ञ-कार्यमें उसकी स्तुति करो ।

८ अग्निदेव ! तुम देवदूत हो । जो हव्यदाता तुम्हारी परिचयां कर्ता है, उसकी तुप भर्जं भांति रक्षा करो ।

९ जो हव्यदाता देवोंके हव्य-भक्षणके लिये अग्निके पास आकर भली भांति परिचयां कर्ता है, उसको, तुम, दे पावक ! सुखी करो ।

१० हे ज्वलन्त पावक ! हमारे लिये तुम देवोंको यहाँ ले आओ और हमारा यज्ञ और हव्य देवोंके पत्स ले जाओ ।

११ अग्निदेव ! नये गायत्री-छन्दके मंत्रोंसे स्तुत हो कर हमारे लिये धन और वर्त्यदाली अन्न प्रदान करो ।

१२ अग्नि ! तुम शुभ्र-प्रकाश-स्वरूप और देवोंको बुलानेमें स. रथं स्तोत्रोंसे युक्त हो । तुम हमारा यह स्तोत्र ग्रहण करो ।

१ हे सुखमिद्ध, नामक अग्नि ! हमारे यज्ञमानके पास देवताओंको ले आओ । पावक ! देवाह्वानकारी ! यज्ञ सम्पादन करो ।

२ हे मेधावी तनूनपाद् नामक अग्नि ! हमारे सरस यज्ञको, आज, उपभोगके लिये, देवोंके पास ले जाओ ।

३ इस यज्ञ-देशमें, इस यज्ञमें, प्रिय, मधुजिह्व और हव्य-सम्पादक नराशंस नामक अग्निको ह्य आह्वान करते हैं ।

४ हे इक्षित ( इला ) अग्नि ! सुखकारी रथपर देवोंको ले आओ । मनुष्यों द्वारा तुप देवोंको बुलानेवाले सबसे जाते हो ।

५ बुद्धिशाली ऋत्विक् ! परस्पर-संबद्ध और धीसे आच्छादित बर्हिः-( अग्नि )-कुश विस्तार करो । कुशके ऊपर धी दिखाई देता है ।

६ यज्ञशालाका द्वार खोला जाय । वह द्वार यज्ञका परिवर्द्धक है । द्वार प्रकाशमान और जन-रहित था । आज अवश्य यज्ञ सम्पादन करना होगा ।

नक्तोपासा सुपेशसास्मिन् यज्ञ उपहृये । इदं नो बर्हिग्रासदे ॥ ७ ॥  
 ना सुजिहा उप हृये होतारा दैव्या कवी । यज्ञं नो यक्षतामिमम् ॥ ८ ॥  
 इडा सरस्वती मही तिक्तो देवीर्मर्योभुवः । बर्हिः सीदन्त्वस्त्रिधः ॥ ९ ॥  
 इह त्वष्टारमश्रियं विश्वरूपमुपहृये । अस्माकमस्तु केवलः ॥ १० ॥  
 अथ सृजा वनस्पते देव देवेभ्यो हविः । प्र दातुरस्तु चेतनम् ॥ ११ ॥  
 स्वाहा यमं कृणोतनेन्द्राय यज्जनो गृहे । तत्र देवा उपहृये ॥ १२ ॥



१४ सूक्त । अग्नि देवता हैं ।

तेगिरश्नं दुवो गिरो विश्वेभिः सोमपीतये । देवेभिर्याहि यक्षि च ॥ १ ॥  
 आ त्वा कण्या अहूपत गृणन्ति विप्र ते ध्रियः । देवेभिरश्न आ गहि ॥ २ ॥  
 इन्द्रवायु बृहस्पति मित्राग्नि पूषणं भगं । आदित्यान् मारुतं गर्णं ॥ ३ ॥

- ० सौन्दर्यशास्त्री रात्रि और उपा ( अग्नि ) को अपने इन बुद्धोंपर दैत्योंके लिये, इस यज्ञमें, हम बुलाते हैं ।
- ८ सजिहा, मेधावी, आह्वानकारी देव-द्वय ( अग्नि ) को बुलाता हूँ । वे हमारा यह यज्ञ सम्पादन करें ।
- ९ उपाश्रावो और अधिनामिनी इत्या, सरस्वती और मही आदि तीनों देवियों ( अग्नि ) इन बुद्धोंपर विराजें ।
- १० उनम और नाना-रूपधारी त्वष्टा ( अग्नि ) को हम यज्ञमें बुलाते हैं । त्वष्टा केवल हमारे पक्षमें ही रहें ।
- ११ हे देव वनस्पति ! देवोंको इच्छ समर्पण करो, जिससे इच्छादाताको परम ज्ञान उत्पन्न हो ।
- १२ इन्द्रके लिये यज्ञदानके पथमें मन्वाद्या द्वारा यज्ञ सम्पन्न करो । उसी यज्ञमें हम देवोंको बुलाते हैं ।

१ अग्निदेव ! इन विश्वदेवोंके साथ सोमरस पीनेके लिये हमारी परिचर्या और हमारी स्तुति ग्रहण करने पधारो । हमारे यज्ञका सम्पादन करो ।

२ हे मेधावी अग्नि ! कण्व-पुत्र तुम्हें बुला रहे हैं; साथ ही तुम्हारे कर्मोंकी प्रशंसा भी कर रहे हैं । देवोंके साथ आओ ।

३ इन्द्र, वायु, बृहस्पति, मित्र, अग्नि, पूषा, भग, आदित्य और मरुद्गणको यज्ञ-भाग दान करो ।

इस त्रयोदश सूक्तका नाम आर्क्ष-सूक्त है । आर्क्षी शब्दका अर्थ है विशेष प्रीतिकर । इस सूक्तका पशु-यज्ञमें विनियोग होता है । पहले प्रत्येक गोशुक्र अलग अलग आसी सूक्त था । प्रत्येकमें ये दश आर्क्षी सूक्त हैं:—

प्रथम-षण्डकर्म १३, १५२ और १८८ सूक्त, द्वितीयमें ३, तृतीयमें ४, पञ्चममें ९, सप्तममें २, नवममें ९, दशममें २० और ११० सूक्त । इस त्रयोदश सूक्तकी १२ ऋचाओंमें इन १२ नामोंसे अग्निकी स्तुति की गयी है:—

१ स्यमिद्ध, २ तन्नूतयात्, ३ नरादांस, ४ इत्या, ५ बर्हिः, ६ देवीश्वार, ७ तन्म और उपा, ८ देवीश्वर, ९ इत्या, सरस्वती, मही, १० त्वष्टा, ११ वनस्पति, १२ स्वाहा । नरादांस या नैयीदांस नामक अग्निकी पूजा ईरानी भी करते हैं ।

× बृहस्पति स्तुतिदेव हैं । बृहस्पतिको एक नाम चाण्डणस्पति भी है । जिस सूर्यका तेज अत्युप-नहीं है, उसका नाम-पूषा है । आदित्य लोग अदितिकी सन्तान हैं । प्रत्येकके दूसरे ऋण्डके २७ वें सूक्तमें ये छः आदित्य गाने गये हैं—मित्र,

प्र, वो भ्रियन्त इन्दवो मत्सरा मादयिष्णवः । द्रप्सा मध्वश्चमूपदः ॥ ४ ॥  
 ईडते त्वामवस्यवः ऋणवास्तो वृक्तवर्हिपः । हविष्मन्तो अरंकृतः ॥ ५ ॥  
 घृतपृष्ठा मनोयुजो ये त्वा वहन्ति वहयः । आ देवानत्सोमपीतये ॥ ६ ॥  
 तान् यजत्राँ ऋग्तावृधोऽग्ने पत्नीवतस्कृधि । मध्वः सुजिह्व पापय ॥ ७ ॥  
 ये यजत्रा य ईड्यास्ते ते पिबन्तु जिह्वया । मधोरधो वषट्कृति ॥ ८ ॥  
 आकीँ सूर्यस्य रोचनाद्विभान्देवाँ, उपव्युधः । विप्रो होतेह वक्षति ॥ ९ ॥  
 विप्रधेभिः सोम्यं मध्वश्च इन्द्रेण वायुना । पिवा मित्रस्य धामभिः ॥ १० ॥  
 त्वं होता मनुर्हितःऽग्ने यज्ञेषु सोदसि । सेमं नो अध्वरं यज ॥ ११ ॥  
 युक्ष्वा हारुपी रथे हरितो देव रोहितः । तामिद्वेवाँ इहावह ॥ १२ ॥



- ४ तुम लोगोंके लिये तृप्तिकर, प्रसन्नता-वाहक, विन्दु-रूप, मधुर और पात्र-स्थित सोमरस तैयार हो रहा है ।  
 ५ अग्निदेव ! इव्य-संयुक्त और विभूषित कण्व-पुत्र कुश, तोड़कर तुमसे रक्षा पानेकी अभिलाषासे तुम्हारी स्तुति कर रहे हैं ।  
 ६ अग्नि ! संकल्प मात्रसे ही तुम्हारे रथमें जो अटनेवाले दीप्तपृष्ठ वाहक तुम्हें ढोते हैं, उनके द्वारा ही देवोंको सोम-रस-पान करनेके लिये बुलाओ ।  
 ७ अग्नि ! पूजनीय और यज्ञ-वर्द्धक देवोंको पत्नी-युक्त करो । सुजिह्व ! देवोंको मधुर सोमरस पान कराओ ।  
 ८ जो देव यजनीय और स्तुति-पात्र हैं, अग्नि ! वे वषट्कार-कालमें तुम्हारी रसना द्वारा सोमरस पान करें ।\*  
 ९ मेघावी और देवोंको बुलानेवाले अग्नि प्रातःकाल जागे हुए सारे देवोंको, सूर्य-प्रकाशित स्वर्गलोकसे, इस स्थानमें, निश्चय, ले आवें ।  
 १० अग्निदेव ! तुम सब देवों, इन्द्र, वायु और मित्रके तेजःपुञ्जके साथ सोम-मधु पान करो ।  
 ११ अग्नि ! मनुष्य-सञ्चालित और देवोंको बुलानेवाले यज्ञमें बैठो । तुम हमारा यज्ञ सम्पादन करो ।  
 १२ अग्निदेव ! रोहित नामके गति-शील और घहन-समर्थ घोड़ोंको रथमें जोतो और उनसे देवोंको इस यज्ञमें ले आओ ।

अर्यमा, भग, चरुण, अंश और अंश । नवम मण्डलके ११४ वें सूक्तमें तो ७ आदित्योंका उल्लेख है । दशम मण्डलके ७२ वें सूक्तमें लिखा है कि, अदितिके आठ पुत्र थे, जिनमें मार्तण्डको त्याग कर शेष ७ को देवोंके पास अदिति ले गयीं । तैत्तिरीय ब्राह्मणमें इन आठ आदित्योंका उल्लेख है—धाता, अर्यमा, मित्र, चरुण, अंश, भग, इन्द्र और विवस्वान् । शतपथ ब्राह्मणमें बारह महीनोंके बारह आदित्य (सूर्य) माने गये हैं । महाभारत (आदि पर्व, १२१ अ०) में बारह आदित्योंके ये बारह नाम हैं—धाता, अर्यमा, मित्र, चरुण, अंश, भग, इन्द्र, विवस्वान्, पूषा, त्वष्टा, सविता और विष्णु । अदिति शब्दका अर्थ है अखण्ड । अदिति देवोंकी माता है । यास्कने अदितिको देव-माता ही माना है ।

\* यज्ञकी समाप्तिके समय वषट्कार शब्दका प्रयोग किया जाता है ।

१५ सूक्त । ऋतु प्रभृति देवता हैं ।

इन्द्र सोमं पिब ऋतुना त्वा विशन्तिवन्द्वः । मत् सरासस्तदोक्सः ॥ १ ॥  
 मरुतः पिबत ऋतुना पोत्राद्यज्ञं पुनीतन । यूयं हि ष्टा सुदानवः ॥ २ ॥  
 अभि यज्ञं गृणोहि नो भ्रावो नेष्टः पिब ऋतुना । त्वं हि रत्नधा असि ॥ ३ ॥  
 अग्ने देवाँ इहावह सादया योनिषु त्रिषु । परि भूय पिब ऋतुमा ॥ ४ ॥  
 ब्राह्मणादिन्द्र राधसः पिबा सोममृतं नु । त्वेद्वि सख्यमस्तृतम् ॥ ५ ॥  
 युचं दक्षं धृतवत मित्रावरुण दूडभं । ऋतुना यज्ञमाश्राथे ॥ ६ ॥  
 द्रविणोदा द्रविणसो ब्रावहस्तासो अश्वरे । यज्ञेषु देवमोदते ॥ ७ ॥  
 द्रविणोदा ददानु नो वसूनि यानि शृण्वरे । देवेषु ता वनामहे ॥ ८ ॥  
 द्रविणोदाः पिपीपति जुहोत प्र च तिष्ठत । नेष्ट्राद्भृतिभिरिष्यत ॥ ९ ॥  
 यत्त्वा तुरीयमृतुभिर्द्रविणोदो यजामहे । अध स्मा नो दर्दिमत्र ॥ १० ॥  
 अश्विना पिबतं मधु दीद्यज्ञो मुचित्रता । ऋतुना यज्ञवाहसा ॥ ११ ॥  
 गार्हपत्येन सन्त्य ऋतुना यज्ञनीरसि । देवान्देवयते यज ॥ १२ ॥



- १ इन्द्र ! ऋतुके साथ सोमरस पान करो । तृप्तिकर और आश्रय-योग्य सोमरस तुमको प्राप्त हो ।
- २ मरुद्गण ! ऋतुके साथ पोत्र नामके ऋत्विक्के पात्रसे सोम पीओ । हमारा यज्ञ पवित्र करो । सचमुच तुम दान-परायण हो ।
- ३ पवीयुक्त नेष्टा या स्वप्या ! देवोंके पास हमारे यज्ञको प्रशंसा करो । ऋतुके साथ सोमरस पान करो; क्योंकि तुम रत्नदाता हो ।
- ४ अभि ! देवोंको यज्ञ बुलाओ । तीन यज्ञ-स्थानोंमें उन्हें बैठाओ । उन्हें अलङ्कृत करो और तुम ऋतुके साथ सोम-पान करो ।
- ५ ब्राह्मणाच्छंसी पुरोहितके धनोपेत पात्रसे, ऋतुओंके पत्रात्, तुम सोम पान करो; क्योंकि तुम्हारी मित्रता अदृष्ट है ।
- ६ धृव-व्रत मित्र और वरुण ! तुम लोग ऋतुके साथ हमारे इस प्रवृद्ध और शत्रुओं द्वारा अदहनीय यज्ञमें व्यास हो ।
- ७ नानाविध यज्ञोंमें धनाभिलाषी पुरोहित सोमरस तैयार करनेके लिये द्वायमें पत्थर लेकर द्रविणोदा या धन-प्रद अग्नि-की स्तुति करते हैं ।
- ८ जिन सब सम्पत्तियोंकी कथा सुनी जाती है, द्रविणोदा ( अग्नि ) हमें वह सब सम्पत्ति दें और वह सम्पत्ति देवयज्ञके लिये हम ग्रहण करेंगे ।
- ९ द्रविणोदा, ऋतुओंके साथ, स्वप्याके पात्रसे सोम पान करना चाहते हैं । ऋत्विक् लोग ! यज्ञमें आओ, हाँस करो; अनन्तर प्रस्थान करो ।
- १० हे द्रविणोदा ! चंकि ऋतुओंके साथ तुम्हें चौथी बार पूजता हूँ; इसलिये अवश्य ही तुम हमें धन-दान करो ।
- ११ प्रकृतमान अग्निसे संयुक्त और विशुद्ध-कर्षा अश्विनीकुमारद्वय ! मधु सोम पान करो । तुम्हीं ऋतुओंके साथ यज्ञके निर्वाहक हो ।
- १२ गृहपति, छन्द और फल-प्रद अग्निदेव ! तुम ऋतुके साथ यज्ञके निर्वाहक हो । देवाभिलाषी यज्ञमानके लिये देवोंको अर्चना करो ।

१६ सूक्त । इन्द्र देवता हैं ।

आ त्वा वहन्तु हरयो वृषणः सोमपीतये । इन्द्र त्वा सूरचक्षसः ॥ १ ॥  
 इमा धाना घृतस्तुत्रो हरो इहोप वक्षतः । इन्द्रं सुखतमे रथे ॥ २ ॥  
 इन्द्रं प्रातर्हवामहे इन्द्रं प्रयत्यध्वरः । इन्द्रं सोमस्य पीतये ॥ ३ ॥  
 उप नः सुतमागहि हरिभिरिन्द्र केशिभिः । सुते हि त्वा हवामहे ॥ ४ ॥  
 सेमं नः स्तोममागह्युपेद्रं सवनं सुतं । गीरो न तृपितः पिव ॥ ५ ॥  
 इमे सोमास इन्द्रवः सुतासो अधि वर्हिषी । ताँ इन्द्र सहसो पिव ॥ ६ ॥  
 अयं ते स्तोमो अप्रियो हृदिरुपगस्तु शन्तमः । अथा सोमं सुतं पिव ॥ ७ ॥  
 विश्वमित् सवनं सुतमिन्द्रो मदाय गच्छति । घृत्रहा सोमपीतये ॥ ८ ॥  
 सेमं नः काममापृण गोभिरध्वैः शतक्रतो । स्तवाम त्वा स्वाध्व्यः ॥ ९ ॥

१७ सूक्त । इन्द्र और वरुण देवता हैं ।

इन्द्रा वरुणयोरहं सम्राजोरत्र आ वृणे । ता नो मृडात ईदृशे ॥ १ ॥  
 गन्तारा हि स्थोऽवसे हवं विप्रस्य मात्रतः । धर्त्तारा चर्यणीनाम् ॥ २ ॥

१ अथेप्सित चर्पके इन्द्र ! तुम्हारे घोड़े, तुम्हें सोम-पान करानेके लिये, यहां ले आवें । सूर्यकी तरह प्रकाश-युक्त पुरोहित मंत्रों द्वारा तुम्हें प्रकाशित करें ।

२ हरि नामके दोनों घोड़े घृत-स्यन्त्री धान्यके पास, सुखकारी रथसे, इन्द्रको ले आवें ।

३ मैं प्रातःकाल इन्द्रको बुलाता हूँ, यज्ञ-सम्पादन-कालमें इन्द्रको बुलाता हूँ और यज्ञ-समाप्ति-समयमें, सोमपानके लिये, इन्द्रको बुलाता हूँ ।

४ इन्द्रदेव ! केशर-युक्त अश्वोंके साथ तुम हमारे संस्कृत सोमरसके निकट आओ । सोमरस तैयार होनेपर हम तुम्हें बुलार्ते हैं ।

५ इन्द्र ! तुम हमारी यह स्तुति ग्रहण करने आओ; क्योंकि यज्ञ-सवन (सोमरस) तैयार है । प्यासे हुए गीरे हरिणोंकी तरह आओ ।

६ यह तरह सोमरस खिलाये हुए कुशोंपर पर्याप्त अभिपुत (संस्कृत) है; इन्द्र ! बलके लिये इस सोमका पान करो ।

७ इन्द्र ! यह स्तुति श्रेष्ठ है; यह तुम्हारे लिये हृदयस्पर्शा और सुखकर हो । अनन्तर संस्कृत सोम पीओ ।

८ घृत्रासुरका बध करने वाले इन्द्र सोमपान और प्रसन्नताके लिये सारे सोमरस-संयुक्त यज्ञोंमें जाते हैं ।

९ सौ यज्ञ करनेवाले इन्द्र ! गाथों और घोड़ोंसे तुम हमारी सारी अभिलाषाएँ भली भाँति पूर्ण करो । हम ध्यानस्थ होकर तुम्हारी स्तुति करते हैं ।

१ मैं सम्राट् इन्द्र और वरुणसे, अपनी रक्षाके लिये, याचना करता हूँ । ऐसी याचना करनेपर ये दोनों हमें सुखी करेंगे ।

२ तुम मेरे जैसे पुरोहितोंकी रक्षाके लिये मेरा आह्वान ग्रहण करो । तुम मनुष्योंके स्वामी हो ।

अनुकामं तर्पयथामिन्द्रावरुण राय आ । ता वां नेदिष्टमीमहे ॥ ३ ॥  
 युवाकु हि शचीनां युवाकु सुमन्तानां । भूयाम वाजदात्ताम् ॥ ४ ॥  
 इन्द्रः सहस्रदात्रां वरुणः शंभ्यानां । क्रतुर्भवत्युक्थ्यः ॥ ५ ॥  
 तयोरिद्वसा वयं सनेम नि च ध्रोमहि । स्यादुत प्ररेचनम् ॥ ६ ॥  
 इन्द्रावरुण वामहं हुवे त्रित्राय राधसं । अस्मान्स्तु जिग्युषस्स्रुतम् ॥ ७ ॥  
 इन्द्रावरुण नू नु वां सिपासन्तोषु धीष्वा । अस्मभ्यं शर्मं यच्छतम् ॥ ८ ॥  
 प्र वामश्रोतु सुष्टुतिरिन्द्रावरुण यां हुवे । यामृधाथे सधस्स्रुतिम् ॥ ९ ॥

५ अनुवाक । १८ सूक्त । ब्रह्मणस्पति आदि देवता हैं ।

सोमानं स्वरणं कृणुहि ब्रह्मणस्पते । कश्चीवन्नं यः उशिशः ॥ १ ॥  
 यो रेवान् यो अर्मावहा घसुक्त्विन् पुष्टिचर्द्धनः । स नः सिरक्तु यस्तुतः ॥ २ ॥

३ इन्द्र और वरुण ! हमारे मनोरथके अनुसार, धन देकर हमें तुम करो । हमारी यही इच्छा है कि, तुम लोग हमारे पास रहो ।

४ चंकि हमारे यज्ञमें इन्द्र मिला हुआ है और इतमें पुरोहितोंका स्तोत्र भी सम्मिलित हो गया है; इसलिये हम अन्न-दानाओंमें अर्पणा हैं ।

५ असंख्य धन-दाताओंमें इन्द्र धनके दाना और स्ववनाय देवोंमें वरुण स्तुति-पात्र हैं ।

६ उनके रक्षणमें हम धनका उपयोग और संवध करते हैं । इसके अतिरिक्त हमारे पास यथेष्ट धन हो ।

७ इन्द्र और वरुण ! तद-तदा के धनोंके लिये मैं तुम लोगोंको बुलाता हूँ । हमें भली भाँति विजयी बनाओ ।

८ इन्द्र और वरुण ! तुम्हारा अच्छी तरहसे सेवा कानेके लिये हमारी बुद्धि अभिलाषिणी है । हमें शीघ्र छल हो ।

९ इन्द्र और वरुण ! त्विन् स्तुतिमें हम तुम्हें बुलाते हैं, अरनी जिस स्तुतिको तुम परिवर्द्धित करते हो, वही सशो-भन स्तुति तुम्हें प्राप्त हो ।

१ हे ब्रह्मणस्पति ! मुझ सोमस-दानाका उशिश-पुत्र कर्त्तावन्ता तद्व देवनाओंमें प्रसिद्ध करो ।\*

२ जो सम्यक्शाली, रोगापमारक, धन-दाता, पुष्टि-चर्द्धक और शीघ्र कर्त्त-दाता हैं, वे ही ब्रह्मणस्पति या बृहस्पति देवता हमारे ऊपर अनुपाद करें ।

मत्स्य-पुराण, वायुपुराण और महाभारतमें कर्त्तावन्ताकी कथा है । कथा गया है कि, कलिपूर्वकालके राजा निःसन्तान थे । उन्होंने पुत्र प्राप्तिके लालसासे अरनी शानाका दौर्घ्वनामा ऋषिके पास, सद्बलाके लिये, भेजा । परन्तु स्वयं ऋषिके पास न जाकर शानाने अपनी दासी उशिशको भेज दिया । कलनः दौर्घ्वनामा द्वारा उशिशके गर्भसे कर्त्तावन्ताकी उत्पत्ति हुई, जो प्रसिद्ध ऋषि और ऋग्वेदके प्रथम अष्टकके ११६ से १२१ तकके सूक्तोंके आविष्कर्ता हुए । पश्चात्तय और पौरस्त्य—दोनों नवीन विचारके विद्वान् यज्ञी या १ मानते हैं । परन्तु सनातन-धर्मों विद्वान् इस कथानका स्वरुत्तर मानते हैं । कुछ विद्वानोंका तो यह मत है कि, यह उशिश और कर्त्तावन्त दूयं ही थे । हम भी इसी मतके हैं ।



मा नः शंसो अरूपो धूर्तिः प्रणङ्मर्त्यस्य । रक्षा णो ब्रह्मणस्पते ॥ ३ ॥  
 स धा चोरो न रिप्यति यमिन्द्रो ब्रह्मणस्पतिः । सोमो हिनोति मर्त्यम् ॥ ४ ॥  
 त्वं तं ब्रह्मणस्पते सोम इन्द्रश्च मर्त्यं । दक्षिणा पात्रंहसः ॥ ५ ॥  
 सदसस्पतिमद्भूतं प्रियमिन्द्रस्य काम्यं । सनिं मेधामयासिगम् ॥ ६ ॥  
 यस्मादृते न सिध्यति यज्ञ विपश्चितश्चन । स धीनां योगमिन्द्रति ॥ ७ ॥  
 आद्भोति हविष्कृतिं प्राञ्चं कृणोत्यध्वरं । होत्रा देवेषु गच्छति ॥ ८ ॥  
 नराशंसं सुधृष्टमपश्यं सप्रधस्तमं । दिवो न सद्यमन्वसम् ॥ ९ ॥

१९ सूक्त । अग्नि और मरुद्गण देवता हैं ।

प्रति त्वं चास्मध्वरं गोपीथाय प्र ह्यसे । मरुद्भिरग्न आ गहि ॥ १ ॥  
 नहि देवो न मर्त्यो महस्तत्र क्रतुं परः । मरुद्भिरग्न आ गहि ॥ २ ॥  
 ये महो रजसो विदुर्विश्वे देवासो अद्भुहः । मरुद्भिरग्न आ गहि ॥ ३ ॥  
 य उग्रा अर्कमानचुरना धृष्टास ओजसा । मरुद्भिरग्न आ गहि ॥ ४ ॥

३ ऊचम मचानेवाले मनुष्योंको डाह-भरी निन्दा हमें न छू सके । हे ब्रह्मणस्पति ! हमारी रक्षा करो ।

४ जिसे इन्द्र, वरुण और सोम उन्नयन करते हैं, वह वीर मनुष्य विनाशको नहीं प्राप्त होता ।

५ हे ब्रह्मणस्पति ! तुम, सोम, इन्द्र और दक्षिणा देवी—सब उस मनुष्यको पापसे बचाओ ।

६ आश्चर्यकारक, इन्द्र-प्रिय, कर्पनीय और धनदाता सदसस्पति ( अग्नि ) के पास हम स्मृति-शक्तिकी याचना कर चुके हैं ।

७ जिनकी प्रसन्नताके बिना ज्ञानवान्का भी यज्ञ सिद्ध नहीं होता, वहाँ अग्नि हमारी मानसिक वृत्तियोंको सम्यन्व-युक्त किये हुए हैं ।

८ अनन्तर वही अग्नि हव्य-सम्पादक यज्ञमानको उन्नयन और अच्छी तरह यज्ञकी समाप्ति करते हैं । उनकी कृपासे हमारी स्तुति देवोंको प्राप्त हो ।

९ प्रतापशाली, प्रसिद्ध और आकाशकी तरह तेजस्वी, नराशंस देवताको मैं देख चुका हूँ ।

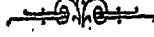
१ अग्निदेव ! इस उन्नर यज्ञमें सोमरसका पान करनेके लिये तुम बुलाये जाते हो; इसलिये मरुद्गणके साथ आओ ।

२ अग्निदेव ! तुम महाबुद्धि हो । ऐसा कोई उच्च देव या मनुष्य नहीं है, जो तुम्हारे यज्ञका उल्लङ्घन कर सके । मरुद्गणके साथ आओ ।

३ अग्निदेव ! जो प्रकारशाली और हिंसा-शून्य मरुद्गण महावृष्टि करना जानते हैं, उन मस्तोंके साथ आओ ।

४ जिन उग्र और अजेयबलशाली मस्तोंने जल-वृष्टि की थी; अग्निदेव, उन्हेंके साथ पधारो ।

ये शुभ्रा घोरवर्षसः सुश्रवास्तो रिशादसः । मरुद्भिरग्न आ गहि ॥ ५ ॥  
 ये नाकस्याधि रोचने दिवि देवास आसते । मरुद्भिरग्न आ गहि ॥ ६ ॥  
 य इङ्खयन्ति पर्वतां तिरः समुद्रमर्णवं । मरुद्भिरग्न आ गहि ॥ ७ ॥  
 आ ये तन्वन्ति रथिमभिस्तिरः समुद्रमोजसा । मरुद्भिरग्न आ गहि ॥ ८ ॥  
 अग्नि त्वां पूर्वपीतये सृजामि सोम्यं मधु । मरुद्भिरग्न आ गहि ॥ ९ ॥



- ५ जो उद्योतन और उग्र रूप धारण करनेवाले हैं, जो पर्याप्त-बलवाली और शत्रु-हारी हैं, अग्निदेव, उन्हीं मरुद्गणके साथ आओ ।
- ६ आकाशके ऊपर प्रकाश-स्वरूप स्वर्गमें जो दीप्तिमान् मस्त रहते हैं, अग्नि ! उन्हींके साथ आओ ।
- ७ जो मेघ-मालिका सञ्चालन करते और जल-राशिको समुद्रमें गिराते हैं, अग्नि ! उन्हीं मरुद्गणके साथ आओ ।
- ८ जो सूर्य-किरणोंके साथ समस्त आकाशमें व्याप्त हैं और जो बलसे समुद्रको उत्क्षिप्त करते हैं, अग्निदेव, उन्हीं मरुद्गणके साथ आओ ।
- ९ तुम्हारे प्रथम पानके लिये सोम-मधु दे रहा हूँ । अग्निदेव ! मरुद्गणके साथ आओ ।

## प्रथम अध्याय समाप्त



## २ अध्याय ।

५ अनुवाक ( आशुत ) । २० सूक्त । ऋभुगण देवता हैं ।

अयं देवाय जन्मने स्तोमो विप्रेभिरासया । अकारि रत्नधातमः ॥ १ ॥  
 य इन्द्राय चक्षीयुजा ततश्चूर्मनसा हरो । शर्मोभिर्यज्ञमाशत ॥ २ ॥  
 तक्षत्रासत्याभ्यां परिजमानं सुखं रथं । तक्षन्धेनुं सवर्द्ध्याम् ॥ ३ ॥  
 युवाना पितरा पुनः सत्यमंवा ऋजूयवः । ऋभवो विष्ट्यक्रत ॥ ४ ॥  
 सं वो मदासो अपमतेन्द्रेण च महत्वता । आदित्येभिश्च राजमिः ॥ ५ ॥  
 उतत्तयं चमसं नवं त्वष्टुर्देवस्य निष्कृतम् । अकृतं चतुरः पुनः ॥ ६ ॥

१ जिन ऋभुओंने जन्म ग्रहण किया था, उन्होंने उद्देश्यसे मेधावी ऋत्विजोंके, अपने सुखमें, यह प्रभूत धन-प्रद स्तोत्र स्मरण किया था । \*

२ जिन्होंने इन्द्रके उन हरि नामके घोड़ोंकी, मानसिक थलसे, सृष्टि की है, जो घोड़े आज्ञा पाते ही रथमें संयुक्त हो जाते हैं, वे ही ऋभुलोग, चमस आदि उपकरण-द्रव्योंके साथ, हमारे यज्ञमें व्यास हैं ।

३ ऋभुओंने अदिवनीकुमारद्वयके लिये सर्वत्र-गन्ता और सुखवाही एक रथका निर्माण किया था और दूध देनेवाली एक गाय भी पैदा की थी ।

४ सरल-हृदय और सब कामोंमें व्यास ऋभुओंका मंत्र विफल नहीं होता । उन्होंने अपने मां-बापको फिर जवान बना दिया था ।

५ ऋभुगण ! महद्गमने संयुक्त इन्द्र और शीप्यमान सूर्यके साथ तुम लोगोंको सोमस प्रदान किया जाता है ।

६ त्वष्टाका वह नया चमस बिलकुल तैयार हो गया था; परन्तु उसे ऋभुओंने चार टुकड़ोंमें विभक्त कर दिया । \*

\* सायणाचार्यने लिखा है कि, ऋभु लोग मनुष्य थे; परन्तु पीछे तपस्याके प्रभावसे देवत्व प्राप्त कर लिया था ।

अङ्गिराके पुत्रका नाम छधन्वा था और छधन्वाके ऋभु, विभु और वाज नामके तीन पुत्र थे । ऐसी कथा है कि, उन्होंने अपने कर्मके बल देवत्व प्राप्त किया था और साथ ही सूर्य-लोकमें वास भी किया था । प्रथम अष्टकेके ११० सूक्तकी २ और ३ मंत्रोंको देखनेसे यही बात मालूम होती है । सायणाचार्यने ऋभु शब्दका एक अर्थ सूर्य किरण भी किया है । मैक्समूलरने ऋभुका अर्थ सूर्य किया है और विल्सन 'सूर्य-रदिम' अर्थ ही मानते हैं । मैक्समूलरकी यह भी राय है कि, वृषु नामक ऋत्विज्जने देव-रूपसे, सर्व-प्रथम, ऋभुओंको पूजा था । मैक्समूलर साहबका यह भी कथन है कि, ग्रीकोंके आरफेअस ( Or. h u. ) की कथा भी यीसमें ऋभुगणके समान ही प्रचलित है । ऋभुका एक नाम अर्भुर भी है । जो हो; परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि, मनुष्यत्वसे देवत्व प्राप्त करनेके जीते-जागते उदाहरण ऋभुगण हैं ।

\* जिसमें सोमस रखा जाता था, उसका नाम चमस था । त्वष्टा विदवकर्मोंको कहा जाता है । त्वष्टा ही इन्द्रका वज्र बनाते हैं । त्वष्टाके पुत्र ऋभुगण हैं । अदिवनीकुमार त्वष्टाके दौहित्र थे । जिस तरह त्वष्टाकी कन्या स. ण्यूने अश्व-रूप

ते नो रत्नानि धत्तन त्रिरा साप्तानि सुन्वते । एकमेकं सुरास्तिभिः ॥ ७ ॥  
अधारयन्त वह्नयोऽभजन्त सुश्रुत्यया । भागं देवेषु यक्षियम् ॥ ८ ॥

२१ सूक्त । इन्द्र और अग्निदेवता हैं ।

इहेन्द्राग्नी उपहृये तयोरित् स्तोममुश्मसि । ता सोमं सोमपातमा ॥ १ ॥  
ता यक्षेषु प्रशंसतेन्द्राग्नी शुम्भता नरः । ता गायत्रेषु गायत ॥ २ ॥  
ता मित्रस्य प्रशस्तय इन्द्राग्नी ता हवामहे । सोमपा सोमपीतये ॥ ३ ॥  
उप्रा सन्ता हवामह उपेदं सवनं सुतम् । इन्द्राग्नी एह गच्छताम् ॥ ४ ॥  
ता महान्ता सदस्पती इन्द्राग्नी रक्ष उञ्जतम् । अप्रजाः सन्त्वत्रिणः ॥ ५ ॥  
तेन सत्येन जागृतमग्नि प्रचेतुने पदे । इन्द्राग्नी शर्म यच्छतम् ॥ ६ ॥

७ ऋभुगण ! तुम हमारा शोभन प्रार्थना प्राप्त कर हमारा सोमरस तैयार करने वालेको तीन तरहके रत्न, एक एक कर, प्रदान करो और उसके सातों गुण तीन बार सम्पादन करो ।\*

८ यक्षके पाहके ऋभुगण मनुष्य-जन्म के बुकने पर भी अविनाशी आयु प्राप्त किये हुए हैं और अपने सत्कर्म द्वारा देवोंके बीच यज्ञ-भागका संघन करते हैं ।

१ इस यज्ञमें इन्द्र और अग्निका में आह्वान करता हूँ । उन्हीं लोगोंकी स्तुति किया चाहता हूँ । वही इन्द्र और अग्नि त्रिगोप सोमपायी ह । आँवे, सोमपान करें ।

२ मनुष्यगण ! इस यज्ञमें उन्हीं इन्द्र और अग्निकी प्रशंसा करो और उन्हें छशोभित करो; उन्हीं दोनोंके उद्देश्यसे गायत्री छन्द द्वारा गाओ ।

३ मित्रदेवकी प्रशंसाके लिये हम इन्द्र और अग्निका आह्वान करते हैं । उन्हीं दोनों सोम-रस-पान-कर्त्ताओंको सोम-पानके लिये आह्वान करते हैं ।

४ उन्हीं दोनों उप देवोंको इस सोमरस-संयुक्त यज्ञके पास आह्वान करते हैं । इन्द्र और अग्नि इस यज्ञमें पधारें ।

५ वे महान् और सभा-रक्षक इन्द्र और अग्नि राक्षस-जातिको दुष्टता-शून्य करें । भक्षक राक्षसलोग विःसन्तान हों ।\*

६ इन्द्र और अग्नि ! जिस स्वर्ग-लोकमें कर्म-फल जाना जाता है, वहाँ इस यज्ञके लिये तुम जागो और हमें सुख प्रदान करो ।

धारण कर अदिवर्नाकुमारका जन्म दिया था, उसी प्रकार ग्रीकदेवी एरिनिज डिमेटर ( Erinyes Demeter ) ने भी घोड़ीका रूप धारण कर अरिगेन और डिस्पोंना नामकी सन्तानोंको पैदा किया था ।

\* उत्तम, मध्यम और अधम — ये तीन तरह के रत्न हैं । अन्याथेय, दर्शपूर्णमास आदि सप्त हवियज्ञ, वंशदेय, औपासन होम आदि सप्त पाक-यज्ञ और अग्निष्टोम, अति अग्निष्टोम आदि सात सोम-यज्ञ कहे जाते हैं । ये तीनों त्रिवर्ग कहे जाते हैं । “ सातों गुण तीन बार सम्पादन ” करनेका तात्पर्य यही है कि, ऋभु लोग यज्ञ द्वारा ये तीनों सम्पादन करावें ।

\* ऋग्वेदमें पहले पहल इसी मन्त्रमें रक्षः या राक्षस शब्द आया है । इससे मालूम होता है कि, जिस आदिम बर्बर

२२ सूक्त । अश्विनीकुमार आदि देवता हैं ।

प्रातर्युजा वि बोधयाश्विनावेह गच्छताम् । अस्य सोमस्य पीतये ॥ १ ॥  
 या सुरथा रथातमोभा देवा दिविस्पृशा । अश्विना ता हवामहे ॥ २ ॥  
 या वां कशा मधुमस्यश्विना सूनृतावती । तथा यज्ञं मिमिक्षतम् ॥ ३ ॥  
 नहि वामस्ति दूरके यत्रा रथेन गच्छथः । अश्विना सोमिनो गृहम् ॥ ४ ॥  
 हिरण्यपाणिमृतये सवितारमुपहये । स चेतां देवता पदम् ॥ ५ ॥  
 अपां नपातमवसे सवितारमुपस्तुहि । तस्य व्रतान्युःप्रसि ॥ ६ ॥  
 विभक्तारं हवामहे वसोश्चित्रस्य राध्रसः । सवितारं नृचक्षसम् ॥ ७ ॥  
 सखाय आ नि पीदत सविता स्तोम्यो तु नः । दाता राधांसि शुभन्ती ॥ ८ ॥  
 अश्रं पत्नीरिहा वह देवानामुशतीरुष । त्वष्टारं सोमपीतये ॥ ९ ॥  
 आ सा अन्न इहावसे होत्रं यविष्ठभारतीम् । चरुत्रीं धिषणां वह ॥ १० ॥

१ पुरोहित ! प्रातःसवन-सम्वन्धसे युक्त अश्विनीकुमारोंको जगाओ । सोमपानके लिये वे इस यज्ञमें पधारें ।

२ जो अश्विनीकुमार छन्दर रथसे युक्त हैं; रथियोंमें श्रेष्ठ और स्वर्गवासी हैं, उन्हें हम आह्वान करते हैं ।

३ अश्विनीकुमार ! तुमलोगोंकी जो घोड़ोंके पसीने और ताड़नासे युक्त चादुक है, उसके साथ साकर इस दण्डको सोमरससे सिक्त करो ।

४ अश्विनीकुमार ! सोमरस देनेवाले यजमानके जिस गृहको ओर रथसे जा रहे हो, वह गृह दूर नहीं है ।

५ सवर्ण-हस्तक सूर्यको, रक्षाके लिये, मैं बुलाता हूँ । वही देव यजमानको मिलनेवाला पद वता देगे ।\*

६ अपने रक्षणके लिये जलको सखा देनेवाले सूर्यकी स्तुति करो । हम सूर्यके लिये यज्ञ करना चाहते हैं ।

७ निवासके कारणभूत अनेक प्रकारके धनोंके विभाजन-कर्ता और मनुष्योंके प्रकाश-कर्ता सूर्यका हम आह्वान करते हैं ।

८ सखालोग ! चारों ओर दौड़ जाओ । हमें शीघ्र सूर्यकी स्तुति करनी होगी । धन-प्रदाता सूर्य सन्तोषित हो रहे हैं ।

९ अग्निदेव ! देवोंकी अग्नि लापा करेवाली पत्नियोंको इस यज्ञमें ले आओ । सोमपान करनेके लिये त्वष्टाको पास ले आओ ।

१० अग्नि ! हमारी रक्षाके लिये देव-रमणियोंको इस यज्ञमें ले आओ । रुद्रक अग्नि ! देवोंको हलानेवाली, हरर दः क-गीला और सत्यनिष्ठा सखदिकों ले आओ ।

जातिको आर्य लोग दन्तु कहते थे, उसीका एक नाम राक्षस था । सचमुच मनुष्यजातिके एक पतित और असम्य दलका ही नाम राक्षस है ।

\* ग्रीकों, रोमनों और पारसियोंमें भी सूर्योपासना प्रचलित थी । ग्रीक लोग सूर्यको हेलिओस और सूर्य-वंशको हेलिन्स कहते थे । रोमन लोग सोल, इयून लोग दिर और पारसी लोग खोरसेद कहते थे । पारसी लोग स्थवाले सूर्यकी विशेष उपासना करते थे ।

अभि नो देवीरवसा महः शर्मणा नृपतीः । अच्छिन्नपत्राः सचन्ताम् ॥११॥  
 इन्द्राणीमुपह्वये वरुणानीं स्वस्तये । अग्रायीं सोमपीतये ॥१२॥  
 मही धीः पृथिवीं च न इमं यत्नं विमिक्षताम् । विपृतां नो भरीमभिः ॥ १३ ॥  
 तयोरिद् घृतवत् पयो विप्रा रिहन्ति धांतिभिः । गन्धर्वस्य ध्रुवे पदे ॥ १४ ॥  
 स्योना पृथिवि भवानृक्षरा निवेशनी । यच्छा नः शर्मं सप्रथः ॥ १५ ॥  
 अतो देवा अवन्तु नो यतो विष्णुर्विचक्रमे । पृथिव्याः सप्त धामभिः ॥ १६ ॥  
 इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा नि दधे पदम् । समूढमस्य पांसुरे ॥ १७ ॥  
 त्रीणि पदा विचक्रमे विष्णुर्गोपा अदान्यः । अतो धर्माणि धारयन् ॥ १८ ॥  
 विष्णोः कर्माणि पश्यत यतो व्रताणि पश्यशे । इन्द्रस्य युज्यः सत्वा ॥ १९ ॥  
 तद्विष्णोः परमं पदं सदा पश्यन्ति सूरयः । दिवीव चक्षुरात्ततम् ॥२०॥  
 तद्विप्रासो विपन्यवो जागृथांसः समिन्धते । विष्णोर्यत् परमं पदम् ॥२१॥

—३—

- ११ अच्छिन्नपत्रा वा इ तगामिनी और मनुष्यरक्षिका देवी रक्षग और महान् खल-प्रदान द्वारा हमारे ऊपर प्रसन्न हों ।
- १२ अपने मङ्गलके लिये और सोम-पानके लिये इन्द्राणी, वरुणानी और अग्रायी या अभिपतीको हम बुलाते हैं ।
- १३ महान् पृथिवी और पृथिवी हमारा यह यज्ञ रससे सिक्त करें और पोषण द्वारा हमें पूर्ण करें ।
- १४ अपने कर्मके फल पृथिवी और पृथिवीके वाचमें, मेधावी लोग गन्धर्वको निवास-स्थान अन्तरिक्षमें, धीकी तरह, जल पोते हैं ।
- १५ पृथिवी ! तुम विष्णु, कण्टक-रहित और निवासभूता बनो । हमें यथेष्ट खल दो ।
- १६ त्रिव भू-प्रदंनने, भरने मात्रों छन्दों द्वारा विष्णुने विचित्र पाद-रूप किया था, उसी भू-प्रदंनने देवता लोग हमारी पक्षा करें ।
- १७ धामनायनारधारी विष्णुने हम जगत्की परिक्रमा की थी, उन्होंने तीन प्रकारसे अपने पैर रखे थे और उनके घूर्णन से जगत् छिपसा गया था ।
- १८ विष्णु जगत्के रक्षक हैं, उनको आवात कानेवाला कोई नहीं है । उन्होंने समस्त धर्मोंका धारण कर तीन पैरोंका परिक्रम किया था ।
- १९ विष्णुके कर्मके फल ही धरतमान अपने व्रतोंका अनुष्ठान करते हैं । उनके कर्मोंको देखो । वे इन्द्रके उपयुक्त सत्त हैं ।
- २० आकाशमें चारों ओर विचरण करनेवाली आंखें जिस प्रकार दृष्टि रखती हैं, उसी प्रकार विद्वान् भी सदा विष्णुके उस परम पद पर दृष्टि रखते हैं ।
- २१ स्तुतिपात्री और मेधावी मनुष्य विष्णुके उस परम पदसे अपने हृदयको प्रकाशित करते हैं ।\*

\* इस सूक्तके सोऽहं संप्रते इशांसं संप्रतक विष्णुके वैमत्रका विवरण है । १६ वें संप्रते "सप्त धामभिः" वाक्य है । लोगोंने इन वाक्योंके अनेक अर्थ लगाये हैं; परन्तु हमको "सप्त उन्धों" द्वारा अर्थ ही उचित जान पड़ता है; क्योंकि

२३ सूक्त। वायु आदि देवता हैं। गायत्री आदि छन्द हैं।

तीव्राः सोमास आगह्याशोऽवन्तः सुता इमे। वायो तान् प्रस्थितान् पिव ॥ १ ॥  
 उभा देवा दिदिस्पृशेन्द्रवायू हवामहे। अस्य सोमस्य पीतये ॥ २ ॥  
 इन्द्रवायू मनोजुवा मित्रा हवन्त ऊतये। सहस्राक्षा धियस्पती ॥ ३ ॥  
 मित्रां वयं हवामहे वरुणं सोमपीतये। जज्ञाना पूतदक्षसा ॥ ४ ॥  
 ऋतेन यावृतावृधावृतस्य ज्योतिपरूपतो। ता मित्रावरुणा हुवे ॥ ५ ॥  
 वरुणः प्राणिता भुवन्मित्रो विश्वाभिरूतिभिः। करतां नः सुराधसः ॥ ६ ॥  
 मरुत्वन्तं हवामहे इन्द्रमा सोमपीतये। सजूर्गणेन तृम्पतु ॥ ७ ॥  
 इन्द्रज्येष्ठा मरुद्गणा देवासः पूवरातयः। विश्वे मम श्रुता हवम् ॥ ८ ॥

- १ वायुदेव ! यह तीव्रा और सपक्ष सोमरस तैयार है। तुम आओ; वही सोमरस यहाँ लाया गया है। पान करो।
- २ आकाश-स्थित इन्द्र और वायुको, सोम-पानके लिये, हम बुलाते हैं।
- ३ यज्ञ-रक्षक इन्द्र और वायु मनके समान वेगवान् और सहस्राक्ष हैं। प्रतिभाशाली मनुष्य अपने रक्षणके लिये दोनोंका आह्वान करते हैं।
- ४ मित्र और वरुण—दोनों शुद्ध-बल-शाली और यज्ञमें प्रादुर्भूत होनेवाले हैं। हम उन्हें सोमरस-पानके लिये, बुलाते हैं।
- ५ जो मित्र और वरुण सत्यके द्वारा यज्ञकी वृद्धि और यज्ञके प्रकाशका पालन करते हैं, उन लोगोंका मैं आह्वान करता हूँ।
- ६ वरुण और मित्र सब तरहसे हमारी रक्षा करते हैं। वे हमें यथेष्ट सम्पत्ति दें।
- ७ मरुतोंके साथ, सोम-पानके लिये, हम इन्द्रका आह्वान करते हैं। वे मरुद्गणके साथ नृत्य हों।
- ८ मरुद्गण ! तुम्हारे अन्द्र इन्द्र अग्रणी हैं, पूरा या सूर्य तुम्हारे दाता हैं। तुम सब लोग हमारा आह्वान सनो।

सायणने इसी अर्थको तर्क-सम्मत बताया है। उन्होंने लिखा है कि, "परमेश्वर विष्णुने जिस प्रकार छन्दों द्वारा पृथिवी आदि लोकोंको जीता था, उसका वर्णन तैत्तिरीयशाखाध्यायि-गग इस प्रकार करते हैं—“विष्णु आदि देवोंने छन्दों द्वारा समस्त लोकोंको जीता था; इसी लिये ब्रामनाचतारमें विष्णुने पृथिवी-प्रदेशसे ही अपने पैर फैलाये थे”। “भूप्रदेशसे रक्षा करनेका तात्पर्य है, मर्त्यलोकके जीवोंका पाप-निवारण”। हम यहाँ सायणसे पूर्ण सहमत हैं। १७ वें मंत्रके सम्बन्धमें भी बड़ा मत-द्वेष है। रमानाथ सरस्वतीने लिखा है कि, “मध्य पृथिवीसे भारतवर्ष आते समय आर्योंके अग्रगन्ता विष्णु नामक आर्य-मनुष्य थे। उन्होंने रास्तेमें तीन स्थानपर विश्राम किया था और उनकी तथा अनुगामियोंकी पद-चूलिसे संसार आवृत हो चला था।” इस अर्थका रेवरेण्ड क्लृण्णमोहन बनर्जीने अपने “Aryan Witness” में जोरसे अनुमोदन किया है। इनके मतके ही अधिकांश पाश्चात्य लेखक अनुमोदक हैं। परन्तु आर्य-साहित्य इनकी कल्पनाका अनुमोदन नहीं करता। युक्ति भी इनका साथ नहीं देती।

शाकपुणि आचार्यका मत है कि, विष्णुने पृथिवी, अन्तरिक्ष और आकाशमें तीन प्रकारसे पैर रखे थे। ऐतरेय ब्राह्मण (६।१५) में लिखा है कि, “देवों और अस्त्रोंके वाव जब संसारका यज्ञनाश होने लगा, तब इन्द्रने कहा कि,

हृत् वृत्रं सुदानव इन्द्रेण सहसा युजा । मा नो दुःशंस ईशत ॥ ६ ॥  
 विश्वान् देवान् हवामहे मरुतः सोमपातये । उग्रा हि पृथिमातरः ॥ १० ॥  
 जयतामिव तन्यतुर्मरुताप्तेति धृष्णुया । यच्छुभं याथना नरः ॥ ११ ॥  
 हस्काराद्विद्युत्स्पर्व्यतो जाता अवन्तु नः । मरुतो मृडयन्तु नः ॥ १२ ॥  
 आ पूषन् चित्रवर्हिषमाघृणे धरुणं दिवः । आज्ञा नष्टं यथा पशुम् ॥ १३ ॥  
 पूषा राजानमाघृणिरपगृहं गुहा हितम् । अत्रिन्दचित्रवर्हिषम् ॥ १४ ॥  
 उतो स मरुमिन्दुभिः पश्युक्तौ अनुसेपिधत् । गोभिर्यवं न चकृपत् ॥ १५ ॥

९ दान-पाप्यग मरुतो ! बली और अपने सहायक इन्द्रके साथ शत्रुका विनाश करो, जिससे दुष्ट शत्रु हमारा मालिक न बन बैठे ।

१० सारे महादेवोंको सोमरस-पानके लिये हम आह्वान करते हैं । ये उग्र और पृथ्वि (पृथिवी आकाश या मेघ) की सन्तान हैं ।\*

११ जिस समय मरुत लोग दौभन यज्ञको प्राप्त होते हैं उस समय विजयी लोगोंके नावकी तरह उनका, द्रुपके साथ, निनाश होता है ।

१२ प्रकानामयी विजलीसे उत्पन्न मरुत लोग हमारा रक्षण और सख-विधान करें ।

१३ हे शंसिमान् और शीघ्रगन्ता पूषा या सूर्य ! जिस तरह, दुनियामें किसी पशुके खो जानेपर उसे लोग खोज लाते हैं, उन्ही प्रकार तुम आकाशमें विचित्र कुर्नांचाल और यज्ञधारक सोमको ढूँढ आओ ।

१४ प्रवादामान पूषाने गुहामें अवस्थित, छिपा हुआ विचित्र-कुशा-सम्पन्न और दीक्षिमान् सोम पाया ।

१५ जिन प्रकार किसान गौओंमें यवका खेत बार-बार जोतता है, उसी प्रकार पूषा भी मेरे लिये, सोमके साथ, क्रमशः छः फल, बार-बार, छाये धें ।

“अपने तीन पैरोंमें विष्णु जितना नाप सके, उतना संसार देवोंके छिन्ने, शेष अछोरोंके ।” मरुत भी इससे सम्मत हो गये और विष्णुने अपने पाद-विश्राममें जगत्के साथ ही वेद और वाक्योंको भी व्यास कर लिया । “शतपथ ब्राह्मण (११:१६) में उल्लेख है कि, “अपुर्णने कदा कि, “धामनस्य विष्णुके शयन करनेपर जितना स्थान आवृत होगा, उतना देवोंका, शेष अछोरोंका” । इस प्रभावका देवोंने सम्पन्न किया और विष्णुने सारे संसारको आवृत कर उसे देवोंको दिलवा दिया ।” इस तरह अनेक प्रमाण हैं, जिनसे समानाद्य गान्धर्वी आदिकी कल्पना स्पष्टतः होती है ।

मध्य पृथिवीमें भारतवर्ष आनेमें विष्णुने तीन ही स्थानोंपर क्यों विश्राम किया ? क्या इतनी लम्बी यात्रामें तीन ही पड़ाव सम्भव हैं ? क्या विष्णु और उनके चन्द्र आर्य अनुगामीयोंकी पद-धूलिसे संसारका छिप जाना सम्भव है ? इन सब प्रश्नोंका कोई भी उत्तर नहीं है । सत्य तो यह है कि, विष्णु नामक रक्षक भगवान्के तीन पैरोंसे समस्त जगत्का व्यास होना, विष्णु द्वारा संसारकी रक्षा होना और विष्णुके धामनावतारकी मूल-कथा स्पष्ट ही वैदिक ग्रंथोंमें है । उनके अर्थोंकी खोज-तार्किकी करना समय नष्ट करना है ।

१ सायणने पृथिवीका अर्थ पृथिवी किया है । इससे ५-६ सौ वर्ष पहले बने संस्कृत-कोष ( निघण्टु )में पृथिवीका अर्थ आकरन है । शब्दः पृथ्वी समयमें यन् निगमकं टीकाकार Both ने पृथिवीका अर्थ मेघ लिखा है । ऋग्वेदके फूँड टीकाकार छांडोग्यने भी मेघ ही अर्थ किया है । फूँड भाषामें लिखा है—“ Le nuage, ou l' air chargé de nuages.”



अम्बयो यन्त्यश्चभिर्जामयो अध्वरीयताम् । पृञ्चतोर्मधुना पयः ॥ १६ ॥  
 अमूर्या उप सूर्य्ये याभिर्वा सूर्य्यः सह । ता नो हिन्वन्त्वध्वरम् ॥ १७ ॥  
 अपो देवीरुपह्वये यत्र गात्रः पिवन्ति नः । सिन्धुभ्यः कर्त्वं हविः ॥ १८ ॥  
 अप्स्वन्तस्मृतमप्सु भेपजमपामुत प्रशस्तये । देवा भवत वाजिनः ॥ १९ ॥  
 अप्सु मे सोमो अत्रवीद्वन्तर्विश्वानि भेपजा । अग्निं च विश्वशम्भुवमापश्च विश्वभेपजाः ॥ २० ॥  
 आपः पृणीत भेपजं वरूथं तन्वेऽ मम । ज्योक् च सूर्य्यं दृशे ॥ २१ ॥  
 इदमापः प्र चहत यत्किञ्च दुरितं मयि । यद्वाहमभिदुद्रोह यद्वा शेष उतानृतम् ॥ २२ ॥  
 आपो अद्यान्वचारिणं रसेन समगस्महि । पयस्वानग्र आ गहि तं मा सं सृज वर्चसा ॥ २३ ॥  
 सं माग्ने वर्चसा सृज सं प्रजया समागुया । त्रिवृमिं अस्य देवा इन्द्रो त्रियात्सह ऋषिभिः ॥ २४ ॥



६ अनुवाक । २४ सूक्त । अग्नि प्रभृति देवता हैं । यहांसे ३० सूक्त तकके अजीगर्त-पुत्र शुनःशेष ऋषि हैं ।

कस्य नूनं कतमस्यामृतानां मनामहे चारु देवस्य नाम ।

को नो मह्या अदितये पुनर्द्राञ् पितरं च दृशेयं मातरं च ॥ १ ॥

१६ हम यज्ञे च्छुओंका मातृ-स्थानीय जल यज्ञ-मार्गसे जा रहा है । वह जल हमारा हितर्षा बन्वु है । वह दूधको रीत बनाता है ।

१७ यह जो सारा जल सूर्यके पास है अथवा सूर्य जिस सब जलके साथ हैं, वह सब जल हमारे यज्ञको प्रेम-यात्र करे ।

१८ हमारी गायें जिस जलको पान करती हैं, उसी जलका हम आह्वान करते हैं । जो जल नदी-रूप होकर बह रहा है, उस सबको ह्वय देना कर्त्तव्य है ।

१९ जलके भीतर अमृत और औषधि है । हे ऋषि लोग ! उस जलको प्रसांसाके लिये उत्साहां बनिये ।

२० सोम या चन्द्रमामे मुझसे कष्टा है कि, उसमें औषधि है, संसारको छत्र देने वाला अग्नि हैं और सब तरहकी वषाण हैं ।

२१ हे जल ! मेरे शरीरके लिये रोग-नाशक औषधि पुष्ट करो, ताकि मैं बहुत दिन सूर्यको देख सकूँ ।

२२ मुझमें जो कुछ दुष्कर्म है, मैंने जो कुछ अन्यायाचरण किया है, मैंने जो शाप दिया है और मैं जो झूठ बोला हूँ, हे जल ! वह सब धो डालो ।

२३ आज स्नानके लिये जलमें पड़ेता हूँ, जलके सारसे सम्मिलित हुआ हूँ । हे जल-स्थित अग्नि ! आजो । मुझे तेजसे परिपूर्ण करो ।

२४ हे अग्नि ! मुझे तेज, सन्तान और दीर्घायु दो, ताकि देवता लोग, इन्द्र और ऋषिगण में अनुष्ठानको जान सकें ।

१ देवोंमें किस श्रेणीके किस देवताका छन्दर नाम उच्चारण करूँ ? कौन मुझे फिर इस पृथिवी पर रहने देगा, जिससे मैं पिता और माताके दर्शन कर सकूँ \* ?

\* २४ से ३० वें सूक्त तकके वक्ता शुनःशेष ऋषि हैं । उनके सम्बंधमें ऐतरेय ब्राह्मणको ७वां पञ्जिकामें लिखा है कि,

अग्नेर्व्ययं प्रथमस्यामृतानां मनामहे चास् देवस्य नाम ।  
 स नो महा अदितये पुनर्दात् पितरं च दृशेयं मातरं च ॥ २ ॥  
 अमि त्वा देव सवितरीशानं धार्याणां । सदावन् भागमीमहे ॥ ३ ॥  
 यश्चिद्धि त इत्या भगः शशमानः पुरा निदः । अग्नेपो हस्तयोर्दधे ॥४ ॥  
 भगभक्तस्य ते वयमुद्ग्रेम तवावसा । सूर्धानं राय आरभे ॥ ५ ॥  
 नहि ते क्षत्रं न माते न मन्युं वयश्चरामी पतयन्त आपुः ।  
 नेमा आपो अनिमिषं चरन्तीनं ये वातस्य प्र मिनन्त्यभ्यम् ॥ ६ ॥

२ देवोंमें पहले अग्निका एन्द्र नाम देता हूँ, यह मुझे इस पिताल वृद्धि पर रहने दें, ताकि मैं माँ-बापके दर्शन कर सकूँ ।-

३ हे सर्वेश प्राता सूर्य ! तुम धोए धनके स्वामी हो; इस लिये तुम्हारे पास उपभोग करने लायक धनकी याचन करवा हूँ ।

४ प्रशंसित, मित्र-शून्य, हो-रहित और सम्भोग-योग्य धनको तुम दोनों हाथोंमें धारण किये हुए हो ।

५ सूर्यदेव ! तुम धन-वाली हो, तुम्हारी रक्षा द्वारा धनकी उपाति करनेमें लगे रहते हैं ।

६ परमदेव ! मैं उठने वाला चिड़ियां तुम्हारे समान बल और पराक्रम नहीं प्राप्त कर सकीं । तुम्हारे स्पर्श इन्होंने क्रीप भी नहीं प्राप्त किया । निरन्तर विहरण-वाले जल और पायुकी गति भी तुम्हारे पैरको नहीं लांघ सकी ।

दितकंवि ता, राजा हरिश्चन्द्रने शंठिकको बलि देनेका प्रस्ताव किया । (दुष्ट होने पर उसे वरुणदेवके नाम पर बलि देनेकी प्रस्ताव राजा हरिश्चन्द्रने परमेश की धी) शंठिकने इस प्रस्तावको अस्वीकार किया । इसके अनन्तर शुनःशेषको बलि देनेकी बात पर उनके पिता अजीमर्षकी राजी कर लिया गया । शुनःशेष धोर विपत्तिमें पड़े । अन्तको उन्होंने विश्वामित्रसे सम्मति ली । विश्वामित्रने देवोंकी स्तुति करनेकी राय दी । शुनःशेषने मरण-कातर होकर इन सात सूक्तोंमें देवोंकी स्तुति की और इस तरह उन्हें मुक्ति मिली । रामायण, बालकाण्ड, ६१, ६२ अध्यायोंमें उल्लेख है कि, शुनःशेषने पिता ऋषीक (अजीमर्ष नहीं) ने शुनःशेषकी बलि देनेके लिये अयोध्या-राजके हाथ देव दिया था । विश्वामित्रके परामर्शनुसार स्तुति करने पर इन्द्रने प्रसन्न हो, शुनःशेषकी प्राण-रक्षा की थी । मनुस्मृति, भागवत, विष्णुपुराण आदिमें भी शुनःशेषकी कथा है । सायणने लिखा है कि, तन्ममें बांधे जाने पर शुनःशेषने अपने इन सूक्तोंमें देवोंकी स्तुति की थी । राजेन्द्रलाल मिश्रने अपने "Indic-Aryan" ग्रन्थमें इन सूक्तोंमें यह नतीजा निकाला है कि, पहले आर्यों में नर-बलि प्रचलित थी । परन्तु विचार करने पर मिश्र महाशय का अनुमान गलत निकलता है; क्योंकि सूक्तोंमें एक आतं भक्त (शुनःशेष) की स्तुतिके सिवा बलि, विश्वामित्रसे सलाह, स्तम्भ-बन्धन आदिकी कोई बात नहीं है । बलिपर चढ़ने वाला ही आर्ष नहीं होता—अध्यात्म-विशामें प्रवेश करने वाला प्रत्येक ईश्वर-भक्त पहले आर्ष होता है । अधिक तो क्या प्रत्येक स्तुतिकर्ता आर्ष होता है । शुनःशेष वही थे । इसके सिवा ऋग्वेदमें कहीं भी नर-बलिका उल्लेख या आभास नहीं है । इसलिये वेदोंमें नर-बलिकी बात दिखाना अनुचित है । जिस वेदमें धी और सोमरसके अक्षय और आसर्षी बात है, तन्ममें नर-बलिकी बात बँसे हो सकती है ?

• "श्रीधर्षी पर रहने देनेका" तात्पर्य है दोगांयु देना और "माँ-बापके दर्शन" का अभिप्राय है माँ-बापकी भक्ति करना या उनको सदा देखते रहना ।

अबुध्ने राजा वरुणो वनस्योर्ध्वं स्तूपं ददते पूतदक्षः ।  
 नीचीनाः स्थुरपरि बुध्नं एषामस्मे अन्तर्निहिताः केतवः स्युः ॥ ७ ॥  
 उरं हि राजा वरुणश्चकार सूर्याय पन्थामन्वेतवा उ ।  
 अपदे पादा प्रतिघातवेऽकरतापवक्ता हृदयाविधश्चित् ॥ ८ ॥  
 शतन्ते राजन् भीपजः सहस्रमुष्वीं गर्भारा सुमतिष्टे अस्तु ।  
 बाधस्व दूरे निरुहति पराचैः कृतश्चिदेनः प्र मुमुग्ध्यस्मत् ॥ ९ ॥  
 अमी य ऋक्षा निहितास उच्चा नक्तं दृष्ट्रे कुह चिद्विद्युः ।  
 अदग्धानि वरुणस्य व्रतानि विचाकशचन्द्रमा नक्तमेति ॥ १० ॥  
 तत्वा यामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदा शास्ते यजमानो हविर्मिः ।  
 अहेलमानो वरुणोह वोध्युरुशंस मा न आयुः प्रमोषोः ॥ ११ ॥  
 तद्विज्ञक्तं तद्विवा मह्यमाहुस्तदयं केतो हृद आ वि चष्टे ।  
 शुनःशोपः यमहृद्गृभीतः सो अस्मान् राजा वरुणो मुमोक्तु ॥ १२ ॥  
 शुनःशोपो ह्यहृद्गृभीतस्त्रिष्वादित्यं हुपदेषु वद्धः ।  
 अवैनं राजा वरुणः ससृज्यद्विद्वौ अदग्धो वि मुमोक्तु पाशान् ॥ १३ ॥

७ पवित्र-बलशाली वरुण आदि-रहित भन्तर्निक्षेपों रक्षक श्रेष्ठ तेज-बुद्धको ऊपर ही धारण करते हैं। तेज-बुद्धका मुख नीचे और मूल ऊपर है। उसीके द्वारा हमारे प्राण स्थिर रहते हैं।

८ देवराज वरुणने सूर्यके उदय और अस्तके गमनके लिये सूर्यके पथका विस्तार किया है। पाद-रहित अन्तरिक्ष-प्रदेशमें सूर्यके पाद-विक्षेपके लिये वरुणने मार्ग दिया है। वह वरुणदेव में हृदयका वेध करने वाले शत्रुका निराकरण करें।

९ वरुणराज ! तुम्हारी सैकड़ों-हजारों औषधियाँ हैं, तुम्हारी समति विस्तीर्ण और गम्भीर हैं। निरुक्ति या पाप देवताको विमुक्त करके दूर रखो। हमारे किये हुए पापसे हमें मुक्त करो।

१० ये जो सप्तर्षि नक्षत्र हैं, जो ऊपर आकाशमें संस्थापित हैं और रात्रि आनेपर दिखाई देते हैं, दिनमें कहां चले जाते हैं ? वरुणदेवकी शक्ति अप्रतिहत है। उनकी आज्ञासे रात्रिमें चन्द्रमा प्रकाशमान होते हैं।\*

११ मैं स्तोत्रसे तुम्हारी स्तुति कर तुम्हारे पास वही परमायु मांगता हूँ। हव्य द्वारा यजमान भी उसे ही पानेकी प्रार्थना करता है। वरुण ! तुम इस विषयमें उदासीन न होकर ध्यान दो। तुम अनन्त जीवोंके प्रार्थना-पात्र हो। मेरी आयु मत लो।

१२ दिन और रात, सदा लोभमें मुझसे ऐसा ही कहा गया है। मेरा हृदयस्थ ज्ञान भी यही गवाही देता है कि, आवद्ध होकर शुनःशोपने जिस वरुणका आह्वान किया था, वही वरुणराज हम लोगोंको मुक्ति दान करें।

१३ शुनःशोपने घृत और तीन काठोंमें आवद्ध होकर अदितिके पुत्र वरुणका आह्वान किया था; इसी लिये विद्वान् और दयालु वरुणने शुनःशोपको मुक्त किया था, उनका बन्धन छुड़ा दिया था।

\* इस मंत्रमें "ऋक्षाः" शब्द है, जिसका सायणने सप्त तारा अर्थ किया है। रमेशचन्द्र दत्तने लिखा है कि, ऋच् धातु का अर्थ उज्ज्वल है और इसीसे ऋक्ष शब्द बना है; इस लिये नक्षत्रोंका नाम उज्ज्वल भाव, पद्म और सप्तर्षियों या सप्त ताराओंका भी नाम उज्ज्वल भाव, हुआ। यूरोपमें भी इन्हें Great Bear कहा जाता है। मैं ससृज्यकी भी यही राय है।

अथ ते हेलो वरुण नमोभिरव यज्ञेभिरामहे हविर्भिः ।  
क्षयन्नस्मभ्यमसुर प्रचेता राजन्नेनासि शिश्रथः कृतानि ॥ १४ ॥  
उदुत्तमं वरुण पाशमस्मदवाधमं चि मध्यमं श्रथाय ।  
अथा वयमादित्य व्रते तवानागसो अदितये स्याम ॥ १५ ॥

—०—\*—०—

२५ सूक्त । वरुण देवता हैं ।

यद्यिद्भि ते त्रिशो यथा प्र देव वरुणव्रतम् । मिनीमसि यचि यचि ॥ १ ॥  
मा नो वधाय हृत्तवे जिह्रीलानस्य रीरधः । मा हृणानस्य मन्यवे ॥ २ ॥  
त्रि मृलीकाय ते मनो रथीरधं न सन्दिताम् । गीर्भिर्वरुण सोमहि ॥ ३ ॥  
परा हि मे त्रिमन्यवः पतन्ति वस्य इष्टये । वयो न वसतीरुप ॥ ४ ॥  
कदा क्षत्रत्रियं नग्मा वरुणं करामहे । मृलीकायोरुचक्षसम् ॥ ५ ॥  
नदिस्मानमाशाते वेनन्ता न प्र युच्छतः । धृतवताय दाशुपे ॥ ६ ॥

- १४ वरुण ! नमस्कार करके हम तुम्हारे क्रोधको धरते हैं और यज्ञमें हृत्त देकर भी तुम्हारा क्रोध दूर करते हैं ।  
हे अरु ! प्रचेतः ! राजन् ! हमारे लिये इस यज्ञमें निवास करके हमारे किये हुए पापको क्षीयित करो ।\*  
१५ वरुण ! मेरा उपरान् पादा उपरसे और नीचेका नीचेसे खोल दो और बीचका पादा भी खोलकर क्षीयित करो ।  
अनन्तर हे अदितिपुत्र ! हम तुम्हारे व्रतका स्मरण न करके पापराहित हो जायेंगे ।

- १ जिस तरह संसारके मनुष्य परमदेवके मतानुष्ठानमें भ्रम करते हैं, उसी तरह हम लोग भी दिन-दिन प्रसाद करते हैं ।  
२ वरुण ! अनादर कर और घातक बनकर तुम हमारा पथ नहीं करना । क्रुद्ध होकर हमारे उपर क्रोध नहीं करना ।  
३ वरुणदेव, जिस प्रकार स्वका स्वामी अपने धके हुए घोड़ोंको दान्त करता है, उसी प्रकार इसके लिये स्तुति द्वारा हम तुम्हारे मनको प्रसन्न करते हैं ।  
४ जिस तरह चिदियाँ अपने घोसलोंकी ओर दौड़ती हैं, उसी तरह हमारी क्रोध-रहित चिन्ताएँ भी धन-प्राप्तिकी ओर दौड़ रही हैं ।  
५ वरुणदेव बलवान् नेता और असंख्य लोगोंके द्रष्टा हैं । उनके लिये हम क्या उन्हें यज्ञमें ले आवेंगे ?  
६ यज्ञ करनेवाले हव्यदाताके प्रति प्रसन्न होकर मित्र और वरुण यह साधारण हव्य ग्रहण करते हैं, त्याग नहीं करते ।

\* हम मंत्रमें जो अरुण शब्द आया है, उससे मालूम पड़ता है कि, आर्य लोग अरुणको भी देवता मानते थे । कहा जाता है कि, पीछे आर्योंमें झगड़ा हो गया और उनका एक दूढ़ फारस चला गया । फारसवाले अरुण या अहुरकी पूजा करने लगे और भारतवाले देवकी । अरुण पारसो आर्योंने अपने समस्त ग्रन्थोंमें देवोंकी निन्दा की है और भारतीय आर्योंने अरुणकी । किन्तु सायणाचार्योंने यहाँ अरुण शब्दका अर्थ "अनिष्ट हटानेवाला" किया है । ऋग्वेदमें दानु और तुष्ट अर्थमें बहुत बार अरुण शब्दका प्रयोग हुआ है ।

वेदा यो वीनां पदमन्तरिक्षेण पतताम् । वेद नावः समुद्रियः ॥ ७ ॥  
 वेद मासो धृतवतो द्वादश प्रजावतः । वेदा य उपजायते ॥ ८ ॥  
 वेद वातस्य वर्त्तनिगुरोर्ऋष्यस्य बृहतः । वेदा ये अध्यासते ॥ ९ ॥  
 नि पसाद् धृतवतो वरुणः पस्त्यास्था । साम्राज्याय सुक्रतुः ॥ १० ॥  
 अतो विश्वान्यद्भुता चिकित्वां अभि पश्यति । कृतानि या च कर्त्वा ॥ ११ ॥  
 स नो विधाहा सुक्रतुरादित्यः सुपथा करत् । प्र ण आर्युपि तारिपत् ॥ १२ ॥  
 विश्वद्द्रुपिं हिरेण्ययं वरुणो वस्त निर्णिजम् । परिस्पशो नि पेदिरे ॥ १३ ॥  
 न र्थं दिप्सन्ति दिप्सवो न द्रुह्वाणो जनानाम् । न देवमभिमातयः ॥ १४ ॥  
 उन यो मानुपेष्वा यशश्चक्रे असास्या । अस्माकमुदरेष्वा ॥ १५ ॥

७ जो वरुण अन्तरिक्ष-चारी चिड़ियोंका मार्ग और समुद्रकी नौकाओंका मार्ग जानते हैं ।

८ जो व्रतावलम्बन करके अपने अपने फलोत्पादक वारह महीनोंको जानते हैं और उत्पन्न होनेवाले तेरहवें मासको भी जानते हैं ।\*

९ जो वरुणदेव विल्लुत्, शोभन और महात् वायुका भी पथ जानते हैं और जो ऊपर, आकाशमें, निवास करते हैं, उन देवोंको भी जानते हैं ।

१० धृत-व्रत और शोभनकर्मा वरुण देवी सन्तानोंके बीच साम्राज्य-संसिद्धिके लिये भाकर बैठे थे ।\*

११ ज्ञानी मनुष्य वरुणकी कृपासे वर्त्तमान और भविष्यत्—सारी अद्भुत घटनाओंको देखते हैं ।

१२ वही सत्कर्षपरायण और अद्विती-पुत्र वरुण हमें सदा सुपथगामी बनाएँ, हमारो आयु बढ़ावे ।

१३ वरुण सोनेका चल्न धारण कर अपना पुष्ट शरीर ढकते हैं, जिससे चारो ओर हिरण्यत्वदी कीरण फैलती हैं ।†

१४ जिस वरुणदेवसे शत्रु लोग शत्रुता नहीं कर सकते, मनुष्यपीड़क जिसे पीड़ा नहीं दे सकते और पापी लोग जिस देवके प्रति पापाचरण नहीं कर सकते ।

१५ जिन्होंने मनुष्यों, विशेषतः हमारो उदर-पूर्ति,के लिये यथेष्ट अन्न तैयार कर दिया है ।

\* पृथिवीकी चारो ओर सूर्यकी गतिसे जो वर्षकी गणना की जाती है, उसमें वारह अमावस्याओंकी गणना करनेसे कई दिन कम हो जाते हैं; इसी लिये सौर और चान्द्र वर्षों में सामञ्जस्य करनेके लिये चान्द्र वत्सरके प्रति वृत्तीय वर्षमें एक अधिक मास, मलमास या मलिम्लुच रखा जाता है । इस मंत्रसे विदित होता है कि, प्राचीन हिन्दू दोनों वर्षोंको जानते थे और दोनोंका समन्वय करना भी जानते थे । ७ वें मंत्रसे यह भी मालूम होता है कि, आर्य लोग आकाश-चारण और समुद्र-विहरण भी जानते थे ।

\* इन्द्रसे भी अधिक प्रतिष्ठा वरुणकी थी—इन्द्र मंत्रोंसे यह बात स्पष्ट हो जाती है । ग्रीक और पारसी भी वरुण-भक्त हैं । वरुण सत्राट कहे जाते थे ।

† इससे आर्योंका हिरण्य-कवच और स्वर्ण-खचित चल्न धारण करना मालूम होता है ।

परा मे यन्ति धीतयो गावो न गव्यूतीरनु । इच्छन्तीरुरक्षसम् ॥ १६ ॥  
 सं नु चोच्चावर्हं पुनर्यतो मे मध्वाभृतं । होतैव क्षदत्ते प्रियम् ॥ १७ ॥  
 दर्शं नु विश्वदर्शतं दर्शं रथमधि क्षमि । एता जुपत मे गिरः ॥ १८ ॥  
 इमं मे वरुण श्रुषी हवमद्या च मृड्य । त्वामवस्थुरा चके ॥ १९ ॥  
 त्वं विश्वस्य मेघिर दिवश्च गमश्च राजसि । स यामनि प्रति श्रुधि ॥ २० ॥  
 उदुत्तमं मुमुग्धि नो वि पाशं मध्यमं नृत । अवाधमानि जीवसे ॥ २१ ॥

२६ सूक्त । अग्नि देवता हैं ।

वसिध्वा हि मियेभ्य वस्त्राण्यूर्जा पते । तेमं नो अध्वरं यज ॥ १ ॥  
 नि नो होता वरेण्यः सदा यच्चिष्ट मन्मभिः । अग्ने दिव्यित्मता वचः ॥ २ ॥  
 आ हि ष्मा मूनचे पितापिथं जत्यापये । सग्ना सन्ध्ये वरेण्यः ॥ ३ ॥

१६ बहुतोंने उस चरगाको देखा है । जिस प्रकार गौएँ गोशालाकी ओर जाती हैं, उसी प्रकार निवृत्तिरहित होकर हमारी चिन्ता चरगाकी ओर जा रही है ।

१७ चरगा ! तू कि मेरा मधुर हव्य संसार है; इसलिये होताकी तरह तुम यहाँ प्रिय हव्य भक्षण करो । अनन्तर हम दोनों बर्तें करेंगे ।

१८ सर्व-दर्शनाय चरगाकी मँने देना है । भूमिपर, कई वार, उनका रथ मँने देना है । उन्होंने मेरी स्तुति ग्रहण की है ।

१९ चरगा ! मेरा यह आह्वान एतों । आज मुझे एली करो । तुम्हारी रक्षाका अभिलाषी होकर मैं तुम्हें बुलाता हूँ ।

२० मेधावी चरगा ! तुम घुलोक, भूलोक और समस्त संसारमें शीघ्रिमान् हो । हमारी रक्षा-प्राप्तिके लिये प्रार्थना करनेके अनन्तर तुम उत्तर दो ।

२१ हमारे ऊपरका पाश ऊपरमे खोल दो । मध्य और नीचेका पाश भी खोल दो, ताकि हम जीवित रह सकें ।

१ यज्ञयात्र और अन्नभाजन अग्निदेव ! अपना तेज ग्रहण करो और हमारे इस यज्ञका सम्पादन करो ।

२ अग्नि ! तुम सर्वदा युपक, श्रेष्ठ और तेजस्वी हो । हमारे होमकर्ता और प्रकाशमय वाक्यों द्वारा स्तुत होकर बैठो ।

३ भेष्ट अग्निदेव ! जिस प्रकार पिता पुत्रको, पन्धु बन्धुको और मित्र मित्रको दान देता है, उसी प्रकार तुम भी मेरे चिन्तित्वाय दान देना ।

\* चौवाँसवें सूक्तके अन्तिम मन्त्रका और इस मंत्रका भाव एक ही है । दोनोंके अर्थोंसे विदित होता है कि, कोई किसी काष्ठमें बैठा है और जानकी आवासे चरगासे पाश खोलनेकी विनय कर रहा है । सायण और अन्य सभी टीका-टिप्पणीकारोंका प्रायः ऐसा ही अभिप्राय है । परन्तु दुरादास लाहिरीने त्रिविध पाशोंको त्रिविध-दुःख-रूपसे बताकर उनके मोक्षका तात्पर्य निकाला है । हम लाहिरी महादायका यह अर्थ भी युक्तिरूपसे मानते हैं ।

आ नो बर्हीं रिशादसो वरुणो मित्रो अर्यमा । सीदन्तु मनुषो यथा ॥ ४ ॥  
 पूर्व्यं होतारस्य नो मन्दस्व सख्यस्य च । इमा उ पु श्रुधी गिरः ॥ ५ ॥  
 यच्चिद्धि शश्वता तना देवं देवं यजामहे । त्वे इद्भूयते हविः ॥ ६ ॥  
 प्रियो नो अस्तु विश्पतिर्होता मन्द्रो वरेण्यः । प्रिया स्वग्रयो वयम् ॥ ७ ॥  
 स्वग्रयो हि वार्यं देवासो वधिरे च नः । स्वग्रयो मनामहे ॥ ८ ॥  
 अथा न उमयेपाममृत मर्त्यानाम् । मिथः सन्तु प्रशस्तयः ॥ ९ ॥  
 विश्वेभिरग्ने अग्निभिरिमं यज्ञमिदं वचः । चनो धाः सहसो यहो ॥ १० ॥

२७ सूक्त । अग्नि देवता हैं

अश्वं न त्वा वारवन्तं वन्दध्या अग्निं नमोभिः । सम्राजन्तमध्वराणाम् ॥ १ ॥  
 स घा नः स्रुतुः शवसा पृथुप्रगामा सुशेवः । मीढ्वां अस्माकं चभूयात् ॥ २ ॥  
 स नो दूराच्चासाच्च नि मर्त्यादघायोः । पाहि सदमिद्विश्वायुः ॥ ३ ॥  
 इमसू षु त्वमस्माकं सन्ति गायत्रं नव्यांसम् । अग्ने देवेषु प्र वोचः ॥ ४ ॥  
 आ नो भज परमेष्वा वाजेषु मध्यमेषु । शिक्षा वस्वो अन्तमस्य ॥ ५ ॥

- ४ शत्रुजय मित्र, वरुण और अर्यमा जिस तरह मनुके यज्ञमें बैठे थे, उसी तरह तुम भी हमारे यज्ञके कुशपर बैठो ।  
 ५ हे पुराणहोमसम्पादक, हमारे इस यज्ञ और मित्रतामें तुम प्रसन्न बनो । यह स्तुति-वचन श्रवण करो ।  
 ६ नित्य और विलतीर्ण हव्य द्वारा हम और-और देवोंका जो यज्ञ करते हैं, वह हव्य तुम्हें ही दिया जाता है ।  
 ७ सर्व-प्रजा-रक्षक, होम-सम्पादक, प्रसन्न और वरेण्य अग्नि हमारे प्रिय हों, ताकि हम भी शोभन अग्निसे संयुक्त हो कर तुम्हारे प्रिय बनें ।

८ चूँकि शोभनीय अग्निसे युक्त और दीप्तिमान् कृत्विक् लोगोंने हमारा श्रेष्ठ हव्य धारण किया है; इसलिये हम शोभन अग्निसे संयुक्त होकर याचना करते हैं ।

९ अग्निदेव ! तुम अमर हो और हम मरणशील मनुष्य हैं । आओ, हम परस्पर प्रशंसा करें ।

१० बलके पुत्र अग्नि ! तुम सब अग्नियोंके साथ यह यज्ञ और स्तोत्र ग्रहण करके अन्न प्रदान करो ।

१ : अग्निदेव ! तुम पुच्छयुक्त घोड़ेके समान हो, साथ ही यज्ञके सप्राट् भी हो । हम स्तुति द्वारा तुम्हारी वाचना करनेमें प्रवृत्त हुए हैं ।

२ अग्नि बलके पुत्र और स्थूल-गमन हैं । वे हमारे ऊपर प्रसन्न हों । हमारी अभिलषित वस्तुका वर्षण करें ।

३ सर्वत्र-गामी अग्नि ! तुम दूर और सन्निकट देशमें पापाचारी मनुष्यसे हमारी सर्वदा रक्षा करो ।

४ अग्नि ! तुम हमारे इस हव्यकी बात और इस अभिनव गायत्रीछन्दमें विरचित स्तोत्रकी बात देवोंसे कहना ।

५ परम ( दिव्य लोकका ), मध्यम ( अन्तरिक्षका ) और अन्तिकस्य ( पृथिवीका ) भज प्रदान करो ।

विभक्तसि चित्रमानो सिन्धोरूर्मा उपाक आ । सद्यो दाशुषे क्षरसि ॥ ६ ॥  
 यमने पृत्स्तु मर्च्यमवा वाजेपु यं जुनाः । स यन्ता शश्वतीरिपः ॥ ७ ॥  
 नकिरस्य सहन्त्य पर्यता कयस्य चित् । वाजो अस्ति श्रवाव्यः ॥ ८ ॥  
 स वाजं विश्वचर्षणिरर्च्वद्विस्तु तरुता । विप्रैभिरस्तु सनिता ॥ ९ ॥  
 जरायोध तद्विचिद्वि विशे विशे यज्ञियाय । स्तोमं रुद्राय हृशीकम् ॥ १० ॥  
 स नो महौ अनिमानो धूमकेतुः पुरुध्रन्द्रः । धिये वाजाय हिन्वतु ॥ ११ ॥  
 स रेवां इव त्रिशपतिर्देव्य केतुः शृणोतु नः । उक्त्यैरश्रिवृ हृद्भानुः ॥ १२ ॥  
 नमो महद्भ्यो नमो अर्मकेभ्यो नमो युवभ्यो नम आशिनेभ्यः ।  
 यजाम देवान् यदि शक्तवाम मा ज्यायसः शंसमावृक्षि देवाः ॥ १३ ॥

२८ सूक्त । इन्द्र आदि देवता हैं ।

यत्र यत्रा पृथुवध्न ऊर्ध्वो भवति सोतवे । उलूखलसुतानामवेद्विन्द्र जलगुलः ॥ १ ॥

यत्र द्वाविच जघनाधिपवण्या कृता । उलूखलसुतानामवेद्विन्द्र जलगुलः ॥ २ ॥

६ विश्वभूषण-किरण अग्नि ! सिन्धुके पास तरङ्गकी तरह तुम धनके विभागकर्ता हो । हव्यदाताको तुम शीघ्र कर्मफल प्रदान करो ।

७ अग्नि ! युद्ध-क्षेत्रमें तुम जिस मनुष्यको रक्षा करते हो, जिसे तुम रणाङ्गणमें भेजते हो, वह नित्य अन्न प्राप्त करेगा ।

८ रियु-इमन अग्नि ! तुम्हारे भक्तपर कोई आक्रमण नहीं कर सकता; क्योंकि उसके पास प्रसिद्ध शक्ति है ।

९ समस्त-मानव-पूजित अग्निने घोड़ेके द्वारा हमें युद्धसे पार करा दिया । मेधावी ऋत्विक्कोके कर्मके फलदाता हो ।

१० अग्नि ! प्रार्थना द्वारा तुम जागो । विविध यजमानोंपर कृपा करके यज्ञानुष्ठानके लिये यज्ञमें प्रवेश करो । तुम रुद्र भा उप हो । शक्तिर स्तोत्रोंसे तुम्हारी स्तुति करते हैं ।

११ अग्नि विशाल, असीम-धूम-केतु और प्रभूत-द्वीप्ति-सम्पन्न हैं । अग्नि हमारे यज्ञ और अन्नमें प्रसन्न हैं ।

१२ अग्नि प्रजा-रक्षक, देवोंके श्रोता, देवदूत, स्तोत्र-पात्र और प्रौढ़-किणशाली हैं । वह धनी लोगोंकी तरह हमारी स्तुति सुनें ।

१३ बड़े, बालक, युवक और वृद्ध देवोंको नमस्कार करते हैं । हो सकेगा, तो हम देवोंकी पूजा करेंगे । देवगण ! हम वृद्ध देवोंकी स्तुति न छोड़ दें ।

१ जिस यज्ञमें सोमरस चुआनेके लिये स्पूलमूल पत्थर उठाये जाते हैं, हे इन्द्र ! उसी यज्ञमें ओखलसे तैयार किया हुआ सोमरस, अपना जानकर, पान करो ।

२ जिस यज्ञमें सोम कूटनेके लिये दो फरक, जाँचोंकी तरह, विल्लुत हुए हैं, उसी यज्ञमें ओखल द्वारा प्रस्तुत सोमरस, अपना जानकर, पान करो ।



यत्र नार्यपच्यवमुपच्यवं च शिक्षते । उलूखलसुतानामवेद्विन्द्र जल्युलः ॥ ३ ॥  
 यत्र मन्धां विवध्नते रश्मीन्यमितवा इव । उलूखलसुतानामवेद्विन्द्र जल्युलः ॥ ४ ॥  
 यच्चिद्धि त्वं गृहे गृह उलूखलक युज्यसे । इह धु मत्तमं वद जयतामिव दुन्दुभिः ॥ ५ ॥  
 उत स्म ते वनस्पते वातो वि वात्यग्रमित् । अयो इन्द्राय पातवे सुतु सोम मुलूखल ॥ ६ ॥  
 आयजी वाजसातमा ता ह्युष्वा विजभृतः । हरी इवान्धांसि वप्सता ॥ ७ ॥  
 ता नो अद्य वनस्पती ऋध्वावृज्वेभिः सोतुभिः । इन्द्राय मधुमत्सुतम् ॥ ८ ॥  
 उच्छिष्टं ऋध्वोर्भर सोमं पवित्र आ सुज । नि धेहि गोरोधि त्वचि ॥ ९ ॥



३ जिस यज्ञमें यजमान-पत्नी पैठती और वहाँसे बाहर निकलती रहती है, इन्द्र ! उसी यज्ञमें ओखल द्वारा तैयार सोमरस, अपना जापकर, पाग करो ।\*

४ जिस यज्ञमें लगामकी तरह रस्तीसे मन्थन-दण्ड ब्रौंथा जाता है, उसी यज्ञमें इन्द्र ! ओखल द्वारा प्रस्तुत सोमरस, अपना जापकर, पाग करो ।

५ ओखल ! यद्यपि घर-घर तुमसे काम लिया जाता है, तो भी इस यज्ञमें पिजयी लोगोंकी दुन्दुभिकी तरह तुम ध्वनि करते हो ।

६ हे ओखल-रूप काष्ठ ! तुम्हारे सामने वायु बहती है; इसलिये ओखल ! इन्द्रके पानके लिये सोमरस तैयार करो । x

७ हे अन्न-दाता यज्ञके दोनों साधन ओखल और मूसल ! जिस प्रकार अपना खाद्य चबाते समय इन्द्रके दोनों घोड़े ध्वनि करते हैं, उसी प्रकार तुमसे युक्त होकर तुम हाथ वार-वार विहार करते हो ।

८ हे छद्मप दोनों काष्ठ ( ओखल और मूसल ) ! दर्शनीय अभिषव-मंत्र द्वारा आज तुम लोग इन्द्रके लिये मधुर सोमरस प्रस्तुत करो ।

९ हे ऋत्विक् ! दोनों अभिषव-फलकों ( पात्र-चिक्षेप ) से अवशिष्ट सोम उजाओ, उसे पवित्र कुशके ऊपर रखो । अनन्तर उसे गो-चर्म- ( निर्मित पात्र ) पर रखो ।

\* "त्यूलूमल या मोटी जड़के मूसलसे सोमरस कूटी जाती थी । अनन्तर वह दो भाण्डोंकी तरह अभिषव-पात्रोंमें रखी जाती थी । फिर यजमान-पत्नी रस्तीसे मथानी पकड़ कर सोम-मन्थन करती थी । सोमरस तैयार होनेपर इन्द्रको दिया जाता था । बचा हुआ चालनीसे छानकर दो चमस-पात्रोंमें रखा जाता था । अनन्तर वह गो-चर्मपर रखा जाता था ।"—रसानाथ सरस्वती ।

x इस मंत्रसे मालूम होता है कि, काष्ठकी ओखल बनती थी ।

२९ सूक्त । इन्द्र देवता हैं ।

यद्यिद्धि सत्य सोमपा' अनाशस्ता इव स्मसि ।

आ तू न इन्द्र शंसय गोप्यश्वेषु शुभ्रिषु सहस्रेषु तुरीमघ ॥ १ ॥

शिप्रिन् वाजानां पते शचीवस्तव दंसना ।

आ तू न इन्द्र शंसय गोप्यश्वेषु शुभ्रिषु सहस्रेषु तुरीमघ ॥ २ ॥

निष्वापया मिथूदृशा सस्ता मबुध्यमाने ।

आ तू न इन्द्र शंसय गोप्यश्वेषु शुभ्रिषु सहस्रेषु तुरीमघ ॥ ३ ॥

ससन्तु स्या अरातयो बोधन्तु शूर रातयः ।

आ तू न इन्द्र शंसय गोप्यश्वेषु शुभ्रिषु सहस्रेषु तुरीमघ ॥ ४ ॥

समिन्द्र गर्दभं सृणु नुवन्तं पापयामुया ।

आ तू न इन्द्र शंसय गोप्यश्वेषु शुभ्रिषु सहस्रेषु तुरीमघ ॥ ५ ॥

पताति कुण्डृणाच्या दूरं वातो वनादधि ।

आ तू न इन्द्र शंसय गोप्यश्वेषु शुभ्रिषु सहस्रेषु तुरीमघ ॥ ६ ॥

सर्वं परिक्रोशं जहि जम्भया कृकदाश्वं ।

आ तू न इन्द्र शंसय गोप्यश्वेषु शुभ्रिषु सहस्रेषु तुरीमघ ॥ ७ ॥



१ हे सोमपायी और सत्यवादी इन्द्र ! यद्यपि हम कोई धनी नहीं हैं, तो भी, हे बहुधनशाली इन्द्र ! सुन्दर और असंख्य गौओं और घोड़ों द्वारा हमें प्रदास्त धनवात् करो ।

२ शक्तिशाली, सुन्दर नाकवाले और धनदाक इन्द्र ! तुम्हारी दया चिरस्थायिनी है । बहुधनशाली इन्द्र ! सुन्दर और असंख्य गौओं और घोड़ों द्वारा हमें प्रदास्तनीय करो ।

३ ओ बोनो यम-दूतियों आपसमें देखती हैं, उन्हें छलाओ; वे येहोश रहें । बहुधनशाली इन्द्र ! सुन्दर और असंख्य गौओं और घोड़ों द्वारा हमें प्रदास्तनीय करो ।

४ शूर ! हमारे बाटू सोये रहें और मित्र जागे रहें । बहुधनशाली इन्द्र ! सुन्दर और असंख्य गौओं और घोड़ोंसे हमें प्रदास्त बनाओ ।

५ इन्द्र ! यह गर्दभ-रूप बाटू पाप या बचन द्वारा तुम्हारी निन्दा करता है, इसे बध करो । बहुधनशाली इन्द्र ! सुन्दर और असंख्य गौओं और घोड़ोंसे हमें धनी बनाओ ।

६ विशद वायु, कुटिल गतिके साथ, धनसे दूर जाय । बहुधनशाली इन्द्र ! सुन्दर और असंख्य गौओं और घोड़ों द्वारा हमें धनी बनाओ ।

७ सब बाह करनेवालोंका बध करो । हिंसकोंका विनाश करो । बहुधनशाली इन्द्र ! सुन्दर और असंख्य गौओं और घोड़ों द्वारा हमें प्रदास्तनीय (धनवात्) करो ।

३० सूक्त । इन्द्र देवता हैं ।

आ व इन्द्रं क्विं यथा वाजयन्तः शतक्रतुम् । मंहिष्ठं सिञ्च इन्दुभिः ॥ १ ॥  
 शतं वा यः शुचीनाः सहस्रं वा समाशिरां । पटु निम्नं न रीयते ॥ २ ॥  
 सं यन्मदाय शुष्मिण पणा ह्यस्योदरे । समुद्रो न व्यचो दधे ॥ ३ ॥  
 अयमु ते समतसि कपोत इव गर्भधिम । वचस्तच्चिन्त उहसे ॥ ४ ॥  
 स्तोत्रं राधानां पते गिर्वाहो वीर यस्य ते । विभूतिरस्तु सनृता ॥ ५ ॥  
 ऊर्ध्वस्तिष्ठा न ऊतयेऽस्मिन् वाजे शतक्रतो । समन्येषु ब्रवावहै ॥ ६ ॥  
 यागे योगे तवस्तरं वाजे वाजे हवामहे । सखाय इन्द्रमूतये ॥ ७ ॥  
 आ घा गमद्यदि श्रवत् सहस्रिणीभिरुतिभिः । वाजेभिरुप नो हवम् ॥ ८ ॥  
 अनु प्रत्नस्यौकसो हुवे तुविप्रतिं नरम् । यं ते पूर्वं पिता हुवे ॥ ९ ॥  
 तं त्वा वयं विश्वशरा शास्महे पुरुहूत । सखे वसो जरितृभ्यः ॥ १० ॥  
 अस्माकं शिप्रिणीनां सोमपाः सोमपाज्नां । सखे वज्रिनत् सखीनाम् ॥ ११ ॥

१ संसारमें जिस प्रकार कृष्ण को जल-पूर्ण कर दिया जाता है, उसी प्रकार हम, अनाकाङ्क्षी होकर यजमानो, तुम्हारे लक्ष्य करनेवाले और अतिवृद्ध इन्द्रको सोमरससे सेवन करते हैं ।

२ जिस प्रकार जल स्वयं नीचे जाता है, उसी प्रकार इन्द्र सैकड़ों विशुद्ध सोमरस और "आशीर" नामक सहस्र क्षपण द्रव्यसे युक्त सोमरसके पास आते हैं ।

३ यह अनन्त प्रकार सोमवली इन्द्रकी प्रसन्नताके लिये इकट्ठा होता है । इसके द्वारा इन्द्रका उदर समुद्रकी तरह व्याप्त होता है ।

४ जिस प्रकार कपोत या कबूतर गर्भिणी कपोतीको ग्रहण करता है, उसी प्रकार, हे इन्द्र ! यह सोम तुम्हारा है, तुम भी इसे ग्रहण करो; और, इसी कारण हमारा वचन ग्रहण करो ।

५ धन-रक्षक और स्तोत्र-पात्र इन्द्र ! तुम्हारा ऐसा स्तोत्र तुम्हारा प्रतिभा-प्रिय और सत्य हो ।

६ शतक्रतु ! इस समरमें हमारी रक्षाके लिये उत्सुक बनो । दूसरे कार्यके सम्बन्धमें हम दोनों मिल कर विचार करेंगे ।

७ विभिन्न कर्मोंके प्रारम्भमें, विविध युद्धोंमें हम, अत्यन्त बली इन्द्रको, रक्षाके लिये, सखाकी तरह बुलाते हैं ।

८ यदि इन्द्र हमारा आह्वान सनेंगे, तो निश्चय ही हजारों ऐश्वरी शक्ति और धन-शक्तिके साथ हमारे निकट आवेंगे ।

९ इन्द्र बहुतोंके पास जाते हैं । पुरातन निवास या स्वर्गसे मैं उस पुरुषका आह्वान करता हूँ, जिसे पहले पिता बुला चुके हैं ।

१० इन्द्र ! तुम्हें सब चाहते हैं, तुम्हें असंख्य लोग बुला चुके हैं । तुम सखा और निवासके कारण हो । मैं प्रार्थना करता हूँ कि, तुम अपने स्तोत्राओंपर अनुग्रह करो ।

११ हे सोमपायी, सखा और वज्रधारी इन्द्र ! हम भी तुम्हारे सखा और सोमपायी हैं । हमारी दीर्घ नासिकावाली गौओंको बढ़ाओ ।

तथा तदस्तु सोमपाः सखे वज्रिन् तथा कृणु । यथा त उग्रमसीष्टये ॥ १२ ॥  
 रेवतीर्नः सधमाद इन्द्रे सन्तु तुविवाजाः । क्षुमन्तो यामिर्मदेम ॥ १३ ॥  
 आ घ त्वावान् त्मनासः स्तोतृभ्यो धृष्णवियानः । ऋणोरक्षं न चक्रयोः ॥ १४ ॥  
 आ यद्बुधः शतकतवा कामं जरित्णाम् । ऋणोरक्षं न शचीभिः ॥ १५ ॥  
 शश्वदिन्द्रः प्रोप्रथद्विर्जिगाय । नानदद्विः शाश्वसद्विर्धनानि ।  
 स नो हिरण्यरथं दंसनावान्त्स नः सनिता सनये स नोऽदात् ॥ १६ ॥  
 आश्विनावश्वावत्येपा यातं शचीरया । गोमदस्ता हिरण्यवत् ॥ १७ ॥  
 समान योजनो हि वाँ रथो दस्त्राघमर्त्यः । समुद्रे अदिवनेयते ॥ १८ ॥  
 न्यन्द्यस्य मूर्द्धनि चक्रं रथस्य येमथुः । परि द्यामन्यदीयते ॥ १९ ॥  
 कस्त उपः कथप्रियो भुजे मत्तो अमर्त्ये । कं नक्षसे विभावरि ॥ २० ॥

१२ सोमपायी, सखा और वज्रधर इन्द्र ! तुम ऐसे बनो, तुम इस तरह आचरण करो, जिससे हम मंगलार्थ तुम्हारी अभिलाषा करें ।

१३ इन्द्रके हमारे ऊपर प्रसन्न होनेपर हमारा गायेँ दूधवाली और परात-शक्ति-सम्पन्न होंगी । गायेँसे खाद्य प्राप्त कर हम भी प्रसन्न होंगे ।

१४ हे साहसी इन्द्र ! तुम्हारे समान कोई भी देवता प्रसन्न होकर, हमारे द्वारा याचित होकर, स्तोताओंके लिये अवश्य ही अर्घ्य धन ले आ देंगे । वद उसी प्रकार धन देंगे, जिस प्रकार घोड़े रथके दोनों चक्रोंके अक्षको घुमा देते हैं ।\*

१५ हे शतशत इन्द्र ! जिस तरह शकटकी गति अक्षको घुमाती है, उसी प्रकार तुम कामनाके अनुसार स्तोताओंके धन अर्पण करो ।

१६ इन्द्रके जो घोड़े खा लेनेके बाद फर-फर-शब्दके साथ दिनदिनाते और वधराता साँस केंकते हैं, उन्हींके द्वारा इन्द्रने सदा धन जीता है । कर्मठ और दान-परायण इन्द्रने हमें सोनेका रथ दिया था ।

१७ अदिवनीकुमारद्वय ! अनेक घोड़ोंसे प्रेरित अन्नके साथ आओ । शत्रुसंहारी ! हमारे धर्म गायेँ और सोना आओ ।

१८ शत्रु-नाशक अदिवनीकुमारद्वय ! तुम दोनोंके लिये तैयार रथ विनाश-रहित है; यह समुद्र या अन्तरिक्षमें जाता है ।

१९ अदिवनीकुमारो ! तुमने अपने रथका एक चक्रा अविनाशी पर्वतके उपर स्थिर किया है और दूसरा आकाशकी चारो ओर घूम रहा है ।

२० हे स्तुति-प्रिय अमर उषा ! तुम्हारे संभोगके लिये कौन मनुष्य है ? हे प्रभाव-सम्पन्न ! तुम कितने प्राप्त होगी ?

\* रोतेने यहाँ इस उपमाको इस तरह लिखा है—“As a wheel is brought to a chariot.” रोसेनेने लिखा है—“Curram velut daubus rotis.” साथणने लिखा है—“यथाक्षं प्रक्षिपन्ति तद्वत् ।”

वयं हि ते अमन्महान्तादा पराकात् । अश्वेन चित्रे अरुपि ॥ २१ ॥  
 त्वं त्येन्निरा गहि वाजेभिर्दुहितदेवः । अरुमे रयिं नि धारय ॥ २२ ॥

७ अनुवाक । ३१ सूक्त । अग्नि देवता हैं ।

यहाँसे ३५ सूक्तकके ऋषि अङ्गिराके पुत्र हिरण्यस्तूप हैं ।

त्वमग्ने प्रथमो अङ्गिरा ऋषिर्देवो देवानामभवः शिवः सखा । -  
 तव व्रते कवयो विद्वानापसोऽजायन्त मरुतो भ्राजद्दृष्टयः ॥ १ ॥  
 त्वमग्ने प्रथमो अङ्गिरस्तमः कविर्देवानां परिभूपसि व्रतम् ।  
 विभुर्विश्वरुमै भुवनाय मेधिरो द्विमाता शयुः कतिधा चिदायवे ॥२॥  
 त्वमग्ने प्रथमो मातरिश्चन आविर्भव सुव्रत्या विवस्वते ।  
 अरेजेतां रोदसी होतृचूर्यस्रग्नोर्भारिमयजो महो वसो ॥ ३ ॥  
 त्वमग्ने मनवे दामवाशयः पुरुरवसे सुवृते सुकृत्तरः ।  
 श्वात्रेण यत्पित्रोमुच्यसे पर्या त्वा पूर्वमनयन्नापरं पुनः ॥ ४ ॥

२१ हे व्यापक और विचित्र-प्रकाशवती उपा ! हम दूर या पाससे तुम्हें नहीं समझ सकते ।

२२ हे स्वानुपुत्री ! उस अन्नके साथ तुम आओ, हमें धन प्रदान करो । \*

१ अग्नि ! तुम अङ्गिरा ऋषि लोगोंके आदि ऋषि थे । देवता होकर देवोंके वरदायण-वाही रहते थे । तुम्हारे ही कर्मसे मेधावी, शात-कार्य और शुश्रूषा मरुद्गणने जन्म ग्रहण किया था ।

२ अग्नि ! तुम अङ्गिरा लोगोंमें प्रथम और सर्वोत्तम हो । तुम मेधावी हो और देवोंका यज्ञ विभूषित करते हो । तुम सारे संसारके विभु हो; तुम मेधावी और द्विमातृक ( दो कांटोंसे उत्पन्न ) हो । मनुष्योंके उपकारके लिये विभिन्न रूपोंमें सबत्र वर्त्तमान हो ।

३ अग्नि ! तुम मातरिश्वा या वायुके अग्रगामी हो । तुम शोभन यज्ञकी अभिलाषासे सेवक यजमानके निकट प्रकट हो जाओ । तुम्हारी शक्ति देख कर आकाश और पृथ्वी काँप जाती है । तुम्हें होता माना गया है; इसलिये तुमने यज्ञमें उस भारको वहन किया है । हे आवास-हेतु अग्नि ! तुमने पूजनीय देवोंका यज्ञ निष्पन्न किया है ।

४ अग्नि ! तुमने मनुको स्वरा-लोककी कथा सुनायी थी । तुम परिचर्या करनेवाले पुरुरवा राजाको अनुगृहीत करनेके लिये अत्यन्त शुभफल-दायक हुए थे । जिस समय अपने पितृ-रूप दो काण्डोंके घर्षणसे तुम उत्पन्न होते हो, उस समय तुम्हें शक्तिष्क लोग वेदीकी पूष तरफ ले जाते हैं । अनन्तर तुम्हें पश्चिम तरफ ले जाया जाता है ।

\* धीकोमें इओस, इहना, एथेना आदि उषाके कई नाम हैं । लाटिन-भाषी उषाको मिनर्वा कहते हैं । आर्योंकी नकलर भीक आदि भी उषाके अन्वयमें कहाँनियाँ बनाये हुए हैं और उषा-भक्त हैं ।

त्वमग्ने वृषभः पुष्टिवर्धन उद्यतश्रुचे भवसि श्रवाय्यः ।  
 य आहुति परि वेदा वषट्कृत्तिमेकायुरग्रे विश आविवाससि ॥ ५ ॥  
 त्वमग्ने घृजिनवर्तनिं नरं सकनन्पिपर्षि विदथे विचर्षणे ।  
 य शूरसाता परितेकम्ये धने दध्ने भिश्चित्समृता हंसि भूयसः ॥ ६ ॥  
 त्वं त्वमग्ने अमृतत्व उत्तमे मत्तं दध्नासि श्रवसे दिवेदिवे ।  
 यस्तातृपाण उभयाय जन्मने मयः कृणोपि प्रय आ च सूरये ॥ ७ ॥  
 त्वं नो अग्ने सनये धनानां यशसं कारुं कृणुहि स्तुवानः ।  
 ऋध्याम कर्मापसा नवेन देवैर्वात्रापृथिवी प्रावतं नः ॥ ८ ॥  
 त्वं नो अग्ने पित्रोरुपस्थ आ देवो देवैव्यनवद्य जागृविः ।  
 तनूकृद्रोधि प्रमतिश्च कारवे त्वं कल्याण चसु विश्वमोपिपे ॥ ९ ॥  
 त्वमग्ने प्रमतिस्तं पितासि नस्त्वं घयस्कृत्तव जामयो वयं ।  
 सं त्वा रायः शक्तिः सं सहस्रिणः सुवीरं यन्ति व्रतपामदाम् ॥ १० ॥  
 त्वामग्ने प्रथममायुमायवे देवा अरुणधन्नहृपस्य विशपदिम् ।  
 इदामरुणधन्ननुपस्य शासनां पितुर्यत्पुत्रो ममकस्य जायते ॥ ११ ॥

५ अग्नि ! तुम हृषित-फल-दाता और पुष्टिकारक हो । जुच या यज्ञ-पात्र उठानेके समय यजमान तुम्हारा यज्ञ गाता है । जो यजमान तुम्हें वषट्कारसे युक्त आहुति प्रदान करता है, हे एक मात्र अन्नदाता अग्नि ! उसे तुम पहले, और, पीछे समस्त लोकको प्रकाश देते हो ।

६ विदिष्ट-ज्ञान-शाली अग्नि ! तुम हुनर्ग-गाना पुरुषको उपरके उद्धार-योग्य कार्यमें नियुक्त करो । युद्धकी चारो ओर विन्दुत और अरुण सरह प्रारम्भ होनेपर तुम अन्न-संलयन और घोरता-विज्ञान पुरुषोंके द्वारा बड़े-बड़े धीरोंका भी वध करते हो ।

७ अग्नि ! तुम अपने उस तेवक मनुष्यको, अनुदिन अन्नके लिये, उत्कृष्ट और अमर पदार्थ प्रतिष्ठा करते हो । जो स्वर्ग-लोक और जन्मान्तरका प्राप्ति वा उभय-रूप जन्मके लिये अतीव पिपासु है, उस ज्ञानी यजमानको छल और अन्न दो ।

८ अग्नि ! हम धन-आभके लिये तुम्हारी स्तुति करते हैं । तम यज्ञों और यज्ञ-कर्ता पुत्र दान करो । नये पुत्रके द्वारा यज्ञ-कर्मको हम युद्धि करेंगे । हे घृ और पृथिवी ! देवोंके साथ हमें उचार-रूपसे वचाओ ।

९ निदाय अग्निदेव ! तुम सब देवोंमें जागरूक हो । अपने पितृ-मातृ-रूप धावा-पृथिवीके पास रह कर और हमें पुत्र दान करके अनुपद करो । यज्ञ-कर्ताके प्रति प्रशन्न-युद्धि वनो । कल्याण-वाहो अग्नि ! तुम यजमानके लिये संसारका सब तरहका अन्न प्रदान करो ।

१० अग्नि ! तुम हमारे क्लिष्ट प्रशन्न-मति हो; तुम हमारे तितृ-रूप हो । तुम परमायुके दाता हो; हम तुम्हारे बन्धु हैं । विसारहित अग्नि ! तुम दोमन पुरुषोंसे युक्त और व्रत-याजक हो । तुम्हें सैंकड़ों-हजारों धन प्राप्त हों ।

११ अग्नि ! देवोंने पहले पुरुषोंके मानवरूपधारी पौत्र नहुषका तुम्हें मनुष्यशरीरधान् सेनापति बनाया । साथ ही बन्धनोंने इलाको मनुका धर्मापेदिका भी बनाया था । जिस समय मेरे पिता अङ्गिरा ऋषिके पुत्र-रूपसे तुमने जन्म ग्रहण किया था ।

त्वं नो आने तव देव पायुभिर्मघोन्नो रक्षतन्वश्च वन्द्य ।  
 ज्ञाता तोकस्य तनये गवामस्यनिमेषं रक्षमाणस्तव घृते ॥ १२ ॥  
 त्वमन्ने यज्यवे पायुरन्तरोऽनिपङ्गाय चतुरक्ष इध्यसे ।  
 यो रातहव्योऽवृत्काय धायसे कीरेश्चिन्मन्त्रं मनसा वनोपि तम् ॥ १३ ॥  
 त्वमग्र उरुशासाय वाघतेस्पाहं यद्रेवणः परमं वनोपि तम् ।  
 आध्रस्य चित्रमतिहृद्यसे पिता प्र पाकं शास्त्रिषु प्र दिशो विदुष्टः ॥ १४ ॥  
 त्वमन्ने प्रयत्तदक्षिणं नरं वभेव स्यूतं परिपासि चिद्यवतः ।  
 स्नादुक्ष्मा यो वसती स्योनक्ष्मीवयाजं यजते सोपमा दिवः ॥ १५ ॥  
 इमामन्ने शरणि मीमृषो न इममध्वानं यमगाम दूरात् ।  
 आपिः पिता प्रमतिः सोम्यानां भूमिरस्यृपिकृन्मत्यानाम् ॥ १६ ॥  
 मनुष्वदाने अङ्गिरष्वदङ्गिरो ययातिवत् सदने पूर्ववच्छुचे ।  
 अच्छ याह्या वहा दैव्यं जनमासाद्य वहिपि यक्षि च प्रियम् ॥ १७ ॥

१२ वन्दनीय अग्नि! हम धनवान् हैं। तुम रक्षक-शक्ति द्वारा हम लोगोंको और हमारे पुरोंकी देखकी रक्षा करो। हमारा पौत्र तुम्हारे व्रतमें निरन्तर नियुक्त है। तुम उसको पौओंको रक्षा करो।

१३ अग्नि! तुम यज्ञमान-रक्षक हो। यज्ञको वाधा-शून्य करनेके लिये पासमें रह कर यज्ञको चारों ओर दीक्षिमायु हो। तुम अहिलक और पोषक हो। तुम्हें जो हव्य दान कराता है, उस स्तोत्र-कवचके मंत्रको तुम ध्यानसे प्रहण करते हो।

१४ अग्नि! तुमइरा स्तोत्रात् ऋत्विक् जैसे अभिलषित और परम धन प्राप्त कर, घेंसो तुम इच्छा करो। संसार करता है कि, तुम पाऊनीय या दुर्बल यज्ञदानके लिये प्रसन्न-मति विवृ-स्वह्य हो। तुम अत्यन्त परिज्ञाता हो। अन्न यज्ञमात्रको शिक्षा दो। साथ ही सब दिशाओंका निर्णय भी कर दो।

१५ अग्नि! जिन यज्ञमानने ऋत्विक्को दक्षिणा दो है, उस पुरको तुम सिद्धाई किये हुए कथवकी तरह, मच्छी तरह, रक्षाकरो। जो यज्ञमान उरुवाटु अन्न द्वारा अतिथियोंको खली करके अपने घरमें जीव-नृत्तिकारी या जीवों द्वारा विधीयमान यज्ञानुष्ठान करता है, वह स्वर्गीय उपमाका पात्र होता है। x

१६ अग्नि! हमारे इस यज्ञ-कार्यको भ्रान्तिको क्षमा करो और बहुत दूरसे आकर इस कुमार्गमें जो पड़ गया है, उसे क्षमा करो। सोमका यज्ञ कानेवाले मनुष्योंके लिये तुम सरलतासे प्राण्य हो, पितृ-नुत्प्य हो, प्रसन्न-मति और कर्म-निर्वाहक हो। उन्हें प्रत्यक्ष दर्शन दो।

१७ पवित्र-अग्निदेव! हे अङ्गिरा! मनु, अङ्गिरा, ययाति और अन्यान्य पूर्व-पुरोंकी तरह तुम सम्मुखवर्ती होकर यज्ञदेवमें गमन करो, देवोंको के आओ, उन्हें कुनोंपर बैठाओ और अभीष्ट हव्य दान करो।

x मूलमें जो "जीवयाजम्" शब्द है, उसका दो तरहसे सायणने अर्थ किया है—पशु-बलि-युक्त और जीव-निष्पाद्य। प्रायः अन्य सभी वेदटीकाकारोंने पशु-बलि ही अर्थ किया है। के० एम० वनजीने "Animal sacrifices" (पशु-बलि), विलसनने "sacrifice of life" (जीव-) और राजेन्द्र लाल मिश्रने गोहनन अर्थ किया है। परन्तु गोहनन-अर्थ तो बिल्कुल बाहिरात है। यज्ञका एक नाम तो अध्वर यादिसा-राहित्य भी है। जो हो, यहाँ "जीव-निष्पाद्य" अर्थ ही ठीक ज़रूरी है।

एतेनाग्ने ग्रहाणा वावृधस्य शक्ती वा यत्ते चक्रम विदा वा ।

उत प्र णोप्यभि वस्यो अस्मान्त्सं नः सृज सुमत्या वाजवत्या ॥ १८ ॥

३२सूक्त। इन्द्र देवता हैं ।

इन्द्रस्य नु घोर्याणि प्र घोचं यानि चकार प्रथमानि वज्री ।

अहन्नाहिमन्वपस्ततर्द् प्र वक्षणा अभिनत् पर्वतानाम् ॥ १ ॥

अहन्नाहि पर्वते शिश्रियाणं त्वष्टास्मै वज्रं स्वयं ततश्च ।

वाथा इव धेनवः स्यन्दमाना अञ्जः समुन्वद्र जगमुरापः ॥ २ ॥

घृपायमाणोऽवृणोत सोमं त्रिकद्रुकेष्वपिबत्सुतस्य ।

आसायकं मन्त्रवादत्त वज्रमहन्नेनं प्रथमजामहीनाम् ॥ ३ ॥

यदिन्द्राहन् प्रथमजामहीनामान्मायिनाममिनाः प्रोतमायाः ।

आत्सूर्यं जनयन्द्यामुपासंतादीत्ताशत्रुं न किला विवित्से ॥ ४ ॥

अहन् वृत्रं वृत्रनरं व्यंसमिन्द्रो वज्रेण महता वधेन ।

स्कन्धांसीच कुलिशेना विवृक्णाहिः शपत् उपपृक् पृथिव्याः ॥ ५ ॥

अयोद्धेवे दुर्मदं धा हि जुहो महावीरं तुविवाधमृजीपम् ।

नातारोदस्य स्मृतिं वधानां संरुजानाः पिपिप इन्द्रशत्रुः ॥ ६ ॥

१८ अग्नि ! इस मंत्रसे वृद्धिको प्राप्त हो । अपनी शक्ति और ज्ञानके अनुसार हमने तुम्हारी स्तुति की । इसके द्वारा हमें विशाल शक्ति और हमें अन्त-अन्तर्गत सोमन बुद्धि प्रदान करो ।

१ वज्रधारक इन्द्रने पहले जो पराक्रमका कार्य किया था, उसी कार्यका हम वर्णन करते हैं । इन्द्रने मेघका घष किया था । अनन्तर उन्होंने वृष्टि की थी । प्रवहमाना पार्वत्य नदियोंका मार्ग भिन्न किया था ।

२ इन्द्रने पर्वतपर आश्रित मेघका घष किया था । विश्वकर्मा या त्वष्टाणे इन्द्रके लिये दूरवेधी वज्रका निर्माण किया था । अनन्तर जिस तरह गाय घेगधती होकर अपने बछड़ेकी ओर जाती है, उसी तरह धारावाही जल सवेग समुद्रकी ओर गया था ।

३ बैलकी तरह घेगके साथ इन्द्रने सोम ग्रहण किया था । त्रिकद्रुक यज्ञ अर्थात् ज्योतिष्टोम, गोमेध और आयु नामक त्रिविध यज्ञोंमें चुनाया हुआ सोमका इन्द्रने पान किया था । धनवान् इन्द्रने वज्रका सायक ग्रहण किया था- और उसके द्वारा अद्विष्टों या मेघोंके अग्रजको मारा था ।

४ जिस समय तुमने मेघोंके अग्रजको मारा था, उस समय तुमने मायाधियोंकी मायाका विनाश किया था । अनन्तर सूर्य-चरा और आकाशका प्रकाश किया । अन्तको तुम्हारा कोई शत्रु नहीं रहा ।

५ संसारमें आघरण या अन्धकार करनेवाले वृत्रको महाध्वंसकारी वज्र द्वारा, छिन्न-बाहु करके विनष्ट किया था । कृशारसे काटे हुए शृक्ष-स्कन्धकी तरह अडि या वृत्र प्रपिपीपर पड़ा हुआ है ।

६ द्वापंच वृत्रने पृथिवीपर अपने समान योद्धा न समझ कर महावीर, बहुध्वंसक और शत्रु-हृत् इन्द्रको युद्धमें आह्वान किया था । इन्द्रके विनाशकार्यसे वृत्र प्राग नहीं पा सका । इन्द्र-वात्र वृत्रने नदीमें गिर कर नदियोंको भी पीस दिया ।



अपादहस्तो अपृतन्यदिन्द्रमास्य वज्रमधि सानौ जघान ।  
 वृष्णो वधिः प्रतिमानं वुभूपन् पुत्रावृत्रो अशयद्वयस्तः ॥ ७ ॥  
 नदं न भिन्नममुया शयानं मनो रूहाणा अतियन्त्यापः ।  
 याश्चिद्वृत्रो महिना पर्यतिष्ठत्तासामहिः पत्सुतः शीर्षभृव ॥ ८ ॥  
 नीचावया अभवद्वृत्रपुत्रेन्द्रा अस्या अव वधर्जभार ।  
 उत्तरा सूरधरः पुत्र आसीद्दानुः शये सहवत्सा न धेनुः ॥ ९ ॥  
 अतिष्ठन्ती नामनिवेशानां काष्ठानां मध्ये निहितं शरीरम् ।  
 वृत्रस्य निरयं वि चरन्त्यापो दीर्घं तम आशयदिन्द्रशत्रुः ॥ १० ॥  
 दासपत्नीरहिगोपा अतिष्ठन्निचद्धा आपः पणिनेव गावः ।  
 अर्षाविलमपिहितं यदासीद्वृत्रं जघन्वाँ अप तद्ववार ॥ ११ ॥  
 अश्व्यो वारो अभवस्तदिन्द्र सृके यत्त्वा प्रत्यहन्देव एकः ।  
 अजयोमा अजयः शूर सोममवासृजः सर्तवे सप्त सिन्धून् ॥ १२ ॥

७ हाथ और पैरसे रहित वृत्रने युद्धमें इन्द्रको बुझाया था। इन्द्रने गिरि-सानु-सुनय प्रौढ़ स्क्न्धमें वज्र मारा था। जिस प्रकार दीर्घ-हीन मनुष्य पौरुषशाली मनुष्यकी समानता करनेका च्यर्थ यत्न करता है, उसी प्रकार वृत्रने भी वृषा पत्न किया। अनेक स्थानोंमें क्षत-विक्षत होकर वृत्र पृथिवीपर गिर पड़ा।

८ जिस तरह मग्न तटोंको छाँच कर नद बहता है, उसी तरह मनोहर जल, पतित वृत्रकी, देहको अतिक्रम करके जा रहा है। जीवितावस्थामें अपनी महिमा द्वारा वृत्रने जिस जलको बद्ध कर रखा था, इस समय वृत्र उसी जलके पद-देशके नीचे सो गया।

९ वृत्रकी माता वृत्रकी रक्षाके लिये उसको देहपर टेढ़ी गिरां थी; परन्तु उस समय इन्द्रने उसके नीचेके भागपर अस्त्र-प्रहार किया। तब माता ऊपर और पुत्र नीचे हो रहा। अतन्ना वृत्रके साथ गायकी तरह वृत्रकी माता 'दनु' अनन्त निद्रामें सो गयी।

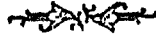
१० लिपति-शून्य, विश्राम-रहित, जरुपण्य-निहित और नाम-विरहित शरीरके ऊपरसे जल बहता चला जा रहा है और इन्द्र-मोहो वृत्र अनन्त निद्रामें पड़ा हुआ है।

११ पणि नामक अछर द्वारा जैसे गायेँ गुप्त थीं, उसी तरह वृत्रकी स्त्रियाँ भी मेघ द्वारा रहित होकर मिल्द थीं। जलका बाहक द्वार भी बन्द था। वृत्रका वध कर इन्द्रने उस द्वारको खोला था।

१२ इन्द्र! जब उस एक देश वृत्रने तुम्हारे घञ्जके ऊपर आघात किया था, तब तुमने घोड़ेकी पूँछकी तरह होकर उसका निवारण कर दिया था। तुमने पणिकी छिपायो गांयको भी जीत लिया था, त्वष्टाके सोमरसको जीता था और गङ्गा आदि सप्त सिन्धुओं या नदियोंके प्रवाहको अप्रतिहत किया था। x

x इस मंत्रमें अछर वृत्रके लिये जो देव बाणका व्यवहार हुआ है, उससे विदित होता है कि, तब अश्वरोंको भी देव कहा जाता था। त्वष्टाको जीत कर इन्द्रका सोम-रस-पान भी प्रसिद्ध है।

नास्मै विद्युन्न तन्यतुः सिपेध न यां मिहमकिरद्भ्रादुर्नि च ।  
 इन्द्रश्च यद्युधुधाते अहिष्णोतापरीभ्यो मघवा च जिग्ये ॥ १३ ॥  
 अहेर्यातारं कमपद्य इन्द्र इदि यत्रे जघ्नुषो भीरगच्छत् ।  
 नय च यन्नवर्ति च स्रवन्तीः श्येतो न भीतो अतरो रजांसि ॥ १४ ॥  
 इन्द्रो यातोऽवसितस्य राजा शमस्य च शृङ्गिणो वस्रवाहुः ।  
 सेदु राजा क्षयति चर्षणीनामरान्न नेमिः परिता वभूच ॥ १५ ॥



१३ जिस समय इन्द्र और शृगमें युद्ध हुआ था, उस समय शृगने जिस विजली, मेघ-ध्वनि, जल-शुद्धि और वज्रका इन्द्रके प्रति प्रयोग किया था, वह सब इन्द्रको नहीं शृगने । साथ ही इन्द्रने शृगकी अन्य मायाएँ भी जीत ली थीं ।

१४ इन्द्र ! शृग-दहनके समय जब तुम्हारे हृदयमें भय नहीं हुआ था, तब तुमने किसी अन्य शृग-इन्ताकी क्या प्रतीक्षा की थी या सहायक क्रोडा था ? निर्भीक रूपान पराङ्को तरु तुम निन्धामय नदियों और जल पार गये थे । ?

१५ शत्रु-विनाशके अनन्तर पशुवाहु इन्द्र ल्यावरों, जंगलों, शान्त पशुओं और शृङ्गी पशुओंके राजा हुए थे । इन्द्र मनुष्योंमें राजा होकर विवास कर रहे हैं । जिस प्रकार चक्र-नेमि मन्थन काण्डोंको धारण करती है, उसी प्रकार इन्द्रने भी अपने बीच सबको धारण किया था ।

## द्वितीय अध्याय समाप्त



### ३ अध्याय ।

—:#:—

७ अनुवाक (आवृत्त) । ३१ सक्त । इन्द्र देवता हैं । छन्द त्रिष्टुप् है ।  
 एतायामोपगव्यन्त इन्द्रमस्माकं सुप्रमतिं वावृधाति ।  
 अनामृणः कुविदादस्य राया गवां केतं परमावर्जते नः ॥१॥  
 उपेदहं धनदामप्रतीतं जुष्टां न श्येनो वसति पतामि ।  
 इन्द्रं नमस्यन्नुपमेभिरर्कैर्यः स्तोतृभ्यो हृद्योऽअस्ति यामन ॥२॥  
 नि सर्वेऽनेन इपुर्धो रक्तस समयो गाऽअजति यस्य वृष्टिम् ।  
 चोष्क्यमाण इन्द्र भूरि वामं मा पणिभुरस्मदधि प्रवृद्ध ॥३॥  
 वधीहिं दस्युं धनिनं घनेन ऽपकश्चरन्नुपशाकैभिरिन्द्र ।  
 धनारधि विपुणक्ते व्यायन्नयज्वानः सनकाः प्रतिमीयुः ॥४॥  
 परा चिच्छीर्षां चवृजुस्त इन्द्रायज्वानो यज्वभिः स्पर्धमानाः ।  
 प्र यद्विधो हरिवः स्थातरुप्र निरव्रताऽअधमो रोदस्योः ॥५॥

१ आओ, हम गाय पानेको इच्छासे इन्द्रके पास चलें । इन्द्र हिंसा-रहित हैं और हमारी प्रकृष्ट बुद्धिका परिवर्द्धन करते हैं । अन्तको वह इंस गोस्वरूप धनके विषयमें हमें उच्च ज्ञान प्रदान करते हैं ।

२ जिस प्रकार श्येन पक्षी अपने पूर्व-सेवित नाइकी तरफ दौड़ता है, उसी प्रकार मैं भी उपमानस्थानीय स्तोत्रोंसे, पूत्रन करके धनदाता और अप्रतिहत इन्द्रकी ओर दौड़ता हूँ । युद्ध-वेळमें इन्द्र स्तोत्राओंके आराध्य हैं ।

३ समस्त सेनापति पीठपर धनुष लगाये हुए हैं । स्वामि-स्वरूप इन्द्र जिसे चाहते हैं, उसके पास गाय भेज देते हैं । उच्चबुद्धि-शाली इन्द्र ! हमें भरपूर धन देकर हमारे पास व्यापारी नहीं बनना अर्थात् गायको कीमत नहीं माँगना । \*

४ इन्द्र ! शक्तिशाली मस्तोसे संयुक्त रहकर भी तुमने अकेले ही धनवान् और चोर वृत्रका कठिन षड्र द्वारा बध किया था । यज्ञ-शत्रु वृत्रानुचरोने तुम्हारे धनुषसे विनाशका उद्देश करके पहुँच कर मृत्यु प्राप्त की ।

५ इन्द्र ! वे यज्ञ-रहित और यज्ञका अनुष्ठान करनेवालोंके विरोधी सिर घुमाकर भाग गये हैं । हे हरि नामके घोड़ों वाले, पलायन-विरहित और उग्र इन्द्र ! तुमने दिव्य लोक, आकाश और पृथिवीसे व्रत-विरहित लोगोंको उठा दिया है ।

\* मूल मंत्रके अर्थ शब्दका सायणाचार्यने "स्वामिरूप" अर्थ किया है । मैक्समूलर आदिने अर्थ और आर्य शब्दोंका अर्थ कृषक किया है । मैक्समूलरकी राय है कि, आर्योंकी अबाध गति और आधिपत्यके परिचायक इरान, अर्मनी, अलबानिया, आयरत, आरियाई, आयलैण्ड वा एरिन आदि स्थान-नाम हैं ।

अयुत्सन्ननपद्यस्य सेनामयातयन्त धितयो नवावाः ।  
 श्यायुधो न चप्रयो निरप्टाः प्रवद्विरन्द्राधितयन्त आयन् ॥६॥  
 त्यमेतान् इन्दो जसुतश्चायोधयो रजसु इन्द्र पारे ।  
 अवादादो दिव था दस्युमुच्छा प्रसुन्वतः स्तुवतः शंसमाचः ॥७॥  
 चक्राणासः परीणहं पृथिव्या हिरण्येन मणिना शुम्भसानाः ।  
 नहिनानासन्धितिरस्त इन्द्र परि स्पृशो अदधात् सूर्येण ॥८॥  
 परि यदिन्द्र रोदसी उमे अवभोजीर्महिना चिश्वतः सांम् ।  
 अमन्यमानाऽऽ शमि मन्यमानेनिग्रहामिरध्रमो दस्युमिन्द्र ॥९॥  
 न ये द्विवः पृथिव्या अन्तमापुने मायाभिध्वनदां पर्यभूवन् ।  
 युजं पञ्च रूपभद्रक इन्द्रो निज्यातिथा तमसो गा अदुश्श्व ॥१०॥  
 अनुस्वधामक्षरन्नापो अस्यावर्धत मध्यं वा नाव्यानाम् ।  
 सध्रीचीनेन मनसा तमिन्द्र ओजिष्टेन हन्मनोहन्मभिध्वन् ॥११॥  
 न्यविध्यदिलीचिदास्य इन्द्रा वि शृद्धिणमभिनच्छुष्णमिन्द्रः ।  
 पावसरो मघवत्यावदोजो वज्रेण शत्रुमवधोः पुनन्युम् ॥१२॥

६ इन्द्रोंने विद्योप इन्द्रकी सेनाके साथ युद्ध करनेकी इच्छा की थी । चरित्रवान् मनुष्यों, इन्द्रको प्रोत्साहित किया था । शूरीके साथ त्रिव प्रकार युद्ध शान कर सम्पन्न भाग जाते हैं, उसी प्रकार वे भी इन्द्र द्वारा निराकृत होकर और अपनी शक्तिहीनता समझ कर इन्द्रके पाससे सहज-भागसे दूर भाग गये ।

७ इन्द्र ! तुमने द्वाप्यासर्षोको मन्त्ररिक्षमें युद्ध-दान किया है । दस्यु वृत्रको दिव्य लोकसे छाकर अच्छी तरह दूध किया है । इसी प्रकार सोम तैयार करनेवालों और स्तोत्राओंकी स्तुति-रक्षा की है ।

८ तब वृत्रानुषरिणि पृथिवीको आच्छादन कर ढाळा था; और, एषण और मणियोसे भी वे सम्पन्न हुए थे । परन्तु वे इन्द्रको नहीं जीत सके । इन्द्रने उन विपन्नताओंको सूर्य द्वारा तिरौहित कर ढाळा था ।

९ इन्द्र ! भू कि तुमने महिमा द्वारा श लोके और मूलोको सम्पूर्ण रूपसे घेरन करके सारा भोग किया है; इसलिये तुमने मन्त्रार्थ-ग्रहण करनेमें अममगं वज्रमात्रोंकी भी रक्षा करनेमें समर्थ मन्त्रों द्वारा वृत्र-रूप घोरोको निःसारित किया था ।

१० जब कि, दिव्य लोकसे बल पृथिवीपर नहीं प्राप्त हुआ और धन-प्रद भूमिको उपकारी इन्द्र द्वारा पूर्ण नहीं किया । तब वर्याकारी इन्द्रने अपने दाशोंमें यज्ञ रक्षा और धृतिमान् प<sup>म</sup> द्वारा अन्धकार-रूप मेघसे पतन-शील जलका पूरा रूपसे दहन कर लिया ।

११ प्रकृतिके अनुसार जल बढ़ने लगा; किन्तु वृत्र भीकागम्य सदियोंके बीचमें बढ़ा । तब इन्द्रने महाबलवाली और प्राण-संहारी आयुध द्वारा कुछ ही दिनोंमें शिवर-मना वृत्रका वध किया था ।

१२ भूमिपर योग्य हुए वृत्रकी सेनाको इन्द्रने विद्ध किया था और शृङ्गी तथा जगच्छोषक वृत्रको विविध प्रकारसे ताड़ना की थी । इन्द्र ! तुम्हारे पास जितना वेग और बल है; उससे युद्धाकाङ्क्षी वृत्रको ध्वज द्वारा हनन किया था ।

अभि सिध्मो अजिगादस्य शत्रून्वित्तिमेन वृषमेणापुरोऽमेत् ।  
 सं वज्रं णासृजद्वृत्रमिन्द्रः प्र स्वां मतिमतिरच्छाशदानः ॥१३॥  
 आंवः कुत्समिन्द्र यस्मिञ्चाकान् प्रावो युध्यन्तं वृषमं दशद्युम् ।  
 शफच्युतो रेणुर्नक्षत द्यामुच्छ्वेत्रे यो नृषाहाय तस्थौ ॥१४॥  
 आवः शमं वृषमं तुग्रथासु क्षेत्रजेषे मधवन्निवृष्यं गाम् ॥  
 ज्योक्विचदत्र तस्थिवांसा अक्रन्तुत्रयतामधरावेदनाकः ॥ १५ ॥

३४ सूक्त ! अश्विद्वय देवता हैं ।

त्रिश्चिन्तो अद्या भवन्तं तवेदसा त्रिभुवो याम उत रातिरश्विना ।  
 युवोहि यन्न हिम्येव वाससोऽभ्यायंसेन्या भवतं मनीषिभिः ॥१॥  
 त्रयः पवथो मधुवाहने रथे सोमस्य वेनामनु, विश्व इद्विद्वः ।  
 त्रयः स्वभासः कर्मितास आरभे त्रिणक्तं याथस्त्रिर्वशित्रना दिवा ॥ २ ॥

१३ इन्द्रका कार्य-सम्पन्न वज्र शत्रुको संहार कर गिरा था। इन्द्रने तीक्ष्ण और श्रेष्ठ आयुध द्वारा वृत्रके नगरोंको विविध प्रकारसे भिन्न किया था। अन्तको इन्द्रने वृत्रको वज्र द्वारा आघात किया था और उसे मार कर भली भौति अपना उत्साह बढ़ाया था।

१४ इन्द्र ! तुम जिस कुत्सकी स्तुतिकों चाहते हो, उसी कुत्सकी तुमने रक्षा की थी। तुमने युद्ध-रत, श्रेष्ठ और दसो दिशाओमें दीक्षिमान्-दशद्वयकी रक्षा की थी। तुम्हारे घोड़ोंके खुरसे पतित धूलि धूलोक तक फैल गयी थी। शत्रु भयसे जलमें मग्न हो कर भी दैवत्रैय काप, मनुष्योंमें अग्रणी होनेकी अभिलाषासे, आपके अनुग्रहसे बाहर निकल आये थे।

१५ इन्द्र ! सोम्य, श्रेष्ठ और जल-मग्न दैवत्रैयको क्षेत्र-प्राप्तिके लिये तुमने बचाया था। जो हमारे साथ बहुत समयसे युद्ध कर रहे हैं, उन शत्रुताकाङ्क्षी लोगोंको तुम वेदना और दुःख दो।\*

१ हे मेधावी अश्विनीकुमारद्वय ! हमारे लिये तुम आज तीन बार आओ। तुम्हारा रथ और दान बहु-व्यापी है। जिस प्रकार रस्मि-युक्त दिन और हिमयुक्त रात्रिका परस्पर नियम-रूप सम्बन्ध है, उसी प्रकार तुम दोनोंके बीच भी सम्बन्ध है। अनुग्रह करके तुम मेधावी ऋत्विकोंके वक्रवर्त्ती हो जाओ। x

२ तुम्हारे मधुर-खाद्य-वाहक रथमें तीन दंड चक्र हैं; उन्हें सभी देवोंने चन्द्रमाको रमणीय पत्नी वेनाके साथ विवाह-यात्रा करनेके समय जाना। उल रथके उपर, अवलम्बनके लिये, तीन खम्भे हैं। अश्विद्वय ! उसी रथसे दिनमें तीन बार और रात्रिमें भी तीन बार गमन करो।

\* रथेशचन्द्र दत्तका अनुमान है कि, दैवत्रैय कुत्सने आर्य-अनार्य-युद्धमें जनार्थको परास्त किया था; इस लिये उन्हें दशद्यु की उपाधि मिली थी।

x "तीन धार"का तात्पर्य है प्रातः, मध्याह्न और सायंकालके अतिथेक-कालसे।

समाने अह्निरवद्यगोहना त्रिरथ यत्नं मधुनामिमिक्षतम् ।  
 त्रिर्वाजवती रिपा अश्विना युवं दोषा अस्मभ्यमुपसञ्च पितृवतम् ॥ ३ ॥  
 त्रिर्चक्षिर्यातं त्रिरनुव्रते जने त्रिः सुप्राण्ये त्रोधेव शिक्षतम् ।  
 त्रिनान्द्रं वहतमश्विना युवं त्रिः पृक्षो अस्मे अक्षरेव पितृवतम् ॥ ४ ॥  
 त्रिनोरश्वि वहतमश्विना युवं त्रिर्द्वयताता त्रिरुतावतं त्रियः ।  
 त्रिः सौभगत्वं त्रिरुतः श्रवांसि नखिण्टं वां सुरे दुहितारुहद्वयम् ॥ ५ ॥  
 त्रिनो अश्विना दिव्यानि भेषजा त्रिः पार्थिवानि त्रिरदत्तमद्रुम्यः ।  
 ओमानं शोभोममक्राय मूनये त्रिधातु शर्मं वहतं शुभस्पती ॥ ६ ॥  
 त्रिनो अश्विना यजता दिवे दिवे परि त्रिधातु पृथिवीमशायतम् ।  
 त्रिन्ना नासत्या रथ्या परावत आत्मेव वातः स्वसराणि गच्छतम् ॥ ७ ॥  
 त्रिरश्विना त्रिन्धुभिः सममातृभिस्त्रय आहावास्त्रेधा हविष्कृतम् ।  
 त्रिन्त्रः पृथिवीरपरि प्रवां दिवो नार्कं रक्षथे च भिरक्तु भिर्हितम् ॥ ८ ॥  
 कत्रो चक्रा त्रिवृतो रथम्य कत्रयो वन्धुरो ये सनीलाः ।  
 कत्रा योगो वाजिनो रात्रुभस्य येन यत्र नासत्योपयाथः ॥ ९ ॥

३ अद्विपद्वय ! तुम एक दिनमें तीन बार यज्ञानुष्ठानका दोष जुद्ध करो । आज तीन बार मधुर रससे यज्ञका हृद्य सित्त करो । रात और दिनमें तीन बार पुष्टिकर अन्न द्वारा हमारा भरण करो ।

४ अद्विपद्वय ! हमारे घरमें तीन बार आओ । हमारे अनुद्वल व्यापारमें लगे मनुष्यके पास तीन बार आओ । रक्षा करने योग्य मनुष्यके पास तीन बार आओ । हमें तीन प्रकार शिक्षा दो । हमें तीन बार आनन्द-जनक फल प्रदान करो । जैसे इन्द्र ब्रह्म देते हैं, उसी प्रकार हमें तीन बार अन्न दो ।

५ अद्विपद्वय ! हमें तीन बार धन दो । देव-युक्त कर्मानुष्ठानमें तीन बार आओ । हमारा बुद्धि-रक्षा तीन बार करो । हमारा तीन बार शोभाय-सम्पादन करो । हमें तीन बार अन्न दो । तुम्हारे त्रिवक्त रथपर सूर्यकी पुत्रो चढ़ो हुई है ।

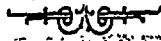
६ अद्विपद्वय ! दिव्य लोकरुता ओषधि हमें तीन बार दो । पार्थिव ओषधि तीन बार दो । अन्तरिक्षसे ताने-बार ओषधि प्रदान करो । बृहस्पतिके पुत्र संयुक्त सार हमारा सन्तानको उत्पन्न-शान करो । शोभनाय-ओषधि-रक्षक ! तुम वात, पित्त, श्लेष्मा आदि तीन धातु-सम्बन्धी उत्पन्न दो ।

७ अद्विपद्वय ! तुम हमारे पूजनोय दो । प्रति दिन तीन बार पृथिवीपर आगमन करके तीन कक्षा-युक्त कुर्वीपर शयन करो । हे नासत्यरविद्वय ! जिस प्रकार आहन-रूप प्रायु शरीरोंमें आता है, उसी प्रकार तुम धी, पशु और वेदों नामके तीन यज्ञ-स्थानोंमें आगमन करो ।

८ अद्विपद्वय ! त्रिन्धु आदि नदियोंके सप्त मातृ-जल द्वारा तीन सौमामिवय प्रस्तुत हुआ है । तीन फलस और हृद्य सो तोयार हैं । तुमने तानों संवत्सरे ऊपर आकर दिवा-रात्रि-संयुक्त आकाशके सूर्यको रक्षा की थी ।

९ हे नासत्य-अद्विपद्वय ! तुम्हारे त्रिकोण रथके तीन चक्र कहे हैं । वन्धुना-प्रार-भूत नोद्वय धीके उपदेशन-स्थानके तानों काठ कहे हैं । कत्र बज्रवाजु पदम तुम्हारे रथमें जाते जाते हैं, जिनके द्वारा हमारे यज्ञमें आते हो ।

आ नासत्या गच्छतं ह्यते हविर्मध्वः पिबतं मधुपेभिरासभिः ।  
युवोर्हि पूर्वं सवितोपसो रथसृताय चित्रं घृतवन्तमिष्यति ॥ १० ॥  
आ नासत्या त्रिभिरैकादशीरिह देविभियोतं मधुपेयमश्विना ।  
प्रायुस्नोरिष्टं नी रपासि मृशतं सेधतं द्वेषो भवतं सचाभुवा ॥११॥  
आ नो अश्विना त्रिवृता रथेनाव्राचं रथि वहतं सुवीरम् ।  
शृण्वन्ता वामवसे जोहवीमि वृधे च नो भवतं वाजसातो ॥१२॥



३५ सूक्त । सविता देवता है । जगती छन्द है ।

हयाम्यनिं प्रथमं स्वस्तये हयामि मित्रावरुणाविहायसे ।  
हयामि रात्रीं जगती निवेशनीं हयामि देवं सवितारमृतये ॥१॥  
आ कृष्णान रजसा वतमानो निवेशयन्मृतं मर्त्यं च ।  
हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन् ॥२॥

१० हे नासत्य-अविध्वय ! आओ । ह्यव्य देता हूँ । अपने मधुपायी मुख द्वारा मधुर ह्यव्य पान करो । उषा-समयसे पहले ही सूर्यने तुम्हारे विभिन्न और घृतवत् रथको यज्ञमें आनेके लिये प्रेरित किया है ।

११ हे नासत्य-अविध्वय ! ततोस देवताओंके साथ मधुपानके लिये यहाँ आओ । हमारी आयुको बढ़ाओ । पापका खण्डन करो । विद्वेपियोंको रोको । हमारे साथ अवल्यान करो ।\*

१२ अश्विकुमारह्वय ! त्रिकोण या त्रिकोणमें चलनेवाले रथ द्वारा हमारे सामने पुत्र-भृत्यादि-संयुक्त धन आनयन करो । अपना रक्षाके लिये हम तुम्हारा आह्वान करते हैं । तुम इनो; हमारा वृद्धि-साधन करो और संग्राममें बल-दान करो ।

१ अपना रक्षाके लिये पहले अग्निका आह्वान करता हूँ । रक्षाके लिये मित्र और अरुणको इस स्थानपर बुलाता हूँ । संसारको विश्राम-कारण रात्रिको मैं बुलाता हूँ । रक्षाके लिये सविता देवताको बुलाता हूँ ।

२ अन्धकार-पूर्ण अन्तरिक्षसे बार-बार भ्रमण कर देव और मनुष्योंको सचेतन करके सविता देवता सोनेके रथसे समस्त सुवर्णको देखते-देखते भ्रमण करते हैं ।

\* जैसे यहाँ ३३ देवोंका उल्लेख है, वैसे हो ४५ वें सूक्तके दूसरे मंत्रमें तथा अन्य कई स्थानोंमें ३३ देवोंका उल्लेख है । तैत्तिरीयसंहिता (१।१।१०।१) में लिखा है कि, आकाश, पृथिवी और अन्तरिक्षमें ११—११ देवता हैं । ऋतुपथ-ब्राह्मण (४।५।७।२) में उल्लेख है कि, ८ वृष, ११ रुद्र, १२ आदित्य, आकाश और पृथिवी—ये ३३ देवता हैं । ऐतरेय-ब्राह्मण (३।२८) में लिखा है कि, ११ प्रयाज देव, ११ अनुयाज देव और ११ उपयाज—ये ३३ देव हैं । विष्णुपुराण कहता है कि, ११ रुद्र, १२ आदित्य, ८ वृष, प्रजापति और षष्टकार—ये ३३ देवता हैं ।

याति देवः प्रवता यात्युद्धता याति शुभ्रान्यां यजतो हरिभ्याम् ।  
 आ देवो याति सचिता परावतोऽप विश्वा दुरिता बाधमानः ॥३॥  
 अभीवृतं कृशनेर्विश्वरूपं हिरण्यशाम्यं यजतो वृहन्तम् ।  
 आस्याद्रथं सचिता चित्रभानुः कृष्णा रजांसि तविषीं दधानः ॥४॥  
 वि जनान्छयावाः शितिपादो अख्यन् रथं हिरण्य प्रडगं वहन्तः ।  
 शश्वद्विशः सवितुर्द्व्यस्योपस्थे विश्वा भुवनानि तस्युः ॥५॥  
 तिम्रो धावः सवितुर्द्रा उपस्यौ एका यमस्य भुधने विरपाद् ।  
 आणि न रथ्यममृताधि तस्युरिह प्रवीतु य उ तच्चिकेतत् ॥६॥  
 वि सुवर्णो अन्तरिक्षाण्यख्यद्गमीरखेपा असुरः सुनीथः ।  
 अवेदानीं स्यः कश्चिकेत कतमां धां रश्मिरस्याततान ॥७॥  
 अष्टौ व्यख्यत्ककुमः पृथिव्यास्त्री धन्त्र योजना सप्त सिन्धून् ।  
 हिरण्याक्षः सचिता देवः आगाद्भद्रत्वा दाशुपे वायाणि ॥८॥

३ देव सचिता उदयसे मर्याद् तक उदर गामी पयसे और मर्यान्हसे साथ तक अयोगामी पय दे कर गमन करते हैं । यह पूजा सूर्यदेव दो सपेद घोड़ों द्वारा गमन करते हैं । यह समस्त पाषाणों विनाश करते-करते दूर देशसे जाते हैं ।

४ पूतनोप और विचित्र किरणोंवाले सचिता देवता मुपनोंके अन्वकारके विनाशके लिये तेज धारण करके पासके उपर्ण-विचित्रित और सोनेकी रस्सियोंसे युक्त विनाश रथपर सवार हुए ।

५ सपेद पैरोंवाले दायाप नामके घोड़े छवण युग या सोनेकी रस्सियों वाले रथको लेकर मनुष्योंके पास प्रकाश करते हैं । सूर्यदेवके पास मनुष्य और संसार उपस्थित हैं ।

६ च लोको आदि तीन लोक हैं । इनमें च लोक और भूलोक—दो सूर्यके पास हैं । एक अन्तरिक्ष यमराजके गृहमें जानेका रास्ता है । जिस प्रकार रथ कोऊका ऊपरों दिल्सा अवलम्बन करता है, उसी प्रकार यमर या अन्धमा आदि नक्षत्र सूर्यको अवलम्बन किये हुए हैं । जो सूर्यको जानते हैं, वे इस विषयमें बोलें । \*

\* गमीर कम्पनसे संयुक्त, प्राणदायी सनयनसे संयुक्त किरणें अन्तरिक्ष आदि तीनों लोकमें व्याप्त हैं । इस समय सूर्य कहाँ हैं, कौन कह सकता है ? किस दिव्य लोकमें सूर्यकी रश्मि विस्तृत है ।

८ सूर्यने पृथिवीको आठों दिशाएँ प्रकाशित की हैं । प्राणियोंके तीनों संसार और सप्त सिन्धु भी प्रकाशित किये हैं । सोनेकी आँत्रोंवाले सचिता इत्यद्रता यजमानको परणीय द्रव्य दान देकर यहाँ आये ।

\* विष्वान्के द्वारा सरण्युके गर्भसे यम और घृणकी उत्पत्ति हुई है । इरानी धर्म-पुस्तक "अवस्था" में यमको मित्र लिखा हुआ है । यहाँ मित्रको प्रथम राजा और सम्भताका उत्पादक माना गया है । छहती मनुष्य मित्रका और मित्रके साथ अदूरमन्त्रका साक्षात्कार प्राप्त करते हैं । वेदमें जैसे यमके पिताका नाम विष्वान् है, उसी प्रकार "अवस्था" में विष्वान् है । जिस तरह ऋग्वेदकी यमपुरीमें पुण्यात्मा निवास करते हैं, उसी प्रकार "अवस्था" की यमपुरीमें भी । फारसीके प्रसिद्ध कवि किरदौस्ताने अपने "आहनाते" में मित्रको यममिदू लिखा है । यममिदू यामी सजाए थे ।



हिरण्यपाणिः सविता विचर्षणिरुभे द्यावा पृथिवी अन्तरीयते ।  
 अपामीवां बाधते वेति सूर्यममि कृष्णेण रजसा द्यामृणोति ॥९॥  
 हिरण्यहस्तो असुरः सुतोथः सुमृलोकः स्ववां यात्वर्वाह ।  
 अपसेधन् रक्षसो यातुधानानस्थाद्देवः प्रतिदोषं गृणानः ॥१०॥  
 ये ते पन्था सवितः पूर्व्यासोऽरेणवः सुकृता अन्तरिक्षे ।  
 तेभिर्नो अद्य पथिभिः सुगोमो रक्षा चनो अधिच ब्रूहि देव ॥११॥



८ अनुवाक । ३६ सूक्त । अग्नि देवता हैं । यहाँसे ४३ वें सूक्त तकके घोरके पुत्र कण्व ऋषि हैं ।

प्र वो यद्वहम् पुरुणाम् विशाम् देवयतीनाम् ।  
 अग्निं सूक्तेभिर्वचोभिरीमहे यं सोमिदम्य ईलते ॥१॥  
 जानासो अग्निं दधिरे सहोवृत्रम् हविष्मन्तो विधेम ते ।  
 स त्वं नो अद्य सुमना इहाविता भवां वाजेपु सन्त्य ॥२॥  
 प्र त्वा द्रुतं घृणीमहे होतारं विश्ववेदसम् ।  
 मंहस्ते सतो वि चरन्त्यर्चयो दिवि स्पृशन्ति भानवः ॥ ३ ॥

९ स्वर्ग-पाणि और विवध दर्शनसे युक्त सविता दोनों लोकोंमें गमन करते हैं, रोगादिका निराकरण करते हैं, सूर्यके पास जाते या उदय होते हैं और तमोनाशक तेज द्वारा आकाशको व्याप्त करते हैं । \*

१० स्वर्ग-इस्त, प्राणदाता, सनेता, हृष्यदाना और धनदाना सविता अभिमुत्र होकर आवें । वह देव राक्षसों और यातु-यानोंका निराकरण करके प्रति रात्रि स्तुति प्राप्त कर अवस्थित हैं । \*

११ सविता देव ! तुम्हारा मार्ग पूर्व-निश्चित, धूलि-रहित और अन्तरिक्षमें छनिमित है । वैसे ही मार्गोंसे आकर आज हमारी रक्षा करो । देव ! हमारी बातें देवोंके पास प्रकाश कीजिये ।

१ तुमलोग बहु-संख्यक प्रजा हो; तुमलोग देव-गणको कामना करते हो; तुमलोगोंके लिये, सूक्त-वाक्य द्वारा, महान् अग्निकी हम प्रार्थना करते हैं । अन्य ऋषि लोग भी उन्हीं अग्निकी स्तुति करते हैं ।

२ अनुष्ठाता लोगोंने बरु-वद्ध-न-कारी अग्निको धारण किया था । अग्निदेव ! हम हृष्य लेकर तुम्हारी परिचर्या करते हैं । तुम अन्न-दानमें उत्तर होकर आज इस अनुष्ठानमें हमारे प्रति उपसन्न होकर हमारे रक्षक बनो ।

३ अग्नि ! तुम देव-गणोंके डोता और सर्वज्ञ हो । हम तुम्हें धरण करते हैं । तुम महान् और नित्य हो । तुम्हारी दीर्घ विस्तृत होती है । तुम्हारी कृष्ण आकाश छूती है ।

\* "सूर्यके पास जाते" का अर्थ उदय होता है । सूर्यकी अनुदित प्रतिमाका नाम सविता है ।

x अश्वर या पापमति जोषका नाम यातुधान है । इरानी लोग यातुधानको यातुभान कहते हैं ।

देवासस्त्वा चरुणो मित्रो अर्यमा सं दूतं प्रत्नमिन्धते ।  
 विश्वं सो अने जयति त्वया धनं यस्ते ददाश मर्त्यः ॥ ४ ॥  
 मन्द्रो होता गृहपतिरग्ने दूतो विशामसि ।  
 त्वे विश्वा सङ्गतानि व्रता ध्रुवा यानि देवा अकृण्वत ॥ ५ ॥  
 त्वे इदग्ने सुभगो यविष्य विश्वमाह्वयते हविः ।  
 स त्वं नो अद्य सुमना उतापरं यक्षि देवान् सुधीर्या ॥ ६ ॥  
 तं घेमित्या नमस्विन उप स्वराजमासते ।  
 हात्राभिरग्निं मनुष्यः समिन्धते तितिर्वासो अति क्रिधः ॥ ७ ॥  
 प्रन्तो वृत्रमतरन् रोदसी अप उरु क्षयाय चक्रिरे ।  
 भुवत् करवे वृषा द्युग्न्याहुतः क्रन्ददश्वो गविष्टिषु ॥ ८ ॥  
 सं सीदस्व मह्यं अस्ति शोचस्व देववीतमः ॥  
 वि धूममग्ने अरुणं मियेध्य सृज प्रशस्त दर्शातम् ॥ ९ ॥

४ अग्नि ! तुम प्राचीन दूत हो । चरुण, मित्र और अर्यमा तुम्हें सही भाँति दीक्षिमान् करते हैं । जो मनुष्य तुम्हें हवि-दान करता है, वह तुम्हारी सहायता के लिये धन विजय करता है ।

५ अग्नि ! तुम हाँ दाता हो । तुम देवोंको घुलाओ । तुम प्रजाओंके गृहपति हो । तुम देवोंके दूत हो । सूर्य, पर्जन्य, पृथिवी आदि देवता जो सब अमोघ व्रत करते हैं, वह सब तुममें सम्मिष्ट हो जाते हैं ।

६ युवक अग्नि ! सौभाग्य-शाली हो । तुम्हें लक्ष्य करके सब हव्य दिये जाते हैं । तुम हमारे लिये प्रसन्न-मना होकर आज और पर दिन—सर्वा शोचनीय घोर-घातों देवोंका अर्चन करो ।

७ यत्नमान लोग नमस्कार-पूर्वक उन स्वयं दीक्षिमान् अग्निवी इसी प्रकार उपासना करते हैं । वात्र को इन्द्र पराजय करनेकी इच्छावाले मनुष्य हेम लोगोंके द्वारा अग्निको प्रदीप्त करते हैं । \*

८ देवोंने प्रहार करके वृक्षका हनन किया था । दोनों जगत् और अन्तरिक्षको, रहनेके लिये, विस्तृत किया था । अग्नि ननशाली है । वह गो-प्राप्तिके लिये शंभ्राममें दिनदिनाते हुए घोड़ोंकी तरह सर्वतोभाषसे आहूत हो कर कण्व करिके लिये यथेच्छ द्रव्य चर्पण करे ।

९ प्रशस्त अग्निदेव ! देवों । तुम सहे हो; देवोंको अतिशय कामना करो । तुम दीक्षि-पूर्ण बनो । हे मेघवी और रुद्रकृष्ट अग्नि ! गमनशील और सद्यय धूम उत्पन्न करो ।

\* ये सात होत्र या क्रत्विक् हैं—( १ ) यत्नमान, जो यज्ञ-अनुष्ठान करते हैं । ( २ ) होता, जो मंत्र-पाठ करते हैं । ( ३ ) उद्गाता, जो मंत्र गाते हैं । ( ४ ) पोता, जो हव्य तैयार करते हैं । ( ५ ) नेष्टा, जो अग्निमें हव्य गिराते हैं । ( ६ ) ब्रह्मा, जो सब पदार्थोंका निश्रय करते हैं । ( ७ ) रक्षक, जो द्वार-देशकी रक्षा करते हैं । किसी-किसी मतमें ये १६ क्रत्विक् हैं—अथर्ववेदके होता, मैत्रावरुण अच्छावाक, प्राथमस्तुत् । यजुर्वेदके प्रतिप्रसिधता, नेष्टा, उन्नेता, अध्वर्यु । सामवेदके उद्गाता, प्रस्तोता, स्रष्टव्य, प्रतिहर्ता । अथर्ववेदके ब्रह्मा, ब्राह्मणाच्छंसी, पोता, अग्नीध्र । अथर्ववेदमें तो सदस्य, पत्नीदीक्षिता, क्रमिता, गृहपति, अङ्गिता, वैकता और घमसाध्वर्यु भी क्रत्विक् माने गये हैं ।

यं त्वा देवासो मनवे दधुरिह यजिष्ठं हव्यवाहन ।  
 यं कण्वो मेध्यातिथिधनस्पृतं यं वृषा यमुपस्तुतः ॥ १० ॥  
 यमग्निं मेध्यातिथिः कण्वः इधं ऋतादधि ॥  
 तस्य प्रपो दीदियुस्तमिमा ऋचस्तमग्निं वर्धयामसि ॥ ११ ॥  
 रायस्पृधि स्वधावोऽस्ति हि तेजने देवेष्वाप्यम् ।  
 त्वं वाजस्य श्रुत्यस्य राजसि स नो मूलं मह्यं असि ॥ १२ ॥  
 ऊर्ध्वं ऊर्ध्वं ऊतये तिष्ठा देवो न सविता ।  
 ऊर्ध्वो वाजस्य सनिता यदग्निभिर्वाघ्निरिह्वयामहे ॥ १३ ॥  
 ऊर्ध्वो नः पाह्यंसो नि केतुना विश्वं समत्रिणं दह ।  
 कृधो न ऊर्ध्वान् चरथाय जीवसे विदा देवेषु नो दुवः ॥ १४ ॥  
 पाहि नो अग्ने रक्षसः पाहि धूर्तेररावणः ।  
 पाहि रीपत उत वा जिघांसतो बृहद्भानो यविष्ठथ ॥ १५ ॥  
 घनेव विश्वसि जह्यरावणस्तपुर्जम्भ यो अस्पृधुक् ।  
 यो मर्त्यः शिश्रीते अत्यक्तुमिर्मा नः सं रिपुरीपत ॥ १६ ॥

१० हव्यवाही अग्नि ! तुम अत्यन्त पूजा-पात्र हो । सारे देवोंने, मनुके लिये, तुम्हें इस यज्ञ-स्वाममें धारण किया था । तुम धन द्वारा प्रीति सम्पादन करो । कण्वने पूजा-पात्र अतिथिके साथ तुम्हें धारण किया है । वर्षाकारी इन्द्रने तुम्हें धारण किया है । अन्यान्य स्तुति-कारकोंने भी तुम्हें धारण किया है ।

११ पूजाहो और अतिथि-प्रिय कण्वने अग्निको आदित्यसे भी अधिक दीक्षिमान् किया है । उन्हीं अग्निकी गति-विशिष्ट किरण दीक्षिमान् है । ये ऋचाएँ उन अग्निको वर्द्धित करते हैं; हम भी परिवर्द्धित करते हैं ।

१२ हे अन्न-युक्त अग्नि ! हमारे धनको पूर्ति करो । तुम्हारे द्वारा देवोंकी मित्रता मिलती है । तुम प्रसिद्ध अन्नके साक्षिक हो । तुम महान् हो । हमें सखी करो ।

१३ हमारी रक्षाके लिये सूर्यकी तरह उन्नत बनो । उन्नत होकर अन्नदाता बनो; क्योंकि विदक्षण यज्ञ-सम्पादक लोगिके द्वारा हम तुम्हें आह्वान करते हैं ।

१४ उन्नत होकर हमें, ज्ञान द्वारा, पापसे बचाओ । सब राक्षसोंको जलाओ । हमें उन्नत करो, ताकि हमें संसारमें विचरण कर सकें । इसी प्रकार हमारा हव्य-रूप धन देवोंके गृहोंमें ले जाओ, ताकि हम जीवित रह सकें ।

१५ हे विशाल-किरण युक्त अग्नि ! हमें राक्षसोंसे बचाओ । धन-दान न करनेवाले धूर्त से रक्षा करो । इसक पशुसे रक्षा करो । इननेछद्म शत्रु से रक्षा करो ।

१६ हे उत्तम-किरणवाले अग्निदेव ! जिस तरह हम लोग कड़े दण्ड द्वारा भौंड आदि नष्ट करते हैं, उसी तरह धन-दान न करनेवालोंको सदा संहार करो ।

अग्निर्वज्रे सुवीर्यमग्निः कण्वाय सौमगम् ।  
 अग्निः प्रावन्मित्रो मेज्यातिथिमग्निः सातो उपस्तु तम् ॥ १७ ॥  
 अग्निना तुर्वशां यदुं परावत उपादेवं हवामहे ॥  
 अग्निर्नयं नवत्रास्त्वं बृहद्दरथं तुर्वीतिं दस्यवे सहः ॥ १८ ॥  
 नि त्वामग्ने मनुर्दधे ज्योतिर्जनाय शश्वते ॥  
 दीद्वेय कण्व ऋतजात उक्षितो यं नमस्यन्ति कृष्टयः ॥ १९ ॥  
 त्वेपासो अग्नेरमघन्तो अर्चयो भीमासो न प्रतीतये ॥  
 रक्षस्वनः सदमिधानुमावतो विश्वं समत्रिणं दह ॥ २० ॥



३७ सूक्त । मरुद्गण देवता हैं ।

क्रीलं चः शर्षो मारुतमनर्वाणं रथे शुभम् । कण्वा अभि प्र गायत ॥ १ ॥  
 ये पृषतीभिर्जग्मिभिः साकं चाशीभिरक्षिभिः । अजायन्त स्वभानवः ॥ २ ॥  
 इहेव शृग्न पयां कशा हस्तेषु यद्ददाम् । नि यामं चित्रमृजते ॥ ३ ॥  
 प्र चः शर्षाय वृष्टये त्वेषु म्नाय शुष्मिणे । देवत्तं ब्रह्म गायत ॥ ४ ॥

१७ सप्तोभम पीयंके लिये अग्निकी पाचना की जाती है । अग्निने कण्वको सौभाग्य-दान किया । अग्निने हमारे मित्रोंकी रक्षा की । अग्निने पूजा-पात्र और अतिथि-संयुक्त ऋषिकी रक्षा की । इसी प्रकार घनादि दानके लिये त्रिस-किरीने अग्निकी स्तुति की, उसकी अग्निने रक्षा की ।

१८ बोरोंका दहन करनेवाले अग्निके साथ तुर्वशा, यदु और उपादेवको दूर देनासे हम बुझाते हैं । वह अग्नि नवत्रा-स्त्व, बृहद्दय और तुर्वीतिकी इस स्थानपर बुझावे ।

१९ अग्नि ! तुम ज्योतिःस्वरूप हो । मनुने विविध जातियोंके मनुष्योंके लिये तुम्हें स्थापित किया था । अग्निदेव ! तुम यज्ञके लिये दरपन्न होकर और द्रव्य द्वारा लूत होकर वणवके प्रति प्रकाशमान हुए हो । मनुष्य तुम्हें नमस्कार करते हैं ।

२० अग्निका दिवा प्रदीप्त, चलवती और भयंकर है । उसका विनाश नहीं किया जा सकता । अग्निदेव ! राक्षसों, यातुघानों और विषयभक्षक दानुओंका दहन करो ।

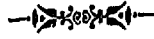
१ हे कण्व-गोत्रोत्पन्न ऋषिगण ! प्रोद्गाहक और, कष्टग्रन्थ मस्तोंको उद्देश्य करके गाओ । ये रथपर सप्तोभित होते हैं ।

२ उन्हें अपनी दीर्घसे सम्पन्न होकर विन्दु-विन्दु-संयुक्त मृगरूप वाहनके साथ तथा युद्ध-गजन, आयुध और नाना रूप अलङ्कारके साथ जन्म पक्षण किया है ।

३ उनके हाथोंमें रहनेवाली चायुध जो शब्द कर रही हैं, वह इस स्वरु हैं । वह चायुध युद्धमें बल-बृद्धि करती है ।

४ जो तुम्हारा बलका समर्थन करते, दानु-दहन करते और जो दीव्यमान कीर्तिसे पूण और बलवान् हैं, हविके उद्देश्यसे उन्हें मरुतोंकी स्तुति करो ।

प्र शंसा गोष्वर्ण्यं क्रीलं यच्छर्षो मास्तम् । जम्भे रसस्य वावृधे ॥ ५ ॥  
 को घो वर्षिष्ठ आ नरो दिवश्चमस्र धृतयः । यत्सीमन्तं न धूनुथ ॥ ६ ॥  
 नि वो यामाय मानुषो दध्रे उग्राय मन्यवे । जिहीत पर्वतो गिरि ॥ ७ ॥  
 येपामज्मेषु पृथिवी जुजुर्वा इव विश्वपतिः । मिथा यामेषु रैजते ॥ ८ ॥  
 स्थिरं हि जानमेपां वयो मातुर्निरेतवे । यत्सीमनु द्विता शवः ॥ ९ ॥  
 उदु त्ये सूनवो गिरः काष्ठा अज्मेष्वन्तत । वाश्रा अभिद्धु यातवे ॥ १० ॥  
 त्यञ्चिद्गधा दीर्घं पृथुं मिहो नपातमसृध्रम् । प्र च्यावयन्ति यामभिः ॥ ११ ॥  
 मरुतो यद्द वो बलं जनां अचुच्यवीतन । गिरीं रचुच्यवीतन ॥ १२ ॥  
 यद्द यान्ति मरुतः सं ह व्रुवते ध्वन्ना । शृणोति कश्चिदेयाम् ॥ १३ ॥  
 प्र यात शीघ्रमाशुभिः सन्ति कण्वेषु घो दुवः । तत्रो पु मादयाध्वै ॥ १४ ॥  
 अस्ति हि ष्मा मदाय वः स्मसि ष्मा वयमेयाम् । विश्वं चिदायुर्जीवसे ॥ १५ ॥



९ जो मरुद्गण पृथिवी-रूप या धुरधदात्री-रूप धेनुओंके बीच स्थित हैं, उनके अविनाशी, क्रीड़ा-परायण और सहज-शील तेजकी प्रशंसा करो । दूधके आस्वादनमें वही तेज परिवर्द्धित हुआ है ।

६ छलोक और मूलोकमें कम्पन करनेवाले नेतृ-स्थानीय मरुतो, तुममें कौन बड़ा है ? तुम वृक्षाप्रकी तरह चारों दिशाओंको परिचालित करो ।

७ मरुद्गण ! तुम्हारी कठोर और भयंकर गतिके दरसे मनुष्योंने घरोंमें मजबूत खम्भे खड़े किये हैं; क्योंकि तुम्हारी गतिसे अनेक शृङ्ग-युक्त पर्वत भी चालित हो जाते हैं ।

८ मरुतोंकी गतिसे सारे पदार्थ फेंके जाने लगे । पृथिवी भी बूढ़े और जीर्ण राजाकी तरह कम्पित हो जाती है ।

९ मरुतोंका उद्गम-स्थान आकाश अविकम्प रहता है । उनके मातृ-रूप आकाशसे पक्षी भी निकल सकते हैं; क्योंकि उनका बल दोनों लोक फैलकर सर्वत्र वर्तमान है ।

१० मरुद्गण शब्दोंके जनयिता हैं । वे गमन-समयमें जलका विस्तार करते हैं और गायोंको "हम्बा" शब्दके साथ घुटने भर जलमें प्रेरण करते हैं ।

११ जो वादल प्रसिद्ध, दीघ और छोटे हैं, जो जल-क्षय नहीं करते और किसीके द्वारा घंघ्य नहीं हैं, उन्हें भी मरुत् लोग, अपनी गतिसे, कम्पित करते हैं ।

१२ मरुतो ! चूँकि तुम्हारे बल है; इसलिये आदमियोंको अपने-अपने कार्योंमें लगाते हो । मेवोंको भी प्रेरण करते हो ।

१३ जमी मरुद्गण गमन करते हैं, तभी रास्तेमें चारों ओर ध्वनि करते हैं । उनकी ध्वनि सभी सुन सकते हैं ।

१४ वेगवान् वाहनके द्वारा सुस्त आओ । मेधावी अनुष्णताओंने तुम्हारी परिचर्याका समारोह किया है । उनके प्रति वृत्त हो ।

१५ तुम्हारी रुझिने लिये ह्वय है । हम समस्त परमायु जीनेके लिये तुम्हारे सेवक बने हुए हैं ।

३८ सूक्त । मरुद्गण देवता हैं ।

कृत् नूनं कथप्रियः पिता पुत्रन्त हसनयोः । दक्षिध्वे घृत्तवर्हिषः ॥ १ ॥  
 क नूनं कदो अर्यं गन्ता दिवो न पृथिव्याः । क चो गाथो न ररयन्ति ॥ २ ॥  
 क यः सुम्ना नर्यामि मरुतः क सुयिता । को विश्वानि सौभगा ॥ ३ ॥  
 यद्यं पृथिमातरो मतांसः स्यातन । स्तोता वो अमृतः स्यात् ॥ ४ ॥  
 मा चो मृगो न यवसे जरिता भूद्भोज्यः । पथा यमस्य मादुप ॥ ५ ॥  
 मो पु णः परापरा निरुत्तिर्दुर्हणा यथीन् । पदीष्ट तृणया सह ॥ ६ ॥  
 सत्यं त्वेवा अमवन्तो धन्वञ्जिदा कत्रियासः । मित्रं कृण्वन्त्यवातान् ॥ ७ ॥  
 याध्रये विद्युन्मिमाति यत्सं न माता सिपक्ति । यदेपां वृष्टिरसर्जि ॥ ८ ॥  
 दिवा त्रिजमः कुर्वन्ति पर्जन्येनोद्वाहेन । यत्पृथिवीं व्युन्दन्ति ॥ ९ ॥  
 क्षत्र स्वतान्मरुतां विश्रमा सम पार्थिवम् । अरेजन्त प्र मानुषाः ॥ १० ॥  
 मरुतो धातुवाणिभिस्त्रिषा रोधस्वर्तारुन् । यातेम त्रिद्र्यामभिः ॥ ११ ॥

१ मरुद्गण ! तुमलोग प्रथमप्रिय हो । तुम्हारे जिसे कुत छिन्न हैं । जिस प्रकार पिता पुत्रको हाथसे धारण करता है, वही प्रकार क्या हमें भी तुम धारण करोगे ?

२ हम ममप पुत्र कहां हो ? कब आओगे ? आकाशसे आओ । पृथिवीसे मत जाना । यजमान लोग, गायोंकी तरह, तुम्हें कहां सुकते हैं ?

३ तुम्हारा क्या पत्र कहीं है ? तुम्हारा उमंगल द्रव्य कहां है ? तुम्हारा समस्त सौभाग्य कहां है ?

४ हे पृथिवी नामक सेतु-पुत्र ! पदपि तुम मनुष्य हो; परन्तु तुम्हारा स्तोता अमर हो ।

५ जिस प्रकार धार्मिक बांधव गृण सेवा-रहित नहीं होता, गृण-भक्षण करता है; उसी प्रकार तुम्हारे स्तोता भी सेवा-शून्य नहीं, नाकि वे धर्मक पत्र नहीं आधे ।

६ निरुत्ति या वाय-देवा अरुण-वज्रनाकिना हे; और, उसका विनाश नहीं किया जा सकता । वह निरुत्ति हमारा क्या नहीं करे और हमारा गृणाकं त्याग विप्लव हो जाय ।

७ होमिनाम् और वज्रान् दक्षिणगण या मरुद्गण सब-भुव मधूमिमें मा वायु-रहित वृष्टि करते हैं ।

८ प्रमत् मनवोंवाकी सेतुकी तरह विपत्ता गारना है । जिस प्रकार गाय बछड़ेकी सेवा करता है, उसी प्रकार त्रिजली भी मरुद्गणकी सेवा कातो है । कथनः मरुद्गणने वृष्टि को ।

९ मरुद्गण जहयातां सेवों द्वारा दिवमें भी अन्वकार करते हैं । पृथिवीको भी सींचते हैं ।

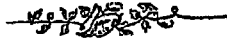
१० मरुद्गणकं गजनमे मार्यं पृथिवीकं प्रद आदि चारों ओर कौपने लगते हैं । मनुष्य भी कौपने लगते हैं ।

११ मरुतो ! इव दस्त्रद्वारा विच्छन्न वृष्टते संयुक्त नदी होकर अवध गतिते गमन करो ।

\* बीमे और पाँवमें मन्त्रोंको मिठाकर मैदलमूलने ऐसा अर्थ किया है—

"If you, sons of Priani, were mortal, and your worshipper an immortal, then never should your prayer be unweleom, like a deer in pasture grass, nor should he go on the path of Yam."

स्थिरा वः सन्तु नेमयो रथा अश्वास एषाम् । सुसंस्कृतां अभीशवः ॥ १२ ॥  
 अच्छा वदा तना गिरा जरायै ब्रह्मणस्पतिम् । अग्निं मित्रं न दर्शतम् ॥ १३ ॥  
 मिमी हि श्लोकमास्ये पर्जन्य इव ततनः । गाय गायत्रमुद्ध्यम् ॥ १४ ॥  
 वन्दस्व मारुतं गणं त्वेषं पनस्युमर्किणम् । अस्मे वृद्धा असन्निह ॥ १५ ॥



३९ सूक्त । मरुद्गण देवता हैं । बृहती छन्द है ।

प्र यद्विथा परावतः शोचिर्त मा नमस्यथ ।  
 कस्य क्त्वा मरुतः कस्य वर्षसा कं याथ कं ह धूतयः ॥ १ ॥  
 स्थिरा वः सन्त्वायुधा पराणुदे वीलू उत प्रतिष्कमे ।  
 युष्माकमस्तु तविषी पनीयसी मा मर्त्यस्य मायिनः ॥ २ ॥  
 परा ह यत्स्थिरं हथ नरो वर्तयथा गुरुः ।  
 वि याथन वनिनः पृथिव्याः व्याशाः पर्वतानाम् ॥ ३ ॥  
 न हि वः शत्रुर्विचिदे अधि घवि न भूम्यां रिशादसः ।  
 युष्माकमस्तु तविषी तना युजा रुद्रासो नू चिदाधृषे ॥ ४ ॥

१२ मरुद्गण ! तुम्हारा रथ-चक्र-बल्य या नेमि दृढ़ हो । रथ और घोड़े भी दृढ़ हों । अश्व-वाहन-रज्जु पकड़नेमें तुम्हारी अंगुलियाँ सावधान हो ।

१३ ऋत्विग्गण ! ब्रह्मणस्पति या मरुद्गण, अग्नि और छद्मश्च मित्रकी प्रार्थनाके लिये देवोंके स्वरूप-प्रकाशक वाक्यों द्वारा हमारे सामने होकर उनको स्तुति करो ।

१४ ऋत्विग्गण ! अपने मुँहसे स्तोत्र बनाओ । मेवकी तरह उस स्तोत्र-श्लोकको विस्तृत करो । शास्त्रयोग्य और गायत्रीछन्दसे युक्त सूक्तका पाठ करो ।

१५ ऋत्विगो ! दीस, स्तुति-योग्य और अचनासे संयुक्त मरुतोंको बन्दना करो, ताकि वे हमारे इस कायमें बदन-शील हों ।

१ कम्पनकारो मरुद्गण ! जब कि, दूरसे आलोकको तरह तुम अपने तेजको इस स्थानपर विकीर्ण करते हो, तब तुम किसके यज्ञ द्वारा, किसके स्तोत्र द्वारा, आकृष्ट होते हो ? कहाँ किस यज्ञमानके पास जाते हो ?

२ मरुद्गण ! शत्रु-विनाशके लिये तुम्हारे हथियार स्थिर हों । साथ ही शत्रुओंको रोकनेके लिये कठिन हों । तुम्हारा बल प्राथना-पान्न हो । दुराचारी मनुष्योंका बल हमारे पास स्तुति-भाजन न हो ।

३ नेत्र-स्थानोप मरुतो ! जब स्थिर वस्तुको तुम तोड़ते हो, सारो वस्तुको चलाते हो, तब पृथिवीके नव वृक्षके बीचसे और पहाड़को बगलसे तुम जाते हो ।

४ शत्रु-विनाशी मरुद्गण ! धुलोक और पृथिवी लोकमें तुम्हारे शत्रु नहीं हैं । रुद्रपुत्र मरुद्गण ! तुम इकट्ठ हो । शत्रुओंके दमनके लिये तुम्हारा बल शीघ्र विस्तृत हो ।

५ वैषयन्ति पर्वतान् वि विञ्चन्ति वनस्पतीन् ।  
 प्रां भारत मन्वो दुर्मदा इव देवासः सर्वया विद्या ॥ ५ ॥  
 उपां स्थेषु पृथ्वीर्युग्धं प्रच्छिन्नं हति रोहितः ।  
 आ यो यामाय पृथिवीं चिदश्रोद्यत्रामयन्त मानुषाः ॥ ६ ॥  
 आ वा मक्षू तनाय कं रुद्रा यवो तृणीमहे ।  
 नन्ता नूनं नोऽवसा यथा पुरेत्या कण्ठाय विभ्युषे ॥ ७ ॥  
 युष्मैपिनो मन्तो मर्त्यैपित आ यो नो अन्य ईपते ।  
 वि नं युयोत शवसा व्योजसा वि गुष्माकामिरुतिभिः ॥ ८ ॥  
 अस्वामि हि प्रयज्यवः कण्ठं दद प्रचेतसः ।  
 अस्वामिभिर्मंरु आ न ऊतिभिर्गन्ता वृष्टिं न विद्युतः ॥ ९ ॥  
 अस्वाम्योजो विभृथा सुदानवोऽस्वामि धृतयः शवः ।  
 शपिह्निरे मरुतः परिमन्यव इपं न खजत द्विपम् ॥ १० ॥



४० सूक्त । प्रतागल्पति देवता हैं ।

उत्तिष्ठ मत्प्रभस्वने देवभक्तवर्द्धनेमहे । उप प्र यन्तु मरुतः सुदानवः इन्द्र प्राशूर्धवा सवा ॥ १ ॥

५ मरुद्गण पशुओंको विधेर करने फैलाते हैं । परस्परताओंको अलग-अलग कर देते हैं । देव मरुद्गण ! प्रजागणके साथ तुम संपेकउ उन्मत्तांकी तरह सब स्थानोंको ताते हो ।

६ तुम विन्दु-चिन्दिग या विविच-रण-विनिष्ठ पृथ्वीको रथमें जोतते हो । लोहित मृग वृष्टि या वाहनश्रीय-मन्वषर्ती 'पुग' होकर रथ घटन करता है । पृथिवीने तुम्हारा आगमन होता है । मरुण ढरे हैं ।

७ यद्वपु मरुतो ! युक्तं चिं तुम्हारे रथ-वृत्तिको हम सोत्र प्राथेना करते हैं । एक समय हमारी रक्षाके किये तुम्हारा जो रूप आया था, यही रूप भौंद मेधावी यजमानके पास शीघ्र आवे ।

८ तुम्हारे या किसी अन्य मरुण्यं द्वारा उतेजित होकर जो कोई पात्र, हमारे सामने आवे, उसका खाद्य और बल अप-हृत करो । अपना महायता भी उसमें पापम के लो ।

९ मरुद्गण ! तुम सब प्रकारसे यज्ञके भोजन और उदरुष्ट जानले युक्त हो । तुम कण्य अथवा यजमानको धारण करो । जिस प्रकार बिजली पशु जाती है, उसी प्रकार तुम भी अपनी समस्त रथ-वृत्तिके साथ हमारे पास आओ ।

१० एतोमन शवसे तुक मरुद्गण ! तुम मरुतन तेजको धारण करो । हे कम्पन-कर्ता मरुतो ! तुम सम्पूर्ण बल धारण करो । अग्नि-द्वीप और क्रोय-परायण शत्रुके प्रति, पाणकी तरह, अपना क्रोध प्रेरण करो ।

१ प्रतागल्पति । उद्यो । देव-कामनाकारो हम तुम्हारे पाचना करते हैं । सोमन और दाता मरुद्गणके पास होकर आओ । इन्द्र ! तुम साथमें रह पर सोमरस सेवन करो ।



त्वामिद्धि सहसस्पुत्र मर्त्य उपब्रूते घने हिते ।  
 सुधीर्यं मरुत आ स्वश्र्यं दधीत यो वः आचके ॥ २ ॥  
 प्रेतु ब्रह्मणस्पतिः प्र देव्येतु सूनता ।  
 अच्छा वीरं नश्यं पडित्तराधसं देवा यज्ञं नयन्तु नः ॥ ३ ॥  
 यो वाघते ददाति सूनरं वसु स घस्ये अक्षिति श्रवः ।  
 तस्मा इलां सुवीरामा यजामहे सुप्रवृत्तिमनेहसम् ॥ ४ ॥  
 प्र नूनं ब्रह्मणस्पतिर्मन्त्रं वदुत्युक्थ्यम् ।  
 यस्मिन्निन्द्रो वरुणो मित्रो अर्यमा देवा ओकांसि चक्रिरे ॥ ५ ॥  
 तमिद्धोचेमा विद्येषु शम्भुवं मन्त्रं देवा अनेहसम् ।  
 इमां च नाचं प्रतिहर्यथा नरो विश्वेद्वामा वो अश्रवत् ॥ ६ ॥  
 को देवयन्तमश्रवज्जनं को वृक्तवर्हिपम् ।  
 प्र प्र दाश्वान् पस्त्याभिरस्थितान्तर्वावत् क्षयं दधे ॥ ७ ॥  
 उप क्षत्रं पृञ्जीत हन्ति राजभिर्मये चित् सुक्षिति दधे ।  
 नास्य वर्ता न तस्ता महाधने नामं अस्ति वज्रिणः ॥ ८ ॥



२ हे बृहन्न-पालक ब्रह्मणस्पति देवता ! शत्रुओंके बीच प्रक्षिप्त धनके लिये मनुष्य तुम्हें ही स्तुत करता है । मरुद्रण ! जो मनुष्य तुम्हारी स्तुति करता है, वह सुशोभन अश्व और धीर्यसे युक्त धन पाता है ।

३ ब्रह्मणस्पति या वृहस्पति हमारे पास आधें । सत्यदेवी आधें । देवता लोग धीर पात्रु को दूर करें । हमें हितकारी और ह्यय-युक्त यज्ञमें ले जायें ।

४ जो मनुष्य ऋत्विक्के ग्रहण-योग्य धन-दान करता है, वह अक्षय अन्न प्राप्त करता है । उसके लिये हम लोग इलाके पास याचना करते हैं । इला सुबीरा हैं । वह शत्रुका हनन करती हैं । उन्हें कोई नहीं मार सकता ।

५ ब्रह्मणस्पति अवश्य ही पवित्र मंत्रका उच्चारण करते हैं । उस मंत्रमें इन्द्र, वरुण, मित्र और अर्यमा देवता अवस्थान करते हैं ।

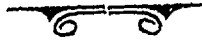
६ देवगण ! सबके लिये उस हिंसा-रूप-शून्य मंत्रका यज्ञमें हम उच्चारण करते हैं । हे नेतृ-गण ! यदि तुम इस वाक्य को इच्छा करते हो, तो सारे शोभनोय बचन तुम्हारे पास जायेंगे ।

७ जो देवोंको अभिलाषा करते हैं, उनके पास ब्रह्मणस्पतिको छोड़ कर कौन आवेगा ? जो यज्ञके लिये कुत्त सोइते हैं, उनके पास ब्रह्मणस्पतिको छोड़कर कौन आवेगा ? ऋत्विकोंके साथ व्रज्य-दाता यजमान यज्ञ-भूमिके लिये प्रस्थान कर चुके हैं, और अन्तःस्मित बृहन्न-युक्त घरमें गमन भी कर चुके हैं ।

८ अपने शरीरमें ब्रह्मणस्पति बल संचय करें । राजाओंके साथ वे शत्रुका विनाश करते हैं और भयके समय वे अपने स्थानपर रहते हैं । वे वज्रधारी हैं । महाधनके लिये बड़े या छोटे युद्धमें उन्हें कोई उत्साहित और निरुत्साहित करनेवाला नहीं है ।

४१ सूक्त । वरुण आदि देवता हैं । गायत्री छन्द है ।

यं रक्षन्ति प्रचेतसो वरुणो मित्रो अर्यमा । नू चित्त स दभ्यते जनः ॥ १ ॥  
 यं बाहुतेव पिप्रति पान्ति मर्त्यं रिपः । अरिष्टः सर्वं पृधते ॥ २ ॥  
 वि दुर्गा वि द्विपः पुरो घ्नन्ति राजानः । एषां नयन्ति दुरिता तिरः ॥ ३ ॥  
 सुगः पन्था अनृक्षर आदित्यास्त ऋतं यते । नान्रावणादो अस्ति वः ॥ ४ ॥  
 यं यद्वां नयथा नर आदित्या ऋजुना पथा । प्र वः स धीतये नशात् ॥ ५ ॥  
 स रत्नं मर्त्यो वसु विश्वं तोकमुत्त त्मना । अच्छा गच्छत्यस्तुतः ॥ ६ ॥  
 कथा राघाम सखाय स्तोमं मित्रस्यार्यम्णः । महि प्सरो वरुणस्य ॥ ७ ॥  
 मा वो घ्नन्त मा शपन्तं प्रति वोचे देवयन्तम् । सुस्रै विद्ध आधिवासे ॥ ८ ॥  
 नतुरश्चिद्दमानाद्विभीयादा निधातोः । न दुरुक्ताय स्पृहयेत् ॥ ९ ॥



१ उरुकृष्ट ज्ञानसे सम्पन्न वरुण, मित्र और अर्यमा जिसकी रक्षा करते हैं, उसे कोई नहीं मार सकता ।

२ वे जिसको अपने हाथसे धन-युक्त करते और हिसकते बचाते हैं, वह मनुष्य किलोके द्वारा हिंसित न होकर वृद्धि पाता है ।

३ वरुण आदि राजन्य वंसे मनुष्योंके लिये शत्रुओंका किला विनष्ट करते हैं; साथ ही शत्रुओंका भी विगाथा करते हैं । अनन्तर वंसे मनुष्योंका पाप-मोचन भी कर सकते हैं ।

४ आदित्यगण ! तुम्हारे यज्ञमें पहुँचनेका मार्ग सुख-गम्य और कष्टक-रहित है । इस यज्ञमें तुम्हारे लिये दुरा स्थाव नहीं तैयार होता ।

५ नेतृ-स्थानीय आदित्यगण ! जिस यज्ञमें तुम सरल मार्गसे आते हो, उस यज्ञमें तुम्हें उपभोग प्राप्त हो ।

६ आदित्यगण ! वह तुम्हारा अनुगृहीत मनुष्य किसीके द्वारा हिंसित न होकर सारा रमणीय धन सामने ही प्राप्त करता है । साथ ही अपने सहस्र अपत्य भी प्राप्त करता है ।

७ सखा छोग ! मित्र, अर्यमा और वरुणके महत्त्वके अनुकूल स्तोत्र किस तरह हम साधित करेंगे ?

८ देवगण ! देवामिलापो यजमानका जो धनन करता है और जो कटु बचन बोलता है, उसके विरुद्ध तुम्हारे पास अभियोग नहीं उपस्थित करता । मैं धनसे तुम्हें वृत्त करता हूँ ।

९ अक्ष, ध्रुत या जूपके खेलमें जो मनुष्य चार कौड़ियाँ अपने हाथोंमें रखता है, उस मनुष्यसे तब तक लोग बरते हैं, जब तक वह कौड़ियोंको नहीं फेंक लेता है; उसी प्रकार यजमान दूसरेकी निन्दा नहीं करना चाहता है—बर करता है । x

x मूलमें अक्ष-श्रीद्धाकी कोई स्पष्ट बात नहीं है; परन्तु सायण आदि प्रायः सभी भाष्यकारों और अनुभाषकोंने यहाँ क्षुणा ही अर्थ निकला है ।

४२ सूक्त । पूषा देवता हैं ।

सम्पूषन्नध्वनस्तिर व्यंहो विमुचो नपात् । सश्वा देव प्र णस्पुरः ॥ १ ॥  
 यो नः पूषन्नधो वृको दुःशेव आदि देशति । अप स्म तं पथो जहि ॥ २ ॥  
 अप त्यं परिपन्थिनं मुयीवाणं हुरश्चितं । दूरमधि क्षुतेरज ॥ ३ ॥  
 त्वं तस्य द्रयाविनोऽवशंसस्य कस्यचित् । पद्मामि तिष्ठ तपुषिम् ॥ ४ ॥  
 आतत्ते दक्ष मन्तमः पूषन्नधो वृणीमहे । येन पितृन्कोदयः ॥ ५ ॥  
 अधा नो विश्वसौभग हिरण्यवाशीमत्तम । धनानि सुपणा कृधि ॥ ६ ॥  
 अतिनः सश्चतो नय सुगा नः सुपथा कृणु । पूषन्निह क्रतुं विदः ॥ ७ ॥  
 अभि सूयवसं नय न वज्ज्वारो अध्वने । पूषन्निह क्रतुं विदः ॥ ८ ॥

१ हे पूषन् ! मार्गके पार लगा दो । विघ्नके कारण पापका विनाश करो । हे मेघ-पुत्र देव ! हमारे आगे जाओ । ×

२ पूषन् ! यदि कोई आक्रामक, अपहर्ता और दुष्ट हमें उल्टा माग दिवा दे, तो उसे उचित मागसे दूर हटा दो ।

३ उस माग-प्रतिबन्धक, चोर और कपटीको मार्गसे दूर भगा दो ।

४ जो कोई प्रत्यक्ष या परोक्ष—दोनों प्रकारसे हरण करता और अनिष्ट-साधन करता है, हे देव ! उसकी पर-पीड़क देहको अपने पैरों रौंद डालो ।

५ अरि-मर्दन और ज्ञानो पूषन् ! तुमने जिस रक्षा-शक्तिके पितरोंको उल्टाहित किया था, तुम्हारी उन्नी रक्षा-शक्तिके लिये हम प्रार्थना करते हैं ।

६ सर्व-सम्पत्साली और विविध-स्वर्णाद्य-संयुक्त पूषन् ! हमारी प्रार्थनाके अनन्तर हमारे घारेमें धन-समूह दानमें परिणत करो ।

७ धाक शत्रुओंका अतिक्रम करके हमें ले जाओ । छल-गम्य और सुन्दर मागसे हमें ले जाओ । पूषन् ! तुम इस मार्गमें हमारी रक्षाका उपाय जानो ।

८ सुन्दर और वृण-युक्त देशमें हमें ले जाओ । रास्तेमें गया सन्ताप न होने पावे । पूषन् ! तुम इस मार्गमें हमारी रक्षाका उपाय जानो ।

× सायणाचार्यने “पूषा” का अर्थ “जगत्पोषक पृथिव्यभिमानी देव” किया है । सायणने “पूषा” को “मेघ-पुत्र” भी माना है । इसका कारण उन्होंने लिखा है कि, “जलसे पृथिवी उत्पन्न हुई है और मेघ जल धारण करता है; इसलिये जल-पुत्र ही मेघ-पुत्र या पृथिव्यभिमानी देव है ।” परन्तु यास्कने विद्वत्सभों पूषाका अर्थ सूर्य किया है । पुत्राणां भी यही अर्थ बताते हैं । सत्यव्रत सामश्रमीने “अल्पतेजा” सूक्तको पूषा या पूषन् लिखा है । पाश्चात्य पण्डितोंने भी सूर्यको पूषा माना है । गोल्डवुडकरने अपने “Note on the Aswinas” में लिखा है—“ushan the sun.” विद्वत्सभका कहना है—“Poushan is usually a synonym of the sun.” लॉंग्लोया ( Longlois ) ने अपने ऋग्वेदके फ्रेंच अनुवादमें लिखा है—“Une forme du soleil.” मैक्समूलरका मत है—“The sun as viewed by shepherds.” वेदाध्ययने लिखा है, “मेघसे ही सूर्य-प्रकाश आता है; इसीलिये पूषाको मेघ-पुत्र कहा गया है ।” रमेशचन्द्र दत्तने भी इसी मतको पसन्द किया है । हम भी इस मतको असंगत नहीं समझते ।

शग्धि पूर्धि प्र यन्सि च शिशीदि प्रास्त्युदरम् । पूपन्निह क्रतुं विदः ॥ ६ ॥  
न पूपन् मेयामसि सूक्तैरभि गृणीमसि । चसूनि दस्ममीमहे ॥ १० ॥



४३ सूक्त। रुद्र आदि देवता हैं ?

क्रद्रूद्राय प्रचेतसे मील्लुष्टमाय तव्यसे । घोचेम शन्तमं हृदे ॥ १ ॥  
यथा नो भदिनिः करत् पश्ये नृभ्यो यथा गवे । यथा तोकाय रुद्रियम् ॥ २ ॥  
यथा नो मित्रो वरुणो यथा रुद्रश्चिकेतति । यथा विश्ये सजोपसः ॥ ३ ॥  
नायपतिं मेधपतिं रुद्रं जलापमेपजं । तच्छंयोः सुन्नमीमहे ॥ ४ ॥  
यः शुक्र इव सूर्यो हिरण्यमिव रोचते । श्रेष्ठो देवानां वसुः ॥ ५ ॥  
शं नः करत्यव्यते सुगं मेपाय मेव्ये । नृभ्यो नारिभ्यो गवे ॥ ६ ॥  
अस्मे सोम त्रियमधि नि श्रेहि शतस्य नृणाम् । महि श्रवस्तुविनृणाम् ॥ ७ ॥  
मा नः सोमपरिवाधो मरातयो जुहुरन्त । धान इन्द्रो वाजे भज ॥ ८ ॥  
यास्ते प्रजा अमृतस्य परस्मिन् धामनृतस्य । सूर्या नामाः सोम वेन आभूयन्तीः सोम वेदः ॥ ९ ॥



१ हमारे ऊपर अनुग्रह करो । हमारा घर धन-धान्यसे पूर्ण करो । अन्य अभीष्ट वस्तु भी दान करो । हमें उप-तेजा करो । हमारी उदार-पूति करो । पूण ! तुम इस मांगसे हमारी रक्षाका उपाय जानो ।

१० हम पूजाकी निन्दा नहीं कर सकते; उनकी स्तुति करते हैं । हम दशमोप पूजाके पास धनकी याचना करते हैं ।

१ उरुष्ट्र ज्ञानसे युक्त, समीष्ट-वर्षी और अत्यन्त महान् रुद्र हमारे हृदयमें अवस्थान करते हैं । कब हम उनके इत्य करके पुण्यकर पाठ करेंगे ?

२ जैसे वा जिल प्रकार भूमि देवता हमारे लिये, पशुके लिये, मनुष्यके लिये, गायके लिये और हमारे अपत्यके लिये रुद्र-सम्बन्धी औषध प्रदान करें ।

३ जैसे मित्र, वरुण, रुद्र और समान-प्रीतियुक्त सय देवता हमारे ऊपर अनुग्रह करें ।

४ रुद्र स्तुति-रक्षक, यज्ञ-पालक और उदक-रूप औषधसे युक्त हैं । उनके पास हम घृहस्पति-पुत्र शत्रुकी तरह छलकी याचना करते हैं ।

५ जो रुद्र सूर्यकी तरह शीतमान् और सोनेकी तरह उज्ज्वल हैं, वह देवोंके बीच श्रेष्ठ और अविधास-कारण हैं !

६ हमारे घोड़े, भेड़, भेड़ों, पुण्य, स्त्री और गोजातिके लिये देवता सगम्य छल प्रदान करें ।

७ सोम, हमें प्रभु परिमाणमें, सौ मनुष्योंका धन दान करो । साथ ही महान् और यथेष्ट वस्तुसे युक्त अन्न भी दान करो ।

८ सोमदेवके प्रतिवाधक और दात्र गुण हमारी हिंसा न करें । सोमदेव हमें अन्न दान करो ।

९ मांग ! तुम अन्न और उत्तम स्थान प्राप्त किये हुए हो । तुम शिरःस्थानीय होकर यज्ञ-गृहमें अपनी-पजारी कामना करो । वह-प्रजा तुम्हें विमूषित करती है, तुम उसे जानो ।

१ अनुवाद । ४४ सूक्त अग्नि प्रभृति देवता हैं । यहाँसे ५० सूक्त तकके ऋग्वेदके पुत्र प्रस्कण्व ऋषि हैं । बृहती छन्द है ।

अग्ने विवस्व दुपसश्चित्रं राधो अमर्त्य ।  
 आ दाशुपे जातवेदो बहा त्वमद्या देवाँ उपर्वुधः ॥ १ ॥  
 जुष्टो हि दूतो असि हव्यवाहनोऽग्ने रथीरध्वराणाम् ।  
 सजूरशिवभ्यामुपसा सुवीर्यमस्मे धेहि श्रवो बृहत् ॥२॥  
 अद्या दूतं वृणीमहे वसुमर्नि पुरुप्रियम् ।  
 धूमकेतुं भा ऋजीकं व्युष्टिषु यज्ञानामध्वरश्रियम् ॥ ३ ॥  
 श्रेष्ठं यत्रिष्ठमतिथिं स्वाहुतं जुष्टं जनाय दाशुपे ।  
 देवाँ अच्छा यातवे जातवेदसमग्निमीले व्युष्टिषु ॥ ४ ॥  
 स्तविष्यामि त्वामहं विश्वस्यामृत भोजन ।  
 अग्ने ज्ञातारममृतं मियेध्य यजिष्ठं हव्यावाहन ॥ ५ ॥  
 सुशंसो घोधि गृणते यत्रिष्ट्य मधुजिह्वः स्वाहुतः ।  
 प्रस्कण्वस्य प्रतिरन्तायुर्जीवसे नमस्या देव्यं जनम् ॥६॥  
 होतारं विश्ववेदसं सं हि त्वा विश इन्धतं ।  
 स आ बह पुरुहूत प्रचेतसोऽग्ने देवाँ बह द्रवत् ॥ ७ ॥

१ अग्निदेव ! तुम अमर और सर्व-भूतज्ञ हो । तुम उपाके पाससे हविर्दान-शील यजमानोंके लिये नानाविध और निवास-युक्त धन ला दो । आज उपा कालमें जागृत देवोंको ले आना ।

२ अग्नि ! तुम देवोंके सेवित दूत हो । हव्य वहन करो । तुम यज्ञको रथकी तरह चहन करनेवाले हो । तुम अग्निदेवीकुमारों और उपाके साथ शोभनीय, वीर-युक्त और प्रभूत धन हमें दान करो ।

३ अग्नि दूत, निवासदेतु, विविध-प्रिय, धूम-रूप-ध्वजासे युक्त, प्रख्यात ज्योतिषे द्वारा अशंकुत और उपाकालमें यजमानोंका यज्ञ सेवन करते हैं । उन्हीं अग्निको आज हम चरण करते हैं ।

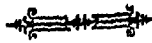
४ अग्नि श्रेष्ठ, अतिशय युवक, सद्गति-विशिष्ट, सबके द्वारा आहूत, हव्य-दाताके प्रति प्रसन्न और सर्व-भूतज्ञ हैं । उपाकालमें देवगणामिमुख जानेके लिये मैं उनकी स्तुति करता हूँ ।

५ हे अमर, विश्व-रक्षक, हव्यवाही और यज्ञार्ह अग्निदेव, तुम विश्वको प्राण-कर्ता, मरण-रहित और यज्ञ-निर्वाहक हो, मैं तुम्हारी स्तुति करूँगा ।

६ युवक अग्नि ! तुम स्तोताके स्तुतिप्राप्त हो और तुम्हारी शिखा अन्नदायिनी है । तुम आहूत होकर हमारे अग्निप्रायको उपलब्ध करो । प्रस्कण्व भीषित रहे; इसलिये उसकी आयु बढ़ा दो । उस देव-भक्त जनका सम्मान करो ।

७ तुम होमनिष्पादक और सर्वज्ञ हो । तुम्हें संसार दोसिमान् कहता है । अग्निदेव ! तुम बहुताके द्वारा आहूत हो । उत्कृष्ट ज्ञानसे युक्त देवोंको शीघ्र इस-यज्ञमें ले आओ ।

सवितारमुपसमशिवना भगमग्नि व्युष्टिपु क्षपः ।  
 ऋणवासस्त्वासुतसोमास इन्ध्रते हव्यवाहं स्वध्वर ॥८॥  
 पतिर्ह्यध्वराणामग्ने दूतो विशामसि ।  
 उपवृध आ वह सोमपीतये देवो अद्य स्वर्हशः ॥ ९ ॥  
 अग्ने पूर्वा अनूपसो विभावसो दीदेथ विश्वदर्शतः ।  
 असि ग्रामेऽव्रिता पुरोहितोऽसि यज्ञेषु मानुषः ॥ १० ॥  
 नि त्वा यज्ञस्य साधनमग्ने होतारमृत्तिजम् ।  
 मनुष्वदेव धीमहि प्रचेतसं जीवं दूतममर्त्यम् ॥११॥  
 यद्देवानां मित्रमहः पुरोहितोऽन्तर्यो यासि दूत्यम् ।  
 सिन्धोरिव प्रस्वनितास ऊर्मयोऽग्ने भ्राजन्ते अर्च्ययः ॥ १२ ॥  
 श्रुधि श्रुत्कर्ण वह्निभिर्देवैरग्ने सयावभिः ।  
 आ सीदन्तु बर्हिषि मित्रो अर्यमा प्रातर्यावाणो अध्वरम् ॥ १३ ॥  
 शृण्वन्तु स्तोमं मरुतः सुदानवोऽग्निजिह्वा ऋतावृधः ।  
 पिवन्तु सोमं वरुणो घृतव्रतोऽश्विभ्यामुपसा सज्जः ॥ १४ ॥



८ जो-मन यज्ञसे युक्त अग्नि ! रात्रिके प्रभातमें सवितार, उषा, अधिवद्य, भग और अग्निको ले आओ । हव्यवाही ऋणव लोग सोम तैयार करके तुम्हें दीसिमान् करते हैं ।

९ अग्नि ! तुम लोगोंके यज्ञ-याकक और देवोंके दूत हो । उपाकालमें प्रबुद्ध सूर्य-दर्शी देवोंको आज सोमपानके लिये ले आओ ।

१० प्रभातान् और घनशाली अग्नि ! तुम सबके दर्शनीय हो । तुम पूर्वगामिनी उपाके बाद क्षीर हो । तुमं ग्रामोंके पालक, यज्ञोंके पुरोहित और वेदोंके पूर्वदिशास्थित मनुष्य हो ।

११ अग्निदेव ! तुम यज्ञके साधन, देवोंके साहानकारी ऋत्विक्, प्रकृष्ट ज्ञानसे युक्त, शत्रुओंके आयुनाशक, देवोंके दूत और अध्वर हो । हम मनुकी तरह तुम्हें यज्ञस्थानमें स्थापन करते हैं ।

१२ मित्रोंके पूजक अग्नि ! जब कि, यज्ञके पुरोहित-रूपसे तुम देवोंका यज्ञ-कर्म सम्पादित करते हो, तब समुद्रकी प्रकृष्ट ध्वनिसे युक्त तरंगकी तरह तुम्हारे विशाणु दीसिमत्ती रहती हैं ।

१३ अग्नि ! तुम्हारे श्रवण-समर्थ कर्ण हमारे बचन छलें । मित्र, अर्यमा तथा अन्य जो देवगण प्रातःकालमें या देवयज्ञमें गमन करते हैं, उन्हीं हव्यवाहो सह-गामियोंके साथ इस यज्ञको लक्ष्य करके कुक्षपर बैठो ।

१४ मरुद्गण दानशील, अग्निजिह्व और यज्ञवद् भक्तों हैं । वे हमारा स्तोत्र छलें । गृहीतकर्मा वरुण अश्विनी-कुमारों और उषाके साथ सोमपान करें ।

४५ सूक्त । अग्नि देवता हैं । अनुष्टुप छन्द है ।

त्वमग्ने वसूरिह रुद्राँ, आदित्याँ उत । यज्ञा स्वध्वरं जन्मं मनुयातं घृतप्रुपम् ॥ १ ॥  
 अथ श्रीवानो हि दाशुषे देवा अग्ने विचेतसः । तान्द्रोहिदश्व गिर्वणस्त्रयस्त्रिंशतमावह ॥ २ ॥  
 प्रियमेधवश्त्रिवज्जातवेदो विरूपवत् । अङ्गिरस्वन्महिं व्रत प्रस्करवस्य अघो हवम् ॥ ३ ॥  
 महिकेरव ऊनये प्रियमेधाँ अहूपत । राजन्तमध्वराणामग्निं शुक्रेण शोचिषा ॥ ४ ॥  
 घृताहवन सन्त्येमा उषु श्रुध्री गिरः । यानिः कण्वस्य सूनवो हवन्तवसे त्वा ॥ ५ ॥  
 त्वाँ चित्रभ्रन्तसम हवन्ते विश्वजन्तवः । शोचिष्केशं पुष्टप्रियाग्ने हव्याय वोह्वे ॥ ६ ॥  
 नि त्वा होतारमृत्विजं दधिरे वसुवित्तमम् । श्रुत्कर्णं स प्रथस्तमं विप्रा अग्ने दिविष्टिषु ॥ ७ ॥  
 आ त्वा विप्रा अचुच्यवुः सुतसोमा अभि प्रयः । बृहद्वा विभ्रतो हविष्ये मर्त्याय दाशुषे ॥ ८ ॥  
 प्रातर्याव्यः सहस्रकृत सोमपेयाय सन्त्य । इहाद्य दैव्यं जन्मं बर्हिषा सादया वसो ॥ ९ ॥  
 अर्वाञ्च दैव्यज्जनमग्ने यक्ष्व सहतिभिः । अयं सोमः सुदानवस्तं पात तितो अह्वयम् ॥ १० ॥



१ अग्निदेव ! तुम इस यज्ञमें घस्तुओं, रुद्रों और आदित्योंको अर्चित करो । सोमनोय-यज्ञ-युक्त और अन्न-दाता जग्य मनुष्य देवोंको भी पूजित करो ।

२ अग्नि ! विशिष्ट प्रज्ञावाले देव वा हव्यदाताको फल प्रदान करते हैं । अग्नि ! तुम्हारे पास रोहित नामका अन्न है । तुम स्तुति-पात्र हो । तुम उन तैलोल देवोंको यहाँ ले आओ ।

३ अग्नि ! तुम प्रभूत-कर्माँ और सबभूतत्व हो । जैसे तुमने प्रियमेधा, अग्नि, विरूप और अङ्गिरा नामके ऋषियोंका आह्वान सुना, वैसे ही प्रस्करणका आह्वान सुनो ।

४ यज्ञोंके बीच, विशुद्ध प्रकृति द्वारा, अग्नि प्रकाशमान होते हैं । प्रौढ़कर्माँ प्रियमेधा लोगोंने, अपनी रक्षाके लिये, अग्निका आह्वान किया था ।

५ कण्वके पुत्र, अपनी रक्षाके लिये, जिस स्तुतिसे तुम्हें बुलाते हैं, घृताहुत फल-दाता अग्नि ! वह सब स्तुति तुम सुनो ।

६ अग्निदेव ! तुम यथेष्ट और विविध प्रकारके जन्मोंवाले हो तथा बहुत लोगोंके प्रिय हो । तुम्हारे दीप्ति-रूप केवल हैं । मनुष्य लोग तुम्हें हव्य वहनके लिये बुलाते हैं ।

७ अग्नि ! तुम आह्वानकारी, ऋत्विक् और बहुधनदाता हो । तुम्हारे कर्ण अवण-समर्थ हैं । तुम्हारी प्रसिद्धि बहु-व्यापक है । मेवाधियोंने यज्ञमें तुम्हें स्थापित किया है ।

८ अग्नि ! हव्यदाताके लिये हव्य धारण कर और सोमरस तैयार कर मेवाधी ऋत्विक् अन्नके पास तुम्हें बुलाते हैं । तुम महात्न और प्रभाषाको हो ।

९ अग्नि ! तुम काष्ठ-बल द्वारा अर्चित होकर उत्पन्न हो । तुम फलदाता और निवास-हेतु हो । आज इस स्थानपर प्राप्त-रागमन करनेवाले देवों और अन्य देवता जन्मको, सोमपानके लिये, कुल्लके ऊपर बुलाओ ।

१० अग्नि ! सम्मुखस्थ देवरूप प्राणियोंको, अन्य देवोंके साथ, समान आह्वानके द्वारा यज्ञना करो । दानवीक देवों, लिये यह सोम अभी गत दिवस प्रस्तुत किया गया है । इसे पान करो ।

६ सूक्त । अश्विनीकुमारद्वय देवता हैं । गायत्री छन्द है ।

पयो उपा अपूर्वा व्युञ्जति प्रिया दिवः । स्तुपे वामशिवना वृहत् ॥ १ ॥  
 या वत्सा सिन्धुमातरा मनोनरा रयीणाम् । धिया देवा वसुविदा ॥ २ ॥  
 चक्षन्ते वां ककुहासो जूर्णायामधि त्रिष्टपिः । यद्वां रथा विभिष्पतात् ॥ ३ ॥  
 हविषा जागे अपां पिपर्नि पपुविर्नरा । पिता कुटस्य चर्षणिः ॥ ४ ॥  
 आदागो वां मतोनां नासत्या मत्तवन्त्रसा । पातं सोमस्य धृष्णुया ॥ ५ ॥  
 या नः पीपरद्शिवना ज्योतिष्मतो तमस्तिरः । तामस्मे रासाश्रामियम् ॥ ६ ॥  
 आतो नावा मतोनां यातं पाराय गन्तवे । युञ्जाथामशिवना रथम् ॥ ७ ॥  
 अरित्रं वां दिवस्पृगु तोर्ये सिन्धूनां रथः । धिया युयुञ्ज इन्दवः ॥ ८ ॥  
 दिवस्कण्वास इन्दवो वसु सिन्धूनां पदे । स्वं वमिं कुह धिस्तस्यः ॥ ९ ॥  
 अभृद्दु भा उ अंशवे हिरण्यं प्रति सूर्यः । व्यव्यज्जिह्वासितः ॥ १० ॥  
 अभृद्दु पारमेतवे पन्था अन्नस्य साधुया । अदर्शि वि स्तुतिर्दिवः ॥ ११ ॥

१ प्रिय उपा इसके पहले नहीं दिखाई दी । यह उपा आकाशसे अन्नकार दूर करती है । अश्विनीकुमारो ! मैं तुम्हारी प्रभूत स्तुति करता हूँ ।

२ जो दर्शनाय समुद्र-ध्रुव देवद्वय या अश्विद्वय मनोहर और धनशता हैं और जो, हमारे यज्ञ करनेपर, निवास-स्थान प्रदान करते हैं, उनकी मैं स्तुति करता हूँ ।

३ अश्विनीकुमारद्वय ! त्रिष समय तुम्हारा प्रशंसित रथ घोड़ों द्वारा स्वर्गमें बीत होता है, उस समय हम तुम्हारा स्तुति करते हैं ।

४ हे नेत्रम्याग्य अश्विद्वय ! पृथक, पालक, यज्ञ-दर्शक और जल-गोपक सचिता हमारे हव्य द्वारा देवोंको प्रीत करे ।

५ हे नामस्यद्वय ! हमारी प्रिय स्तुति प्रणकर सुद्धि-परिचालक तीव्र सोमरसका पान करो ।

६ अश्विद्वय ! जो ज्योतिष्क अन्न अन्नकारका विनाश करके हमें वृत्ति-प्रदान करता है, पहले अन्न हमें प्रदान करो ।

७ अश्विद्वय ! स्तुति-समुद्रक पार जानेके लिये नौकारूप होकर आओ । हमारे सामने अपने रथमें अवध संयोजित करो ।

८ तुम्हारा समुद्रके तीरपर आकाशसे भी बड़ा नौकारूप यान है । पृथिवीपर तुम्हारा रथ है । तुम्हारे यज्ञ-कर्ममें सोम-रस भी गिका हुआ है ।

९ कण्ठशियो ! अश्विद्वयको जिज्ञासा करो । घुलोकसे सूर्य-किरणें आती हैं । वृष्टिके उत्पत्ति-स्थान अन्तरीक्षमें हमारा निवास-नेत्र ज्योति प्रादुर्भूत होता है । अश्विनीकुमारद्वय ! इन स्यागोंमेंसे किस स्थानपर तुम अपना स्वरूप रखने चाहते हो ?

१० सूर्य-रथि द्वारा अषाढालका आलोक उत्पन्न हुआ है । सूर्य, उदित होकर, हिरण्यके समान हुए हैं । सूर्यके बीचसे जानेसे अग्नि रूपवर्ण होकर भपकी जिज्ञासा द्वारा प्रकाश पाये हुए हैं ।

११ रात्रिके पार जानेके निमित्त सूर्यके लिये उत्तर माता बना हुआ है । सूर्यको विलुप्त वीति दिखाई दी है ।



तत्तद्विदश्विनोरवो जरिता प्रति भूपति । मदे सोमस्य पिप्रतोः ॥ १२ ॥  
 वावसाना त्रिवस्वति सोमस्य पीत्या गिरा । मनुषच्छम्भू आ गतम् ॥ १३ ॥  
 युधोरुषा अनु श्रियं परिज्मनोरुषाचरत् । ऋता वनथो अक्तुभिः ॥ १४ ॥  
 उभा पिबतमश्विनोभा नः शर्म यच्छतम् । अविद्वियाभिरुतिभिः ॥ १५ ॥



१२ अश्विद्वय प्रसन्नताके लिये सोम पान करते हैं । स्तोता लोग धार-धार उनके रक्षण-कार्यको प्रशंसित करते हैं ।

१३ सखद अश्विद्वय ! मनुकी तरह सेवक यज्ञमानके घरमें निवास-शोक होकर तुम सोमपान और स्तुति-श्रवणके क्लिमे आओ ।

१४ अश्विद्वय ! तुम चतुर्विधारी हो । तुम्हारी घोमाका अनुधापन करके उषा आगमन करे । रात्रिमें सन्पातित यज्ञका ह्वर सुम ग्रहण करो ।

१५ अश्विद्वय ! तम दोनों पान करो । तम दोनों प्रबलत रक्षण द्वारा हमें सुखदान करो ।

### तृतीय अध्याय समाप्त



## चतुर्थ अध्याय

४७ सूक्त । अश्विद्वय देवता हैं । बृहती छन्द है ।  
 अयं वां मधुमत्तमः सुतः सोम भृतावृधा ।  
 तमश्विना पिवतं तिरो अह्वयं धत्तं रत्नानि दाशुपे ॥ १ ॥  
 त्रिवन्धुरेण त्रिवृता सुपेशसा रथेना यातमश्विना ।  
 कएवासो वां ब्रह्म कएवन्यध्वरे तेषां सुश्रृणुतं हवम् ॥ २ ॥  
 अश्विना मधुमत्तमं पातं सोममृतावृधा ।  
 अथाद्य दत्ता वसु विभ्रता रथे दाश्वान्समुप गच्छतम् ॥ ३ ॥  
 त्रिपथस्थे वर्हिपि विश्ववेदसा मध्ना यज्ञं मिमिक्षतम् ।  
 कएवासो वां सुतसोमा अभिद्यवो युवां हवन्ते अश्विना ॥ ४ ॥  
 यामिः कएवमभिष्टमिः प्राघतं युवमश्विना ।  
 तामिः प्वस्मां अवतं शुभस्पती पातं सोममृतावृधा ॥ ५ ॥  
 सुदासे दत्ता वसु विभ्रता रथे पृक्षो बहतमश्विना ।  
 रयिं समुद्रादुत वा दिवस्पयस्मे धत्तं पुस्सूहम् ॥ ६ ॥

१ हे यज्ञवद्ध नकारी अश्विद्वय ! यह अतीव मधुर सोम, तुम्हारे लिये, अभिपुत हुआ है । यह कल ही तैयार हुआ है । इसे पान करो और हृद्यदाता यज्ञमानको रमणीय धन दान करो ।

२ अश्विद्वय ! अपने त्रिविध घन्धन-काष्ठोंसे युक्त, त्रिकोण या लोकत्रयमें वर्त्तमान और स्वरूप रथसे आजो । कण्वपुत्र या मेधावो ऋत्विक् लोग तुम्हारे लिये स्तोत्र-पाठ कर रहे हैं । उनका सार आह्वान छवो ।

३ यज्ञवद्ध नकर्ता अश्विद्वय ! अत्यन्त मधुर सोमरसका पान करो । इसके अनन्तर, हे अश्विद्वय ! आज रथर धन लेकर हृद्यदाता यज्ञमानके पास गमन करो ।

४ सर्वज्ञाता अश्विद्वय ! तीन स्थानोंमें अवस्थित कुशपर स्थित होकर मधुर रस द्वारा यज्ञ सिफ करो । अश्विद्वय ! दीप्तिमान् कण्वपुत्र सोमरस तैयार करके तुम्हें आह्वान करते हैं ।

५ अश्विद्वय ! जिस अशोषट रक्षण-कार्द द्वारा तुम दोनोंने कण्वकी रक्षा की थी, हे क्षोभन-कर-पालक, उसी कथ द्वारा हमारी रक्षा करो । हे यज्ञ-वर्द्धक ! सोमपान करो ।

६ अश्विनीकुमारद्वय ! तुमने दानशील राजा पुत्रधन-पुत्र सदासके लिये लड़ाईमें धनको धारण और अन्नको घहन किया था । उसी प्रकार आकाशसे अनेकोंके घाञ्छनीय धन हमें दान करो !\*

\* सूर्यवंश और चन्द्रवंश—दोनोंमें सदास नामके राजा हो गये हैं । क्रुवेद ७।१८।२५ में सदासको पित्रवन् या द्विषोदास राजाका पुत्र कहा गया है । घनिष्ठ और चिन्वामित्र सदासकी राजसभामें पुरोहित थे । कुछ लोगोंका मत है कि, सदास, १० म ऋग्वेदके १३३ सूक्त के रचयिता या स्मर्त्ता भी थे ।

यन्नासत्या परावति यद्वा स्थो अधि तुर्वशी ।  
 अतो रथेन सुवृता न आ गतं साकं सूर्यस्य रश्मिभिः ॥ ७ ॥  
 अर्वाञ्चा वां सप्तयोऽध्वरयियो वहन्तु सवनेदुप ।  
 इपं पृञ्चन्ता सुकृते सुदानव आ बर्हिः सीदतं नरा ॥ ८ ॥  
 तेन नासत्या गतं रथेन सूर्यत्वचा येन  
 शश्वदूहथुर्दाशुषे वसु मध्वः सोमस्य पीतये ॥ ९ ॥  
 लथेभिरर्वागवसे पुरुवसु अर्केश्व नि ह्यमामहे ।  
 शश्वत्करवानां सदसि प्रिये हि कं सोमं पपथुरश्मिना ॥ १० ॥

४८ सूक्त । उषा देवता हैं ।

सह वामेन न उषो व्युच्छा दुहितर्दिचः ।  
 सह धुम्नेन बृहता विभावरि रायां देवि दास्वती ॥ १ ॥  
 अश्वान्वतीर्गोमतीर्विश्वसुविदो भूरि च्यवन्तवस्तवे ।  
 उदीरय प्रति मा सूनृता उपश्रोद राधो मधोनाम् ॥ २ ॥  
 उवासोपा उच्छाच्च नु देवी जीरा रथानाम्  
 ये अस्या आचरणेषु दध्नरे समुद्रे न श्रवस्वत्रः ॥ ३ ॥

७ नासत्यद्वय ! चाहे तुम पास रहो या दूर रहो; सूर्योदयके समय सूर्य-किरणोंके साथ अपने उर्निर्मित रथपर हमारे पास आओ ।

८ तुम सदा यज्ञसेवी हो । तुम्हारे सात घोड़े तुम्हें निकट लाकर सवन-यज्ञकी तरफ ले जायें । हे नेत्र-स्थानीय अश्व-द्वय ! शुभकर्मकर्ता और दानशील यज्ञमानको अन्न दान करके तुम हुआपर बैठो ।

९ अश्विद्वय ! तुमने जिस रथपर धन लाकर इन्द्रदाताको सदा दान किया है, उसी सूर्य-किरण-सम्बलित रथपर मधु-सोम-पानके लिये आओ ।

१० हम रक्षाके लिये उक्थ और स्तोत्र द्वारा अश्विद्वयको अपनी ओर लाइवान करते हैं । अश्विद्वय ! ऋषिपुत्रों या मेधावी ऋषिओंके प्रिय सदनमें तुमने सदा सोम पान किया है ।

१ हे देवपुत्री उषा ! हमें धन देकर प्रभात करो । विभाघरी उपाकाल देवता ! प्रभूत अन्न देकर प्रभात करो । देवी ! दानशीला होकर पशु-रूप-धन प्रदान-पूर्वक प्रभात करो ।

२ उषा अश्व-संबलिता, गोसम्पन्ना और सकलधनदात्री है । प्रजाके निवासके लिये उसके पास विविध सम्पत्तियाँ हैं । उषा ! मुझे सखवचन, बल और धनिकोंका धन दो ।

३ उषा पहले प्रभात करती थी और अब भी प्रभात काती है । जिस प्रकार घनाभिलाषी समुद्रमें नाव प्रेरित करते हैं, जिस प्रकार उषाके आगमनमें रथ सैवार किये जाते हैं, उसी प्रकार उषा रथ-प्रेरयित्री है ।

उपो ये ते प्रथामेषु युञ्जते मनो दानाय सूर्यः ।  
 अत्राह तत्कएव पर्यां कण्वतमो नाम गृणाति नृणाम् ॥ ४ ॥  
 आ आ योपेव सूनुयुषा याति प्रभुञ्जतीः ।  
 अरयन्ती वृजर्न पद्ददीयत उत् पातयति पक्षिणः ॥ ५ ॥  
 वि या सृजति समनं व्यर्थिनः पदं न वेत्स्योदती ।  
 वयो नक्रिष्टे पतिवांस आसते व्युष्टी वाजिनीवति ॥ ६ ॥  
 एषायुक्त परावतः सूर्यस्योदयनाद्धि ।  
 शतं रथेभिः सुभगोषा इयं वि यात्यभि मानुषान् ॥ ७ ॥  
 विप्रयमस्या नानाम चक्षसे जगज्ज्योतिष्कृणोति सूनरी ।  
 त्रप द्वेपो मघोनी दुहिता दिव उपा उच्छ्रद्प स्विभ्रः ॥ ८ ॥  
 उप आ भाति भानुना चन्द्रेण दुहितर्दिवः ।  
 आवहन्ती भूर्यसमभ्यं सौभगं व्युच्छन्ती दिविष्टिषु ॥ ९ ॥  
 विप्रस्य हि प्राणनं जीवनं त्वे वि षदुच्छसि सूनरि ।  
 सा नो रथेन वृद्धना विभात्ररि श्रुधि चित्रामन्ने हवम् ॥ १० ॥  
 उपो वाजं हि वंस्य यद्विभ्रो मानुषे जने ।  
 तेना वह सुकृनो अष्टवरां उप ये त्वा गृणन्ति वह्यः ॥ ११ ॥

४ उपा, तुम्हारा आगमन होनेपर विह्वान् लोग दानको ओर ध्यान देते हैं; और, अतिशय मेधावी कण्व ऋषि दानशील मनुष्योंका प्रशंसात नाम उपाकालमें हो गेते हैं ।

५ उपा धरका काम सेमालनेवाली गृहिणीको तरह सुवका पालन काके आती हैं । वह जंगम प्राणियोंकी परमायुका ह्रास करती हैं या जंगम प्राणियोंकी आयुको क्रमशः एक-एक दिन कम करती हैं । पैरवाले प्राणियोंको चलाती हैं और पक्षियोंको बहाती हैं ।

६ तुम सम्यक् पेरटायान् पुरुषको कार्यमें लगाती हो । तुम मिथुनोंको भी प्रेरण करती हो । तुम जोहार-धर्पी हो और अधिक क्षण नहीं टहरतीं । अप्रदुष्ट यज्ञसम्पन्ना उपा ! तुम्हारे आगमन करनेपर उड़नेवाले पक्षी अपने घोंसलेमें नहीं रहते ।

७ उषाने रथ योजित किया है । यह सौभाग्य-शास्त्रिणी उपा दूतसे, सूर्यके उदय-स्थानके ऊपरसे या दिव्य लोकसे, सौ रथों द्वारा मनुष्योंके पास आती हैं ।

८ उषाके प्रकाशके सिधे समस्त प्राणों समलकार करते हैं; क्योंकि यही सनेत्री ज्योति प्रकाश करती हैं और यही जनकती स्वर्गपुत्री या हृद्यलोकसे उषागना उपादेवो द्वेपियों और शोषणकर्ताओंको दूर करती हैं ।

९ स्वर्गतनया उपा ! आह्लाष्टकर ज्योतिके साथ प्रकाशित हो, अनुदिन एमें सौभाग्य हो और अन्धकार दूर बरो ।

१० नेत्री उपा ! सारे प्राणियोंको धरदा और जीवन तुम्हारेमें ही है; क्योंकि तुम्हीं अन्धकारको दूर करती हो । विभा-यरी उपा ! विभाक रथपर आना । विकक्षण-रथ-सम्पन्ना उपा ! हमारा आह्वान छोडो ।

११ उषा ! मनुष्यके पास जो विचित्र अन्न है, वह तुम प्रदण करो और जो यज्ञ-निर्वाहक लोग तुम्हारी स्तुति करते हैं, उन एतुतियोंको हिसा-रहित यज्ञमें के आओ ।

विश्वाँ देवाँ आचह सोमपीतयेऽन्तरिक्षादुपस्त्वं ।  
 सास्मासु धा गोमदश्वावदुक्थ्यमुषो वाजं सुचीर्यम् ॥ १२ ॥  
 यस्या रुशन्ते अर्चयः प्रति भद्रा अदूक्षत ।  
 सा नो रयिं विश्ववारं सुपेशसमुपा ददातु सुम्यम् ॥ १३ ॥  
 ये विद्धि त्वामृषयः पूर्वं ऊतये जुहुरेऽवसे महि ।  
 सा नः स्तोमाँ अभि गृणीहि राधसांपः शुक्रेण शोचिषा ॥ १४ ॥  
 उपो यदद्य भानुना वि द्वारा ऋणवो दिवः ।  
 प्र नो यच्छतादवृकं पृथु ऊर्द्धिः प्र देवि गोमतीरिपः ॥ १५ ॥  
 सं नो रायां बृहता विश्वपेशसा मिमिक्ष्वा सामिलाभिरा ।  
 सं द्युम्नेन विश्वतुगोपो महि सं वाजेर्वाजिनीवति । १६ ॥

४९ सूक्त। उपा देवता हैं। अनुष्णुप् छन्द है।

उपो भद्रेभिरा गहि दिवश्चिद्रोचनादधि । ब्रहन्त्वहणप्सव उप त्वा सोमिनो गृधम् ॥ १॥  
 सुपेशसं सुखं रथं यमध्यस्था उपस्त्वम् । तेना सुश्रवसं जनं प्रावाद्य दुहितर्दिवः ॥ २ ॥

१२ उपा ! अन्तरिक्षसे, सोमवानके लिये, सब देवोंको के जाओ। उपा ! तुम हमें अद्वगोयुक्त, प्रशंसनीय और धीर्य-सम्पन्न अन्न प्रदान करो।

१३ त्रिन उपाको जरोति शत्रुओंको विनाश करके कल्याण-रूपमें दिखार्ह-देती है, वह हम सबोंको घणोय, छरूप और सुखद धन प्रदान करें।

१४ पूर उपा ! पहलेके ऋषियोंने, रक्षण और अन्नके लिये, तुम्हें बुलाया था। तुम धन और दोसिमाली तेजसे विद्धि होकर हमारी स्तुतिपर सन्तुष्ट हो।

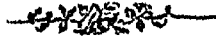
१५ उपा ! तुमने आज ज्योतिसे आकाशके दोनों दरवाजोंको खोल दिया है; इसलिये हमें हिंसक-विरहित और विस्तोर्ण गृह दान करो। साथ ही गो-युक्त अन्न भी दान करो।

१६ उपा ! हमें प्रसूत और बहु-विध-रूपयुक्त धन और गौ दान करो। पूजनोय उपा ! हमें सर्व-शत्रुनाशक यका दान करो। अन्न-युक्त क्रियासम्पन्न उपा ! हमें अन्न दान करो।

१ उपा ! दोषग्रमान आकाशके ऊपरसे शोभन पथ द्वारा आगमन करो। अहग-वर्णं गायें सोमयुक्त यज्ञमानके घरमें तुम्हें के आवें।

२ उपा ! तुम-त्रित छरूप और सुखर रथपर अग्निदान करती हो, हे स्वर्गांतना उपा ! उसीसे-आज इत्य-दाता यज्ञ-मानके पास जाओ।

वयश्चित्ते पतत्रिणो द्विपञ्चतुष्पदजुनि । उपः प्रारन्तू रनु दिवोऽन्तोभ्यस्वरि ॥ ३ ॥  
व्युच्छन्ती हि रश्मिमिर्श्वभामासि रोचनं । तां त्वामुपर्वसूयवो गीर्भिः कृवा अहूयत ॥ ४ ॥



५० सूक्त। सूर्य देवता हैं। गायत्री और अनुष्टुप् छन्द हैं।

उदु त्वं जातचेदसं देवं ब्रह्मन्ति केतवः । वृशे विश्वाय सूर्यम् ॥ १ ॥

अपत्ये नायवो यथा नक्षत्रा यन्त्युक्तमिः । सूराय विश्वन्नाक्षसे ॥ २ ॥

अट्टभ्रमस्य केतवो वि रश्मयो जनां अनु । भ्राजन्तो अग्रयो यथा ॥ ३ ॥

तरणिश्श्वदर्शतो ज्योतिष्पदसि सूर्य । विश्वमा भासि रोचनम् ॥ ४ ॥

प्रत्यद् देवानां विशः प्रत्यद्दुर्द्विपि मानुपान् । प्रत्यद् विश्वं स्वर्दृशे ॥ ५ ॥

येना पावक चक्षस्ता भस्मयन्तं जनां अनु । त्वं वरुण पश्यसि ॥ ६ ॥

३ दे अर्जुनि मा शुभ्रवगो उवा । तुम्हारे आगमनके समय द्विपद, चतुष्पद और पक्ष-युक्त पक्षिण आकाशप्रान्तके उपरि मार्गमें गमन करते अपना आकाशपण्डलमें अपने-अपने कार्यमें लगते हैं ।

४ उवा । तुम अन्वहारका विनाश करके किरणोंके द्वारा जगत्को प्रकाशित करो । कण्वपुत्रों या मेघावी ऋत्विगोंके धन-वाचक दोऊ स्तोत्र द्वारा तुम्हारा स्तव किया है ।

१ सूर्य प्रकाशमान हैं और सारे प्राणियोंको जानते हैं । सूर्यके घोड़े उन्हें, सारे संसारके दर्शनके लिये, उपर के जाते हैं ।

२ सारे संसारके प्रकाशक सूर्यका आगमन होनेपर नक्षत्राण चोरीकी तरह, रात्रिके साथ, चले जाते हैं ।

३ दोग्यमान अग्निकी तरह सूर्यकी सूचक किरणें समूचे जगत्को एक-एक कर देखती हैं ।

४ सूर्य । तुम मदान् मार्गका भ्रमन करो, तुम सारे प्राणियोंके दर्शनीय हो । ज्योतिके कारण हो । तुम समूचे दीप्यमान भस्मयन्तमें प्रमाका विनाश करते हो ।

५ तुम अन्वर्द्वियोंके सामने उदित हो । मनुष्योंके सामने उदित हो । समस्त स्वर्गलोकके दर्शनके लिये उदित हो ।

६ दे संस्कारक और ब्रह्मिष्ठयन्ता सूर्य ! तुम तिस दोसि द्वारा प्राणियोंके पालक बनकर जगत्को देखते हो, हम-उसीको प्राथमा करते हैं ।

\* मूकमें जो "अर्जुनि" शब्द है, उसका सायगाचार्यने शुभ्र पर्ण अर्थ किया है । अपने "Indo-Aryans" नामके ग्रन्थमें राजेन्द्रकाळ मिश्रने लिखा है कि, "ऋग्वेदमें उवाकें जो अर्जुनि, त्रिसवा, दहना, उवा, सरमा और सरण्यु नाम हैं, वे सब Argynoris, Briseis, Daphne, Eos, Hebe और Brinye नामोंसे प्रोकोमें भी हैं । प्रोकोमें-यद्गल्प प्रसिद्ध है कि; Apollo या सूर्यने Daphn या दहनाका अनुचरन किया था । उवाका एक वैदिक नाम महामां हो, जिसे छत्रुदि-देवी-रूपसे Athoua नाम दिया गया है । कर्त्तिका-माता-मायो श्ते ही Minerva (मिनर्वा) कहते हैं । "Lithology of Aryan Nations" ग्रन्थमें काइसने लिखा है कि, अर्जुनि नामसे ही Argos और Arcadia नाम उत्पन्न है ।

वि धामेपि रजस्पृध्वहा मिमानो अक्तुमिः । पश्यन् जन्मानि सूर्य ॥७॥  
 सत त्वा हरितो रथे वहन्ति देव सूर्य । शोचिष्केशं विचक्षण ॥८॥  
 अयुक्त सप्त शुन्ध्युवः सूरुो रथस्य नप्त्यः । तामिर्व्याति स्वयुक्तिभिः ॥९॥  
 उद्वयं तमसस्परि ज्योतिष्पश्यन्त उत्तरम् । देवं देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम् ॥ १० ॥  
 उद्यन्नद्य मित्रमह आरोहन्नुत्तरां दिवं । हृद्रोगं मम सूर्य हरिमाणं च नाशय ॥ ११ ॥  
 शुक्रेषु मे हरिमाणं रोपणाकासु दध्मसि । अथो हारिद्रवेपु मे हरिमाणं निदध्मसि ॥ १२ ॥  
 उदगादयमादित्यो विश्वेन सहसा सह । द्विपन्तं मह्यं रन्धयन्मो अहं द्विपते रधम् ॥ १३ ॥



१० अनुवाक । १। सूक्त । इन्द्र देवता हैं । यहाँसे ५७ सूक्त तकके अङ्गिराके पुत्र सव्य ऋषि हैं ।  
 जगती और त्रिष्टुप छन्द हैं ।

अभि त्यं मेपं पुरुहूतमृगिमयमिन्द्रं गीर्मिमं देता वस्वो अर्णवम् ।

यस्य धावो न विचरन्ति मानुषा भुजे मंहिष्ठमभि विप्रमर्चत ॥ १ ॥

७ उसी दोषिके द्वारा रात्रिके साथ विषसको उत्पादन और प्राणियोंको अवलोकन करके विलुप्त अन्तरीक्ष लोकका भ्रमण करते हो ।

८ दोसिमान् और सर्व-प्रकाशक सूर्य ! हरित नामके सात घोड़े रथमें तुम्हें ले जाते हैं । ज्योति या रश्मि हो तुम्हारा केश है ।

९ सूर्यने रथ-वाहिका सात घोड़ियोंको रथमें संयोजित किया । उन संयोजित घोड़ियोंके द्वारा सूर्य गमन करते हैं ।

१० अन्वकारके ऊपर उठी हुई ज्योतिको देखकर हम सब देवोंमें प्रकाशशाली सूर्यके पास जाते हैं । सूर्य ही उत्कृष्ट ज्योति है

११ अनुस्वर-दोसि-युक्त सूर्य ! आज उदित होकर और उन्धत आकाशमें चढ़कर मेरा हृद्रोग या मानस रोग और हरिमाण (पीतवर्ण)-रोग या क्षीर-रोग विनष्ट करो ।

१२ मैं अपने हरिमाण रोगको शुक और हारिका पक्षियोंपर न्यस्त करता हूँ । अपना हरिमाण रोग हरिद्रा या हरिताल वृक्षपर स्थापित करता हूँ ।

१३ यह आदित्य मेरे अमिष्टकारी रोगके विनाशके लिये समस्त तेजके साथ उदित हुए हैं । मैं उस रोगका विनाश-कर्ता नहीं, वे ही हैं । \*

१ जिन्हें लोग बुझाते हैं, जो स्तुति-पात्र और धनके सागर हैं, उन्हीं मेघ या बलवान् इन्द्रको स्तुति द्वारा हृष्ट करो । सूर्य-किरणोंकी तरह इन्द्रका क्रम मनुष्योंका हित करना है, उन्हीं क्षमताशाली और मेधावी इन्द्रको, धन-सम्भोगके लिये, अर्पित करो ।

\* हमारे यहाँ, पञ्चदेवोपासकोंमेंसे, सूर्योपासक या सौर सम्प्रदायके वे तीनों मंत्र प्रधान हैं । जाने छल और शान्तिके लिये और आधिष्ठात्रि-रहित आनन्दके लिये प्रायः प्रत्येक सूर्योपासक इन मंत्रोंका जप करता है । इन मंत्रोंका जप करनेपर ही

अभीमवन्वनन् स्वभिष्टिसूतयोऽन्तरिक्षां त्विपीभिराश्रुतम् ।  
 इन्द्रं दक्षास ऋभवो मवच्युतं शतक्रतुं जघनो सूतारुहृद् ॥२॥  
 त्वं गोत्रमङ्गिरोभ्योऽवृणोरपोतात्रये शतदुरेय गातुधित् ।  
 ससेन त्रिद्विमदायात्रहो वस्वाजात्रिद्वि वावसानस्य नर्तयन् ॥३॥  
 स्वमपामषिघानावृणोरपाघारय पर्वते दानुमद्वसु ।  
 चृत्रं यद्विन्द्र शत्रसावधीरहिमादित् सूर्यं दिव्यारोहयो द्वशे ॥४॥  
 त्वं मायाभिरप मायिनोऽयमः स्वधामिर्ये अधि शुप्तावजुह्वत ।  
 त्वं पिप्रोर्नृमणः प्रावजः पुरः प्र ऋजिश्चानं दस्युहृत्पेष्वाविथा ॥ ५ ॥  
 त्वं कुत्सं शुष्णहृत्पेष्वाविथारुन्धयोऽतिथिश्चाय शम्बरम् ।  
 मतान्तं त्रिद्व्युर्धं नि कमीः पदा सनादेव दस्युहृत्पाय यक्षिणे ॥ ६ ॥  
 त्वे विष्वा तधिपी सञ्च्युधिता तव राघ्नः सोमपीथाय हर्षते ।  
 तव वज्रश्चिकित् वाहोर्हितो वृक्षा शत्रोरव त्रिश्चानि वृष्ण्या ॥ ७ ॥

२ इन्द्रका आगमन छद्मोपम है। अपने तेजसे इन्द्र अन्तरिक्षको पूरण करते हैं। वह बली, दपहन और शतक्रतु है। रक्षण और पदार्थमें तत्पर होकर ऋशुभग या मरुदूषण इन्द्रके सामने आये और उनकी सहायता की। उन्होंने उत्साह-वाक्यों द्वारा इन्द्रको उत्साहित किया था।

३ तुमने अङ्गिरा ऋषियोंके लिये मेघसे वर्षा करायी थी। जब अङ्गिरोंने अग्निके ऊपर शतद्वार नामका यन्त्र बँका था, तब भागनेके लिये तुमने अग्निसे मार्ग बता दिया था। तुमने विमद ऋषिको अन्न-युक्त भव दिया था। इसी प्रकार संभ्राममें विद्यमान स्तोताको, अन्ना पत्र चन्कारके, घघाया था। \*

४ इन्द्र! तुमने ऋ-श्राह-रु मेघको खोल दिया है और पषेतपर चृत्र आदि ऋश्योंका धर्म लिखा रखा है। इन्द्र! तुमने इत्पारं चृत्रका घब किया था और संसारको देनेके लिये सूर्यको आकाशमें चढ़ा दिया था।

५ त्रिष अङ्गिरोंने यक्षीय अन्नको अपने शोभम सुखमें डाल दिया था, इन्द्र! हम मायाविषोंको साया द्वारा तुमने परास्त किया था। मनुष्योंके लिये तुम प्रसन्न-चित्त हो। तुमने पिप्रु अङ्गिराका निघास-स्थान ध्वस्त किया था। ऋजिदवान नामक स्तोताको, चोरोंके हाथ, मनेसे, आसानीसे, बचा लिया था।

६ शुष्ण अङ्गिराके साथ युद्धमें तुमने हृत्स ऋषिकी रक्षा की थी और तुमने अतिथि-वत्सल दिवोदासकी रक्षाके लिये शम्बर राजसका भव किया था। तुमने महान् अनुद नामके अङ्गिराको पादाक्रान्त किया था। इन सब कारणोंसे विदित होता है कि, तुमने दस्युओंके घबके लिये ही जन्म ग्रहण किया है।

\* निःसन्देह तुम्हारे अन्तर समस्त बल निहित है। सोमपान करनेपर तुम्हारा मन प्रसन्न होता है। तुम्हारे दोनों हाथोंमें पत्र हैं—यह हम जानते हैं। पत्र ओंका सारा पीपे छिन्न करो।

सूर्यने प्रसन्न ऋषिका घम-रोग नष्ट किया था। सूर्य-भ्रमस्कारके साथ ही इन संश्योंका जप किया जाता है। विलसमाने रोगरोगका अर्थ "Sickness of my heart" और "हरिमाण" को "Yellowness [ of my body ]" किया है।

\* ऋग्वेद [ १-११६-१ ] से ज्ञात जाता है कि, ब्रह्मसेना द्वारा आक्रान्त विमदको स्त्रीको अश्विनीकुमारोंने रम्य



वि जानीह्यार्यान्वे च दस्यवो बाह्वमते रन्धया शासद्व्रतान् ।  
 शाकी भव यजमानस्य चोदिता विश्वेत्ता ते सधमादेपु चाकन ॥ ८ ॥  
 अनुवताय रन्धयन्तपव्रतानामूभिरिन्द्रः शथयन्ननाभुवः ।  
 वृद्धस्य चिद्धर्घतो घामिनक्षतः स्ववानो वम्रो वि जघान संदिहः ॥ ९ ॥  
 तक्षधन्त उशना सहसा सहो वि रोदसी मज्जना वाधते शवः ।  
 आ त्वा वानस्य नृमणो मनोयुज आ पूर्यमाणमवहन्नभि श्रवः ॥ १० ॥  
 मन्दिष्ट यदुशने काव्ये सचाँ इन्द्रो वङ्कूवङ्कुतराधि तिष्ठति ।  
 उग्रो ययिँ निरपः स्नातसासृजद्वि शुष्णस्य दृंहिता ऐरयत् पुरः ॥ ११ ॥  
 आस्मा रथं वृषपाणेषु तिष्ठसि शार्यातस्य प्रभृता येप मन्दसे ।  
 इन्द्र यथा सुतसोमेषु चाकनोऽनर्वाणं श्लोकमा रोहसे दिवि ॥ १२ ॥

८ इन्द्र ! कौन ऋषि और कौन दस्यु है, यह बात जानो । कुशवादे यज्ञके विरोधियोंका शासन काफे उन्हें यजमानोंके वश कराओ । तुम शक्तिमान् हो; इस लिये यज्ञोद्यताओंकी सहायता करो । मैं तुम्हारे हर्षोत्पादक यज्ञमें तुम्हारे उम समस्त कर्मोंकी प्रशंसा करनेकी इच्छा करता हूँ ।

९ इन्द्र यज्ञ-विमुखोंको यज्ञप्रिय यजमानोंके वशभूत काफे और असिमुख स्तोत्रार्थों द्वारा स्तुति-पराङ्मुखोंका ध्वंस करके अधिष्ठान काते हैं । वज्र ऋषि षड् नशाल और स्वर्ग-अपापो इन्द्रको स्तुति करते-करते सञ्चित द्रव्य-समूह ले गये थे ।

१० इन्द्र ! जब कि उशनाके बल द्वारा तुम्हारा बल तोक्षण हुआ था, तब विशुद्ध तीक्ष्णता द्वारा तुम्हारे बलने द्युलोक और पृथिवीलोकको भीत कर दिया था । इन्द्र ! तुम्हारा मन मनुष्यके प्रति प्रसन्न है । तुम्हारे बलशाली होनेपर तुम्हारी हृच्छासे संयोजित और धातुकी तरह वेग-विशिष्ट घोड़े तुम्हें हमारे यज्ञान्नकी ओर ले आवें ।

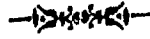
११ जब कि शोभन उशनाने इन्द्रको स्तुति की, तब इन्द्र वक्रातित्राले दोनों घोड़ोंपर सवार थे । उग्र इन्द्रने गाम-क्षीर मेवोंसे जल, प्रवाह-रूपमें, बरसाया था । साथ ही शुष्ण जलके विस्तोर्ण नगरको भी ध्वस्त किया था ।

१२ इन्द्र ! सोमपानके लिये रथपर चढ़कर गमन करो । जिस सोमसे तुम प्रसन्न होते हो, वही सोम शार्यात राज-यिनि तैयार किया है; इसलिये अन्य यज्ञोंमें तुम जैसे प्रस्तुत सोमपान करते हो, उसी प्रकार शार्यातका सोम भी पान करो । ऐसा करनेपर दिव्य लोहमें अविचल यश प्राप्त होगा । \*

चढ़ाकर उनके घर पहुँचाया था । अश्विद्वयने पीड़ा-पुहने अत्रिको भी, जल डालकर, जड़नेसे बचाया था । १११२।७ और १। ११६।८ से ऐसा ही मालूम पड़ता है ।

\* कौशीतकी-ब्राह्मणार्थि-गण कहते हैं कि, ऋग्वेदीय चक्षुष ऋषिने राजर्षि शार्यातिकी कन्याका पाणि-ग्रहण किया था । इस समय एक यज्ञ हुआ था, जिसमें इन्द्र और अश्विद्वय उपस्थित थे । चक्षुषने अश्विद्वयका हृष्य ले लिया । यह देखकर इन्द्र क्रुद्ध हुए । इन्द्रकी विनय कर उन्हें पुनः सोम दिया गया ।

अददा अर्मां महते वचस्यवे कक्षीवते वृत्रयामिन्द्र सुवचते ।  
 मेनाभजो वृषणश्चस्य सुव्रतो विश्वेत्ता ते सवनेषु प्रवाच्या ॥१३॥  
 इन्द्रो अश्रायि सुधयो निरेके पद्मेषु स्तोमो दुर्वो न यूपः ।  
 अपवयुर्गन्ध्रू रथयुर्वसूयुरिन्द्र इन्द्रायः क्षयति प्रयन्ता ॥१४॥  
 इदं नमो वृषभाय स्वराजे सत्यशुष्माय तवसेऽवाचि ।  
 अस्मिन्निन्द्र वृजने सर्ववीराः स्मत्सूरिभिस्तव शर्मन्त्स्याम ॥१५॥



५२ सूक्त । इन्द्र देवता हैं । त्रिष्टुप् और जगती छन्द हैं ।  
 त्वं सु मेघं महया स्वर्चिदं शतं यस्य सुभ्यः साकमीरते ।  
 अत्यं न वाजं ह्यनस्यदं रथमेन्द्रं ववृत्यामवसे सुवृक्तिभिः ॥ १ ॥  
 स पर्वतो न भरुणेष्वच्युतः सहस्रमूर्तिस्त्रिविधेषु वावृधे ।  
 इन्द्रो यद्वृत्रमवधीन्नदीघृतमुञ्जन्तर्णांसि जहृपाणो अन्धसा ॥२॥

१३ इन्द्र ! तुमने अमिष-कारी और स्तुतगाकः इन्द्रो वृत्र कक्षीयान् राजाको वृत्रया नामकी युवती स्त्री प्रदान की थी । शोभन-कर्मा इन्द्र ! तुम वृषणभ्य राजाको मेना नामक कन्या हुप थे । अमिषवण-समयमें इन सब विषयोंका वर्णन करना चाहिये ।

१४ शोभनकर्मा निर्धर्मोंको रक्षाके लिये इन्द्रकी सेवा की गयी है । पत्नों या अंगिरोवशीयोंके स्तोत्र, दारस्थित स्तम्भकी वरद अचल हैं । धनदाता इन्द्र पशुमानोंके लिये अदथ गौ और रथको इच्छा करते हैं; और, विविध धनकी इच्छा करके अधिष्ठान करते हैं ।

१५ इन्द्र ! वृष्टि दान करो । तुम अपने तेजसे स्वराज करते हो । तुम प्रकृत-बल-सम्पन्न और अतीव महान् हो । हमने तुम्हारे लिये इस स्तुति-वाक्यका प्रयोग किया है । हम हम युद्धमें समस्त वीरों द्वारा युक्त होकर तुम्हारे दिये हुए शोभनीय धर्म विद्वानों या ऋत्विकोंके साथ पास करें ।

१ जिनके स्तुति-कार्यमें सौ स्तोता, एक साथ ही, प्रयुक्त होते हैं और जो स्वर्ग दिला देते हैं, उन सबकी इन्द्रको पूजा करो । गतिशील घोड़े को तरह वेगसे इन्द्रका रथ यज्ञकी ओर गमन करता है । मैं अपनी रक्षाके लिये उसी रथपर इन्द्रको चढ़नेके निमित्त, स्तुति द्वारा, अनुरोध करता हूँ ।

२ जिस समय यज्ञान्ध-प्रिय इन्द्रने जल-वर्षण करके नदीका प्रतिरोध करनेवाले वृत्रका वध किया, उस समय इन्द्रने धारावाही जलके बीच, पर्वतकी तरह, अचल होकर और प्रजाकी हजारों तरहसे रक्षा करके, यथेष्ट बल प्राप्त किया था । ×

\* सायणाचार्यने यहाँ ब्राह्मण ग्रन्थसे यह बात उद्धृत की है कि, इन्द्र वृषणभ्यकी कन्या मेना हुप थे ।

× "इस सूक्तके अर्पि सव्यके पूर्व पुरुष अङ्गिरा लोगोंके प्रवक्तृ सोमका पानकर इन्द्र विशेष प्रसन्न हुप थे । उसी समय इन्द्रने वृत्र-वध किया था । वृत्रने चाहा कि, जल-प्रपाटमें इन्द्रको हूँकोर मार लाएँ; परन्तु इन्द्र ने तो जल-मग

स हि द्वरो द्वरिषु वव्र ऊधनि चन्द्रबुध्नो मद्बुध्नो मनीषिभिः ।  
 इन्द्रं तमह्वे स्वपस्यथा धिया मंहिन्द्ररातिं स हि पप्रिरन्धसः ॥३॥  
 आ यं षृणन्ति दिवि सद्मवर्हिषः समुद्रं न सुन्वः स्वा अमिष्ट्यः ।  
 तं वृत्रहृत्ये अनु तस्थुरुतयः शुष्मा इन्द्रमवाताऽ अह्रूतपूस्वः ॥४॥  
 अमि स्ववृष्टिं मधे अस्य युध्यतो रघ्वीरिव प्रवणे सखु रूतयः ।  
 इन्द्रो यद्भ्रजी धृषमाणो अन्धसा भिनद्वलस्य परिधीं रिव त्रितः ॥५॥  
 परी घृणा चरति तित्विषे शवोपो वृत्वी रजसो बुध्नमाशयत् ।  
 वृत्रस्य यत्प्रवण दुगृ भिष्वनो निजघ्नन्थ हन्वोरिन्द्र तन्यतुम् ॥६॥  
 ह्रदं न हि त्वा न्युपन्त्यूर्मयो ब्रह्मणीन्द्र तव यानि वर्धना ।  
 त्वष्टा चित्तो युज्यं वावृधे शत्रस्ततश्च वज्रमभि भ्यूजसम् ॥७॥

३ इन्द्रने आवरणकारी शत्रुओंको जीता । इन्द्र जलकी तरह अन्तरीक्षमें व्याप्त हैं । इन्द्र सबके हृष-मूल हैं । वह सोमपानसे वर्द्धित हुए हैं । मैं, विद्वान् ऋत्विकोंके साथ, उन प्रवृद्ध और धन-सम्पन्न इन्द्रको क्षोभन-कर्मयोग्य अन्तः-करणके साथ, बुलाता हूँ ; क्योंकि इन्द्र अन्नके पूरयिता हैं ।

४ जिस प्रकार समुद्रकी आत्मभूता और अभिसुखगामिनी नदियाँ समुद्रको पूण करती हैं, उसी प्रकार कुत्रस्थित सोमरस, दिव्य लोकमें, इन्द्रको पूर्ण करता है । शत्रुओंके शोषक, अप्रतिहत-त्रेग और सशोभन मरुद्गण, वृत्रहननके समयमें, उन्हीं इन्द्रके सहायक होकर, पासमें उपस्थित थे ।

५ जिस प्रकार गमनशील जल नीचे जाता है, उसी प्रकार इन्द्रके सहायक मरुद्गण सोमपान द्वारा हृष्ट होकर युद्ध-लिस इन्द्रके सामने वृष्टि-सम्पन्न वृत्रके निःकृत गये । जिस प्रकार त्रितने परिधि-समुदायका भेद किया था, उसी प्रकार इन्द्रने यज्ञके अन्नसे प्रोत्साहित होकर बल नामके असुरका भेद किया था ।\*

६ जल रोककर जो वृत्रासुर अन्तरीक्षके ऊपर सोया था और जिसकी वहाँ असीम व्याप्ति है, इन्द्र, जिस समय तुमने उसी वृत्रकी केदुनियोंको, शब्दायमान वज्र द्वारा, आहत किया था, उस समय तुम्हारे शत्रु-विजयनी क्षीप्ति विस्तृत हुई थी और तुम्हारा बल प्रदीप्त हुआ था ।

७ जिस प्रकार जलाशयको जल-प्रवाह प्राप्त करता है, उसी प्रकार तुम्हारे लिये कहे हुए स्तोत्र तुम्हें प्राप्त होते हैं । त्वष्टाने तुम्हारे योग्य बल-वृद्धि की है और शत्रुविजयो बलसे संयुक्त तुम्हारे वज्रको भी अधिकतर बल-सम्पन्न किया है ।

हुए और न मरे; अधिकन्तु पहाड़की तरह अचल भावसे दण्डायमान हो गये ।” वेदार्थयत्न द्वारा यहाँ ऐसा मत प्रकाशित किया गया है ।

\* सैत्तिरीय-संहिताके अनुसार सायणने लिखा है कि, त्रित अग्निके पुत्र थे । जल पीने जाकर त्रित कृष्टमें गिर पड़े और असुरोंने कृष्टपर एक ढकना दे दिया, जिसे भेदकर त्रित बाहर आये । उसी कथाकी यहाँ चर्चा है । त्रित या त्रैतनने भी असुरोंके साथ घोर युद्ध किया था । इरानी लोग थूतन नामसे त्रितको उपासना करते हैं । उनके ये प्राचीन देवता हैं । क्रिस्वीखीने अपने “वाहनामा” ग्रन्थमें लिखा है कि, फारसमें तीब मत्तकोंबले जोहक नामके एक राजा थे । उन्हें पिरुदी-नने जीता था । “अवल्या” के थूतेन हो जोहक हैं । इटली और जर्मनीमें भी त्रतनकी कथा है । ग्रीकोंमें भी यह उपाख्याय है । उनके प्रधान देवता जूअसको कन्याका नाम Tritogonia था । उनमें Triton नामके एक जल-देव भी हैं ।

जघन्वाँ उ हरिभिः संभृतकृतविन्द्र वज्रं मनुषे गानुयन्नपः ।  
 अयच्छथा बाहोर्वज्रमायसमंधारयो दिच्या सूर्यं ह्यशे ॥८॥  
 बृहत्स्वभ्रन्द्रममवचदुक्थ्यमकृएवत भियसा रोहणं दिवः ।  
 यन्मानुष प्रथना इन्द्रमूतयः स्वर्नृषाचो मरुतोऽमदन्ननु ॥९॥  
 धौञ्चिदस्यामर्षाँ अहेः स्वनादयोयवीङ्गियसा वज्र इन्द्र ते ।  
 वृत्रस्य यद्वद्रधानस्य रोदसी मदे सुतस्य शवसाभिनच्छिरः ॥१०॥  
 यद्विन्विन्द्र पृथिवी दशमूजिरहानि विश्वा ततनन्त कृष्टयः ।  
 अत्राहते मघवन् विश्रुतं सहो घामनु शवसा वर्हणा भुवत् ॥११॥  
 त्वमस्य पारे रजसो व्योम्नः स्वभूत्याजा अवसे धृपःमनः ।  
 वरुणे भूमिं प्रतिमानमोजसोपः स्वः परिभूरेष्या दिवम् ॥१२॥  
 त्वं भुवः प्रतिमानं पृथिव्या ऋष्ववीरस्य बृहतः पतिभूः ।  
 विश्वमाप्रा अन्तरिक्षं महित्वा सत्यमद्धा नकिरन्यस्त्वाघान् ॥१३॥  
 न यस्य घावापृथिवी अनु व्यचो न सिन्धवो जसो अन्तमानशुः ।  
 नोत् स्ववृष्टिं मदे अस्य युध्यत एकोअन्यच्चकृषे विश्वमानुषक् ॥

८ हे सिद्धकर्मा इन्द्र ! मनुष्योंके पास आनेके लिये तुमने अवयुक्त होकर वृत्र-घिनाश किया, पृष्टि बरसायी, दोनों हाथोंमें कौह-वज्र ग्रहण किया और हमारे देखनेके लिये आकाशमें सूर्यको स्थापित किया ।

९ वृत्रके हरेके मारे स्तोत्राओंने स्तोत्रोंका अनुष्ठान किया था । वे स्तोत्र बृहद, आह्लादयुक्त, बल-सम्पन्न और स्वर्गकी सोदियाँ हैं । स्वर्ग-रक्षक महद्गणने उस समय, मनुष्योंके लिये, युद्ध करके और उनका पालन करके, इन्द्रको प्रोत्साहित किया था ।

१० इन्द्र ! अनिपुत सोम पान करके तुम्हारे हृष्ट होनेपर जिस समय तुम्हारे वज्रने द्वयुलोक और पृथिवीलोकके बापक बृत्रका मस्तक वेगसे छिन्न किया था, उस समय बलवान आकाश भी उस अदिक शब्द-भयसे कम्पित हुआ था ।

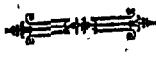
११ इन्द्र ! यदि पृथिवी दसगुनी बड़ी होती और यदि मनुष्य सदा जीवित रहते, तब तुम्हारी शक्ति, प्रकृत रूपमें, सर्वत्र प्रसिद्ध होती । तुम्हारी बल-साक्षित क्रिया आकाशके सहवा विनाश है ।

१२ अरिसर्देव इन्द्र ! इस व्यापक अन्तरीक्षके ऊपर रहकर विज-भुज-बलसे तुमने, हमारी रक्षाके लिये, भूलोककी सृष्टि की है । तुम बलके परिमाण हो । तुम ह्यगन्तव्य अन्तरोक्ष और स्वर्ग व्याप्त किये हुए हो ।

१३ तुम विद्युलायतना पृथिवीके परिमाण हो, तुम दर्शनीय देवोंके बृहत् स्वर्गके पालनकारी हो । सबसुख तुम अपनी महिमा द्वारा समस्त अन्तरीक्षको व्याप्त किये हुए हो । फलतः तुम्हारे समान कोई नहीं ।

१४ जब इन्द्रकी व्याप्तिको द्वयुलोक और पृथिवीलोक नहीं पा सके हैं, अन्तरीक्षके ऊपरका प्रवाह जिनके तेजका अन्त नहीं पा सका है, इन्द्र ! वही तुम जबके अन्य सारे भूतोंको अपने घशमें किये हुए हो ।

आर्चन्न मरुतः सस्मिन्नाजी विश्वे देवासो अमदन्नन्तु त्वा ।  
वृत्रस्य यद्भृष्टिमता वधेन नि त्वमिन्द्र प्रत्यानं जघ्नथ ॥ १५ ॥



५३ सूक्त । इन्द्र देवता हैं ।

न्यू पु वाचं प्र महे भरामहे गिर इन्द्राय सद्ने विवस्वतः ।  
नू चिद्वि रत्नं ससतामिवाविदन्न दुष्टुतिर्द्रु विणोदेषु शस्यते ॥१॥  
दुरो अश्वस्य दुर इन्द्र गोरसि दुरो यघस्य घसुन इनस्पतिः ।  
शिखानरः प्रदिवो अकामकर्शनः सखा सखिभ्यस्तमिदं गृणीमसि ॥२॥  
शचीव इन्द्र पुरुष्टुधु मत्तम तवेदिदमभितश्चे किते घसु ।  
अतः संगृभ्यामिभूत धा भर मा त्वायतो जरित्तुः काममूनयीः ॥३॥  
एभियुभिः सुमना एमिन्दुभिर्निरुधानो अमति गोभिरश्विना ।  
इन्द्रेण दस्युं दरयन्त इन्दुभियुतद्वेपसः समिषा रभेमहि ४ ॥  
समिन्द्र राया समिषा रभेमहि सं वाजेभिः पुरश्चन्द्रैरभिद्युभिः ।  
सं देव्या प्रमत्या वीरशुष्मया गो अग्रयाश्रवावत्या रभेमहि ५ ॥

१५ इस छद्मार्थमें मरुतोंने तुम्हारी अर्चना की थी । जिस समय तुमने तीक्ष्णघातक वज्र द्वारा वृद्धके मुँहके ऊपर आघात किया था, उस समय सारे देवगण संग्राममें तुम्हें जानन्दित देखकर आह्लाहित हुए थे ।

१ हम महापुरुष इन्द्रके उद्देशसे क्षीमनीय-वाद्यप्रयोग करते हैं और सेवामत्री यजमानके घर क्षीमनीय-स्तुति-वाक्य प्रयोग करते हैं । इन्द्रने अश्वोंके धनपर उसी तरह तुरत अधिकार कर लिया, जिस तरह सोये हुए मनुष्योंके धनपर अधिकार जमाया जाता है । धनदाताओंको समीचीन स्तुति करनी चाहिये

२ इन्द्र ! तुम अश्व, गौ और यव आदि धान्य दान करो । तुम निवासहेतु, प्रभूत धनके स्वामी और रक्षक हो । तुम दानके नेता और प्राचीनतम देव हो । तुम कामना व्यर्थ नहीं करते, तुम याजकोंके सखा हो । उन्हींके उद्देशसे हम यह स्तुति पढ़ते हैं ।

३ हे प्रजापति, प्रभूतकर्मा और अतिशय दासिमान् इन्द्र ! चारों ओर जो धन है, वह तुम्हारा ही है—यह हम जानते हैं । शत्रु-विध्वंसी इन्द्र ! वही धन ग्रहण करके हमें दान करो । जो स्तोता तुम्हें चाहते हैं, उनकी लजलाषा व्यथ नहीं करना ।

४ इन्द्र ! इस प्रकार हव्य और सोमरससे तुष्ट होकर गौ और घोड़ेके साथ धन दान कर और हमारा दारिद्र्य दूर कर प्रसन्नमना हो जाओ । इस सोमरससे तुष्ट इन्द्रकी सहायतासे हम दस्युको ध्वंस कर और शत्रुओंसे मुक्ति प्राप्त कर अन्नी तरह अन्न भोगेंगे ।

५ इन्द्र ! हम धन, अन्न और अनेकोंके आह्लादकर और दासिमान् बल पावें । तुम्हारी प्रकाशमान समति हमारी सहायिका हो । वह समति वीर शत्रुओंका शोषण करे । वह स्तोताओंको गौ आदि पशु और अश्व दान करे ।

ते त्वा मदा अमदन्तानि वृष्ण्या ते सोमासो वृत्रहत्येषु सत्पते ।  
 यत् कार्वे दश वृत्राण्यप्रति वर्हिष्मते नि सहस्राणि वर्ह्यः ॥ ६ ॥  
 युधा युधमुप घेदेपि धृष्णुया पुरा पुरं समिदं हंस्योजसा ।  
 नम्या यदिन्द्र सत्या परावति निर्वह्यो नमुचिं नम मायिनम् ॥ ७ ॥  
 त्वं करञ्जमुत पर्णयं वधोस्तेजिष्ठथातिथिग्वस्य वर्तनी ।  
 त्वं शता वंगृदस्यामिनत् पुरोऽजानुदः परिपूतां ऋजिश्चना ॥ ८ ॥  
 त्वमेताञ्जनपातो द्विर्दशावन्धुना सुश्रवसोपजग्मुपः ।  
 पण्डिं सहस्रा नवतिं नव श्रुतो नि चक्रेण रथ्या दुष्पदावृणक् ॥ ९ ॥  
 त्वमाविय सुश्रवसं तत्रोतिभिस्तव त्रामभिरिन्द्र तूर्वयाणम् ।  
 त्वमस्मै कुत्समतिथिग्वमायुं महे राक्षे यूने अरन्धनायः ॥ १० ॥  
 य उह्वीन्द्र देवगोपाः सलायस्ते शिवत्तमा असाम ।  
 त्वां स्तोपाम त्वया सुवीरा द्राघीय आयुः प्रतरं दधानाः ॥ ११ ॥



६ साधु-नक्षक इन्द्र ! वृत्राणां के घबरे समय तुम्हारे आपन्त्रशता मरुदगणने तुम्हें प्रसन्न किया था । वर्षक इन्द्र ! जिस समय तुमने शत्रुओं द्वारा अप्रतिहत होकर स्तोता और हव्यदाता यत्रमालके लिये दस हजार उपद्रवोंका विनाश किया था, उस समय विविध हव्य और सोमसने तुम्हें हृष्ट किया था ।

७ इन्द्र ! तुम शत्रुओंके पर्यणकारी हो । तुम युद्धान्तरमें जाने हो । तुज पल्ले एक नगरके घाट दूसरे नगरका च्वंस करते हो । इन्द्र ! तुमने, दूर देशमें, नमो ऋषिको सहायतासे नमुचि नामक मथ्यावीका वध किया था । \*

८ तुमने अतिथिग्व नामके राजाके लिये करञ्ज और पर्णय नामक अहुरोंको, तेजस्वी घग्नुनामाक अस्त्रसे, वध किया था । अनन्त तुमने अकेले ऋजिश्वान् नामक राजाके द्वारा चारों ओर वेष्टित वंगृद नामक अहुरोंके वातसंल्यक नगरोंको अग्निग्म किया था ।

९ असहाय सुश्रवा नामक राजाके साथ युद्ध करनेके लिये जो भीस नरपति और उनके साठ हजार निम्न्यान्धे अनुभर आये थे, प्रसिद्ध इन्द्र ! तुमने शत्रुओंके अलक्ष्य घर्षों द्वारा उनको पराजित किया था ।

१०-तुमने जनो रक्षा-शक्तिके द्वारा सुश्रवा राजाको रक्षा की थी । तूर्वयान राजाको अपनी परित्राण-शक्ति द्वारा बचाया था । तुमने कुत्स, अतिथिग्व और आयु राजाओंको मदान् युष्क सुश्रवा राजाके आधीन किया था । x

११ इन्द्र ! तुम्हारे मित्ररूप हम यज्ञ-समाप्तिके विद्यमान हैं । हम देवों द्वारा पाकित हुए हैं । हम मङ्गलमय हैं । हम तुम्हारी स्तुति करते हैं । तुम्हारे क्रुपासे हम जोमनीय पुत्र पाये और उत्तम रूपसे दीर्घ जीवन धारण करें ।

\* यहाँ सायणने "नम्या सलया" का अर्थ नमनशोक धरु किया है, नमो ऋषि नहीं । परन्तु यहाँ नमो ऋषि अर्थ ही होक जैवता है; क्योंकि ऋग्वेद ( ६।२०।६ और १०।१८।९ ) के अनुसार इन्द्रने नमोके लिये नमुचिका वध किया था ।

x पुराणोंमें आयुको पुरारथाका पुत्र कहा गया है । ऋग्वेदके ६।१८।३ में सायणने लिखा है कि, तूर्वयान विधोदासका माय हो सकता है । किन्तु यहाँ तूर्वयानके लिये सायणने कुछ नहीं लिखा है ।

५४ सूक्त । इन्द्र वेवता हैं ।

मा नो अस्मिन् भयवन्पृत्स्वंहसि न हि ते अन्तः शवसाः परीणशो ।  
 अक्रन्दयो नद्यो रोहवद्वना कथा न क्षोणीर्मियसा समास्त ॥ १ ॥  
 अर्चा शक्राय शाकिने शचीवते शृण्वन्तन्द्रिं महयन्तसि ष्टुहि ।  
 यो धृष्णुना शवसा रोदसी उभे वृथा वृपत्वा वृपमो न्युजते ॥ २ ॥  
 अर्चा दिवे बृहते शूर्प्यं वचः स्वक्षत्रं यस्य धृपतो धृपन्मनः ।  
 बृहच्छ्रवा असुरो वर्हणा हतः पुरो हरिभ्यां वृपमो रयो हि पः ॥३॥  
 त्वं दिवो बृहतः सातु क्रोपयोऽत्र त्मना धृपता शंभ्यरं भिनत् ।  
 यन्मायिनो व्रन्दिनो मन्दिना धृपच्छिन्ता गमस्तिमशनि पृतन्यसि ॥४॥

१ सवन् ! इस पापमें, इस युद्ध-समुद्रायमें, हमें नहीं पक्षेय करना; क्योंकि तुम्हारे बलको जनन्तता है। तुम जन्तरीक्षमें रहकर और अत्यन्त दाम्प का नदीके जलको शत्रुदायमान करते हो। तब फिर पृथिवी क्यों ब भय पावे ?

२ शक्ति-आली और बुद्धिमान इन्द्रको पूजा करो। यह स्तुति समते हैं। उनकी पूजा करके स्तुति करो। जो इन्द्र शत्रु-बलों बलके द्वारा दुयुक्तो और दुयिबलको अलङ्कृत करते हैं, यह वर्षा-विधाता हैं, धर्म-शक्ति द्वारा वृष्टि दान करते हैं।

३ जो इन्द्र शत्रुतयो और अपने बलमें हृदयना हैं, उन्हीं महान् और दीप्तिमान इन्द्रके उद्देशसे अक्षर स्तुति-वाक्य उच्चारण करो; क्योंकि इन्द्र प्रभूत-यशःशाली और अक्षर अर्थात् बलशाली हैं। इन्द्र शत्रुओंको दूर करते हैं। इन्द्र अक्षर द्वारा सेवित, जमीद्वर्षी और वेगवान् हैं। \*

४ इन्द्र ! तुमने महान् आकाशके ऊपरका प्रदेश कम्पित किया है; तुमने अपनी शत्रु-विश्वसिमा क्षमताके द्वारा शम्भर-जलका धध किया है। तुमने हृष्ट और उल्लसित मनसे तीक्ष्ण और शक्ति-युक्त वज्रको दृढबद्ध भाषा-विषयके विद्वद् प्रान्त किया है।

\* यहाँ इन्द्रके लिये अक्षर शब्दका प्रयोग है। सायणने यहाँ अक्षर शब्दके तीन लय किये हैं—शत्रु इन्द्रा, बलवान् और वृष्टिदाता। यह बात ठीक है कि, ऋग्वेदमें देवोंके लिये अक्षर शब्दका कई बार प्रयोग हुआ है। प्रथम अष्टकमें कुछ सात स्थानों पर अक्षर शब्दका प्रयोग हुआ है। कहीं-कहीं किस-किस सम्बन्धमें प्रयोग हुआ है, यह निम्न लिखित पङ्क्तिमें पढ़िये—

२४ सूक्तकी १४ ऋषामें अक्षर शब्द धरणके सम्बन्धमें प्रयुक्त हुआ है।

३१ " ७ " " सूर्य रश्मि " " "

३६ " १० " " सविता " " "

५४ " ३ " " इन्द्र " " "

६४ " २ " " महद्वाण " " "

१०८ " ६ " " भृत्विक्वाण " " "

११६ " ३ " " त्वष्टा " " "

परन्तु प्रसिद्ध वैद्य अथमें ही हमने अनुवादमें, कई स्थानोंपर, अक्षर शब्द लिखा है।

नि यद्धृणक्षि श्वसनस्य मूर्ध्नि शुष्णस्य चिद्वृन्दिनो रोख्वज्जता ।  
 प्राचीनेन मनसा वर्हणावता यद्द्या चित्कृणवः कस्वा परि ॥ ५ ॥  
 त्वमाविथ नयं तुर्वशं यदुं त्वं तुर्वीति वयं शतक्रतो ।  
 त्वं रथमेतशं कृत्वये धने त्वं पुगे नवति दम्भयो नव ६ ॥  
 स धा राजा सत्यतिः शूशुवज्जतो रातहव्यः प्रति यः शासमिन्वति ।  
 उक्था धा यो अभिगृणाति राधसा दानुरस्मा उपरा पिन्वते दिवः ७ ॥  
 असमं क्षत्रमसमा मनीषा प्र सोमपा अपसा सन्तु नेमे ।  
 ये त इन्द्र ददुपो वर्धयन्ति महि क्षत्रं स्थविरं वृष्ण्यं च ८ ॥  
 तुभ्येदेते यदुला अद्रिदुर्वाक्षमूयदक्षमसा इन्द्रपानाः ।  
 व्यध्र हि तर्षया काममेपामथा मनो वसुदेवाय कृष्व ९ ॥  
 अयामतिन्द्ररुणद्वरं तमोऽन्वृत्रस्य जडरेपु पर्वतः ।  
 क्षमीमिन्द्रो नद्यो वज्रिणा हिता विश्वा अनुष्टाः प्रवणेपु जिघ्रते १० ॥  
 स श्रेयधमग्नि धा द्यु स्रमस्मे महि क्षत्रं जनापालिन्द्र तव्यम् ॥  
 रक्षा च नो मघोनः पाहि सुरीनाये च नः स्वपत्या इपे धाः ११ ॥



५ इन्द्र ! तुमने मेघ-गर्जन द्वारा शब्द करके पायुके ऊपर और जन-शोषक तथा जल-परिगणकारी सूर्यके मस्तकपर जल वर्षण किया है। तुम्हारा मन अपरिचरामन्नाकी और प्राणु विनाश पापयग है। तुमने आज जो काम किया है, उससे तुम्हारे ऊपर कौन है ? अर्थात् तुम्हारे ऊपर कोई नहीं—तुम्हीं सर्व-श्रेष्ठ हो।

६ तुमने नय, तुर्पना और यदु नामके राजाओंकी रक्षा की है। शत-यज्ञकर्ता इन्द्र ! तुमने वय्य-कुलोद्भव तुर्वीति नामके राजाकी रक्षा की है। तुमने रथ और पतन श्रुपित्री, आवश्यक धनके किये, संग्राममें रक्षा की है। तुमने शम्भरके बिन्यामने मारोंका विनाश किया है।

७ जो इन्द्रको इव्य दान करके इन्द्र-स्तुतिका प्रचार करते हैं अथवा इव्यके साथ मंत्रका पाठ करते हैं, वही स्वराज करते हैं, माधुरक्षा करते हैं और अपनेको धर्म न करते हैं। गरुडाता इन्द्र उन्हींके लिये आकाशसे मेघ-जलका वर्षण करते हैं।

८ इन्द्रका बल अतुल्य है, उनकी बुद्धि भी अतुल्य है। जो तुम्हें इव्य दान करके तुम्हारा महान् बल और स्थूल पौरुष बढ़ाते हैं, वही सोमपायो लोग यज्ञ-कर्म द्वारा प्रबृद्ध हों।

९ यह सोमरस पत्थरके द्वारा तैयार किया गया है, वर्त्तनमें रखा हुआ है और इन्द्रके पीने योग्य है। इन्द्र ! यह स तुम्हारे ही लिये हुआ है। तुम इसे प्रशंग करो। अन्तो इच्छा नृत्त करो। अन्तर हमें धन दान करनेमें ध्याम दो।

१० बन्धकारने घृष्टकी घारा रोकी थी। घृष्टारके पेटके भीतर मेघ था। घृष्टके द्वारा रखे जाकर वो जल अनु-कूपसे अवस्थित था, इन्द्रने उसे निम्न भू-प्रदेशमें प्रवाहित किया।

११ इन्द्र ! हमें धर्म मान याद दो। महान् शत्रुओंका पराजयकर्ता और प्रभूत बलवान् करो। हमें धनवान् करके रह करो। विद्वानोंका पाकन करो और हमें धन, शोभनीय अपत्य और जन्म दान करो।



५५ सूक्त । इन्द्र यैश्वता हँ । जगती छन्द है ।

दिवश्चिद्रस्य वरिमा वि पप्रथ इन्द्रं न महा पृथिवी चन प्रति ।  
भीमस्तुविष्मान् वर्षणिभ्य आतपः शिश्रुते वज्रं तेजसे वंसगः । १  
सो अर्णवो न नद्यः समुद्रियः प्रति गृम्णाति विश्रिता वरीमभिः ।  
इन्द्रः सोमस्य पीतवे वृषायते सनात् स शुध्म ओजसा पनस्यते २ ॥  
त्वं त्तमिन्द्र पर्वतं न भोजसे महो नम्णस्य धर्मणामिरज्यसि ।  
प्र वीर्येण देवताति चेकिते विश्वस्मा उग्रः फर्मणे पुरोहितः ३ ॥  
स इद्वने नमस्युभिर्वचस्यते चारु जनेषु प्रब्रुवाण इन्द्रियम् ।  
वृषा छन्दुर्भवति हर्यतो वृषा क्षेमेण धेनां मघवा यद्विन्वति ४ ॥  
स इन्महानि समिधानि मज्जना कृणोति शुध्म ओजसा जनेभ्यः ।  
अथा चन श्रद्दघति त्विषोमत इन्द्राय वज्रं निघनिघ्नते वधम् ॥ ५ ॥  
स हि श्रवस्युः सदनानि कृत्रिमा क्षमया वृधान ओजसा विनाशयन् ।  
ज्योतींषि कृएवन्नवृकाणि यज्यवेऽव सुकतुः सत्त वा अपः सृजत् ६ ॥  
दानाय मनः सोमपावन्नस्तु तेऽर्वाञ्जा हरी चन्दनश्रुदा कृधि ।  
यमिष्ठासः सारथयो य इन्द्र ते न त्वा कैता आ दम्नुवन्ति भूर्णयः ७ ॥

१ आकाशकी अपेक्षा भी इन्द्रका प्रभाव विस्तीर्ण है । महत्त्वमें पृथिवी भी इन्द्रकी वगवरी नहीं कर सकती । भया-  
चह और धरती इन्द्र मनुष्योंके लिये शत्रुको दण्ड करते हैं । जैसे साँढ़ अपनी साँग रगड़ता है, उसी प्रकार तोला करनेके  
लिये इन्द्र अपना वज्र रगड़ते हैं ।

२ अन्तरोक्ष-अपापो इन्द्र, सागरकी तरह, त्रपनी व्यापकताके द्वारा बहुव्यापी जल ग्रहण करते हैं । इन्द्र सोमपावके  
लिये साँढ़की तरह वेगसे दौड़ते हैं और वशो योद्धा इन्द्र प्राचीन कालसे अपने वीरत्वकी प्रशंसा चाहते हैं ।

३ इन्द्र ! तुम अपने भोगके लिये मेवको भिन्न नहीं करते । तुम महान् धनाढ्योंके ऊपर आधिपत्य करते हो । वह  
इन्द्रदेव अपने धीर्यके कारण अचञ्चो तरह परिचित हैं । सारे देवोंने उग्र इन्द्रको उनके कर्मके कारण सामने स्थान दिया है ।

४ वही इन्द्र अङ्गुलमें स्तोता ऋषियों द्वारा स्तुत होते हैं । वह मनुष्योंके बीचमें अपना धीर्य प्रकट करके बड़ी सन्दृता-  
से प्रवक्षित होते हैं । जिस समय हव्यदाता धनी यजमान इन्द्र द्वारा रक्षित होकर स्तुति-वाक्य उच्चारण करता है, उस  
समय वही अभीष्टवर्षी इन्द्र यज्ञेच्छुको यज्ञमें तत्पर करते हैं ।

५ वही योद्धा इन्द्र मनुष्योंके लिये सर्व-विशुद्धकारो बल द्वारा महान् संप्रामोंमें संलग्न होते हैं । जिस समय इन्द्र  
वध-कारण वज्र फेंकते हैं, उस समय दीसिमान् इन्द्रको सब लोग बलशाली कह कर श्रद्धा करते हैं ।

६ शोभनकर्म इन्द्र यज्ञःकामना करके, बल द्वारा सन्निहित अक्षर-गृहोंका विनाश करके, पृथिवीमें समान वृद्धि प्राप्त  
करके और ज्योतिष्कों या तारकाओंको निराकरण करके यजमानके उपकारके लिये प्रवहमान वृष्टि-जल दान करते हैं ।

७ सोमपापो इन्द्र ! बाममें तुम्हारा मन रत हो । स्तुतिप्रिय ! अपने हरि बामके जोड़ोंको हमारे यज्ञके अभिष्टुको

अप्रक्षितं वसु विभर्षि हस्तयोरपालहं सहस्तन्वि श्रुतो दधे ।  
आचृतासोऽज्वतासो न कर्तुं भिस्तनूपु ते क्रतवः इन्द्र भुरयः ॥८॥

५६ सूक्त । इन्द्र देवता हैं । जगती छन्द है ।

एष प्र पूर्वोरच तस्य चमिपोऽस्यो न योपामुदयंस्त भुर्वणिः ।  
दक्षं महे पाययते हिरण्ययं रथमावृत्वा हृष्योग्मृभ्वसम् १ ॥  
तं गूर्तयो नेमन्निपः परीणसः समुद्रं न सञ्चरणे सनिष्यवः ।  
पतिं दक्षस्य विदथस्य नू सहो गिरिं न वेना अधि रोह तेजसा २ ॥  
स तुर्वणिर्महा अरेणु पौंस्ये गिरेभृष्टिनं भ्राजते तुजा शत्रुः ।  
येन शुण्णं माथिनमायसो मदे दुध आभुपु रामयन्नि दामनि ३ ॥  
देवी यदि तविषी त्वावृधोतय इन्द्रं सिपत्तयुपसं न सूर्यः ।  
यां धृष्णुना शवसा वाघते तम इर्यति रेणुं वृहद्दर्हरिष्वणिः ४ ॥

करो । इन्द्र ! तुम्हारे साराथ घोड़ोंको बधमें करनेमें बड़े दक्ष हैं; इसलिये तुम्हारे (घरोधी कश्त्रु) हथियार लेकर तुम्हें पराजित नहीं कर सकते ।

८ इन्द्र ! तुम दोनों हाथोंमें अनन्त धन धारण करते हो । तुम यज्ञस्वी हो । अपनी देहमें अपराजेय बल धारण करते हो । जैसे नकार्या मनुष्य कुओंको घेरे रहते हैं, उसी प्रकार तुम्हारे सारे अंग धीरतापूर्ण करों द्वारा घेरे रहते हैं । तुम्हारी देहमें अनेक कर्म विद्यमान हैं ।

१ जिस प्रकार घोड़ा घोड़ीकी ओर दौड़ता है, उसी प्रकार प्रभूताहारी इन्द्र उस चलमानके पथेष्ट पात्र-स्थित सोमरूप सायकी ओर दौड़ते हैं । इन्द्र स्वयंप्रय, अदधयुक्त और रदिमयुक्त रथको रोककर पान करते हैं । वे बड़े निपुण काथमें हैं ।

२ जिस प्रकार घनाभिलाषी घणिक धूम-धूमकर समुद्रको चारों ओर व्याप्त किये रहते हैं, उसी प्रकार हव्य-वाहक स्तोता लोग चारों ओरसे इन्द्रको घेरे हुए हैं । जिस प्रकार छकवाएँ, फूल चुबनेके लिये, पधतपर चढ़ती हैं, उसी प्रकार हे स्तोता, एक तेजःपूर्ण स्तोत्रके द्वारा प्रवृद्ध, यज्ञके रक्षक, बलवान् इन्द्रके पास शीघ्र पहुँचो ।

३ इन्द्र शत्रुहन्ता और सशान् हैं । इन्द्रका दोष-शून्य और शत्रुविनाशक बल पुरुषाचित संग्राममें पहाड़के शृङ्गकी तरह विराजमान है । शत्रु-मर्दक और लौह-कवच-देही इन्द्रने सोमपान द्वारा हृष्ट होकर, बल द्वारा, मायावी शुष्णको हथकड़ी बाँधकर कारागृहमें बन्द कर रखा था । \*

४ जैसे सूर्य अपना सेवा करने हैं, उसी प्रकार तुम्हारा दोसिमान् बल, तुम्हारी रक्षाके लिये, तुम्हारे स्तोत्र द्वारा वर्द्धित इन्द्रकी सेवा करता है । घदी इन्द्र विजयी बल द्वारा अन्वकाररूप वृत्रका दमन करते और शत्रुओंको रक्षाकर अच्छी तरह उनका धधंस करते हैं ।

\* "आयसः" का अर्थ सायणायने "अयोमयकवचयुक्तदेहः" किया है । २५ सूक्तको १३ ऋचासे भी मालूम होता है कि, आय लोग कवच ( सोने और लोहेके ) धारण करते थे ।

वि यत्तिरो धरुणमच्युतं रजोऽतिष्ठिषो दिव आतासु वर्हणा ।  
 स्वमीहि यन्मद इन्द्र हर्ष्याहन्वृत्रं निरपामौञ्जो अणोवम् ॥५॥  
 त्वं दिवो धरुणं धिष ओजसा पृथिव्या इन्द्र सदनेपु माहिनः ।  
 त्वं सुतस्य मदे अरिणा अपो वि वृत्रस्य समया पाष्यारुजः ॥६॥



५७ सूक्त । इन्द्र देवता हैं ।

प्र महिष्ठाय वृहते वृहद्रये सत्यशुष्माय तवसे मतिं भरे ।  
 अपामिव प्रवणे यस्य दूर्धरं राधो विश्वायु शवसे अपावृतम् १ ॥  
 अथ ते विश्वमनु हासदिष्ट्य आपो निम्नो व सवना हविष्मतः ।  
 यत् पर्वते न समाप्नोत हर्ष्यत इन्द्रस्य वज्रः श्रथिता हिरण्ययः ॥२ ॥  
 अस्मै भीषाय नमसा समध्वर उपो न शुभ्र आ भरा पनीयसे ।  
 यस्य धाम श्रवसे नामेन्द्रियं ज्योतिरकारि हरिको नायसे ॥ ३ ॥  
 इमे त इन्द्र ते वयं पुरुष्टुत ये त्वारभ्यं चरामसि प्रभुवसो ।  
 नहि त्वदन्यो गिर्वणो गिरः सघत् क्षोणीरिव प्रति नो हर्षं नह्वचः ॥ ४ ॥

१ शत्रु-इन्ता इन्द्र ! जिस समय तुमने वृत्र द्वारा अवरुद्ध, जीवन-रक्षक और विनाश-रहित जल आकाशसे चारों ओर वितरण किया, उस समय सोमपानसे हर्ष-युक्त होकर तुमने लड़ाईमें वृत्रका अथ क्रिया या और जलके समुद्रकी तरह मेघको निम्नमुख कर दिया था ।

२ इन्द्र ! तुम मदान् हो । अपने बलके द्वारा सारे जगत्के धारक वृष्टि-जलको आकाशसे पृथिवीके प्रदेशोंपर स्थापित करते हो । तुमने सोमपानसे हृष्ट होकर मेघसे जलको बाहर कर दिया है और विशाल पापाजसे वृत्रको ध्वस्त किया है ।

३ अतीव धानी, महान्, प्रभूतधनशाली, अमोघबल-सम्पन्न और प्रकाण्ड-वेद-विशिष्ट इन्द्रके उद्देशसे मैं मननीय स्तुति सम्पादित करता हूँ निम्नगामिनी जलधाराकी तरह इन्द्रका बल कोई नहीं धारण कर सकता । स्तोत्रार्थोंके बल-साधन-के लिये इन्द्र सर्वव्यापी सम्पदका प्रकाश करते हैं ।

४ इन्द्र ! यह सारा जगत् तुम्हारे यज्ञमें ( तथा ) हृद्य-दाताओंका अभिपुत्र सोमस तुम्हारी ओर प्रवाहित हुआ था । इन्द्रका शोमनीय, सवर्णमय और हवनशाल वज्र पर्वतपर निहित था ।

५ शुभ ऋषा ! मयावह और अतीव स्तुति-पात्र इन्द्रको इस यज्ञमें इस समय यज्ञान्न दो । उनकी विहवधारक, प्रसिद्ध और इन्द्रत्व-चिह्नयुक्त उपोति, घोड़ेकी तरह उनको यज्ञान्न-प्राप्ति करनेके अर्थ, इधर-उधर ले जाती है ।

६ प्रभूतधनशाली और बहु-लोक-स्तुति इन्द्र ! इस तुम्हारा अवलम्बन करके यज्ञ सम्पादन करते हैं । हम तुम्हारे ही हैं । स्तुति-पात्र ! तुम्हारे सिवा और कोई यह स्तुति नहीं पाता । जैसे पृथिवी अपने प्राणियोंको धारण करती है, उसी तरह तुम भी यह स्तुति-बचन ग्रहण करो ।

मूरि त इन्द्र वीर्यं तव स्मस्यस्य स्तोतुर्मघवन् काममा पृण ।  
 अनु ते द्यौवृ हती वीर्यं मम इर्यं च ते पृथिवी नेम ओजसे ॥ ५ ॥  
 त्वं तमिन्द्र पर्वतं महामुरुं वज्रेण वज्रिन् पर्वशशचकर्त्तिय ।  
 अवास्तो निवृताः सर्तवा अपः सत्रा विश्वं दधिपे केवलं सहः ॥ ६ ॥

११ अनुवाक । ५८ सूक्त । अग्नि देवता हैं । यहाँसे ६४ सूक्त तकके गौतमके पुत्र नोधा ऋषि हैं ।

नूचित् सहोजा अमृतो नि तुन्दते होता यद्दूनो अभवद्विवस्वतः ।  
 वि साधिष्ठेभिः पथिभी रजो मम आ देवताता हविषा विवासति ॥१॥  
 आ स्वमद्म युवमानो अजरस्तृष्वविष्यन्तसेपु तिष्ठति ।  
 अत्यो न पृष्ठं प्रुपितस्य रोचते दिवो न सानु स्तनयन्नचिक्रदत् ॥२॥  
 क्राणा रुद्रे भिवस्तुभिः पुराहितो होवा निपत्तो रषिपाङ्गमर्त्यः ।  
 रथो चिक्ष्वृजसान आयुषु व्यानुषग्वार्या देव ऋषवति ॥३॥  
 त्रि घातजूतो अतसेपु तिष्ठते वृथा जुहूमिः सृष्या तुष्विष्वणिः ।  
 तृपु यद्मे वनिनो वृषायसे कृष्णं त एम रुशदूर्मे अजर ॥४॥

१ इन्द्र ! तुम्हारा वीर्य बढ़ाना है । हम तुम्हारे ही हैं । मघवन् ! इस स्तोताकी कामना पूरी करो । विनाश आकाने तुम्हारे वीर्यका लोहा माना था । यह पृथिवी भी तुम्हारे धरसे भवमत है ।

२ वज्रधारी इन्द्र ! तुमने उस विस्तीर्ण मेघको, वज्र द्वारा, टुकड़े-टुकड़े किया । उस मेघके द्वारा आवृत जल, बहनेके क्रिये, तुमने भीचे छोड़ दिया । केवल तुम्हीं विश्वव्यापी धर धारण करते हो ।

१ बड़े जलसे उत्पन्न और अमर अग्नि धिया-दान या ज्वलनमें समये हैं । जिस समय देवाह्वानकारी अग्नि यज्ञमात्रक इष्यवाही दूत हुए थे, उस समय समीचीन पथ द्वारा जाकर उन्होंने अन्तरीक्ष निर्माण किया था या वहाँ प्रकाश किया था । अग्नि यज्ञमें इष्य द्वारा देवोंकी परिचर्या करते हैं ।

२ अजर अग्नि तृण-गुल्म आदि अपने साधको ज्वलन-शक्ति द्वारा मिटाकर और भक्षण कर तुरत काठके ऊपर चढ़ गये । बहने करनेके लिये इधर-उधर जानेवाली अग्निकी पृष्ठ-देश-स्थित ज्वाला रामनशील घोड़ेकी तरह शोभा पाती है । साथ ही आकाशके टकत और वायुद्वयमान मेघकी तरह शब्द भी करती है ।

३ अग्नि इष्यका घटन करते हैं और रुद्रों तथा वसुओंके सम्मुख स्थान पाये हुए हैं । अग्नि देवाह्वानकारी और यज्ञ-स्थानमें उपस्थित रहते हैं । घट घन-नयी और अमर हैं । दीशिमान् अग्नि यज्ञमानोंकी स्तुति लाभ करके और रथकी तरह चल करके प्रजाजोंके घरमें बार-बार वरणीय या श्रेष्ठ धन प्रदान करते हैं ।

४ अग्नि, वायु द्वारा प्रेरित होकर, महावाह्य, ज्वलन्त जिह्वा और तेजके साथ, अनायास पेटोंको दहन कर देते हैं ।

तपुर्जम्भो वन वा वातचोदितो यूथे न साह्यं अत्र वाति वंसगः ।  
 अमिप्रजन्नक्षितं पाजसा रजः स्थानुश्चरथं भयते पतत्रिणः ॥५॥  
 दधुष्ट्वा भृगवो मानुषेष्वा रथिं न चारुं सुहवं जनेभ्यः ।  
 होतारमग्ने अतिथिं वरेण्यं मित्रं न शैवं दिव्याय जन्मने ॥६॥  
 होतारं सप्त जुह्वो यजिष्ठं यं वाघते वृणते अध्वरेपु ।  
 अग्निं विश्वेषामरतिं वसूनां सपर्यामि प्रयसा यामि रत्नम् ॥७॥  
 अच्छिद्धा सूतो सहसो नो अद्य स्तोतृभ्यो मित्रमहः शर्म यच्छ ।  
 अग्ने गृणन्तमंहस उरुष्योजीं नपात् पूर्विरायसीभिः ॥ ८ ॥  
 भवा वरुथं गृणते विभावो भवा मघवन्मघवद्भ्यः शर्म ।  
 उद्व्याग्ने अंहसो गृणन्तं प्रातर्मक्षू धियावसुजगम्यात् ॥ ९ ॥

५६ सूक्त । अग्नि देवता हैं । त्रिष्टुप् छन्द है ।

वया इदमे अग्रयस्ते अन्ये त्वे अग्ने अमृता मादयन्ते ।

वैश्वानर नाभिरसि क्षितीनां स्थूणेव जना उपमिद्ययंथ ॥१॥

अग्नि ! जिस समय तुम वन्य वृक्षोंको शीघ्र जलानेके लिये साँड़को तरह व्यग्र होते हो, हे दोस-ज्वाल अजर अग्नि ! उस समय तुम्हारा गमन-मार्ग काला हो जाता है ।

५ अग्नि वायु द्वारा प्रेरित होकर, बिखारूप आयुध धारण करके, महातेजके साथ, अशुष्क वृक्ष-रस आक्रमण करके और गो-शृङ्गके बीचमें साँड़को तरह सबको परामृत करके चारों ओर व्याप्त होते हैं । सारे स्थावर और जंगम बहु-विचारी अग्निसे डरते हैं ।

६ अग्नि ! मनुष्योंके बीचमें महर्षि भृगु लोगोंके, दिव्य जन्म पानेके लिये, तुम्हें, शोभन धनकी तरह, धारण किया वा । तुम आरानीसे लोगोंका आह्वान करनेवाले और देवोंका आह्वान करनेवाले हो । तुम यज्ञ-स्थानमें अतिथि-रूप और उत्तम मित्रकी तरह छलदाता हो ।

७ सात आह्वानकारी ऋत्विक् जो यज्ञोंमें परम यज्ञार्ह और देवाह्वानकारी अग्निको धरण करते हैं, उसी सर्व-धन-दाता अग्निको मैं यज्ञान्मसे सेवित करता हूँ और उनसे रमणीय धनकी याचना करता हूँ ।

८ बलपुत्र और अनुरूप दीप्तियुक्त अग्नि आज हमें अच्छेच छल दान करो । अन्न-पुत्र ! अपने स्तोताको, कोढ़की तरह, हड़ रूपसे रक्षा करते हुए पापसे बचाओ ।

९ प्रभावान् अग्नि ! तुम स्तोताके गृह-रूप बनो । धनवान् अग्नि ! धनवानोंके प्रति करयाण-स्वरूप बनो । अग्नि ! नेताओंको पापसे बचाओ । प्रज्ञारूप धनसे लम्पन्न अग्नि ! आज प्रातःकाल शीघ्र आओ ।

१ अग्निदेव ! अन्यान्य जो अग्नि हैं, वह तुम्हारी शाल्वाए हैं अर्थात् सब आँग हैं और तुम अङ्गी हो । तुममें सब अजर देवगण दृष्ट होते हैं । वैश्वानर ! तुम मनुष्योंकी नामि हो । तुम निश्चात स्वम्भके समान मनुष्योंको धारण करते हो ।

मूर्धा दिशो नाभिरग्निः पृथीव्या अथाभवदरती रोदस्योः ।  
 तं त्वा देवासोऽजनयन्त देवं वैश्वानरं ज्योतिरिदार्याय ॥ २ ॥  
 आ सूर्ये न रश्मयो धू वासो वैश्वानरे दधिरेऽग्रा वसूनि ।  
 या पर्वतेष्वोपधीष्वप्सु या मानुषेष्वसि तस्य राजा ॥ ३ ॥  
 वृहती इव सूतवे रोदसी गिरो होता मनुष्यो न दक्षः ।  
 सर्वते सत्यशुभ्माय पूर्वोवैश्वानराय नृनमाय यहीः ॥ ४ ॥  
 दिवश्चित्ते वृहतो जातवेदो वैश्वानर प्र रिरिचे महित्वम् ।  
 राजा कृष्टीनामसि मानुषीणां युधा देवेभ्यो वरिवक्ष्यकथं ॥ ५ ॥  
 प्र नू महित्वं वृषभस्य वोचं यं पूरवो वृत्रहर्णं सचन्ते ।  
 वैश्वानरो दस्युमग्निर्जघन्वां अधूनोत् काष्ठा धव शम्भरं भेत् ॥ ६ ॥  
 वैश्वानरो महिना विश्वकृष्टिर्भरद्वाजेषु यजतो विभावा ।  
 शातवनेये शतिनीभिरग्निः पुहणीधे जरते सनृतावान् ॥ ७ ॥



२ अग्नि स्वर्गके मरुतक, पृथिवीकी नाभि और धृ लोक तथा पृथिवीके अधिपति हुए थे । वैश्वानर ! तुम देवता हो । देवोंने आर्यके क्रिये या विद्वान् मनुष्यके लिये ज्योतिःस्वरूप तुमको उत्पन्न किया था ।

३ त्रिस तरह निश्चय किणं सूर्यमें स्थापित हुई हैं, उन्नी तरह वैश्वानर अग्निमें सम्पत्तियाँ स्थापित हुई थीं । पर्वतों, औषधियों, जलों और मनुष्योंमें जो धन है, उसके राजा तुम्हीं हो ।

४ यावापृथिवी वैश्वानरके लिये विसृज्य हुए थे । जैसे ब्रह्मी प्रभुकी स्तुति करता है, वैसे ही इस नियुक्त होने योग्य-सम्पन्न, प्रकृत-वक्रशाही और नेत्रश्रेष्ठ वैश्वानरके उद्देशसे बहु-विध महान् स्तुति-वाक्यका प्रयोग किया है ।

५ वैश्वानर ! तुम उत्पन्न सब प्राणियोंको जानते हो । आकाशसे भी तुम्हारा माहात्म्य अधिक है । तुम मानव-प्रजाओंके राजा हो । तुमने देवोंके लिये युद्ध करके धनका उद्धार किया है ।

६ मनुष्य जिन वृत्र-इन्द्रा या मेत्रमेन्द्र-रारी वैश्वानर या विद्युदग्निकी, धर्षणके लिये, अर्चना करते हैं, उन्हीं जलवर्षा वैश्वानरका माहात्म्य में शीघ्र बोलना है । वैश्वानर अग्निने दस्यु या राक्षसको हनन किया है, धर्षणका जल नीचे गिराया है और शम्भरको मित्त किया है । \*

७ अपने माहात्म्य द्वारा वैश्वानर सब मनुष्योंके अधिपति और पुष्टिकर तथा अन्नवाली यज्ञमें यजनीय हैं । वैश्वानर प्रमा-समाह और सूत्र-वाहरता भी हैं । शतराजहतां या शतराजिके पुत्र पुहनीय राजा, अनेक स्तुतियोंके साथ, उन अग्निकी स्तुति करते हैं ।

\* इस मंत्रसे मारुत पड़ता है कि, वृत्र-वध, जल-वर्षण और शम्भर-विनाशमें अग्निसे इन्द्रको सहायता मिली थी ।

६० सूक्त । अग्नि देवता हैं ।

वह्निं यशसं विदथस्य केतुं सुप्राव्यं दूतं सद्योभर्थम् ।  
 द्विजन्मानं रयिमिव प्रशस्तं रार्तिं भरद्भृगवे मांतरिश्वा ॥ १ ॥  
 अस्य शास्त्रुभवासः सचन्ते हविष्मन्त उशिजो ये च मर्ताः ।  
 दिवश्चित् पूर्वो न्यसादि होतापृच्छ्यो विशपतिर्विक्षु वेधाः ॥२॥  
 तं नव्यसी हृद आ जायमानमसमत्सु कीर्तिर्मधुजिह्वमप्रयाः ।  
 यमृत्विजो वृजने मानुषासः प्रयस्वन्त आयवो जीजनन्त ॥ ३ ॥  
 उशिक् पावको वसुर्मानुषेषु वरेण्यो होताघायि विश्वु ।  
 दमूना गृहपतिर्दम आ अग्निर्भुवद्रथिपती रयीणाम् ॥ ४ ॥  
 तं त्वा वयं पतिमक्षे रयीणां प्र शंसामो मतिभिर्गोतमासः ।  
 आशुं न वाजममरं मर्जयन्तः प्रातर्मक्षु धियावसुर्जगम्यात् ॥ ५ ॥

६१ सूक्त । इन्द्र देवता हैं ।

अस्मा इदु प्र तवसे तुराय प्रयो न हर्मिं स्तोमं माहिनाय ।  
 ऋचीषमायाधिगव ओहमिन्द्राय ब्रह्माणि राततमा ॥ १ ॥

१ अग्नि हव्यवाहक, यज्ञास्यो, यज्ञप्रकाशक और सम्पत् रक्षण-शील हैं । वह देवोंके दूत हैं; सदा हव्य लेकर देवोंके पास जाते हैं । वह दो काष्ठोंसे, अरणि-नन्वनसे, उत्पन्न और धनकी तरह प्रकाशित है । मातरिश्वा इन्हीं अग्निको, मित्रकी तरह, ऋगु-वंशीयोंके पास ले जावे । \*

२ हव्यमाही देव और मानव—दोनों इन धारणकर्त्ताओं सेवा करते हैं; क्योंकि यह पूज्य, प्रजापातक और ऋगदाता अग्नि सूर्योदयसे भी पहले यजमानोंके बीच स्थापित हुए हैं ।

३ हृदय या प्राणसे उत्पन्न और मिष्टजिह्व अग्निके सामने हमारी नयी स्तुति व्याप्त हो । मनु-पुत्र मानव लोग यथा-समय यज्ञ-सम्पादन और यज्ञान्म-प्रदान करके इन अग्निको संग्राम-समयमें उत्पन्न करते हैं ।

४ अग्नि कामना-पात्र, विशुद्धिकारी, निवास-हेतु, वरण्य और देवाह्वानकारी हैं । यज्ञमें प्रविष्ट मनुष्योंके बीच अग्निको स्थापित किया गया है । अग्नि ऋतुद्वयमें कृतसंकल्प और हमारे घरोंमें पालनकर्त्ता हैं । यज्ञ-भवनमें धनाधिपति हैं ।

५ अग्नि ! हम गौतमगोत्रम हैं और तुम धनपति, रक्षणशील और यज्ञाज्ञके कर्त्ता हो । जैसे सवार हाथसे घोड़ेको साक करता है, वैसे ही हम जो तुम्हें मार्गित करके मनवीष स्तोत्र द्वारा प्रार्थना करेंगे । प्रजा द्वारा अग्निने धन प्राप्त किया है । इस प्रातःकालमें तुम्हें आनो ।

१ इन्द्र बली, क्षिप्तकारी, गुण द्वारा सदान्, स्तुति-पात्र और अशान्-गति हैं । जैसे वसुधितको जन्म दिया जाता है, वैसे ही मैं इन्द्रको ग्रहण-योग्य स्तुति और पूर्ववर्ती यजमान द्वारा दिया हुआ यज्ञाज्ञ प्रदान करता हूँ ।

\* Bothlink और Roth के विश्वविख्यात कोषमें मातरिश्वाके दो अर्थ लिखे हैं—ऋगुवंशीयोंके पूजक देव और अग्नि । एक कोषमें मातरिश्वाका अर्थ वायु नहीं लिखा है ।

अस्मा इदु प्रय इव प्र यंसि भराभ्याङ्गुणं वाधे सुवृक्ति ।  
 इन्द्राय हृदा मनसा मनीषा प्रजाय पत्ये धियो मर्जयन्त ॥ २ ॥  
 अस्मा इदु लमुपमं स्वपां भराभ्याङ्गुणमास्येन ।  
 संहिष्ठमच्छोक्तिभिर्मतीनां सुवृक्तिभिः सूरि वावृधथ्यै ॥ ३ ॥  
 अस्मा इदु स्तोमं संं दिनोमि रथं न तण्डेव तत्सनाय ।  
 गिरध्व गिर्वाहसे सुवृक्तोन्द्राय विश्वमिन्वं मेधिराय ॥ ४ ॥  
 अस्मा इदु ससिमिव श्रवस्येन्द्रायार्क जुह्वा समञ्जे ।  
 वीरं दानोकसं वन्द्यै पुरां गूर्तश्रवसं दमोणम् ॥ ५ ॥  
 अस्मा इदु त्वष्टा तक्षत्रं स्वपरतमं स्वयं रणाय ।  
 वृत्रस्य विद्विद्ये न मर्म तुजन्नीशानस्तुजता कियेधाः ॥ ६ ॥  
 अस्येदु मातुः सवनेषु सद्यो महः पितुं पपिवाद्धार्वन्ना ।  
 मुपायद्विष्णुः पत्नतं सदीयान्निध्यद्वराहं तिरो अद्रिमस्ता ॥ ७ ॥  
 अस्मा इदु ग्राश्चिद्वेषतीरिन्द्रायार्कमहिहत्य ऊधुः ।  
 परि धावापृथिवी जन्न उर्वी नास्य ते महिमानं परि ष्टः ॥ ८ ॥

२ इन्द्रको, अश्वको तरङ्ग, हव्य दान करता हूँ । प्रायुषात्रयके साधन-रूप स्तुति-वाक्योंका मैंने सम्पादन किया है । अन्य स्तोत्रो भी उस पुरातन स्वामी इन्द्रके लिये हृदय, मन और ज्ञानसे स्तुति-सम्पादन करते हैं ।

३ उर्ध्वो उपमानभूत, धरणीय-चन्द्राना और पित्र इन्द्रको पद्वन करनेके लिये मैं मुख द्वारा उत्कृष्ट और निर्मल स्तुति वचनोंसे युक्त तथा अति महान् शब्द करता हूँ ।

४ जिस प्रकार रथ-निर्माता रथ-स्वामीके पास रथ चञ्चल है, उसी प्रकार मैं भी इन्द्रके उद्वेगसे स्तोत्र प्रेरण करता हूँ । स्तुतिशास्त्र इन्द्रके लिये शोभन स्तुतिवचन प्रेरण करना हूँ । मेवावी इन्द्रके लिये विद्वेषव्यापी हृषि प्रेरण करता हूँ ।

५ जैसे घोड़ेको रथमें लगाया जाता है, वैसे ही मैं भी अन्न-प्राप्तिको इच्छासे स्तुति-रूप अन्न उच्चारण करता हूँ । उर्ध्वो वीर, दानोक्त, अन्नविदिष्ट और अश्वोंके नगरविदारो इन्द्रकी वन्दनामें प्रवृत्त होता हूँ ।

६ इन्द्रके लिये, त्वष्टाने, युद्धके निमित्त शोभन-रुपां और छप्रेरणीय वज्रका निर्माण किया था । अन्न-नाशके लिये तैयार होकर पेशभयवान् और अपरिमित शक्तताको इन्द्रने दहनकर्ता वज्रसे वृत्रका मर्म काटा था ।

७ जगत्के निर्मात्रकर्ता इन्द्रको इव महापशुमें जो तीन अभिव्यव दिये गये हैं, इन्द्रने उनमें सुरत शोभरूप जन्म प्राप्त किया है । साथ ही शोभनीय हव्यरूप अन्न जो यज्ञ किया है । सारे संसारमें इन्द्र व्यापक हैं । उर्ध्वोने अश्वोंका परिष्क भन हवन किया है । वद शत्रुविजयी और वज्रशेषक हैं । उर्ध्वोने मेवको पाकर उसे फोड़ा था ।

८ इन्द्र द्वारा अदि या वृत्रका विनाश होनेपर नमनशोच देवपत्नियोंने इन्द्रकी स्तुति की थी । इन्द्रने विस्तृत आकाश और पृथिवीको अतिक्रम किया था, किन्तु य लोक और पृथिवीलोक इन्द्रकी मर्षाहाका अतिक्रम नहीं कर सकते ।



अस्येदेव प्र रिरिचे महित्वं दिवस्पृथिव्याः पर्यन्तरिक्षात् ।  
 स्वराडिन्द्रो दम आ विश्वगूर्तः स्वरिरमत्रो ववक्षे रणाय ॥ ६ ॥  
 अस्येदेव शवसा शुषन्तं वि वृषचद्वज्रेण वृत्रमिन्द्रः ।  
 गा न भ्राणा अवती रमुञ्चदभि श्रवो दावने सचेताः ॥ १० ॥  
 अस्पेदु त्वेषसा रन्त निन्धवः परि यद्वज्रेण सीमयच्छत् ।  
 ईशानकृद्वाशुषे दशस्यन्तुर्वीतये गार्धं तुर्वणिः कः ॥ ११ ॥  
 अस्मा इदु प्र भरा तूतुजानो वृत्राय वज्रमीशानः कियेधाः ।  
 गोर्तं पर्वं वि रदा तिरश्चेत्प्रन्नर्णास्यपां चरुष्यै ॥ १२ ॥  
 अस्पेदु प्रहि ब्रू पूर्याणि तुरस्य कर्माणि नव्य उक्थैः ।  
 युधे यदिज्ञान आयुधान्यवृधायमाणो निरिणाति शत्रून् ॥ १३ ॥

९ वा लोक, मूलोक और अस्तरोक्षको अपेक्षा मो इन्द्रकी महिमा अधिक है । अपने अभिवासमें अपने तेजसे इन्द्र स्वराज करते हैं । इन्द्र सर्व-कार्य-क्षम हैं । इन्द्रका वात्र उपयोग है और इन्द्र युद्धमें निपुण हैं । इन्द्र मेवंप्रकार वात्र लोको युद्धमें बुलाते हैं ।

१० अपने वज्रसे इन्द्रने जल-भोषक वृत्रको छिन्न-मिन्न किया था । साध ही चोरोंके द्वारा अपहृत गायोंकी तरह वृत्रा-छर द्वारा अवहृत तथा संसारके रक्षक जलको छुड़वा दिया था । हव्यदाताको इन्द्र उसकी इच्छाके अनुसार वज्र दान करते हैं ।

११ इन्द्रकी दीक्षिके द्वारा समुद्र और गङ्गा आदि नदियाँ अपने-अपने स्थानपर शोभा पाती हैं; क्योंकि वज्र द्वारा इन्द्रने उनको सीमा निर्दिष्ट कर दी है । अपनेको पेशव्ययान् करके और हव्यदाताको फल प्रदान करके इन्द्रने तुरत तुर्वाति ऋषिके निवास-योग्य एक स्थान बनाया । \*

१२ इन्द्र क्षितिकारो, सर्वेश्वर और अपरिमितशक्तिका लो है । इन्द्र ! तुम इस वृत्रके ऊपर वज्र-प्रहार करो । गौ अर्थात् पशुकी तरह वृत्रके शरीरको संघियों त्रियेण भावसे अवस्थित वज्रपे काटो; ताकि वृष्टि बाहर हो सके और पृथिवीपर जल विचरण कर सके । x

\* एक बार तुर्वाति ऋषि जल-मग्न हो रहे थे; परन्तु इन्द्रने पड़ूँ च कर उन्हें जलसे निकाला और पृथिवीपर रखा ।

x यहाँ "गोः" शब्दको उपवाचक देखकर अनेक वेद-शांख्याताओंने यह अनुमान लगाया है कि, आर्य लोग गोधन और गोमांस-भक्षण करते थे । विरसन आदि सबने ऐसा ही अनुमान लगाया है । रमानाग सरस्वती तो सबसे आगे बढ गये हैं । वे लिखते हैं—“उन दिनों गोमांस अनल्प नहीं था । आश्वलायन गृह्यसूत्र ( १ अध्याय ), कृष्णयदुर्वेदके तैत्तिरीय ब्राह्मण ( जम्बवमेव-प्रकरण ) और शुक्लयजुर्वेदी धात्रवनेथो संहिता ( पुरुशमेव-प्रकरण ) में आर्योंके विविध-मांस-व्यवहारकी कथा है । पहले गोमेव, अश्वमेव, जम्बमेव आदि यज्ञ प्रचलित थे । ऽमृतिमें लिखा है कि, अतिथिके आनेपर 'महोक्षं वा महाजं वा' देना चाहिये । x x x 'उत्तरवरीन'के अनुय अङ्गमें हम देखते हैं कि, जनकने वत्सलकीका भक्षण किया था । इसीप्रिये अतिथिकों एक नाम गोधन भी हुआ है ।" सरस्वती महावापकी अन्य बातोंका विवेचन यथास्थान किया जायगा; परन्तु यहाँ तो सायणने 'गोः'का अर्थ साधारण पशु ही किया है, जो युक्ति-संगत दीखता है । पशुको काटनेवालेको भी सायणने "मांस-विकर्ता" वा कसाई किया है ।

अस्येदु भिया गिरयश्च हृत्वा धावा च भूमा जनुषस्तुजेते ।  
 उपो वेनस्य जोगुवान ओणिं सद्यो भुवद्दीर्याय नोधाः ॥ १४ ॥  
 अस्मा इदु त्यदनु दाप्येषामेको यद्वज्जे भूरेरीशानः ।  
 प्रैतशं सूर्ये पस्पृधानं सौवश्व्ये सुष्विमावदिन्द्रः ॥ १५ ॥  
 एवा ते हरियोजना सुवृकीन्द्र ब्रह्माणि गोतमासो अक्रन् ।  
 ऐषु विश्वपेशसं धियं धाः प्रातर्मक्षू धियावसुर्जगम्यात् ॥ १६ ॥



१३ जो मंत्रों द्वारा स्तुत्य हैं, उन्हीं युद्धार्थदिप्रणामी इन्द्रके पूव कर्मोंका वर्णन करो। इन्द्र युद्धके लिये बार-बार सारे दास फँककर और शत्रुओंका वध कर उनके सम्मुख जाते हैं।

१४ इन्हीं इन्द्रके डरके मारे पर्वत निश्चल हो रहते हैं और इन्द्रके प्रकट होनेपर आकाश और पृथिवी कांपने लगते हैं। बोधा ऋषिने इन्हीं कमनाय इन्द्रकी रक्षण-शक्तिकी, सूक्तों द्वारा, बार-बार प्रार्थना करके सुरत ही वीर्य वा शक्ति प्राप्त की थी।

१५ इन्द्र अकेले ही शत्रु-विजय कर सकते हैं। वह बहुविध धनोंके स्वामी हैं। स्तोताओंके पास इन्द्रने जिस स्तोत्रकी वाचना की थी, उसे ही इन्द्रको दो या उसे ही इन्द्रको दिया गया। स्वधवपुत्र सूर्यके साथ युद्धके समय सोमामिदधकारी पृथवा ऋषिको इन्द्रने वचाया था।

१६ अश्वयुक्त-रथेदधर इन्द्र! तुम्हें यज्ञमें उपस्थित करनेके लिये गोतम-गोत्रीय ऋषियोंने स्तुति-रूप मंत्रोंको कीर्तित किया था या स्मृत किया था। इन्द्र बहुविध बुद्धि प्रदान करो। जिन इन्द्रने बुद्धि द्वारा धन पाया है, वही इन्द्र प्रातःकाल कीर्तन आधे।

### चतुर्थ अध्याय समाप्त



## पञ्चम अध्याय



६२ सूक्त । इन्द्र देवता हैं ।

प्र मन्महे शवसानाय शूषमाङ्गुपं गिर्वणसे अङ्गिरस्वत् ।  
 सुवृक्तिभिः स्तुवत ऋग्मियायार्चामाकं नरे विश्रुताय ॥ १ ॥  
 प्र वो महे महि नमो भरध्वमाङ्गुष्यं शवसानाय साम ।  
 येना नः पूव पितरः पदज्ञा अर्चन्तो अङ्गिरसो गा अविन्दन् ॥ २ ॥  
 इन्द्रस्याङ्गिरसां चेष्ठीं विदत् सरमा तनयाय धासिम् ।  
 घृहस्पतिभिर्नदद्भिं विदद्गगाः समुस्त्रियाभिर्वाविशन्त नरः ॥ ३ ॥  
 स सुष्टुभा स स्तुभा सप्त विप्रैः स्वरेणाद्रिं स्वयौ तवगवैः ।  
 सरण्युभिः फलिगमिन्द्र शक्र बलं रवेण द्रयो दशगवैः ॥ ४ ॥  
 गृणानो अङ्गिरोभिर्दस्म वि वरुपसा सूर्येण गोभिरन्धः ॥  
 वि भूम्या अप्रथय इन्द्र सानु दिवो रज उपरमस्तभायः ॥ ५ ॥  
 तद्दु प्रयक्षतममस्य कर्म दस्मस्य चारुतममस्ति दंसः ।  
 उपह्वरे गदुपरा अपिन्वन्मध्वर्णसो नद्यश्चतस्रः ॥ ६ ॥

१ धीर्यशाली और स्तव-पात्र इन्द्रको लक्ष्य कर हम, अङ्गिराकी तरह, मन्में कल्याणवाहिनी स्तुति धारण करते हैं । इन्द्र शोभन स्तोत्र द्वारा स्तुति-कर्त्ता ऋषिके पूजा-पात्र हैं । उन प्रसिद्ध नेताकी, हम, स्तोत्र द्वारा, पूजा करते हैं ।

२ तुम लोग उस विशाल और बलवान् इन्द्रको उद्देश कर महान् और उँचे स्वरसे गाये जानेवाले स्तोत्र अर्पित करो । इन्द्रकी सहायतासे हमारे पूर्व-पुरुष अङ्गिरा लोगोंने, पद-चिन्ह देखते हुए, अर्चना-पूर्वक, पणि नामके कछर द्वारा अर्पित गौका उद्धार किया था ।

३ इन्द्र और अङ्गिराके गौ खोजते समय सरमा नामकी कुतियाने, अपने बच्चेके लिये, इन्द्रसे अन्न या दुग्ध प्राप्त किया था । उस समय इन्द्रने अन्नका घन कर गौका उद्धार किया था । देवोंने भी गायोंके साथ आह्लादकर बल्ल किया था ।

४ सर्वाक्तिसाम् इन्द्र ! जिन्होंने नौ सहीनोंमें यज्ञ समाप्त किया है और जिन्होंने दश सहीनोंमें यज्ञ समाप्त किया है—ऐसे सप्तसंख्यक और सद्गति-कामी ( अङ्गिरोऽन्वीय ) मेधाधियोंके सखकर-स्वर-युक्त स्तोत्रोंसे तुम स्तुत किये गये हो तुम्हारे शब्दसे पर्वत और वास्योत्पादक मेघ भी धर जाते हैं ।

५ सहाय इन्द्र ! अंगिरा लोगोंके द्वारा स्तुत होकर तुमने उपा और सूरकी किरणोंसे अन्धकारका विनाश किया है । इन्द्र ! तुमने पृथिवीका उल्लङ्घनावद् प्रदेश समतल और अन्तरीक्षका मूल प्रदेश दृढ़ किया है ।

६ पृथिवीकी मधुर-जल-पूर्ण गंगा आदि नदियोंको जो इन्द्रने कल-पूण दिया है, वह उस दृढ़कीय इन्द्रका कदन्त पृष्ठ और उद्धार कर्म है ।

द्विता वि धन्न सनात् सनीले अयास्यः स्तवमानेभिरर्कः ।  
 भगो न मेने परमे व्योमन्मधारयद्रोदसी सुदंसा ॥ ७ ॥  
 सनाद्दिवं परि भूमा विरूपे पुनर्भुवा युवती स्वेभिरवैः ।  
 कृष्णेभिरकोपाक्याद्विर्वर्षुभिरा चरतो अन्यान्या ॥ ८ ॥  
 सनेमि सख्यं स्वपत्यमानः सुनुर्हाधार शवसा सुदंसाः ।  
 आमासु त्रिद्विधे पकमन्तः पयः कृष्णासु कशद्रोद्विणीषु ॥ ९ ॥  
 सनात् सनीला अवनोरवाता वता रक्षन्ते अमृताः सहोभिः ।  
 पुरु, सहसा जनयो न पत्नीर्दुवस्यन्ति स्वसारो अहृयाणम् ॥ १० ॥  
 सनायुषो नमसा नव्यो अर्कैर्वसूयधो मतयो दस्म दद्मः ।  
 पतिं न पत्नी रक्षती रक्षन्तं स्पृशन्ति त्वा शवसाचन्मनीपाः ॥ ११ ॥  
 सनादेव तव रायो गभस्त्वौ न क्षीयन्ते नोप दस्यन्ति दस्म ।  
 धृमां असि हनुमां इन्द्र धीरः शिक्षा शचीवस्तव नः शचीभिः ॥ १२ ॥

\* जिस इन्द्रको मुख्य रूप प्रदत्तसे नहीं पाया जा सकता, पक्षिक स्तोत्रार्थोंकी स्तुति द्वारा पाया जा सकता है, उर्ध्वी इन्द्रने एकत्र संलग्न घों और पृथिवीको अलग-अलग करके स्थित किया है; उर्ध्वी आभन-कर्म इन्द्रने सुन्दर और उत्तम आकाशमें, सूर्यकी तरह, घों और पृथिवीको धारण किया है ।

८ विषम-रुदिनी, प्रतिदिन सङ्गादमाना और तरुणी रात्रि तथा रथा, चाचा-पृथिवीपर, सदासे आ-आकर विचरण करती हैं । रात्रि काली और रथा तेजोमयी है ।

९ आभन-कर्म-कृत्ता, अतीव बली और उत्तम वर्गसे सम्पन्न इन्द्र यह आर्णवोंकी, पहलेसे, मित्रता करते जाते हैं । इन्द्र, तुमने अपरिपक्व गायोंमें भी दूध दान किया है और कृष्ण तथा लोहित वर्णोंवाली गायोंमें भी शुद्धवर्णका दूध दान दिया है ।

१० त्रिभू गति-विहीन अंगुष्ठिपति, सदा सम्पन्न होकर स्थिति करनेपर भी, निराकसो बनकर, अपने बरूपपर, हजारों प्रतोंका पादम किया है या इन्द्रका व्रत अनुष्ठित किया है, वे ही सेवक-तत्परा अंगुली-रूपणी भगिनी लोग पत्नी या पालयित्री की तरह प्रगल्भ इन्द्रकी सेवा करती हैं ।

११ दर्शनीय इन्द्रदेव ! तुम मन्त्र और प्रणामसे स्तुत होते हो । जो बुद्धिमान् अग्निष्टोत्रादि सनातन कर्म और धर्मकी इच्छा करते हैं, वे बड़े यज्ञके बाद तुम्हें प्राप्त होते हैं । बली इन्द्र ! जैसे कामिनी स्त्रियाँ आकांक्षी पतिको प्राप्त करती हैं, वैसे ही बुद्धिमानोंकी स्तुतियाँ तुम्हें प्राप्त करती हैं ।

१२ सद्यय इन्द्र ! जो सम्पत्ति, सदासे, तुम्हारे पास है, यह कभी भी विनष्ट नहीं होती । इन्द्र ! तुम मेवापी, तेजः-आली और यज्ञ-सम्पन्न हो । कर्मी इन्द्र ! अपने कर्मों द्वारा हमें धन प्रदान करो ।

सनायते गोतम इन्द्र नव्यमतक्षद्व्रह्म हरियोजनाय ।

सुनीथाय नः शवसान नोधाः प्रातर्मक्षू धियावसुर्जगम्यात् ॥ १३ ॥



६३ सूक्त । इन्द्र देवता हैं ।

त्वं महौ इन्द्र यो ह शुभेर्धावा जज्ञानः पृथिवी अमे धाः ।

यद्द ते विश्वा गिरयश्चिदम्वा भिया दृह्लासः किरणा नैजन् ॥ १ ॥

आ यद्धरी इन्द्र विव्रतां वेरा ते वज्रं जरिता वाहोर्धात् ।

येना विहर्यतक्रतो अमित्रान् पुर इष्णासि पुरुहूत पूर्वोः ॥ २ ॥

त्वं सत्य इन्द्र धृष्णुरेतान्त्वष्टुमुक्षा नव्यस्त्वं पाट् ।

त्वं शुष्णं वृजने पृक्ष आणौ यूने कुत्साय धु मते सचाहन ॥ ३ ॥

त्वं ह त्यदिन्द्र चोदीः सखा वृत्रं यद्वज्रिन्वृपकर्मन्नुभनाः ।

यद्द शूर वृषमणः पराचैर्वि दस्यू र्योनावहृतो वृथापाट् ॥ ४ ॥

१३ इन्द्र ! तुम सबके आदि हो । हे सलोचन और बलवान् इन्द्र ! तुम रथमें घोड़े योजित करते हो । गोतम ऋषिके पुत्र गोवा ऋषिने हमारे लिये तुम्हारा यह अभिनय सूक्त-रूप स्तोत्र बनाया है । फलतः कर्म द्वारा जिन इन्द्रने धन पाया है, वह प्रातःकालमें शीघ्र आधे ।

१ इन्द्र ! तुम सर्वोत्तम गुणी हो । अय उपलपित होनेपर अपने रिपु-शोषक बल द्वारा तुमने धौ और पृथिवीको धारण किया था- संसारके सारे प्राणी आर पर्वत तथा दूसरे जो विशाल और सङ्घट्ट पदार्थ हैं, वे सब भी, आकाशमें सूर्म-किरणोंकी तरह, तुम्हारे डरसे काँप गये थे ।

२ इन्द्र ! जिस समय तुम विभिन्न-गतिवाली अश्वको रथमें संयुक्त करते हो, उस समय तुम्हारे हाथमें स्तोत्रा वज्र देता है; और, तुम उसी वज्रसे शत्रुओंका अन्धमोह कर्म करके उनका विनाश करते हो । बहुलोकहित इन्द्र ! तुम उसके द्वारा अश्वोंके अनेक नगर भी ध्वस्त करते हो ।

३ इन्द्र ! तुम सर्वोत्कृष्ट हो । तुम इन शत्रुओंके विनाशक हो । तुम ऋसुगणके स्वामी, मनुष्य-गणके उपकर्ता और शत्रुओंके हन्ता हो । संशयक और तुमुल युद्धमें तुमने प्रकाशक और तरुण कुत्सके सहायक धन कर शुष्ण नामक अश्वका वध किया था ।

४ हे वृष्टि-वर्णक और वज्रधर इन्द्र ! जिस समय तुमने शत्रु का वध किया था, हे धीर, अमीष्ट-वर्णन-कामी और शत्रु बधी इन्द्र ! उस समय तुमने लड़ाईके मैदानमें दस्युओंको पराङ्मुख करके उन्हें ध्वस्त किया था और कुत्सके सहायक होकर उनको प्रयत्नशा. बनाया था ।

त्वं हत्यदिन्द्रारिपण्यन्दूहलस्य चिन्मर्त्तानामजुष्टौ ।  
 न्य स्मदा काष्ठा अर्वाते ऽर्द्धनेव वज्रिन् शनधिष्टमित्रान् ॥ ५ ॥  
 त्वां ह त्यदिन्द्रार्णसातो स्वर्मीहं नर आज्ञा हवन्ते ।  
 तत्र स्वधाव इयमा समर्थ्य ऊतिर्वाजिष्वतसाप्या भूत् ॥ ६ ॥  
 त्वं हत्यदिन्द्र सप्त युद्धन् पुगो वज्रिन् पुष्कृत्साय ददृः ।  
 वर्हिर्ने अत् सुदासे वृथा वर्गहो राजन्वरिवः पूरवे कः ॥ ७ ॥  
 त्वं त्वां न इन्द्र देव चित्रामियमापो न पीपयः परिजम्न ।  
 यया शूर प्रत्यस्मभ्यं यंसि त्मनमूज्जं न विश्वश्च क्षरध्वै ॥ ८ ॥  
 अकारि त इन्द्र गोसमेभिर्ब्रह्माण्योक्ता नमसा हरिभ्याम् ।  
 सुपेशसं वाजमा भरा नः प्रानभ्रमक्षू धियावसुर्जगम्यात् ॥ ९ ॥

६४ सूक्त । मरुद्गण देवता हैं ।

वृष्णे शर्दाय सुमन्त्राय वेधते नोघः सुवृक्ति प्रभरा मरुद्भ्यः ।

अपो न धीरो मनसा सुहस्त्यो गिरः समञ्जे विदधेव्नाभुवः ॥ १ ॥

५ इन्द्र ! तुम किसी दृढ़ व्यक्तिकी शक्ति करनेकी इच्छा नहीं करते अर्थात् तुम किसी दृढ़ शत्रुका विनाश करना नहीं चाहते; तो भी मात्र भोंके द्वारा मनुष्योंका उपद्रव होनेपर तुम उनके अश्वके विचरणके लिये चारों ओर खोल देते हो अर्थात् केवल अपने भक्तोंके लिये चारों दिशाएँ मिरुपद्र त कर देते हो तथा हे वज्रधर ! कठिन वज्रसे शत्रुओंका विनाश करते हो ।

६ इन्द्र ! जिस युद्धमें योद्धा लोग लाभ और धन पाते हैं, उसमें सहायताके लिये मनुष्य तुम्हें बुलाते हैं । वही इन्द्र ! समर-क्षेत्रमें तुम्हारा गठ रक्षण-कार्य हमारी ओर प्रसारित हो । योद्धा लोग तुम्हारे रक्षा-पात्र हैं ।

७ वज्रिन् ! तुमने, पुष्कृत्स नामके ऋषिके सहायक होकर, उन सारों नगरोंका रक्षक किया था और सुदास नामके राजाके लिये अंहा नामके अहरका धन, वज्र-कुशाको तरुण, आसामांसे विच्छिन्न किया था । अनन्तर, इन्द्र ! उस इन्द्रदाता सुदासको वह धन दिया था ।

८ तुम हमारा विक्रम या संग्रहणीय धन, व्यास ऋषिधीपर, जलको तरुण, वर्द्धित करो । वीर, जैसे चारों ओर जलको तुमने क्षरित किया है, उसी तरह वस अन्न द्वारा हमें जीवन दिया है ।

९ इन्द्र ! तुम अद्वय-समन्त हो । तुम्हारे लिये गोतमघंतीयोंने सक्ति-पूर्वक सन्ध कहे थे । तुम हमें जाना प्रकारके

उन्न प्रदान करो ।

१ हे नोना ! वर्षक, दोमन-यज्ञ और पुण्ड्र, कन्न आदिके कर्त्ता मरुद्गणको लक्ष्यकर स्वप्न-स्तोत्र-प्रेरण करो । जिस वाक्गोत्रे, वृष्टि-धाराकी तरह अर्थात् मेघोंकी विविध धूर्तोंकी तरह, यज्ञ-स्थलमें देवोंको अग्निमुक्त किया जाता है; अर्द्धो-वाक्गोत्रोंको ओर ओर वृत्तावृत्ति होकर, मनोयोग-पूर्वक, प्रयुक्त करता हूँ ।

ते जज्ञिरे दिव ऋष्यास उक्षणो रुद्रस्य मर्या ब्रह्मुरा अरेपदः ।  
 पावकासः शुचयः सूर्या इव सत्वानो न द्रप्सित्तो घोरवर्षसः ॥ २ ॥  
 युवानो रुद्रा अजरा अमोघनो ववक्षुरग्निगावः पर्वता इव ।  
 बृह्वाचिद्विश्वा भुवनानि पार्थिवा प्र च्वाचयन्ति दिव्यानि मज्जना ॥ ३ ॥  
 चित्रै रञ्जिभिर्वपुषे व्यञ्जते वक्षःसु रुद्रमां अधि येतिरे शुभे ।  
 अंसेष्वेषान्नि मिमृक्षुर्दृष्टयः साकं जज्ञिरे स्वधया दिवो नरः ॥ ४ ॥  
 ईशानरुतो धुनयो रिशादसो वातान् विद्युत्स्तविपीभिरकृत ।  
 दुहन्त्यधुर्विव्यानि धूतयो भूमिं पिन्वन्ति पयसा परिज्रयः ॥ ५ ॥  
 पिन्वन्त्यपो मरुतः सुदानवः पयो घृत्वद्विदधेष्वाभुवः ।  
 अस्ते न मिहे वि नयन्ति वाजिनमुरत्सन् दुहन्ति स्तनयन्तमश्निनम् ॥ ६ ॥  
 महिष्वासो मायिनश्चित्रमानवो गिरयो न स्वतवसो रटुष्यदः ।  
 मृगा इव हस्तिनः खादथा वना यदारुणीषु तविशीरयुग्मम् ॥ ७ ॥  
 सिंहा इव नानदति प्रचेतसः पिशा इव सुपिशो विश्ववेदसः ।  
 क्षपो जिन्वन्तः पृपतीभिर्कृष्टिभिः समित् सवाधः शवसाहिमन्यवः ॥ ८ ॥

२ अन्तरिक्षसे मरुत् लोग उत्पन्न हुए हैं । वे इक्षितव्य, वीर्यशाली और रुद्रके पुत्र हैं । वे वायुजयी, निष्पाप, सबके शोधक सूर्यकी तरह दीप्त, रुद्रके गगकी तरह अथवा ब्रह्मदुरकी तरह यज्ञ-पराक्रम-शाली, वृष्टि-त्रिन्तु-युक्त और घोर रूप हैं ।

३ रुद्रके पुत्र मरुद्गण तर्हण और जरा-रहित हैं तथा जो देशोंको हव्य नहीं देते, उनके भाद्रक हैं । वे अप्रतिहत-गति और पर्वतकी तरह बृहदाङ्ग हैं । वे सन्तोषार्थको अमोघ देना चाहते हैं । पृथिवी और षुलोककी सारी घन्तुएँ हट हैं, तो भी खवको, मरुत् लोग, अपने बलसे, संघालित कर देते हैं ।

४ शोभाके लिये अनेक अलंकारोंसे मरुद्गण अपने शरीरको अलंकृत करते हैं । शोभाके लिये हृदयपर छन्द्यर द्वारा धारण करते हैं और अंगमें आयुध पहनते हैं । नेतृस्थानीय मरुद्गण अन्तरिक्षमें, अपने बलके साथ, प्रादुर्भूत हुए थे ।

५ यज्ञमानोंको सम्पत्तिशाली, मेवादिको कम्पित और हिंसकको विनष्ट करके अपने बल द्वारा मरुतोंने धायु और विद्युत्को बनाया । इसके अनन्तर, चारों दिशाओंमें जा कर पृथ्वीको कम्पित कर, षुलोकके मेवका दोहन किया तथा जलसे भूमिको सींचा ।

६ जैसे यज्ञभूमिमें ऋत्विक् लोग धीका सिञ्चन करते हैं, वैसे ही दान-परायण मरुत् लोग साररूप जलका सिञ्चन करते हैं । वे लोग जोड़ेकी तरह वेगवान् मेवको, बरसनेके लिये, विनष्ट करते और गर्जनकारी तथा अक्षय्य मेवका दोहन करते हैं ।

७ मरुद्गण ! तुमलोग महान्, बुद्धिशाली, छन्द्यर, तेजोविशिष्ट, पर्वतकी तरह बलौ और द्रुतगतिशील हो । तुमलोग करयुक्त गजकी तरह घनका मक्षण करते हो; क्योंकि तुम लोगोंने अरुण-घर्षण घड़वाको बल प्रदान किया है ।

८ बच्च-ज्ञानशाली मरुद्गण, सिंहकी तरह, निबाध करते हैं । सर्ग-ज्ञाता मरुद्गण हिरणकी तरह छन्द्यर हैं । मरुत् लोग कृत्रु-विनाशक; सन्तोषके प्रीति-कारी और क्रुद्ध होनेपर नाशकारी बलसे सम्पन्न हैं । ऐसे मरुद्गण अपने बाह्य मृग और हथियारके साथ अन्न द्वारा पीड़ित यज्ञमानकी रक्षा करनेके लिये साध ही जाते हैं ।

रोदसी आ वक्ता गणश्रियो नृपावः श्रूगः शवसा हिमन्यवः ।  
 आ यन्धुरेष्वमतिर्न दर्शता विद्यन्त तस्यौ मरुतो रथेषु चः ॥ ६ ॥  
 विष्णवेदसो रयिभिः समोऋसः सम्मिश्लासस्तविषोमिर्विरपशिनः ।  
 अस्तार ह्युं दधिरे गभस्त्योरनन्तशुष्मा वृषखादयो नरः ॥ १० ॥  
 द्विरययोभिः पविभिः पयोमृध उज्जिघ्नन्त आपथ्यो न पयोवार्द ।  
 मन्त्रा अयासः स्वस्तो ध्रुवच्युतो दुधकृतो मरुतो भ्राजद्विष्टयः ॥ ११ ॥  
 ध्रुवं पावकं वनिनं विचर्षेणिं रुद्रस्य सूनं हवसा गुणीमसि ।  
 रजस्तुरं तवसं माकतं गणमृजीपिणं धृषणं सध्वत श्रिये ॥ १२ ॥  
 प्र नृ स मर्तः शवसा जना अति तस्यौ व ऊती मरुतो यमावत ।  
 भवद्विवाजं भरते धना नृभिरापृच्छ्यं क्रतुमा क्षेति पुष्यति ॥ १३ ॥  
 चर्हर्त्य मरुतः पुरस्तु दुष्टरं शुमन्तं शुभ्रं मघवत्स धत्तन ।  
 धनस्पृहमुक्थ्यं विश्वन्नर्षणिं होषं पुष्येम सनवं शर्तं हिमाः ॥ १४ ॥  
 नूष्टिरं मरुतो वीरयन्तमृगीषाहं रयिमस्मासु धत्त ।  
 सहस्रिणं शतिनं शूशुवान्सं प्रातर्मक्ष धियाचक्षुर्जगम्यात् ॥ १५ ॥

~\*~\*~\*~

१ हे मरुत-वह, मनुष्य-हितैषी और पौरुषवाली मरुद्गण ! तुम लोग बल द्वारा विष्वक् को छोड़के युक्त हो कर आकाश और पृथिवी को शास्त्रायमान करो । मरुद्गण ! तुम लोगोंका तेज विमल-स्वरूप अथवा दर्शनीय विद्युत्की तरह रथके सारथि-बाधे स्थानपर अवन्मान करता है ।

१० मरुज, धनपति, बकशाकी, दान-जाबाक, अमित-पराक्रमी, सोममन्त्रक और नेता मरुद्गण भुजाओंमें हथियाररक्षते हैं ।

११ शृष्टि-पद-व-कर्ता मरुद्गण सोनेके रथ-युक्त द्वारा मार्गन्व तिनके और पेड़की तरह मेवोंको उनके स्थानसे ऊपर उठा लेते हैं । ये यज्ञ-प्रिय देवोंके यज्ञ-न्यस्तमें गमन करते हैं । स्वर्ग दान और आक्रमण करते हैं । अचल पदार्थका संचालन करते हैं । शूद्रोंके लिये अघन्यं सम्यत् और प्रकृषाशाको आयुष धारण करते हैं ।

१२ विष्णु-विष्वक्पक, सर्ष-वन्धु-क्रोधक, शृष्टिदाता, सर्षद्विष्टा और रुद्र-पुत्र मरुद्गणकी, हम स्तोत्र द्वारा, स्तुति करते हैं । धृष्टिप्रोक्त, अगिशाकी, अज्ञोष-युक्त और अमीत्यर्षी मरुत्तोंके पास, धनके लिये, जानो । \*

१३ मरुद्गण ! तुमलोग जिसे आश्रय देते हुए रहित करते हो, वह पुरत सबसे बली हो जाता और वह अथ द्वारा अथ और मनुष्य द्वारा धन प्राप्त करता है । वही शत्रिया यज्ञ करता और ऐश्वर्यवाको होता है ।

१४ मरुद्गण ! तुमलोग यज्ञमार्गोंको सब कार्योंमें विपुल, युद्धमें अजेय, बोलिमान्, दान-विभाषक, धनवान्, प्रशंसा-मात्रक और सर्वज्ञ पुत्र प्रदात करो । ऐसे पुत्र-पौत्रोंको हम सौ वर्ष पोषित करते अर्थात् सौ वर्ष जीवित रहना चाहते हैं ।

१५ मरुद्गण ! हमें न्यायी, पौरुषवाली और दान-जयी धन दो । इस प्रकार दान-सहस्र धनसे युक्त होनेपर हमारी रक्षाके लिये, जिन्होंने कर्म द्वारा धन पाया है, वे मरुद्गण आगमन करें ।

\* सोमसे एक बार रथ (बहाकर) अन्तर को अथदिष्ट रहता है, उसे अज्ञोष कहा जाता है ।



१२ अलुवाक । ६५ सूक्त । अग्नि देवता हैं । यहाँसे ७३ सूक्तों तकके शक्तिके पुत्र पराशर ऋषि हैं ।

द्विपदा विराद् छन्द है ।

पश्वानं तार्युं गुहा चतन्तं नमो युजानं नमो वहन्तम् ।

सजोषा धीराः पदैरनुगमन्नुप त्वा सीदन् विश्वे यजत्राः ॥ १ ॥

ऋतस्य देवा अनुव्रता गुर्भुवत् परिष्टिर्धौ न भूम ।

वर्धन्तीमापः पन्वा सुशिशिवमृतस्य योना गर्भं सुजातम् ॥ २ ॥

पुष्टिर्न ररवा क्षितिर्न पृथ्वी गिरिर्न मुञ्ज क्षोदो न शम्भु ।

अत्यो नाजमन्त्सर्गप्रतक्तः सिन्धुर्न क्षोदः क ईं वराते ॥ ३ ॥

जामिः सिन्धूनां भ्रातेव स्वस्वामिभ्यान् राजा वनान्यत्ति ।

यद्वातजूतो वना व्यस्थाद्भिर्ह दाति रोमा पृथिव्याः ॥ ४ ॥

श्वस्तित्यप्सु हंसो न सीदन् ऋत्वा चेतिष्ठो विशामुषर्भुत् ।

सोमो न वेधा ऋषप्रजातः पशुर्न शिश्वा विशुर्दूरीभाः ॥ ५ ॥



१ अग्नि ! पशु सुरानेवाले चोरकी तरह तुम भी गुहामें अवस्थान करो । मेधावी और सद्भाव-प्रीति-सम्पन्न देवोंने तुम्हारे पद-चिह्नको कल्प कर अनुगमन किया था । तुम स्वयं हव्य सेवन करो और देवोंके लिये हव्य घहन करो । यजनोप सारे देवगणः तुम्हारे पास आये थे ।

२ देवोंने भागे हुए अग्निके पलायन कार्य आदिका अन्वेषण किया था । अनन्तर चारों ओर अन्वेषण किया गया । तुम इन्द्र आदि सप्त देवोंके आनेपर स्वर्गकी तरह हुए थे अर्थात् अग्निडा अनुसन्धान करने एवं देवता भूलोक आये थे । अग्नि यज्ञके कारण-स्वरूप, जलगर्भमें प्रादुर्भूत और स्तोत्र द्वारा प्रवर्द्धित हैं । अग्निको छिपानेके लिये जल बढ़ गया था ।

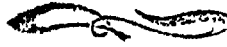
३ अमोष्ट फलको पुष्टिकी तरह अग्नि रमणीय, पृथिवीकी तरह विस्तीर्ण, पर्वतकी तरह सबके भोजयिता और जलकी तरह छलपर हैं । अग्नि, युद्धमें परिवालित अश्व और सिन्धुकी तरह, शीघ्रगामी हैं । ऐसे अग्निका कौन निवारण कर सकता है ?

४ विसं प्रकार अग्निनीका हितैषी भ्राता है, उसी प्रकार सिन्धुके हितैषी अग्नि हैं । जैसे राजा शत्रु का विनाश करता है, वैसे ही अग्नि घनका भक्षण करते हैं । जिस समय, धायुप्रति अग्नि घन जलानेमें लगते हैं, उस समय पृथिवीके सब ओषधि-रूप रोम छिन्न कर धाकते हैं ।

५ जलके भीतर बैठे हंसकी तरह अग्नि जलके भीतर प्राण धारण करते हैं । तथा-कालमें जागकर प्रकाश द्वारा अग्नि सबको चेतना प्रदान करते हैं । सोमकी तरह सारी ओषधियोंको वर्द्धित करते हैं । अग्नि, गर्मस्व पशुकी तरह, जलके बीच लक्षित हुए थे । अनन्तर, प्रवर्द्धित होनेपर, अग्निका प्रकाश दूरतक विस्तृत हुआ ।

६६ सूक्त । अग्नि देवता हैं ।

रयिर्न चित्रा सूर्यो न सन्ध्यायुर्न प्राणो नित्यो न सनुः ।  
 तक्ता न भूर्णिवना सिपक्तिः पयो न धेनुः शुचिर्विभावा ॥ १ ॥  
 दाधार श्वेममोको न ररवो यवो न पक्वो जेता जंगानाम् ।  
 ऋयिर्न स्तुभ्या विश्वु प्रशस्तो वाजी न प्रीता चवो दधाति ॥ २ ॥  
 दुरोकशोचिः क्रतुर्न नित्यो जायेव योनाचरं विश्वस्मै ।  
 चित्रो यद्भ्राट् श्वेतो न विश्वु रथो न रुक्मी त्वेपः समत्सु ॥ ३ ॥  
 मेनेत्र सृष्टामं दधात्यस्तुर्न विद्युत्चेपप्रतीका ।  
 यमो ह जानो यमो जनित्वं जारः कनीनां पतिर्जनीनाम् ॥ ४ ॥  
 तं वध्वराथा धर्यं वसत्यास्तं न गावो नक्षन्त इद्धम् ।  
 सिन्धुर्न श्लोदः प्र नीचीरैर्नोन्नवन्त गावः स्वर्ह्णं शीके ॥ ५ ॥



१ अग्नि, धनकी तरह विलक्षण, सूर्यकी तरह सब पदार्थोंके दर्शक, प्राणवायुकी तरह जीवन-रक्षक और पुत्रकी तरह दितकारी हैं । अग्नि अदककी तरह लोकको घट्टन करते और दुरधदायो गौकी तरह उपकारी हैं । दौस और आलोक-युक्त अग्नि पद्म रूप करते हैं ।

२ अग्नि, रमणीय बरकी ताड़, धन-वृक्षोंमें समग्र और पके लौकी तरह लोक-विजयी हैं । अग्नि, कृषिकी तरह, देवोंके स्तोत्रा और संसारमें प्रदासनीय तथा अदककी तरह दर्श-युक्त हैं । ऐसे अग्नि हृद्ये अन्न प्रदान करें ।

३ सृष्टि-प्रदाता अग्नि यज्ञकारीकी तरह भ्रम और गृहस्थित गृहिणी ( जाया ) की तरह वरके भूषण हैं । जिस समय अग्नि विविध-शक्ति-युक्त होकर प्रज्वलित होते हैं, उस समय यह शुभ्रवर्ण सूर्यकी तरह हो जाते हैं । अग्नि, प्रजाके बीचमें रथकी तरह शक्ति-युक्त और संसारमें प्रमा-युक्त हैं ।

४ द्यामोके द्वारा सञ्चालित सेना अथवा धनुर्धारोंके दोसि-मुख घाणकी तरह अग्नि प्राणुओंमें अय संचार करते हैं । जो उत्पन्न हुआ है और जो उत्पन्न होगा, यह सब अग्नि है । अग्निदेव कुमारियोंके जार हैं; क्योंकि 'लाजा-होम'के अनन्तर ही कन्या विवाहिता समझी जाती है । अग्नि विवाहिता स्त्रियोंके पति हैं; क्योंकि विवाहिता भारी अग्निकी सेवा करनेमें पुरुषको सहाय्य देता है ।

५ जिस प्रकार गायें घरमें जाती हैं, उसी प्रकार हम जंगम और स्थावर अर्थात् पशु और आभ्य आदि उपहारके साथ प्रशन्न अग्निके पास जाते हैं । अन्न-प्रपादकी तरह अग्नि धर-उधर जवाका प्रेरित करते हैं । आकाशमें दर्शनीय अग्निकी किरण मिश्रित होती हैं ।

६७ सूक्त । अग्नि देवता हैं ।

वनेषु जायुर्मतषु मित्रो वृणीते श्रुष्टिं राजेवाजुयम् ।  
 क्षेमो न साधुः क्रतुर्न भद्रो भुवत् स्वाधीर्होता हव्यषाट् ॥ १ ॥  
 हस्ते दधानो नृमणा विश्वान्यमे देवान्घाद्गुहा निषीदन् ।  
 विदन्तीमन्न नरो धियन्धा हृदा यत्तष्टान्मन्त्रां अशंसन् ॥ २ ॥  
 अजो न क्षां दाधार पृथिवीं तस्तम्भ द्यां मन्त्रेभिः सत्यैः ।  
 प्रिया पदानि पश्वो नि पाहि विश्वायुरग्ने गुहा गुहं गाः ॥ ३ ॥  
 य ईं चिकेत गुहा भवन्तमा यः ससाद् धारामृतस्य ।  
 वि ये चृतन्त्यृता सपन्त आदिद्वसूनि प्र ववाचास्मै ॥ ४ ॥  
 वि यो वीरुस्तु रोधन्महित्वोत् प्रजा उत प्रसूष्वन्तः ।  
 चित्तिरपां दमे विश्वायुः सन्नेव धीराः संमाय चक्रुः ॥ ५ ॥

६८ सूक्त । अग्नि देवता हैं ।

श्रीणन्नुप स्थाद्विचं भुरग्युः स्थातुश्चरथमक्तून्यूपोत् ।  
 परि यरेषामेको विश्वेषां भुवद्देवो देवानां महित्वा ॥ १ ॥

१ जैसे राजा सर्व-कर्म-क्षम व्यक्तिका जा दर करते हैं, वैसे ही अरण्य-जात और मनुष्योंके मित्र अग्नि यज्ञमानपर अनुग्रह करते हैं । अग्नि पाकककी तरह कर्म-साधक, कर्म-बीसकी तरह भद्र, देवोंको हुकारे-वाले और हव्य-वाहक हैं । अग्नि शोभन-कर्मा धनो ।

२ अग्नि सारे हव्यरूप धन, अपने हाथमें धारण करके, गुहाके बीच छिप गये । ऐसा होनेपर देवता लोग डर गये । नेता और कर्म-धारयिता देवोंने जिस समय हृदय-धृत मंत्र द्वारा अग्निकी स्तुति की, उस समय उन्होंने अग्निको प्राप्त किया ।

३ सूर्यकी तरह अग्नि पृथिवी और अन्तरिक्षको धारण किये हुए हैं । साथ ही सत्य मंत्र द्वारा आकाशको धारण करते हैं । विश्वायु या सर्वान्न अग्नि ! पशुओंकी प्रिय भूमिकी रक्षा करो और पशुओंके चरनेकी अयोग्य गुहामें जाओ ।

४ जो पुरुष गुहा-स्थित अग्निको जानता है और जो यज्ञका धारयिता अग्निके पास जाता है तथा जो लोग यज्ञका अनुष्ठान करते हुए अग्निको स्तुति करते हैं, ऐसे लोगोंको अग्निदेव तुरत धनकी बात बता देते हैं ।

५ जिन अग्निने ओषधियोंमें उन्नके गुण स्थापित किये हैं और मातृ-रूप ओषधियोंमें उत्पद्यमान पुष्प, फल आदि निहित किये हैं, मेधावी पुरुष जलमध्यस्थ और ज्ञान-दाता उन्हीं विश्वायु अग्निको, गुहकी तरह, पूजा करके कर्म करते हैं ।

१ हव्य-धारक अग्नि हव्य द्रव्यको मिलाकर आकाशमें उपस्थित करते हैं तथा स्यावर-संभ्रम वस्तुओं और रात्रिको अपने तेज द्वारा प्रकाशित करते हैं । सारे देवोंमें अग्नि प्रकाशमान और स्यावर, जंगम आदिमें व्याप्त हैं ।

आदितो विश्वे ऋतुं जुषन्त शुष्काद्यद् व जीवो जनिष्ठाः ।  
 भञ्जन् विश्वे देवत्वन्नाम ऋतं सपन्तो अमृतमेवैः ॥ २ ॥  
 ऋतस्य प्रे पा ऋतस्य धीतिर्विष्वायुर्विश्वे अपांसि चक्रुः ।  
 यस्तुभ्यं दाशाद्यो वा ते शिक्षान्तस्मै त्रिकित्वान्नायं द्यस्व ॥ ३ ॥  
 होता निपत्तो मनोरपत्ये स चिन्वासां पती श्यीणाम् ।  
 इच्छन्त रेतो मिथस्तनूपु सं जानत स्वैर्दक्षरमूराः ॥ ४ ॥  
 पितुर्न पुत्राः ऋतुं जुषन्त श्रोपन्ये अस्य शासं तुरासः ।  
 वि राग और्णोद्दि रः पुरुक्षुः पिपेश नाकं स्तृभिदंमूनाः ॥ ५ ॥

६९ सूक्त । अग्नि देवता हैं ।

शक्रः शुशुक्षां वयो न जारः पत्रा समीची दिवो न ज्योतिः ।  
 परि प्रजातः कृत्वा चभृथ भुञ्जे देवानां पिता पुत्रः सन् ॥ १ ॥  
 वेधा अदृप्तो अग्निर्विजानन्नुधर्म गोनां त्वाद्या पितृनाम् ।  
 जने न श्रेय आहृत्यः सन्मध्ये निपत्तो रगवो दुरोणे ॥ २ ॥

२ अग्निदेव ! तुम्हारे सुखे काष्ठे जलकर प्रकट होनेपर सारे यजमान तुम्हारे कर्मका अनुष्ठान करते हैं । तुम अमर हो ।  
 स्तोत्र द्वारा तुम्हारी सेवा करके वे स्व प्रकृत देवत्व प्राप्त करते हैं ।

३ अग्निः यज्ञघर्षे आनेपर उनकी स्तुति और यज्ञ दिये जाते हैं । अग्नि विनवायु हैं । स्व यजमान अग्नि का यज्ञ करते हैं । अग्निदेव ! जो तुम्हें हव्य देता है अथवा जो तुम्हारा कर्म करनेको सोचता है, तुम उसके किये अनुष्ठानको जाक कर उसे धन दो ।

४ हे अग्नि ! तुम मनुष्य पुत्रोंमें देवोंके आह्वानकारी रूपसे अवस्थान करते हो । तुम्होंने उनके धनके अधिपति हो । उन्होंने पुत्र उत्पान करनेके लिये अपने घरोंमें धार्मिकी इच्छा की थी अर्थात् तुम्हारे अनुग्रहसे उन्होंने पुत्र-प्राप्ति की थी । वे मोहका त्याग करके पुत्रोंके माग्य श्रुतानुष्ठान जीवित रहें ।

५ जिस प्रकार पुत्र पिताकी आज्ञाका पालन करता है, उसी प्रकार यजमान लोग तुम्हारे अग्नि की आज्ञा सुनते और अग्नि द्वारा आदिष्ट काय करते हैं । अनन्त-धनशास्त्री अग्नि यजमानोंके यज्ञके द्वार-रूप धनको प्रदान करते हैं । यज्ञ-रत गृहमें अग्नि आसक्त है; और, उन्होंने ही आकाशको नक्षत्र-युक्त किया था ।

१ शुश्रूषणं अग्नि श्या-प्रेमी सूर्यको तरह सर्वा-पदाय-प्रकाशक हैं । अग्नि, प्रकाशक सूर्यकी ज्योतिकी तरह, अपने तेजसे सौ और पृथिवीको एक साथ परिपूर्ण करते हैं । हे अग्निदेव ! तुम प्रकट होकर अपने कर्म द्वारा सारे जगत्को परिव्याप्त करो । तुम देवोंके पुत्र होकर भी उनके पिता हो; क्योंकि पुत्रोंकी तरह देवोंके दूत हो और पिताकी तरह देवोंको हव्य देते हो ।

२ मेषाद्यो, निरहंकार और समीकम-ज्ञाता अग्नि, गौंके स्तनकी तरह, सारा अन्न स्वादिष्ट करते हैं । संसारमें दितैवी पुरुषकी तरह अग्नि यज्ञमें आहृत होकर और यज्ञस्वल्पमें आकर प्रीति-प्रदान करते हैं ।

पुत्रो न जातो रण्वो दुरोणे वाजी न प्रीतो विशो वि तारीत् ।  
 विशो यदहो नृभिः सनीला अग्निदेवत्वा विश्वान्यश्याः ॥ ३ ॥  
 नकिञ्च एता व्रतामिनन्ति नृभ्यो यदेभ्यः श्रुष्टिं चकथ्य ।  
 तत्तु ते दंसो यदहन्त्समानैर्नृभियद्युक्तो विवेरपांसि ॥ ४ ॥  
 उपो न जारो विभावोस्रः संज्ञातरूपश्चिकेतदस्मै ।  
 रमना वहन्ता दुरो व्यृण्वन्नवन्त विश्वे स्वर्द्धशीकि ॥ ५ ॥

७० सूक्त । अग्नि देवता हैं ।

घनेम पूर्वीरथो मनीषा अग्निः सुशोको विश्वान्यश्याः ।  
 आ देव्यानि व्रता चिकित्वाणा मानुषस्य जनस्य जन्म ॥ १ ॥  
 गर्भो यो अपां गर्भो वनानां गर्भश्च स्थातां गर्भश्चरथाम् ।  
 अद्रौ चिदस्मा अन्तदुरोणे विशां न विश्वो अमृतः स्वाधीः । २ ॥  
 स हि क्षपावाँ अग्नी रयीणां दाशद्यो अस्मा अरं सूक्तैः ।  
 एता चिकित्वा भूमा नि पाहि देवानां जन्म मर्तांश्च विद्वान् ॥ ३ ॥

३ घरमें पुत्रको तरह अल्पन्न होकर अग्नि जानन्द प्रदान करते हैं तथा अश्वको तरह हर्षान्वित होकर युद्धमें शत्रुओंको अतिक्रम करते हैं । जब मैं मनुष्योंके साथमें समान-निवासी देवोंको बुलाता हूँ, तब तुम अग्नि ! सब देवोंका देवत्व प्राप्त करते हो ।

४ राक्षसादि तुम्हारे व्रत आदिको ध्वंस नहीं करते; क्योंकि तुम उन व्रतादिमें वत्तमान यज्ञमानोंको यज्ञ-फलरूप वस्त्र प्रदान करते हो । यदि राक्षसादि तुम्हारे व्रतका नाश करें, तो अपने साथी नेता मरुतोंके साथ तुम उन बाधकगणको मंगा देते हो ।

५ उषा-प्रसो सूर्यकी तरह अग्नि ज्योतिः-सम्पन्न और निवास-हेतु हैं । अग्निका रूप संसार जानता है । अग्नि उपासकको जाने । अग्निको किरण स्वयं हृष्य वहन करके यज्ञ-गृहके द्वारपर पहुँचती; तदनन्तर दर्शनीय आकाशमें जाती है ।

१ जो शोभन दीप्तिसे युक्त अग्नि ज्ञानके द्वारा प्रापणीय हैं, जो सारे देवोंके कर्म और मनुष्योंके जन्मरूप कर्मके विषय समझ कर सारे कार्योंमें व्याप्त हैं, वैसे अग्निसे हम प्रभूत अन्न माँगते हैं ।

२ जो अग्नि, जल, धन, स्थावर और जंगमके बीच व्यवस्थान करते हैं, उन्हें यज्ञ-गृह और पवतके ऊपर श्लोक इषि प्रदान करते हैं । जैसे प्रजापतिसल राजा प्रजाके हितका काय करते हैं, वैसे ही अमर अग्नि हमारे हितकर कारका सम्पादन करें ।

३ मंत्र द्वारा जो यज्ञमान अग्निकी यथेष्ट स्तुति काता है, उसे रात्रिमें प्रदीप्त अग्नि धन देते हैं । हे सर्वज्ञाता अग्नि ! तुम देवों और मनुष्योंके जन्म जानते हो; इसलिये संमत्त जोषोंका पालन करो ।

वर्धान्यं पूर्वीः क्षपो विरूपाः स्यातुश्च रथमृतप्रवीतम् ।  
 अराधि होता स्वर्निपतः कृण्वन्विश्वान्यपांसि सत्या ॥ ४ ॥  
 गोषु प्रशस्तिं धनेषु धिये भरन्त विश्वे बलिं स्वर्गाः ।  
 वि त्वानरः पुरुत्रा सपर्यान् पितुर्न जित्रे वि वेदो भरन्त ॥ ५ ॥  
 साधुर्न गृह्णुरस्तेषु शूरो यातेव भीमस्त्वेषः समत्सु ॥ ६ ॥



•१ सूक्त । अग्नि देवता हैं ।

उप प्र जिन्नन्नुशतीरुशन्तं पतिं न नित्यं जनयः समीलाः ।  
 स्वसारः श्यावीमरूपोमजुष्पश्चिन्नमुच्छन्तीमुपसं न गावः ॥ १ ॥  
 घीलुचिद्रुहा पितरो न उक्थैर्द्रि रजन्न्गिरसो रवेण ।  
 चक्रुर्दियो बृहती गातुमस्मै अहः स्वर्विबिद्भुः केतुमुक्त्वाः ॥ २ ॥  
 इधन्नन्तं धनयन्नस्य धीतिमादिदर्यो दिधिष्वो विभृवाः ।  
 अतृप्यन्तीरपसो यन्त्यच्छा देवाञ्जन्म प्रयसा वर्धयन्तीः ॥ ३ ॥

४ विभिन्न-रूपरूप होकर सो तथा और रात्रि अग्निको घट्टन करती हैं । स्यावर और जंगम पदार्थ यज्ञ-वेदित अग्निको बद्धन करते हैं । देवोंके आधानकारी घनो अग्नि देव-पूजन-स्थानमें बैठकर और सारे यज्ञ कर्मोंको सत्य-फल-सम्पन्न करके पूजित होते हैं ।

५ अग्नि ! हमारे काममें आने योग्य गौओंको उत्कृष्ट करो । सारा संसार हमारे लिये प्रदण योग्य उपासना-रूप धन के भाग्ये । अनेक देव-स्थानोंमें मनुष्यश्रेण तुम्हारी विविध प्रकारकी पूजा करते गया बृहदे पित्तके समीपसे पुत्रको तरह तुम्हारे पाममें धन प्राप्त करते हैं ।

६ साधकको तरह अग्नि धन अविह्वन करते हैं । अग्नि अनुद्वंरकी तरह शूर, शत्रुको तरह मयंकर और युद्ध-क्षेत्रमें प्रवर्धित हैं ।

१ जैसे स्त्री स्वामिको प्रपन्न करती है, वैसे ही एक-स्थानवर्तिनी और आकांक्षिणी भगिनी-रूपिणी अंगुलियाँ अग्नि-स्त्रियों अग्निको इच्छा प्रदान द्वारा प्रसन्न करती हैं । पदके तथा कृष्णवर्णा और पीछे शुभ्रवर्णा होती हैं; इन तथाकी जैसे किरणों सेवा करती हैं, वैसे ही सारी अंगुलियाँ अग्निको सेवा करती हैं ।

२ हमारे अद्विष्ट नामके पितरोंने मंत्र द्वारा अग्निको स्तुति करके पत्नी और दृढ़ाङ्ग पणि अस्त्रको स्तुति-शब्द द्वारा ही बल्ट किया था तथा हमारे लिये मदान् पशुकोकडा मार्ग दिया था । अन्नन्तर् उन्डोंमें छत्रकर दिवद, आवित्य और पणि द्वारा अपह्वन गौओंको पाया था ।

३ अद्विष्टोपदेशोंमें यज्ञ-रूप अग्निको, धनको तरह, धारण किया था । अनन्तर जिन यज्ञमानोंके पास धन है और जो अन्व-पिष्यपामिडापी स्वाम करके अग्निको धारण करते एवं अग्निको सेवामें रत रहते हैं, वे इच्छके द्वारा देवों और मनुष्योंको जोशुद्धि करके अग्निके सामने जाते हैं ।

मथीचर्दीं विभृतो मातरिश्वा गृहे गृहे श्येतो जेन्यो भूत् ।  
 आर्दीं राहो न सहायसे सत्वा सन्ना दूत्यं भृगवाणो विवाय ॥ ४ ॥  
 महे यत्पित्र ईं रसं दिवे करवत्सरत् पृथान्यश्चिकित्वान् ।  
 सृजदस्ता ध्रुवता दिद्युमस्मं स्वायां देवो दुहितरि त्विपि धात् ॥ ५ ॥  
 स्व आ यस्तुभ्यं दम आ विभाति नमो वा दाशादुशतो अनु धून् ।  
 वर्धो अग्ने वयो अस्य द्विवर्हा यांसद्राया सरथं यं जुनासि ॥ ६ ॥  
 अग्निं विश्वा अभि पृक्षः सचन्ते समुद्रं न स्रवतः सप्त यद्भीः ।  
 न जामिमिर्वि विकिते वयो नो विदा देवेषु प्रमतिं चिकित्वान् ॥ ७ ॥  
 आ यद्विषे नृपतिं तेज एानत् शुचि रेतो निपिक्तं घौरभीके ।  
 अग्निः शर्धमनवद्यं युवानं स्वाध्यं जनयत् सूदयथ ॥ ८ ॥  
 मनो न योऽध्वनः सद्य एत्येकः सत्रा सूरौ वस्व ईशे ।  
 राजाना मित्रावरुणा सुपाणी गोषु प्रियममृतं रक्षमाणा ॥ ९ ॥

४ मातरिश्वा या ध्यान-वायुके चिकित्ति करनेपर शुभ्रवर्ण होकर अग्नि समस्त धन-गृहमें प्रकट होते हैं। उस समय जिस तरह मित्र राजा प्रबल राजाके पास अपने आत्मोको दूत-कर्ममें नियुक्त करता है, उसी तरह भृगु ऋषिकी तरह यज्ञ-सम्पादक यज्ञमान अग्निको दूत-कर्ममें नियोजित करता है।

५ जिस समय यज्ञमान महान् और पाकक देवताकी दृश्य-रूप रस देता है, उस समय, अग्निदेव ! स्वर्ग-कुशल राक्षस आदि तुम्हें इविर्वाहक जानकर भाग जाते हैं। वाणप्रक्षेपक अग्नि भावने हुए राक्षसोंके पात अपने रिपु-संहारी ऋतुप्से दोसिमाकी घण फेंकते हैं तथा प्रकाशशाली अग्नि अपनी पुत्रो स्वामें अपना तेज स्थापित करते हैं।

६ अग्नि ! अपने यज्ञ-गृहमें, मर्यादाके साथ, जो यज्ञमान तुम्हें चारो तरफ प्रव्यखित करता है, और, अनुदिन जमिहाव करके तुम्हें अन्न प्रदान करता है, हे द्विवर्हा या दो सद्यम-उत्तम स्थानोंमें वर्द्धित अग्नि ! तुम उनका अन्न वर्द्धित करते हो। जो युद्धार्थी पुरुषको, रथके साथ, युद्धमें प्रेरण करता है, वह धन प्राप्त करे।

७ जिस प्रकार विशाल साव नदियों समुद्रामिदुल्ल धावित होती हैं, उसी प्रकार दृव्यज्ञ अन्न अग्निको प्राप्त होता है। हमारी ज्ञातिवाने हमारे अन्नका भाग नहीं पाते जहाँत हमारे पास प्रचुर धन नहीं है; इसलिये हे अग्नि ! तुम प्रकृष्ट अन्न जानकर देवोंको सूचित करो।\*

८ ऋषिका विद्युद् और दोसिमान् तेज अन्न-प्राप्तिके लिये मनुष्य-पाकक या यज्ञमानको व्यास हो। उसी तेज द्वारा अग्नि गर्भ-निषिक्त धीसेयं चक्रवान्, प्रगास्थ, युधक और शोभनकर्मा पुत्र उत्पन्न करे तथा यज्ञ आदि कर्ममें प्रेरण करे।

९ मन्की तरह क्षीप्रगामी जो सूर्य स्वर्गीय पथमें अकेले जाते हैं, वह तुरत ही विविध धन प्राप्त करते हैं ! शोभमान और स्रग्भट्ट मित्र और वरुण हमारी शौर्भिके प्रोत्तिकर और अमृत-तुल्य दूधकी रक्षा करते हुए अवस्थान करे।

\* ऋग्वेदके कई स्थानोंपर सात नदियोंका उल्लेख है; परन्तु उनका नामकरण नहीं है ! हाँ, ऋग्वेद [ १०।७५।९ ] में इन दस नदियोंका नाम आता है—१ गङ्गा, २ यमुना, ३ सरस्वती, ४ सतुद्रो, ५ परुष्णी, ६ महद्वृवा, ७ असिका, ८ वितस्ता, ९ आत्रोकीया, १० स्रग्भो। याचकके मन्त्रे पदव्या = इरावता, आर्त्तकीया = विपासा और स्रग्भो = सिन्धु नदी है।

मा नो अग्ने सख्या षड्याणि प्र मर्षिष्ठा अभि चिदुष्कविः सन् ।  
नभो न रूपं जरिमा मिनाति पुरा तस्या अभिशस्तेरधीहि ॥ १० ॥

७२ सूक्त । अग्नि देवता हैं ।

नि काव्या वेधसः शश्वतस्कहस्ते दधानो नर्या पुरुणि ।  
अग्निभुंघद्वयिपती रयोणां सत्रा चक्राणो अमृतानि विश्वा ॥ १ ॥  
अस्मे घत्सं परिपन्तं न विन्दन्निच्छन्तो विश्वे अमृता अमूराः ।  
अमयुवः पद्व्यो धियन्धास्तस्युः पदे परमे चार्वातेः ॥ २ ॥  
तिस्रो यदग्ने शरदस्त्वामिच्छुञ्चं घृतेन शुचयः सपर्यान् ।  
नामानि चिदधिरे यक्षियान्यसूदयन्त तन्वः सुजाताः ॥ ३ ॥  
आ रांदसा बृहती वैधिद्वानाः प्र रुद्रिया जग्निरे यज्ञियासः ।  
चिदन्मर्तां नेगधिता चिकित्वानग्निं पदे परमे तस्थिवांसम् ॥ ४ ॥

१० हे अग्नि ! हमारी पैशुक मिश्रता नष्ट नहीं करना; क्योंकि तुम भूत-वर्षी और वर्तमान विषय-ज्ञाता हो । जैसे सूर्यकी किरणें अन्तरीक्षको ढक लेती हैं, वैसे ही जरा या पुढ़ापा हमारा विनाश करता है । विनाश-कारण जरा जिस प्रकार न आने पावे, वैसे करो ।

१ गता और नित्य आभवा स्तुतिका नाम्ब करो जयदा नित्य प्रदाके मंत्र अग्नि ग्रहण करते हैं । अग्नि सतुष्पके हित-साधक बन हायमें धारण करते हैं । अग्नि स्तुति-वर्षीको अमृत या दिव्य प्रदान करते हैं । अग्नि ही सर्वोच्च धनके अधिपति हैं ।

२ माने अमर-धर्म देवगण और मोह-रहित मरुद्गण, जनेक कामना करनेपर भी, हमारे प्रिय और सद्ब्यापी अग्निको नहीं पा सके । पैशुक चलते-चलते थक कर आर आभिके कार्यको लक्ष्यकर अन्तको वे लोग अग्निके घरमें उपस्थित हुए ।

३ हे वासिमान् अग्नि ! वासिमान् मरुतानि तीक्ष्ण पर्यतक तुम्हारी घृतेसे पूजा की थी । अनन्तर मरुतोंने यज्ञमें प्रयोग योग्य नाम धारण किये और उद्दृष्ट जन्म देकर अमर-वर्षी धारण किया । \*

४ यज्ञाहं देवोंने पिशाक से लोक और पृथिवीमें विद्यमान रह कर तुम्हें या अग्निके उपयुक्त स्तोत्र किया था । मरुतोंने इन्द्रके माय उचम स्थाभमें निहित अग्निको समस कर उसे प्राप्त किया था । \*

\* मरुतोंने हम नामोंको जाचार्य सायने "संतिराय" से इस प्रकार उद्धृत किया है—ईहृ, अन्याहृ, ताहृ, प्रतिहृ, मित, संमित, समरा आदि ।

\* यहाँ जाचार्य सायने "संतिराय"से एक उपाख्यान उद्धृत किया है—देवावर-संभामके समय देवोंकी सम्पत्ति चुरा कर अग्नि माग गये । पाँछे देवगण अग्निके पास गये और अग्निसे अपना धन अबदस्ती मांग किया । इसपर अग्नि रोने लगे । तभीसे अग्निका एक नाम दग्ध पड़ गया ।



सज्जानाना उप सीदन्मग्निञ्च पत्नीवन्तो नमस्यन् नमस्यन् ।  
 रिरिकां सस्तन्वः कृण्वत स्वाः सखा सख्युर्निमिपि रक्षमाणाः ॥ ५ ॥  
 त्रिः सप्त यद्गुह्यानि त्वे इत् पद्मविदन्निहिता यज्ञियासः ।  
 तेभी रक्षन्ते अमृतं सजोपाः पशूञ्च स्थान्तृञ्चरथं च पाहि ॥ ६ ॥  
 विद्विं अग्ने वयुनानि क्षितीनां व्यानुपक् शुक्रधो जोवसे धाः ।  
 अन्तविद्विं अध्वनो देधयानानतन्द्रो दूतो अमवो हविर्वाट् ॥ ७ ॥  
 स्वाध्यो दिव आ सप्त यही रायो दुरो व्यृतज्ञा अजानन् ।  
 विदद्वन्व्यं सरमा बृहमूर्ध्वं येना नु कं मानुषी भोजते विद् ॥ ८ ॥  
 आ ये विश्वा स्वपत्यानि तस्युः कृण्वानासो अमृततवाय गातुम् ।  
 महा महद्भिः पृथिवी त्रितस्थे माता पुत्रैरदितिर्धायसे वेः ॥ ९ ॥  
 अधि श्रियं नि दधुश्चारुमस्मिन्दियो यदक्षी अमृता अकृण्वन् ।  
 अध क्षरन्ति सिन्धवो न स्रष्टाः प्र नीचीरग्ने अरपीरजानन् ॥ १० ॥

१ हे अग्निदेव ! देवता तुम्हें अच्छी तरह जानकर बैठ गये और अपनी स्त्रियोंके साथ सम्मुखस्थ जाजुयुक्त अग्नि की पूजा की । अनन्तर मित्र अग्नि को देखकर, अग्नि द्वारा रक्षित, मित्र देवोंने अग्नि के शरीरका शोषण कर यज्ञ किया था ।

६ अग्नि ! तुम्हारे अन्तर निहित एकविंशति मिगुद पदों का यज्ञोंको यजमानोंने जाना है और उन्हींसे तुम्हारी पूजा करते हैं । तुम भी यजमानोंके प्रति उसी प्रकार स्नेह-युक्त होकर उनके पशु और स्थावर-जंगमकी रक्षा करो । \*

७ अग्नि ! सारे जानने योग्य विषयोंको जानकर यजमानोंके जीवन-धारणके लिये क्षुधा-निवृत्ति करो । आकाश और पृथिवीपर जिस मार्गसे देव लोग जाते हैं, वह जानकर और आकलय-रहित होकर, दूत-रूपसे, हव्य वहन करो ।

८ गोमन-कर्म-पम्पना विशाल सप्त नदियाँ घुसोकसे निकली हैं । ये सारी नदियाँ अग्नि द्वारा स्थापित हैं । यज्ञज्ञाता अद्विजा लोगोंने अशुओं द्वारा धुआये हुए गोधनका गमन-भाग तुमसे जाना था । तुम्हारी कृपासे सरमाने उनके पाससे प्रचुर गो-दुग्ध प्राप्त किया था । उनके द्वारा मनुष्यकी रक्षा होती है ।

९ आदित्यगणने अमरत्व-सिद्धिके लिये उपाय करके पतन-निरोधके लिये जो सारे कर्म किये थे, अदिति-रूपिणी जननी पृथ्वीने सारे जगत्के धारणके लिये उन महाबलुव पुत्रोंके साथ जो विशेष महत्त्व प्राप्त किया था, अग्निदेव ! तुमने हव्य अक्षण किया था, यही सबका कारण है ।\*

१० इस अग्निमें यजमानोंने सुन्दर यज्ञ-सम्पद स्थापित की थी एवं यज्ञके चक्षुःस्वरूप घृत दिया था । अनन्तर देवता लोग आये । यह देवकर अग्निदेव ! तुम्हारी समुज्ज्वल शिला, वेगवती नदीकी तरह, सारी दिशाओंमें फैली और देवोंने भी वह जाना ।

\* सायणाचार्यने एकविंशति या इक्कीस पदोंका अर्थ 'यज्ञों' किया है । उन सब यज्ञोंके नाम भी उन्हींने इस तरह लिखे हैं—विश्वेदेवोंके सम्बन्धके सात पाक-यज्ञ, अन्याघेय, दूर्वापूर्ण मास आदि सात हविर्गुण तथा अग्निष्टोम, अतिअग्निष्टोम आदि सात सोमयज्ञ ।

x "इस अंग्रका यह मम मालूम होता है कि, अग्नि को हव्य देकर यज्ञ करनेसे ही सूर्य आकाशसे नहीं गिर पड़ते और इषिकी महात् भार वहन करती है ।" —रमेधचन्द्र दत्त ।

"अग्नि को पोषण करने के लिये ही अदिति और आदित्यगण विस्तृत हुए थे ।" —वेदामय्य

७३ सूक्त । अग्नि देवता हैं । त्रिष्टुप् छन्द है ।

रयिर्न यः पितृचित्तो वयोधाः सुप्रणीतिश्चिकित्तुपो न शासुः ।  
 स्यांनशीरत्तिथिर्न प्रीणानो होतेव सदा विधतो वि तारोत् ॥ १ ॥  
 देवो न यः सविता सत्यमन्मा क्रत्वा निपाति-भुजनानि विश्वा ।  
 पुरप्रशस्तो अमतिर्न सत्य आत्मेव शोवो द्विधिपाय्यो भूत् ॥ २ ॥  
 देवो न यः पृथिवीं विश्वधाया उपक्षेति हितमित्रो न राजा ।  
 पुरःसदः शर्मसदो न वीरा अनवद्या पतिजुष्टेव नारी ॥ ३ ॥  
 तन्त्वा नरो इम आ नित्यमिद्धमग्ने सचन्त क्षितिपु ध्रुवास्तु ।  
 अग्नि द्युर्न नि दधुर्भूर्यदिमन् भवा विश्वायुर्धरुणो रयीणाम् ॥ ४ ॥  
 वि पृथो अने मघवानो अश्रुर्वि सूर्यो ददतो विश्वमायुः ।  
 सनेम वाजं समिश्रेण्यो भागं देवेषु श्रवसे दधानाः ॥ ५ ॥  
 शतस्य हि धेनवो वावशानाः स्मदूधनीः पीपयन्त द्युभक्ताः ।  
 पराचनः सुमतिं मिद्धमाणा वि सिन्धवः समया सखुरद्रिम् ॥ ६ ॥  
 त्वे अने सुमतिं शिक्षमाणा दिवि श्रवो दधिरे यज्ञियासः ।  
 नक्ता च चक्रुः कपस्ता विरूपे कृष्णं च वर्णमरुणं च सन्धुः ॥ ७ ॥

१ देवक धर्मकी तरह अग्नि अप्रशस्ता हैं; शासुप्रज्ञ व्यक्तिके पासनको तरह अग्नि नेहा हैं; उपविष्ट अतिथिकी तरह अग्नि प्रीति-गप्य हैं; और, हीताकी तरह अग्नि यज्ञमानका घर पवित्र करते हैं ।

२ प्रकाशमान सूर्यकी तरह यगार्थदर्शी अग्नि अपने काय द्वारा समस्त संसारसे रक्षा करते हैं । यज्ञमानोंके प्रशंसित अग्नि प्रकृतिके स्मरणकी तरह परिपतन-रहित हैं । अग्नि आत्माको तरह छलकर हैं । ऐसे अग्नि यज्ञमानों द्वारा चारणोप हैं ।

३ पृथिवीय सूर्यकी तरह अग्नि समस्त संसारको धारण करते हैं । अनुकूल छद्मसे सम्पन्न राजाकी तरह अग्नि पृथिवी पर विवास करते हैं । संसार अग्निके मामने पितृ-गृहमें पुत्रकी तरह बैठता है । अग्नि पति-सेविता और अमिन्नवन्दीया स्त्रीकी तरह पिशुद हैं ।

४ हे अग्नि ! संसार उपद्रव-शून्य स्थानपर अपने घरमें, अनवरत काष्ठसे जलाकर, तुम्हारी सेवा करता है । साथ ही अनेक यज्ञोंमें अन्न भी प्रदान करता है । तुम विदवायु या सर्वान्न होकर हमें धन दो ।

५ अग्निदेव ! धनवाली यज्ञमान अन्न प्राप्त करे । जो विद्वान् तुम्हारी स्तुति करते और तुम्हें हव्य-दान करते हैं, वे भी आप प्राप्त करें । हम कर्षार्थके मैदानमें बाघ का अन्न लाभ करें । अनन्तर यज्ञके लिये देवोंका अन्न देवोंको अर्पण करें ।

६ पितृव्य दुग्धनाकिनी और तेजस्विनी गायें अग्निकी अमिताया वरके यज्ञस्थानमें अग्निको दुग्ध पात्र कराती हैं । प्रयत्नमाना नदियों अग्निके पास अनुग्रहकी याचना करके, पर्वतके पास दूर देशसे प्रवाहित होती हैं ।

७ हे पृथिवीय अग्नि ! यज्ञाधिकारी सारे देवोंने तुम्हारे अनुग्रहकी याचना करके तुम्हारे ऊपर हव्य स्थापन किया है । अनन्तर मिन्न-मिन्न अनुष्ठानके लिये उषा और रात्रिको मिन्न-रूपिणी किया है । रात्रिको कृष्णवर्ण और उषाको अरुण-वर्ण किया है ।

यान् राये मर्तान् सुपूदो अग्ने ते स्याम मघवानो वर्यं च ।  
 छायेव विश्वं भुवनं सिस्क्षयापप्रिवान् रोदसी अन्तरिक्षम् ॥ ८ ॥  
 अर्चद्विररने अर्चतो नृभिर्नृन् वीरैर्वीरान् वनुयामा स्वोताः ।  
 ईशानासः पितृविन्तस्य रायो वि सूर्यः शतहिमा नो अश्रुः ॥ ९ ॥  
 एता ते अग्ने उचथानि वेधो जुष्टानि सन्तु मनसे हृदे च ।  
 शक्रेम रायः सुधुरो यमं तेऽधि श्रवो देवभक्तं दधानाः ॥ १० ॥

१३ अनुवाक । ७४ सूक्त । अग्नि देवता हैं । यहाँसे ९३ सूक्त तक रहूगणके  
 पुत्र गोतम ऋषि हैं । त्रिष्टुप् छन्द है ।

उपप्रयन्तो अध्वरं मन्त्रं चोत्रेमाश्रये । आरे अस्मे च शृण्वते ॥ १ ॥  
 यः स्तोहितीषु पूर्यः सज्जमानासु कृष्टिषु । अक्षद्राशुषे गयम् ॥ २ ॥  
 उत ब्र धन्तु जन्तश्च उदमिर्बृ प्रहाजनि । धनञ्जयो रणं रणे ॥ ३ ॥  
 यस्य हूतो असि क्षये वेपि हव्यानि वीतये । दस्मत् कृणोष्यध्वरम् ॥ ४ ॥  
 तमित् सुहव्यमद्भिरः सुदेवं सहसो यहो । जना थाहुः सुवर्हिषम् ॥ ५ ॥

८ तुम जो मनुष्योंको, अथ-लोकके लिये, यज्ञ-कर्ममें प्रेरित करते हो—ये और हम घनी होंगे । तुमने आकाश, पृथ्वी  
 और अस्वीक्षको परिपूर्ण किया है । साथ ही सारे संसारको, आयाकी तरफ, रक्षित करते हो ।

९ अग्निदेव ! तुम्हारे द्वारा संरक्षित होकर हम अपने अद्वयसे प्राणके अमयका घष करेंगे । अपने योद्धाओंके द्वारा  
 प्राणके योद्धाओंको और अपने धीरों द्वारा शत्रुके धीरोंका घष करेंगे । हमारे विद्वान् पुत्र पैतृक धनके स्वामी होकर सौ बच  
 जीवशका भोग करें ।

१० हे मेघ'घो अग्नि ! हमारे सम स्तोत्र तुम्हारे मन और अन्तःकरणको प्रिय हों । देवोंके संभोग योग्य अग्नि तुम्हारे  
 अन्दर स्थापित करके हम तुम्हारे दारिद्र्य-विनाशकी घनकी रक्षा कर सकें ।

१ जो अग्नि दूर रहकर भी हमारी स्तुति करते हैं, यज्ञमें आगमनशील उन अग्निको हम स्तुति करते हैं ।

२ जो अग्नि, घषकारिणी शत्रुभूता प्रजाओंके बीच संगत होकर दृष्टिर्दानकारी यज्ञमानके लिये घनकी रक्षा करते हैं,  
 उन अग्निकी हम स्तुति करते हैं ।

३ सारा लोक उत्पन्न होते ही अग्निकी स्तुति करे, अग्नि शत्रु-हन्ता और युद्धमें शत्रु-घनकी जय करते हैं ।

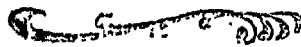
४ अग्नि ! जिस यज्ञमारके यज्ञ-गृहमें तुम देव-दूत होकर उनके भोजनके लिये द्रव्य चढ़ान करते और यज्ञ शोभित  
 करते हो—

५ हे बरुके पुत्र अद्भिरा ( अग्नि ) ! उसी यज्ञमानको सारे मनुष्य शोभन-देव-संयुक्त, शोभन-द्रव्य-सम्पन्न और  
 शोभन-यज्ञयुक्त करते हैं ।

सा च ब्रह्मसि तौ इह देवाँ उप प्रशस्तये । हृदया सुश्रुन्त्र वीतये ॥ ६ ॥  
 न योरुपदिश्रुष्यः शृणुवे रथम्य कृचन । यदग्ने यासि दृत्यम् ॥ ७ ॥  
 स्वोतो वाज्यद्वयोऽभि पूर्वमादपरः । प्र द्वाश्रवाँ अग्ने कस्यात् ॥ ८ ॥  
 उत द्युमत् सुवीर्यं बृहदग्ने विवाससि । देवेभ्यो देव दाशुषे ॥ ९ ॥

७५ सूक्त । अग्नि देवता हैं । गायत्री छन्द है ।

नुपस्व सप्रथस्तमं वचो देवप्रस्तमम् । हृदया जुह्वान आसनि ॥ १ ॥  
 अथा ते अङ्गिरस्तमाने वेधस्तम प्रियम् । वोचेम ब्रह्म सानसि ॥ २ ॥  
 वस्ते जामिर्जनानामग्ने का दाश्रवध्वरः । को ह कस्मिन्नसि श्रितः ॥ ३ ॥  
 त्वं जामिर्जनानामग्ने मित्रो असि प्रियः । सखा सखिभ्य ईड्यः ॥ ४ ॥  
 यजा नो मित्रावरुणा यजा देवाँ दृतं बृहत् । अग्ने यक्षि स्वं दमम् ॥ ५ ॥



६ हे उर्वोत्तमं अग्नि ! इस यज्ञमें, स्तुति ग्रहण करनेके लिये, देवोंको हमारे समीप ले आओ और भोजन करनेके लिये हृदय प्रदान करो ।

७ हे अग्नि ! जिस समय तुम देवोंके दूत जनर जाते हो, उस समय तुम्हारे गतिशाली रथके अक्षका सब्द नहीं पनाई देता ।

८ जो दृश्य एते निरूपट है, यह तुम्हें हृदय दान करने तुम्हारे द्वारा रक्षित और अन्न-युक्त होकर लज्जा-रहित (पेदव-पक्षालो) प्रकटा दे ।

९ हे प्रकाशमान अग्नि ! जो यज्ञमान देवोंको हृदय प्रदान करता है, उसे प्रभूत, दीप्त और वीर-शाली धन दान करो ।

१ अग्निदेव ! तुझमें हृदय ग्रहण करनेके देवोंको शक्तीय प्रसन्न करो और हमारा अति विशाल स्तोत्र ग्रहण करो ।

२ हे अङ्गिर ! ऋषिके पुत्रों जी मेधाविर्षोंमें श्र गः । इन तुम्हारे ग्रहणशोभ्य और प्रसन्नता-दायक स्तोत्र सम्पादन करते हैं

३ अग्नि ! सनुर्वोमें तुम्हारा योग्य वस्तु कौन है ? तुम्हारा वज्र कौन कर सकता है ? तुम कौन हो ? कहाँ रहते हो ?

४ अग्नि ! तुम सशक्त वस्तु हो, तुम प्रिय मित्र हो । तुम मित्रोंके स्तुति-पात्र मित्र हो ।

५ अग्नि ! हमारे लिये मित्र और वरुणकी अर्चना करो और देवोंकी पूजा करो । विशाल यज्ञका सम्पादन करो और अपने यज्ञ-गृहमें गमन करो ।

७६ सूक्त । अग्नि देवता हैं । त्रिष्टुप् छन्द है ।

का त उपेतिर्मनसो वराय भुवदग्ने शन्तमा का मनीषा ।  
 को वा यज्ञः परिदक्षं त आप केन वा ते मनसा दाशेम ॥ १ ॥  
 यज्ञस्य इह होता निपीदादग्धः सु पुर पता भवा नः ।  
 अवतां त्वा रोदसा विष्वमिन्वे यजामहे सौमनसाय देवान् ॥ २ ॥  
 प्र सु विश्वान् रक्षसो धक्ष्यग्ने भवा यज्ञानामभिशस्तिपावा ।  
 अथा वह सोमपतिं हरिस्थामातिथ्यमस्यै चक्रमा सुदान्ने ॥ ३ ॥  
 प्रजावता वचसा वहिरासा च हुवे नि च सत्सीह देवैः ।  
 वेधि होत्रमुतपोत्रं यज्ञत्र बोधि प्रयन्तर्जनितवंसूनाम् ॥ ४ ॥  
 यथा विप्रस्य मनुषो हविर्मिर्देवाँ अयजः कविभिः कविः सन् ।  
 एवा होतः सत्यतर त्वमघाग्ने मन्त्रया जुह्वा यजस्व ॥ ५ ॥



७७ सूक्त । अग्नि देवता हैं ।

कथा दाशेमाद्ये कास्मै देवजुष्टोच्यते भामिने गीः ।  
 यो मर्त्यैश्चमृत आतावा होता यजिष्य इत् छपोति देवान् ॥ १ ॥

१ अग्नि ! तुम्हारी मनस्तुष्टि करनेका क्या उपाय है ? तुम्हारी आनन्ददायिनी स्तुति वैसी है ? तुम्हारी क्षमताका पर्याप्त यज्ञ कौन कर सकता है ? कैसी बुद्धिके द्वारा तुम्हें इव्य प्रदान किया जाय ?

२ अग्नि ! इस यज्ञमें आओ । देवोंको बुलाकर बैठो । तुम हमारे नेता बनो; क्योंकि कोई तुम्हारी हिंसा नहीं कर सकता । सारा आकाश और पृथिवी तुम्हारी रक्षा करें एवं तुम देवोंको अत्यन्त प्रसन्न करनेके लिये पूजा करो ।

३ अग्नि ! सारे राक्षसोंको दहन करो तथा हिंसाओंसे यज्ञकी रक्षा करो । सोम-रक्षक इन्द्रको, उनके हरि नामके दोषों अथवाके साथ, इस यज्ञमें के आओ । हम सफलदाता इन्द्रका आतिथ्य प्रदान करेंगे ।

४ जो अग्नि मुख द्वारा इव्य वहन करते हैं, उन्हें अपत्य आदि पक्षोंसे युक्त होत्र द्वारा आह्वान करते हैं । अग्नि ! तुम अन्य देवोंके साथ बैठो और हे यज्ञनीय अग्नि ! तुम होता और पोताके काय करो । तुम उनके नियामक और जन्मदाता होकर हमें जगानो ।

५ तुमने मेधाविषोंमें मेधाघो बनकर जैसे मेधावी मनुके यज्ञमें इव्य द्वारा देवोंकी पूजा की थी, वैसे ही हे होम-विष्पादक सम्य अग्नि ! तुम इस यज्ञमें देवोंकी आनन्द-दायक जुहु आ स्रुसे पूजा करो ।

१ जो अग्नि अमर, सत्यवान्, देवाङ्गामकारी और यज्ञ-सम्पादक हैं तथा जो मनुष्योंके बीच रहकर देवोंको इवियुक्त करते हैं, उन अग्निके इन अनु रूप इव्य कैसे प्रदान करेंगे ? तेजस्वी अग्निकी, सब देवोंके उपयुक्त, कैसी स्तुति करेंगे ?

बो अथर्वेयु कन्तम कताया होता तसू नमोमिरा कृणुष्वम् ।  
 अमिर्यद्वे मर्ताय देवान् सत्वा बोधाति मनसा यजाति ॥ २ ॥  
 स दि क्रतुः समर्थः ससाधुर्मित्रो न भूदद्भुतस्य रयीः ।  
 तं मेधेय प्रथमं देयन्तीर्विश उप भ्रुवते दस्ममारीः ॥ ३ ॥  
 स नो नृणां नृत्तमो रिशादाः अग्निर्गोतमसा चेत्तु धीतिम् ।  
 तना च ये मयवानः शविष्ठा वाजप्रसूता इयन्त मन्म ॥ ४ ॥  
 एषामिर्गोतमेभिर्कृतावा जिने मिरस्तोष्ट जातवेदाः ।  
 स एषु धुम्नं षोपयत्-स चाजं स पुष्टिं याति जोषमा चिकित्यान् ॥ ५ ॥

७८ सूक्त । अग्नि देवता हैं । गायत्री छन्द है ।

अग्नि त्वा गोतमा गिरा जातवेदो विवर्षणे । धुम्नैरग्नि प्रणोनुमः ॥ १ ॥  
 तसु त्वा गोतमो गिरा रायस्कामो दुवस्यति । धुम्नैरग्नि प्रणोनुमः ॥ २ ॥  
 तसु त्वा वाजसातममङ्गिरस्वद्वामदे । धुम्नैरग्नि प्रणोनुमः ॥ ३ ॥

२ जो अग्नि यज्ञमें अग्न्यर छत्रधारो, पयाध्वजो और देवाह्वानधारो हैं, उन्हें स्तोत्र द्वारा हमारे अग्निमुख करो । जिस समय अग्नि यज्ञ-रथके द्वारे देवोंके पाव होते हैं, उस समय वे देवोंको जानते और मन या मनस्कार द्वारा पूजा करते हैं । \*

३ अग्नि यज्ञ-कर्ता हैं, अग्नि संसारके हरमंहारक और जनयिता हैं । सत्वाको तरह अग्नि अकञ्च बन देते हैं । देवामिलायी प्रजापति हन द्वाभोय अग्निके समोर जाकर अग्निको ही यज्ञका प्रथम देवता मानकर स्तुति करते हैं ।

४ अग्नि नेगाओंके वीर हरदृष्ट नेत्र और शत्रुओंके विनाशकारी हैं । अग्नि हमारी स्तुति और अग्निपुत्र यज्ञकी अग्नि-आवा कर्ते तथा जो यज्ञशाली और यज्ञशाली यज्ञमान होय अग्नि प्रदान करके अग्निके समनोय स्तोत्रकी इच्छा करते हैं, अग्नि बन लोगोंको मनुषिकी भी इच्छा करें ।

५ यज्ञ-युक्त और सयज्ञ अग्नि इसी प्रकार मेधावो गोतम आदि ऋषियों द्वारा स्तुत हुए थे । अग्निने भी उन्हें प्रकाश-मान मोमसक्त पान और भोग्यन कराया था । हमारी सेवा जानकर अग्नि पुष्टि प्राप्त करें ।

१ दे इत्यग्निज्ञाता और सर्वदृष्टा अग्नि । गोतम-वंशीयैर्नि तुम्हारी स्तुति को है । धृतिमान् स्तोत्र द्वारा हम तुम्हारी स्तुति करते हैं ।

२ भनाकाह्वी होकर गोतम जिन अग्निकी स्तुति द्वारा सेवा करते हैं, उन्हेंको, तुज-प्रकाशक स्तोत्र द्वारा, हम बार-बार स्तुति करते हैं ।

३ अग्निताकी तरह सर्वोपेक्षा अधिकतर अग्निपुत्रा अग्निको हम बुलाते हैं और अतिमान् स्तोत्र द्वारा स्तुति करते हैं ।

\* सर्वके "मनसा" अर्थात्को सायगाथाय "मनसा" जो मानते हैं । वे लिखते हैं—"मकारवकारयोः स्नान-विषयः ।" यान्मु स्नान-विषयको आचरणकता तो नहीं भाट्टम पढ़गो ।

तसु त्वा धृत्रहन्तमं यो दस्यूरवधूनुपे । द्युम्नैरभि प्रणोनुमः ॥ ४ ॥

अत्रोचाम रहुगणा अग्रये मधुमद्वजः । द्युम्नैरभि प्रणोनुमः ॥ ५ ॥



७६ सूक्त । अग्नि देवता हैं । गायत्री, त्रिष्टुप् और उडिगिक् छन्द हैं । प्रथम तीन मंत्र विशुद्रूप अग्निके विषयमें हैं ।

द्विरण्यकैशो रजसो विसारोऽहिर्घुनिर्वात इव ध्रजोमान् ।

शुचिध्राजा षपसो नवेदा यशश्चतोरपस्युत्रो न सत्याः ॥ १ ॥

आ ते सुपर्णा अमिनन्तं पवैः कृष्णो नोनाव धृपभो यदीदम् ।

शिवामिर्न स्मयमानाभिरागात् पतन्ति मिहः स्तनयन्त्यध्रा ॥ २ ॥

यदीम्बृतस्य पयसा पियानो नयन्मृतस्य पयिभो रजिष्ठैः ।

अर्यमा मित्रो वरुणः परिजमां त्वचं वृद्धन्त्युपरस्य योनौ ॥ ३ ॥

अग्नेवाजस्य गोमत् ईशानः सहस्रो यहो । अस्मे धेहि जातवेदो महि श्रवः ॥ ४ ॥

स इधानो वसुष्कविरग्निरौलेन्यो गिरा । देवदस्मभ्यं पुर्वणोक द्वीदिहि ॥ ५ ॥

क्षपो राजन्नुव त्मनाग्ने वस्तोस्तोषसः । स तिमजस्म रक्षसो दहं प्रति ॥ ६ ॥

१ हे अग्निदेव ! तुम वृक्षयुगो, अनायी या सन्नमोको तथाच-अष्ट करो । तुम सर्वापेक्षा शत्रु-हन्ता हो । २ तिमाम् स्तोत्र द्वारा हम तुम्हारी स्तुति करते हैं ।

३ हम रहुगण-वंशीय हैं । हम अग्निके उग्र माधुव-युक्त वाक्यका प्रयोग करते और द्यु तिमाम् स्तोत्र द्वारा स्तुति करते हैं ।

१ सवण केशवाके अग्नि ( विद्युत् रूपमें ) हवनबीज मेवको कम्पित करते और वायुको तरह श्रीप्रणामी हैं । वे सुन्दर दोसिधे युक्त होकर मेवसे धारि-वधंग करना जानते हैं । उवा यह बात नहीं जानती । उवा जन्मवालों, सरल और निजकाय-परायण प्रजाकी तरह है ।

२ अग्नि ! तुम्हारी सुन्दर और पवनशील किरण, महर्षी के साथ, मेवको ताड़ित करती है । कृष्णवर्ण और वधणशील मेव गरज है । मेव उन्नत और हास्य-युक्त वृष्टि-विन्दुके साथ जाता है । पानी गिर रहा है, मेव गरज रहा है ।

३ जिस समय अग्नि, वृष्टि-जल द्वारा, संसारको पुष्ट करते हैं तथा जलके व्यवहारका सरल उपाय ( स्नाय, पान आदि ) देना देते हैं, उस समय अथमा, मित्र, वरुण और समस्त दिग्गामी मरुद्गण मेवके जलोत्पत्ति-स्थावका आच्छादन उद्घाटित कर देते हैं ।

४ हे बल-पुत्र अग्नि ! तुम प्रभूत गो-युक्त अन्नके साक्षिक हो । हे सवभूतज्ञाता ! हमें तुम बहुत धन दो ।

५ द्वीति-युक्त, निवास-स्थान-ज्ञाता और मेधावी अग्नि स्तोत्र द्वारा प्रशंसनीय हैं । हे बहुमुख अग्नि ! जिस प्रकार हमारे पास धन-युक्त अन्न हो, उसी प्रकार दोसिधे प्रकाशित करो ।

६ उज्ज्वल अग्नि ! तिम अथवा रादिमें स्वर्ण या प्रजा द्वारा राक्षसादिको वितापित करो । हे वीर्य-सुख अग्नि ! राक्षसको दहन करो ।

अथा नो अन्नं जतिभिर्गायत्रस्य प्रभर्मणि । विश्वास्तु घीपु चन्ध ॥ ७ ॥  
 आ नो अग्ने रयि भर सत्रासाहं वरेण्यम् । विश्वास्तु प्रस्तु दुष्टरम् ॥ ८ ॥  
 आ नो अग्ने सुचेतुता रयि विश्वायुपोपसम् । माडीकं धेहि जीचसे ॥ ९ ॥  
 प्र पूतास्तिग्मशोचिरे वान्नो गोतमाग्नये । भरस्व सुन्नयुगिरः ॥ १० ॥  
 यो नो अग्नेऽभिदासत्यन्ति दूरे पद्माष्ट सः । असामकमिद्वृषे भव ॥ ११ ॥  
 सदाक्षाशो त्रिचर्यगिरसो रक्षसि सेधति । होवा गृणीत उक्थ्यः ॥ १२ ॥

—०३३३३३३३—

८० सूक्त । इन्द्र देवता है ।

इत्या हि सोम इन्मदे प्राप्ता लकार यद्वनम् ।  
 शयिष्ठ वज्रिन्नोजसा पृथिव्या निः शशा अहिमर्चन्नु स्वराज्यम् ॥ १ ॥  
 स त्वासद्दृष्टृषा मदः सोमः श्येताभृशः सुतः ।  
 येना वृत्रं निरदृभ्यो जघन्थ वज्रिन्नोजसार्चन्नु स्वराज्यम् ॥ २ ॥  
 प्रेहामीहि धृष्णुहि न ते वज्रो नि यंसते ।  
 इन्द्र नृणां हि ते शवां हतो वृत्रं जया अपोऽर्चन्नु स्वराज्यम् ॥ ३ ॥

- ७ अग्निदेव । तुम सारे यज्ञोंमें स्तुति-भाजन हो । हमारी गायत्री द्वारा तुष्ट होकर, रक्षण-काय द्वारा, हमें पालित करो ।
- ८ अग्नि ! हमें दारिद्र्य-निवृत्ताओं, सबके स्वीकार योग्य और सारे संसारोंमें धन दो ।
- ९ अग्नि ! हमारे जोशर्क किं० पुत्र-दान-युक्त, अन्न-देव-भूत और सारी आयुका पुष्टि-कारक धन प्रदान करो ।
- १० हे धर्मात्मिकाओं गोत्रण ! तादृग-जवाला-युक्त अग्नि को विशुद्ध स्तुति करो ।
- ११ अग्नि ! हमारे पान या दूर रहकर जो अन्न, हमारी टांक करता है, वह विन्नत हो । तुम हमारा यद्वन करो ।
- १२ सदाक्षाद या अर्द्धव-जवाला-सम्पन्न और सर्व-वर्षों अग्नि राक्षसोंको ताडित करते हैं । हमारी जोसे स्तुत होकर देवोंके आह्वानकारी अग्नि उनको स्तुति करते हैं ।

१ हे वक्रवादी और घमघर इन्द्र ! तुम्हारे इन उपकारों सोमरसका पान करनेपर स्तोताने तुम्हारी वृद्धिकारिणी स्तुति को मा । तुमने बल द्वारा पृथिवी परसे अदिकी ताडित किया था तथा अपना प्रभुत्व या स्वराज्य प्रकट किया था ।

२ इन्द्रदेव ! सैन्य-सन्वाय, उपकर और द्येन पत्नी द्वारा आर्मात तथा अभिपुत सोमरसने तुम्हें प्रसन्न किया था । वज्रिन् ! अपने बल द्वारा अन्तरिक्षके पाससे तुमने वृत्रका पिनाज किया था तथा व्यपना प्रभुत्व प्रकट किया था । x

x सायणाचार्यका मत है कि, द्येन ( वाज )-पक्षि-रूपिणी गायत्री स्वर्गसे सोमरस के मायी थी । द्येनके सोमरस कानेकी अन्वेषण ३ मंडल, ४३ सूक्त, ४ म०, २६ सू० और ८ म० के ७१, ८४ और ८९ सूक्तोंमें है । "द्येनपक्षि-रूपिणी गायत्री" वाक्य अथ सायनने देवदेव ब्राह्मणके एक अध्यायानके आधारेपर किया है ।



निरिन्द्र भूम्या अधि वृत्रं जघन्थ निर्विवः ।  
 सृजा मरुत्वतीरव जावधन्या इमा अपोऽर्चन्नु स्वराज्यम् ॥ ४ ॥  
 इन्द्रो वृत्रस्य दोधतः सानं वज्रेण हीलितः  
 अभिक्लम्याव जिघ्रतेऽपः समीपं चोदयन्नर्चन्नु स्वराज्यम् ॥ ५ ॥  
 अधि सानौ नि जिघ्रते वज्रेण शतपर्षणा ।  
 मन्दान इन्द्रो अन्धसः सखिमयो गातुमिच्छन्नर्चन्नु स्वराज्यम् ॥ ६ ॥  
 इन्द्र तुभ्यमिद्विबोऽनुत्तं वज्रिन् वीर्यम् ।  
 यद्ध त्वं मायिनं वृत्रं तमु त्वं माययात्रधीरचन्नु स्वराज्यम् ॥ ७ ॥  
 वि ते वज्रासौ अस्थिरन्नवतिन्नाव्या अनु ।  
 महत्स इन्द्र वीर्यं बाह्वोस्ते बलं हितमर्चन्नु स्वराज्यम् ॥ ८ ॥  
 सहस्रं साकमर्चत परिष्कोभत विंशतिः ।  
 शतैनमन्वन्तानुचुरिन्द्राय ब्रह्मोद्यतमर्चन्नु स्वराज्यम् ॥ ९ ॥  
 इन्द्रो वृत्रस्य सविषीं निरहन्त्सहसा सहः  
 महत्सदस्य पौंस्यं वृत्रं जघन्वा अस्त्रजदर्चन्नु स्वराज्यम् ॥ १० ॥

३ हे इन्द्र ! जानो, शत्रुओंका सामना करो और उन्हें पराजित करो। तुम्हारे वज्रका वेग कोई रोकनेवाला नहीं है। तुम्हारा बल पुत्र-विषयो है। इसलिये तुम वृत्रका घब करो। वृत्र द्वारा रोक हुआ जल प्राप्त करो और अपना प्रभुत्व प्रकट करो।

४ इन्द्र ! तुमने भूलोक और अलोक—दोनों लोकोंमें वृत्रका घब किया है। मरुतोंसे संयुक्त और जीवोंके रक्षि-कर वृष्टि-जल गिराकर अपना प्रभुत्व प्रकट करो।

५ ऋद्ध इन्द्रने सामना करके कम्पमान वृत्रके उन्नत हनु (केहुवी)-प्रदेशपर प्रहार किया, वृष्टिका जल बहने दिया और अपना प्रभुत्व प्रकट किया।

६ शतधाराओंवाले वज्रसे इन्द्रने वृत्रासुरके कपोल-देशपर आघात किया। इन्द्रने प्रसन्न होकर स्तोत्राओंके लिये अन्नको जुटानेकी इच्छा की और अपना प्रभुत्व प्रकट किया।

७ हे मेघ-बाहन और वज्रधर इन्द्र ! शत्रु लोग तुम्हारी क्षमताकी अवहेलना नहीं कर सकते, क्योंकि तुम मायावी हो, माया द्वारा तुमने सृग-रूप-धारी वृत्रका घब किया था और अपना प्रभुत्व प्रकट किया था।

८ इन्द्र ! तुम्हारे वज्र नब्बे नदियोंके ऊपर विस्तृत हुए थे। इन्द्र ! तुम्हारा वीर्य यथेष्ट है। तुम्हारी भुजाएँ बहुबल-धारिणी हैं। अपना प्रभुत्व प्रकट करो।

९ एक साथ हजार मनुष्योंने इन्द्रकी पूजा की थी। बोल मनुष्यों (१६ ऋत्विक्, सलीक पञ्जमान, सहस्य और क्षमिता—२०) ने इन्द्रकी स्तुति की थी। सौ ऋषियोंने इन्द्रकी बार-बार स्तुति की थी। इन्द्रके लिये हव्य अन्न ऊपर रखा गया था। इन्द्रने अपना प्रभुत्व प्रकट किया था।

१० इन्द्रने अपने बलसे वृत्रके बलका विनाश किया था। पराभूत करनेवाले अस्त्रसे उन्होंने वृत्रका अस्त्र पिपट किया था। इन्द्रके पास असीम शक्ति है; क्योंकि उन्होंने वृत्रका घब करके, वृत्र द्वारा रोक गया, जल गिराकर अपना प्रभुत्व प्रकट किया था।

इमे चित्तव मन्यवे घेषेते मियसा मही ।

यदिन्द्र वज्रिन्नोजसा वृषं मरुत्वाँ अवधीरर्चन्ननु स्वराज्यम् ॥ ११ ॥

न घेषसा न तन्यतेन्द्रं वृषो वि वीभयत् ।

अन्येनं वष्य आयसः सहस्रभृष्टिरायसार्चन्ननु स्वराज्यम् ॥ १२ ॥

यद्बृहं तव चाशनिं वज्रेण समयोधयः ।

अहिमिन्द्र जिघांसतो दिवि ते वद्बुधे शक्रोऽर्चन्ननु स्वराज्यम् ॥ १३ ॥

अभिष्टने ते अद्रिवो यत् स्या जगच्चरेजते ।

त्वष्टा चित्तव मन्यव इन्द्र वेविज्यते भियार्चन्ननु स्वराज्यम् ॥ १४ ॥

नहि नु यादधीमसीन्द्रं को वीर्यां परः ।

तस्मिन्नुग्गमुत क्रतुं देवा ओजांसि सन्दधुरर्चन्ननु स्वराज्यम् ॥ १५ ॥

यामधर्वा मनुषिपता दध्यद् धियमत्तत ।

तस्मिन् प्रक्षाणि पुष्येन्द्र स्वधा समग्मतार्चन्ननु स्वराज्यम् ॥ १६ ॥

११ वज्रवारी इन्द्र । तुम्हारे हारके मारे यह आकाश और पृथिवी कम्पित हुए थे, क्योंकि तुमने मरुतोंसे मित्रकर वृषका वध किया तथा अपना प्रभुत्व प्रकट किया था ।

१२ अपने कम्पन या गजबसे वृष इन्द्रको नहीं हरा सका । इन्द्रके लौहमय और सहस्रवारा-युक्त वज्रेने वृषको आक्रान्त किया और इन्द्रने अपना प्रभुत्व प्रकट किया ।

१३ इन्द्र! जिस समय तुमने वृष और उसके वज्रपर प्रहार किया था, उस समय, तुम्हारे अहिके वधके किये, कृत-संक्रम्य होनेपर तुम्हारा बल आकाशमें व्याप्त हुआ था । तुमने अपना प्रभुत्व प्रकट किया था ।

१४ वज्रवारी इन्द्र । तुम्हारे गर्जन करनेपर स्वावर और जंगम काँप जाते हैं । वज्र-निर्माता त्वष्टा भी तुम्हारे कोप-भयसे कम्पित हो जाते हैं । तुमने अपना प्रभुत्व प्रकट किया है ।

१५ सर्व-वधापक इन्द्रको हम नहीं जान सकते । अत्यन्त दूरमें अवस्थित इन्द्रको अपने सामर्थ्यसे कौन बल सकता है । इन्द्रमें देवोंने धन, वीर्यऔर बल स्थापित किया था । इन्द्रने अपना प्रभुत्व प्रकट किया था ।

१६ अथवा नामक ऋषि, समस्त प्रजाके पितृ-भूत मनु और अथवाके पुत्र दध्यद् ऋषिने जितने यज्ञ किये, सबमें प्रयुक्त इन्द्र, अन्न और स्तोत्र, प्राचीन यज्ञोंकी तरह, इन्द्रको ही प्राप्त हुए थे ।

पञ्चम अध्याय समाप्त



## षष्ठ अध्याय



८१ सूक्त । इन्द्र देवता हैं । पङ्क्ति छन्द है ।

इन्द्रो मदाय वावृधे शवसे वृत्रहा नृभिः ।

तमिन्महरस्वाजिपूतेमर्भं हवामहे स वाजेषु प्रनोऽविपत् ॥ १ ॥

असि हि वीर सेन्योऽसि भूरि परादृदिः ।

असि दध्नस्य चिद्वृधो यजमानाय शिक्षसि सुन्वते भूरि ते वसु ॥ २ ॥

यदुदीरत आजयो धृष्णवे धीयते धना ।

युक्त्वा मदच्युता हरी कं हनः कं वसौ दधोऽस्माँ इन्द्र वसौ दधः ॥ २ ॥

कृत्वा महौ अनुष्वधं भीम आ वावृधे शवः ।

श्रिय ऋष्व उपाकयोर्नि शिप्री हरिचान्दधे हस्तयोर्वज्र मायस्म ॥ ४ ॥

आ पप्रौ पार्थिवं रजो वद्वधे रोचना दिवि ।

न त्वावाँ इन्द्र कश्चन न जातो न जनिष्यतेऽति विश्वं ववक्षिथ ॥ ५ ॥

यो अर्थो मर्तभोजनं पराददाति दाणुषे ।

इन्द्रो अस्मभ्यं शिक्षतु वि भजा भूरि ते वसु भक्षीय तव राधसः ॥ ६ ॥

१ वृत्र-इन्ता इन्द्र मनुष्योंको स्तुति द्वारा बल और हर्षसे प्रबद्धित हुए थे । उन्हीं इन्द्रको हम महान् और क्षुद्र संप्रामों-में बुलाते हैं । इन्द्र हमें संप्राममें रक्षा करें ।

२ वीर इन्द्र ! एकाकी होनेपर भी तुम सेना-सदृश हो । तुम प्रभूत शत्रुओंका धन दान कर देते हो । तुम क्षुद्र स्तोताको भी बर्द्धित करते हो । लोमरस-इला यजमानको तुम धन प्रदान करते हो; क्योंकि तुम्हारे पास अक्षय धन है ।

३ जिस समय युद्ध होता है, उस समय शत्रुओंका विजेता ही धन प्राप्त करता है । इन्द्र ! रथमें शत्रुओंके गर्व-नाशकारी अस्त्र संयोजित करो । किसीका नाश करो, किसीको धन दो । इन्द्र ! हमें तुम धनप्राप्ती करो ।\*

४ यज्ञ द्वारा इन्द्र विद्याल और भयंकर हैं और सोम-पान द्वारा इन्द्रने अपना बल बढ़ाया है । इन्द्र दुर्गनीय नासिकासे युक्त तथा हरि नामके अश्वोंसे सम्पन्न हैं । इन्द्रने इसारी सम्पत्तिके लिये वलिष्ठ हाथोंमें लौहमय वज्र धारण किया है ।

५ अपने तेजसे इन्द्रने पृथिवी और अन्तरिक्षको परिपूर्ण किया है । छु लोकोमें चमकते मक्षत्र स्थापित किये हैं । इन्द्रदेव तुम्हारे समान न कोई हुआ, न होगा । तुम विशेष रूपसे सारे जगत्को धारण करो ।

६ जो पालक इन्द्र यजमानको मनुष्योपमोय अन्न प्रदान करते हैं, वे हमें वैसा ही अन्न दें । इन्द्र ! तुम्हारे पास असंख्य धन है; इसलिये हमारे लिये धनका विभाग कर दो, ताकि हम उसका एक अंश प्राप्त करें ।

\* यहाँ सायणने लिखा है कि, "इन्द्रगणके पुत्र गोतम कुल-सृज्य लोगोंके राजाओंके पुरोहित थे । शत्रुओंके साथ राजाओंके युद्धमें प्रवृत्ता होनेपर गोतम ऋषिने इस सूक्त द्वारा इन्द्रको स्तुति करके अपने पक्षकी विभयके लिये प्रार्थना की थी ।

मदे मदे हि नो ददियूथा गजामृजुकृतः ।  
 संगृभाय पुरुशतो भयाहस्या वसु शिशोहि राय आ भर ॥ ७ ॥  
 मादयस्व सुते सत्वा शवसे शूर राघसे ।  
 विधा हि त्वा पुरुवसुमुष कामान्तससृज्महेऽया नोऽघिता भव ॥ ८ ॥  
 एते त इन्द्र जन्तवो विश्वं पुष्यन्ति वार्यम् ।  
 अन्तर्हि स्यो जनानामयो वेदो ऽद्वाशुषां तेषां नो वेद आ रर ॥ ९ ॥



८२ सूक्त । इन्द्र देवता हैं । जगती और पङ्क्ति छन्द हैं ।  
 उपो पु शृणुही गिरो मघवन्सानथा इव ।  
 यदा नः सूनृपावतः कर आदर्श्यास इद्योजान्दिन्द्र ते हरी ॥ १ ॥  
 वक्षन्तमीमदन्त एव प्रिया अघूपत ।  
 अस्तोपत स्वमानवो विप्रा नविण्डया मती योजान्विन्द्र ते हरी ॥ २ ॥  
 सुसदृशं त्वा वर्यं मघवन्दिधीमहि ।  
 प्र नृत्तं पूर्णवचुरः स्तुतो याहि वश्रं चतु योजान्विन्द्र ते हरी ॥ ३ ॥

● सोम पान कर हृष्ट होनेपर सरल कर्मा इन्द्र हमें सो-समूह देते हैं । इन्द्र ! हमें देनेके लिये बहु-शक्त-संख्यक या अपरिमेय अन्न अपने दोनों हाथोंमें प्रदण करो । हमें सीखा बुद्धिसे युक्त और धन प्रदान करो ।

८ शूर ! हमारे शक और धनके लिये हमारे साथ सोम-रस पान करके तुम धनो । तुम्हें हम बहु-धन-शाली जानते और अपनी अग्निदाया ज्ञात करते हैं । तुम हमारी रक्षा करो ।

१ इन्द्र ! ये तुम्हारे ही सब अनुषंग दावने प्रदण योग्यमें इष्टय परिश्रित करते हैं । जो लोग इष्टय नहीं प्रदान करते, हे अविन्वति ! हे इन्द्र ! उनका धन तुम जानते हो । उनका धन हमें दो ।

१ धनदाओ इन्द्र ! पाप भाजा हमारी स्तुति छनो । इस समय तुम परलेले मित्र-प्रकृति मत होना । तुमने ही हमें प्रिय और वर्य प्राप्त्यमे युक्त किया है । उसी वाक्यसे हम तुमसे पापना करते हैं । इसलिये अपने दोनों अश्व शीघ्र घोषित करो ।

२ तुम्हारा दिया हुआ भोजन करने यजमान लोग परिगृह्य हुए हैं एवं कतिशय रसास्वादनसे अपना प्रिय गरीर कम्पित किया है । दोसिमान् मेवाधियोनि अविन्वय स्तुति द्वारा तुम्हारा स्तुति की है । इन्द्रदेव ! अपने दोनों अश्व कीघ्र घोषित करो ।

३ मघयन् ! हम सबको हृषा-पूर्ण हृष्टिसे देखते हैं । हम तुम्हारी स्तुति करते हैं । स्तुत होकर तथा स्तोत्रार्थों द्वारा देय धनसे प्रति रय-युक्त होकर हम यजमानोंके पास आओ, जो तुम्हारी कामना करते हैं । इन्द्र ! अपने दोनों घोड़े रयमें संयुक्त करो ।

स घा तं वृषणं रथमधि तिष्ठति गोचिदम् ।

यः पात्रं हारियोजनं पूर्णमिन्द्र चिकेतसि योजान्विन्द्र ते हरी ॥ ४ ॥

युक्तस्ते अस्तु दक्षिण सत सञ्च्यः शताश्रतो ।

तेन जायामुप प्रियां मन्दानो याह्यन्धसो योजान्विन्द्र ते हरी ॥ ५ ॥

युनज्मि ते ब्रह्मणा केशिना हरी उप प्र याहि दधिपे गभस्स्योः ।

उत्त्वा सुतासो रभसा अमन्दिष्ठुः पूषएवान् वञ्चिन्त्समु पत्न्यामदः ॥ ६ ॥

८३ सूक्त । इन्द्र देवता हैं । जगती छन्द है ।

अश्वान्वति प्रथमो गोषु गच्छति सुप्राचीरिन्द्र मर्त्यस्तवोतिभिः ।

समित् पृणक्षि वसुना भवायसा सिन्धुमापा यथाभितो विचेतसः ॥ १ ॥

आपो न देवीरुष यन्ति होत्रियमवः पश्यन्ति विततं यथा रजः ।

प्राचैर्देवासः प्रणयन्ति देव्युं ब्रह्मप्रियं जोषयन्ते वरा इव ॥ २ ॥

अधि द्वयोरदधा उदथ्यं वचो यतस्त्रुचा मिथुना या सपर्यतः ।

असंयत्तो व्रते ते क्षेति पुष्यति भद्रा शक्तिर्यजमानाय सुवृत्ते ॥ ३ ॥

४ जो रथ अमीष्ट वस्तुका वर्षण करता, गाय देता तथा धान्यसे मिश्रित ( सोमरससे ) पूर्ण पात्र देता है, इन्द्र ! उसी रथपर चढ़ो । अपने घोड़े शीघ्र योजित करो ।

५ अतयञ्चरतां इन्द्र ! तुम्हारे रथके दाहिने और बायें अश्व संयुक्त हों । सोमपानसे हृष्ट होकर तुम उस रथ द्वारा अपनी प्रिया पत्नीके पास जाओ । अपने घोड़े संयोजित करो ।

६ तुम्हारे केवा-सम्पन्न दोनों-घोड़ोंके मैं स्तोत्र द्वारा रथमें संयोजित करता हूँ । अपनी दोनों भुजाओंमें घोड़ेको बाँधनेवाली रश्मि धारण करके वर जाओ । इस अभिपुत्र तीक्ष्ण सोमरससे तुम्हें हृष्ट किया है । धर्मिन् ! तुम सोमपानसे उत्पन्न तुष्टिसे युक्त होकर अपनी पत्नीके साथ भली भाँति हर्ष प्राप्त करो ।

१ इन्द्र तुम्हारे रक्षा द्वारा जो मनुष्य रक्षित है, वह अबववाले घरमें रहकर सर्व-प्रथम गौ प्राप्त करता है । जैसे विधिष्ट ज्ञान-दाता नदियाँ चारों ओरसे समुद्रको परिपूर्ण करती हैं, वैसे ही तुम भी अपने रक्षित मनुष्यको यथेष्ट धनसे परिपूर्ण करते हो ।

२ जैसे घु तिमाम् जल यज्ञ-पात्रमें जाता है, वैसे ही ऊपर रहनेवाले देवता लोग यज्ञ-पात्रको देखते हैं । उनको दृष्टि, सूर्य-किरणकी तरह, व्यापक है । जैसे अनेक वर एक ही कन्याको व्याहनेकी इच्छा करते हैं, वैसे ही देवता लोग सोम-पूर्ण और देवामिहापी पात्रको, उत्तर वेदीके सम्मुख लाकर, चाहते हैं ।

३ इन्द्र ! जो इष्य और धान्य, यज्ञ-पात्रमें, तुम्हें समर्पित किया गया है, उसमें तुमने संव्र-वचन संयुक्त किया है । यजमान, युद्धमें न जाकर, तुम्हारे काममें लगा रहता एवं पुष्टि प्राप्त करता है, क्योंकि सोमामिष्य-दाता बल-काम करता ही है ।

आदङ्गिराः प्रथमं दधिरे वय इद्धामयः शम्या ये सुकृत्वया ।

सर्वं पणोः समविन्द्रन्त भोजनमश्रावन्तं गोमन्तमा पशुंनरः ॥ ४ ॥

यद्यै रथर्वा प्रथमः पथस्ततेततः सूर्यो व्रतपा वेन आजनि ।

आगा आजदुशना फाण्यः सचा यमस्य ज्ञातममृतं यजामहे ॥ ५ ॥

बर्हिर्वा यत् स्वपत्याय अज्यतेऽर्को वा श्लोकमाघोपते दिवि ।

प्राचा यत्र घदति कारुवथ्य स्तस्येदिन्द्रो अभिपित्वेषु रथ्यति ॥ ६ ॥

— १२३ —

८४ सूक्त । इन्द्र देवता है । अनुष्टुप्में ६ मंत्र, उक्लिक्में ३, पक्लिक्में ३, गायत्रीमें ३,

त्रिष्टुप्में ३, वृहतीमें १ और सतोवृहती छन्दमें १ मंत्र हैं ।

असावि सोम इन्द्र ते शक्तिष्ठ धृष्णवागहि ।

आ स्वा पृषक्तिवन्द्रिषं रजः सूर्यो न रश्मिभिः ॥ १ ॥

इन्द्रमिद्धरी ब्रह्मोऽप्रतिधृष्टशवसम् ।

भृद्योणां च स्तुतीरुप यज्ञं च मानुषाणाम् ॥ २ ॥

आतिष्ठ बृत्रहनृथं युक्ता ते ब्रह्मणा हरी ।

अर्वाचीनं सु ते मनो प्राचा कृणोतु वग्नुवा ॥ ३ ॥

४ पहले अग्निग योर्गेने इन्द्रके लिये अन्न सम्पादित किया था । अन्तर उन्होंने अग्नि जला कर सुन्दर रागद्वारा इन्द्रकी पूजा की थी । यज्ञ-नेत्रा अङ्गितोपस्त्रीयोने अथव, गौ और अन्य पशुओंसे युक्त सारा धन प्राप्त किया था ।

५ अथर्वा मायके ऋषिने, पहले, यज्ञ-द्वारा सुरायी हुई गायोंका रास्ता प्रदर्शित किया था । अनन्तर व्रत-पालक और काम्नि-पिनिष्ठ सूर्य-रूप इन्द्र अभिर्भूत हुए थे । गौओंको अथर्वाने प्राप्त किया । कविके पुत्र उवाना या भृगुने इन्द्रकी सहायता की थी । लघुओंके धमनके लिये इत्यम्न और अमर इन्द्रकी हम पूजा करते हैं ।

६ इन्द्र-कण-युक्त यज्ञके लिये जिस समय कुराका छेदन किया जाता है, उस समय स्तोत्र-सम्पादक होता धृतिमान् यज्ञमें स्तोत्र उद्घोषित करता है । जिस समय सोम-विस्फण्डी प्रस्तर, धास्त्रोय स्वपन-कारी स्तोत्राकी तरह, शब्द करता है, उस समय इन्द्र प्रमत्त होते हैं ।

१ इन्द्र ! तुम्हारे लिये सोमरस तैयार है । हे शक्तिष्ठ और शत्र-वन ! इन्द्र ! आओ । जैसे सूर्य, किरण द्वारा, अस्त-रीशको पूर्ण करते हैं, धैसे ही प्रभूत शक्ति तुम्हें पूरित करे ।

२ इन्द्रके दोनों हरि नामके घोड़े हिला-विरहित पशुवाले इन्द्रकी शक्तिष्ठ आदि ऋषियों और मनुष्योंकी स्तुति और यज्ञके समोप बहन करें ।

३ हे यज्ञ-हस्ता इन्द्र ! रथपर चढ़ो; क्योंकि तुम्हारे दोनों घोड़े मंत्र द्वारा रथमें हमारे द्वारा संयोजित किये गये हैं । सोम-विस्फण्डी प्रस्तर द्वारा अपना मन हमारी ओर करो ।

इममिन्द्र सुतं पिव ज्येष्ठममर्त्यं मदम् ।

शुकस्य त्वाभ्यक्षरन्धारा ऋषस्य सादने ॥ ४ ॥

इन्द्राय नूनमर्चतोक्तथानि च व्रथीतन ।

सुता अमत्सुरिन्दो ज्येष्ठं नमस्यता सहः ॥ ५ ॥

नक्षिण्वद्रधीतरो हरी यदिन्द्र यच्छले ।

नक्षिण्वानु मज्जना नकिः स्वश्वः आनशो ॥ ६ ॥

य एक इक्षिद्यते वसु मर्ताथ दाशुपे ।

ईशानो अप्रतिष्कृत इन्द्रो अङ्ग ॥ ७ ॥

कदा मर्तेमराधसं पदा क्षुन्यमिव स्फुरत् । कदा नः शुश्रुक्षिर इन्द्रो अङ्ग ॥ ८ ॥

यश्चिद्धि तथा बहुभ्य आ सुतावां आधिवासति । उग्रं तत्पत्यते शव इन्द्रो अङ्ग ॥ ९ ॥

स्वाद्धोरित्या विपुवतो प्रध्वः पिबन्ति गौर्यः ।

या इन्द्रेण सथावरीवृष्णा मदनित शोभसे वरुवारानु स्वराज्यम् ॥ १० ॥

ता अस्य पृशनायुवः सोमं श्रीणन्ति पृशनयः ।

प्रिया इन्द्रस्य धेनवो वज्रं हिन्वन्ति सायकं वस्वीरानु स्वराज्यम् ॥ ११ ॥

ता अस्य नमसा सहः सपर्यन्ति प्रचेतसः ।

प्रतान्यस्य सश्चिरे पुरूणि पूर्वचित्तये वस्वीरानु स्वराज्यम् ॥ १२ ॥

४ इन्द्र ! तुम हल अवीध प्रलस्य, हय-दायक या मादक और अमर सोमरसका पान करो । यज्ञ-गृहमें यह दीसिमान् सोमवात तुम्हारी ओर बहती है ।

५ इन्द्रको तुरत पूजा करो; उनकी स्तुति करो; अभिषुत सोमरस इन्द्रको प्रसन्न करे; प्रशंसनीय और वरुवान् इन्द्रको प्रणाम करो ।

६ इन्द्र ! जिस समय तुम रथमें अपने घोड़े जोत देते हो, उस समय तुमने बढ़कर रथो कोई नहीं रहता । तुम्हारे वरावर न तो कोई बली है और न सुशोभन लक्ष्मणवाला ।

७ जो इन्द्र केवल हय-दाता यजमानको हय प्रदान करते हैं, वह समस्त संसारके शोष स्वामी हो जाते हैं ।

८ जो हय नहीं देता, उसे मण्डलाकार सपेको तरह इन्द्र कब पैरोंसे रोंदेंगे ? इन्द्र कब हमारा स्तुति सुनेंगे ?

९ इन्द्र ! जो अभिषुत सोम द्वारा तुम्हारी सेवा करता है, उसे तुम शोष धन देते हो ।

१० गौर वर्ण गायें सुस्वादु एवं सब यज्ञोंमें व्याप्त मधुर सोमरसका पान करतो है । सोमके लिये वे गायें अभीष्टदाता इन्द्रके साथ गमन करके प्रसन्न होते हैं । ये सब गायें इन्द्रका राजत्व या 'स्वराज्य' लक्ष्य कर अवस्थित हैं ।

११ इन्द्रदेवकी स्पशानिलाषणा उक्त नाना वर्णकी गायें सोमके साथ अपना दुग्ध पिलाता हैं । इन्द्रको प्यारो गायें धनुआंशु सर्ध-शत्रु संहारी वज्र प्ररित करतो हैं । ये गायें इन्द्रका राजत्व लक्ष्य कर अवस्थान करतो हैं ।

१२ ये प्रकृत-ज्ञान-युक्त गायें अपने दुग्ध-रूप अन्न द्वारा इन्द्रके बलको पूजा करता हैं । ये गायें युद्धकारी शत्रुओंको पहचनें ही, परिज्ञानके लिये, इन्द्रके धनु-विनाश आदि अनेक कार्योंको घोषित करतो हैं । ये गायें इन्द्रका राजत्व लक्ष्य कर अवस्थित हैं ।

इन्द्रो दधीको अस्यमिन्द्रं प्राण्यप्रतिष्कृतः । जज्ञान नवतानव ॥ १३ ॥  
 इच्छन्मश्वस्य दक्षिणः पर्वतं पश्यति ॥ इच्छन्मश्वस्य दक्षिणः पर्वतं पश्यति ॥ १४ ॥  
 अथाह धीरमन्वस्य नाम त्वष्टुरपीच्यम् । इत्था चन्द्रमसो शुभे ॥ १५ ॥  
 एषो अथ शुक्रो धुरि मा अश्वस्य धिमीवतो भासिनो दुष्टं पायून् ।  
 आसन्निद्वन्द्वस्यो गयोदस्य एषो भूत्वारुणस्य ३ जीवार ॥ १६ ॥  
 ए इयते तुज्यते एषो विभाय एष मंसते सन्तमिन्द्रं का अन्ति ।  
 कस्तोकाय क इभायंत आयोऽधिद्वत्तन्वे एषो जानाय ॥ १७ ॥  
 एषो अग्निमीष्टे त्रिषा नृतेन कृत्वा यज्ञात्वा मृतुनिधुवेभिः ।  
 कस्मै देवा आवतानाशु ताम एषो मंसते वीतिहोत्रः सुदेवः ॥ १८ ॥

१३ अतिथिपत्नी इन्द्रने दधीक कापिका उडियांते वृत्र आदि अशुरांको नवगुण-नवति वा ८१० धार मार था । x

१४ पर्वतमें छिपे हुए दधीक के अवन-मस्तकको पाने का इच्छासे इन्द्रने उस मस्तकको शपणावति नामके सरोवरमें प्राप्त किया ।

१५ इस पामनशील चन्द्रमण्डलमें अन्तर्हित जो त्वष्टु-तेज वा सृष्ट-तेज है, वह आदित्य-रश्मि ही है—ऐसा जाना । \*

१६ आज इन्द्रकी पतिगात्र-धुरामें घोधं-युक्त, तेजोमय, दुःसह-प्राथ-सम्पन्न घोड़ेने कौन संयोजित कर सकता है ? इन घोड़ोंके मुँहमें बाण अथवा है । कौन शत्रुओंके हृदयमें पाद-क्षेप और मित्रोंको छल प्रदान करते हैं—अर्थात् वे ही अश्व, जो इन अश्वोंके कार्योंका प्रयोग करते हैं । ये क्षेप जीवन प्राप्त करते हैं ।

१७ शत्रुओंके बरते कौन विकल्पेगा ? शत्रुओंके हाथ कौन भट होता है ? समीपस्थ इन्द्रको कौन रक्षक-रूपसे जानता है ? कौन पुत्रके लिये, अपने लिये, अथवा लिये, शत्रुओंके शत्रुके लिये अथवा परिजनको रक्षाके लिये इन्द्रके पास प्रार्थना करता है ?

१८ इन्द्रके लिये अग्नि-ही स्तुति कौन करता है ? एतन्मः आदि सितर वासुओंको उपलब्धकर पात्र-स्थित हव्यवृत्त द्वारा कौन पूजा करता है ? इन्द्रको छात्रक-रन्ध्र-यौन देवता किन यज्ञमानजो तरह पशुपतयोध धन ग्यान करते हैं ? यज्ञ-भरत और देव-प्रवाद-मन्त्रर कौन यज्ञमात्र इन्द्रको शक्यताम आचरते ?

x सप्त-साधारणमें प्रचलित दधीक-सम्बन्धनी कथा इस सन्तर्भमें स्पष्ट है । ११६ सूक्तके १२ मंत्रका टोकाम भी ऐसी ही कथा है । सायणने दोनों सन्तर्भोंमें एसा उपाख्यान किया है—“अथर्वा क्रयिके पुत्र दधीकिको इन्द्रने मधुविद्या सिखा कर कहा था कि, यदि यह विद्या किसीको सिखायांगे तो तुम्हारा सिर काट दिया जायगा । अथर्वा अग्निवमोऽश्वारोने मधुविद्या सीखनेकी इच्छासे दधीकिका सिर काट किया और अग्नि वमोऽश्वारोने सिर काट कर पशुना दिया । घोड़ेके सिरसे हा दधीकिके कुमरोंको विद्या पता दी । अनन्तर कोयमें आकर इन्द्रने यथा वादावाला मस्तक काट लिया । अथर्वा कुमरोंने दधीकिको पहला काटा हुआ और अन्यत्र रथा हुआ सिर पहना दिया । दधीकिके मृत्युके अनन्तर अशुरोंने जपन सवागा प्रारम्भ किया । यह देख कर उस घोड़ेके पैके मस्तकको श्रेय कर इन्द्रने उसके सिरकी हड्डीका धजा बनाकर वृत्रादिकों मारा था ।” सायणाचार्यके इस उपाख्यानसे पौराणिक उपाख्यानके साथ बंधासा सम्बन्धता है ; जो ही, परन्तु पुराणके अधिकांश उपाख्यानोंका मूल रूप वेदोंमें पाया जाता है—इसमें अन्वय नहीं । इससे लोग पुराणोंको वेदोंका उपाख्यान-ग्रन्थ मानते हैं ।

\* सायणाचार्यने यहाँ निरुक्त ( २१६ ) उद्धृत किया है—“आदित्यतः अथ दीप्तिर्भवति” अर्थात् सूर्यको ही एक किण्वन-सन्तर्भमें प्रकाश होता है । इससे विधिवत होता है कि, अर्थात् ही ज्योतिष्यकी इस बातके भावि जाता है ।



त्वमङ्ग प्र शंसिषो देवः शविष्ठ मर्त्यम् ।  
 न त्वदन्यो मघवन्नस्ति मङ्गितेन्द्र प्रवीमि ते वचः ॥ १६ ॥  
 मा ते राषांसि मा त ऊतयो वसोऽस्मान् कदा चना दमन् ।  
 विश्वा च न उप मिमोहि मानुष वसूनि चर्षणिभ्य आ ॥ २० ॥



१४ अनुवाक । ८५ सूक्त । मरुद्गण देवता हैं । त्रिष्टुप् और जगती छन्द है ।

प्र ये शुभन्ते जनयो न सप्तयो वामन् रुद्रस्य सूतवः सुदंससतः ।  
 रोदसी हि मरुतश्चक्रिरे बृधे मदन्ति वीरा विदथेषु घृष्वयः ॥ १ ॥  
 त उक्षितासो महिमानमाशत दिवि रुद्रासो अधिचक्रिरे सदः ।  
 अर्चन्तो अकं जनयन्त इन्द्रियमधिश्चियां दधिरे पृश्निमातरः ॥ २ ॥  
 गोमातरो यच्छुभयन्ते अङ्गिमिस्तनूषुशुभ्रा दधिरे विरुक्मतः ।  
 वाधन्ते विश्वममिमातिनमप वर्मान्येषामनु रीयते धृतम् ॥ ३ ॥  
 वि ये भ्राजन्ते सुमखास ऋष्टिभिः प्रच्यावयन्तो अच्युता विदोजसा ।  
 मनोजुवो यन्मरुतो रथेष्व्वा वृषत्रातासः पृषतीरयुध्वम् ॥४॥

१९ हे बलिष्ठ देव इन्द्र ! स्तुति-परायण मनुष्यकी तुम प्रशंसा करो । हे भववन् ! तुम्हें छोड़कर और कोई उखदाता नहीं है । इसलिये मैं तुम्हारे स्तुति करता हूँ ।

२० हे निवास-स्थान-दाता इन्द्र ! तुम्हारे भूतगण और सहायक-रूप शत्रु गण या मरुद्गण इमारों कमी बिनाश नहीं करें । हे मनुष्य-हितैषी इन्द्र ! हम मंत्रद्रष्टा हैं; तुम हमारे लिये धन का दो । \*

१ गमन-थेजसमें मरुत् लोग, स्त्रियोंकी तरह, अपने शरीरको सजाते हैं; वे गतिशील रुद्रके पुत्र हैं । उन्होंने दिवकर कायों द्वारा आकाश और पृथिवीको वर्द्धित किया है । घोर और चर्षणशील मरुद्गण यज्ञमें सोमपान द्वारा आनन्द प्राप्त करते हैं ।

२ ये मरुद्गण देवों द्वारा अभिविक्त होकर महत्त्व प्राप्त कर चुके हैं । रुद्र पुत्रोंने आकाशमें स्थान प्राप्त किया है । पून-वीर्य इन्द्रकी पूजा करके तथा इन्द्रको वीर्यक्षात्री करके पृथिवि या पृथिवीके पुत्र मरुत्ोंने पेशवय प्राप्त किया था ।

३ गौ या पृथिवीके पुत्र मरुद्गण जब अलंकारों द्वारा अपनेको घोमा-सम्पन्न करते हैं, तब दोस मरुद्गण अपने शरीरमें उज्ज्वल अलंकार धारण करते हैं । वे सारे शत्रुओंका विनाश करते हैं; और, मरुत्ओंके मागका अनुगमन करके वृष्टि होती है ।

४ इन्द्रर यज्ञसे युक्त मरुद्गण आयुषके द्वारा विशेष रूपसे दोसिवान् होते हैं । वे स्वयं स्थिर होकर पर्वत आदिको सो, अपने षक्त द्वारा, उत्पादित करते हैं । जिस समय तुम लोग रथमें विष्णु-चिह्नित घृग संयोजित करते हो, उस समय हे मरुद्गण ! तुम लोग मनकी तरह वेगवान् और वृष्टि-सेवन-कार्यमें नियुक्त होते हो ।

\* १९ सूक्तके १ मंत्रमें देवोंकी तरह शत्रुओंकी उपासनाकी बात है ।

प्र यद्रथेषु पृथतीरयुध्वं वाजे अद्रिमरुतो रह्यन्तः ।  
 उत्तारूपस्य विष्यन्ति धाराभ्रमेधोदमिर्व्युन्दन्ति भूम ॥ ५ ॥  
 वा वो वहन्तु सप्तयो रद्युष्यदो रद्युपत्स्यानः प्र जिगात् वाहुभिः ।  
 सीदता वर्हिरु वः सदस्कृतं मादयध्वं मरुतो मध्वो अन्धसः ॥ ६ ॥  
 तेष्वर्धन्त स्वतवसो महिरवना मार्कं तस्थुरु वक्त्रिरे सदः ।  
 विष्णुर्यद्वावद्व पणं मदच्युतं धयो न सीदन्तधि वर्हिपि प्रिये ॥ ७ ॥  
 शूरा इवेद्यु युधयो न जग्मयः श्रवस्यवो न पृतनासु येतिरे ।  
 भयन्ते विश्वा भुवना मरुदुभ्यो राजान इव त्वेषसन्दूशो नरः ॥ ८ ॥  
 स्वष्टा यद्वज्रं सुकृतं हिरण्यथं सहस्रभृष्टिं स्वपा अवर्तयत् ।  
 धत्त इन्द्रो नर्यपांसि कर्तवेऽहन्वृत्रं निरपामौजदर्णवम् ॥ ९ ॥  
 ऊर्ध्वं नुनुद्रेऽवतं त भोजसा दाह्रहाणं चिद्विभिदुर्वि पर्वतम् ।  
 धमन्तो घाणं मरुतः सदानयो मवे सोमस्य रर्यानि चक्रिरे ॥ १० ॥  
 जिज्ञं नुनुद्रेऽवतं तथा दिशासिञ्चन्तुसं गोतमाय तृष्णजे ।  
 आगच्छन्तीमवसा चित्रमानवः कामं विप्रस्य तर्पयन्त धामभिः ॥ ११ ॥  
 वा वः शर्म शशमानाय सन्ति त्रिधातूनि दाशुपे यच्छताधि ।

५ अन्नके लिये मेघरो घणगायं प्रारण करके विन्दुचिह्नित पृथको रथमें लगाओ। उस समय उज्ज्वल सूर्यके पाससे पारि-धारा वृष्टां है तथा घनकी तरह जलसे मारी भूमि भीग जाती है।

६ मरुतो ! सुन्दारं घणयान् और शीघ्रगामी चोढ़े तुम्हें इस यज्ञमें ले आवें। तुम लोग शीघ्र-गस्ता हो—हाथमें घन लेकर आओ। मरुतो ! विद्युत्के रूप कुतोंपर धंडो और सजुर सोमरसका पाव कर वृत्त बनो।

७ मरुदगाण अपने वक्षपर यढ़े हैं। अपनी महिमाके कारण स्वर्गमें स्थान प्राप्त कर चुके हैं। इसी प्रकार घास-स्थान विस्तार कर चुके हैं। जिसके लिये दिष्णु मनोरथदाता और आह्लादकर यज्ञकी रक्षा करते हैं, वे ही मरुत लोग, पक्षियोंकी तरह, शीघ्र आकर इस प्रसन्नता-दायक कुशापर देंगे।

८ शूर्पो, युद्धार्थियों तथा कोर्त्ति या अन्नके प्रेसों पुरुषोंकी तरह शीघ्रगामी मरुदगाण संग्राममें लिस हुए हैं। सारा विश्व उन महर्षीमें भरता है। ये नेता हैं एवं राजाकी तरह उग्र-रूप हैं।

९ शोभन-कर्मा स्वप्नाने जो छिनिमित्त, छवणमय और अनेक-धारा-सम्पन्न यज्ञ इन्द्रको दिया था, उसे ही, इन्द्रने, इन्द्राईमें कार्य-साधन करनेके लिये, लेकर जल-युक्त मेघ या वृत्रको घष किया था तथा पारि-धारा गिरायी थी।

१० मरुतोंने अपने वक्षपर कूपको ऊपर उठाकर पयन्निरोधक पर्वतको भिन्न किया था। शोभन-दानकील मरुतोंने घणगाजा बना कर तथा सोमपावसे प्रसन्न होकर रमणीय घन दिया था। \*

११ मरुतोंने उग्र गोतमकी ओर कूको टेढ़ा किया तथा पिपासित गोतम ऋषिके लिये जलका सिद्धन किया। विलक्षण कीर्तिसे युक्त मरुत लोग रक्षाके लिये आये पृथं बीषनोपाय जल द्वारा मेघाचो गोतमकी वृत्ति की।

\* "एक पार गोतम ऋषिने पिपासा-वीकृत होकर मरुतोंसे पानीके लिये प्रार्थना की। मरुतोंने दूरस्थित एक कूप

अस्मभ्यं तानि मरुतो वि यन्त रधिं नो धत्त वृषणः सुवीरम् ॥ १२ ॥



८६ सूक्त । मरुद्गण देवता हैं । गायत्री छन्द है ।

मरुतो यस्य हि क्षये पाथा दिवो विमहसः । स सुगोपातमो जनः ॥ १ ॥

यज्ञैर्वा यज्ञवाहसो विप्रस्य वा मतीनाम् । मरुतः शृणुता हवम् ॥ २ ॥

उत वा यस्य वाजिनोऽनु विप्रमतक्षत । स गन्ता गोमति ब्रजे ॥ ३ ॥

अस्य वीरस्य वर्हिपि सुतः सोमो दिविष्णुषु । उक्थं मदश्च शस्यते ॥ ४ ॥

अस्य श्रोणन्त्वा भ्रुवो विश्वा यश्चर्पणीरभि । हूरं नित् सस्यु पीरिषः ॥ ५ ॥

पूर्वाभिर्हि ददाशिम क्षरद्विंशतो वयत् । अत्रोभिश्चर्पणीनाम् ॥ ६ ॥

सुभगः स प्रयज्यवो मरुतो अस्तु मर्त्यः । यस्य प्रवासि पर्यथ ॥ ७ ॥

१२ मरुतो ! पृथिवी आदि क्षीणों लोकोंमें अपने स्तोत्राणोंको देने लायक नो तुम्हारे पास छत्र है, उसे तुमलोग हव्य-  
क्षाराको प्रदान करो । वह सब हमें दो । हे अक्षीणकणप्रद ! हमें वीर-पुत्र आदिके सुक्त धर्म दो ।

१ हे उज्ज्वल मरुद्गण ! अन्तरीक्षसे जाकर तुम जिलके यज्ञ-गृहमें सोमपान करते हो, यह मनुष्य शोभन रक्षकोंसे युक्त होता है ।

२ हे यज्ञवाहक मरुद्गण ! उज्ञ-परक्षण यज्ञवाहकी स्तुति अथवा मेधाधीका आर्घ्यान करने ।

३ यज्ञवाहके ऋत्विक् लोगोंने मरुतोंको, हव्य प्रदान द्वारा, उत्साहित किया है । वह यज्ञमान दाना गौओंवाले गोष्ठमें जाता है ।

४ यज्ञके दिनोंमें वीर मरुतोंके लिये उज्ञमें सोम अस्मिष्टुत किया जाता है एवं मरुतोंकी प्रसन्नताके लिये स्तोत्र पठित होता है ।

५ सर्व-शत्रु-जेषा मरुद्गण स्तोत्राको स्तुति करने एवं स्तोत्रा श्रम प्रसन्न करें ।x

६ मरुद्गण ! हम सर्व-क्षारा मरुतों का तुम्हारे द्वारा रक्षित होकर तुम्हें अनेक वसोंसे हव्य देते हैं ।

७ यज्ञवीर्य मरुद्गण ! जिसका हव्य हम अर्पण करते हो, वह सौभाग्यशाही है ।

को लाकर गौतम ऋषिके पास रख दिया और ऋषिके पास चहचहचा ( आह्व ) बजाकर और कृपको देदा कर उसमें अन्न भर दिया । ऋषिने जल पान कर तुमि प्राप्त की ।—लायण । ११६ सूक्तके ९ मंत्रमें जो पृथ्वी आद्यकी चर्चा है । मूलमें जो “वाणम्” शब्द है, उसका अर्थ वायुजने वाणा किया है; परन्तु वैक्समूलरने शब्द किया है । मिक्षिश्रमाकी भी यही बात है । उद्यर विहसवने “धक्षी” अर्थ किया है—“Blowing upon their pipe.”

x वैक्समूलरने मंत्रके “सूरं” शब्दका अर्थ सूर्य और “रदा” का अर्थ भेद किया है—“As the flowing rain-clouds pass over the sun,” परन्तु मिक्षिश्रमा इल दूसरा ही अर्थ है—“Strength be his that reaches over to the sun.”

शशमानस्य वा नरः स्वेदस्य सत्यशवसः । विद्रा कामस्य वेनतः ॥ ८ ॥  
 यूर्यं तत् सत्यशवस आविष्कृतं महिदवना । विधना विद्युता रक्षः ॥ ९ ॥  
 गूहता गुह्यं तमो वि यात विश्वमंत्रिणस् । ज्योतिष्कर्ता यदुश्मति ॥ १० ॥



८० सूक्त । मरुद्गण देवता हैं । जगती छन्द हैं ।

प्रत्वक्षसः प्रतवसो विरप्शिनोऽनानसा अविथुदा ऋजीषिणः ।  
 जुष्टतमालो नृतमालो बक्षिभिव्यानज्रो के चिदुक्ता इव स्तुभिः ॥ १ ॥  
 उपहरेषु यदन्निध्वं यद्यि यन इत्र मरुतः केनचित् पथा ।  
 ध्योतन्ति कोशा उप वो रथेष्व्वा घृतमुक्षता सधुवर्णमर्चते ॥ २ ॥  
 प्रौषामजोषु विशुरेघ रेज ते भूमिर्यामेसु यद्द युञ्जते शुभे ।  
 ते क्रीडयो धुनयो भ्राजदृष्टयः स्वयं महित्वं पनयन्त धृतयः ॥ ३ ॥  
 सहि स्वस्तृपदशवो युवा गणो या ईशानस्तविषीभिरावृतः ।  
 असि सत्य ऋणयावानेद्योऽस्या धियः प्राविताथा हृषा गणः ॥ ४ ॥

८ हे प्रकृत-बल-सम्पन्न नेता मरुद्गण ! तुम्हारे प्रकृति-तत्पर और मंत्र उच्चारण करनेके कारण परिश्रमसे उत्पन्न स्वैय-सम्पन्न पद जपने अगिष्टायो स्वोतागोको अमिलाया समझो ।

१ सत्य-बल-सम्पन्न मरुद्गण ! तुम उज्ज्वल माहात्म्य प्रकट करो तथा उसके द्वारा राक्षस आदिको विनष्ट करो ।

१० सार्वभौम उन्धकारको श्टाओ, राक्षस आदि सब सक्षरोंको दूर करो; जो अभीष्ट ज्योति इष्टं चाहिये, उसे प्रकाशित करो ।



१ मरुद्गण शत्रु-घातक, प्रकृत-बल-सम्पन्न, उग्र घोष-युक्त, सर्वोत्कृष्ट, संवीभूत, अवशिष्ट ( ऋजीष )-सोम-पाथी, यज-मार्गों द्वारा सेवित और मेघ आदिके नेता हैं । मरुद्गण, आभरण द्वारा, सूर्य-किरणोंकी तरह प्रकाशित हुए ।

२ मरुद्गण ! जिस समय पक्षीकी तरह किसी मार्गसे प्रौघ दौड़कर पासके आकाशमण्डलमें तुम लोग गतिशील मेवोंको पकड़ करते हो, उस समय सब मेघ तुम्हारे रथोंमें आसक्त होकर धारि वर्षण करते हैं; इसलिये तुम अपने पूजकके ऊपर सधुके समान स्वच्छ जलका सिञ्चन करो ।

३ मंगल-विधायिनी वृष्टिकी तरह जिस समय मरुत लोग मेवोंको तैयार करते हैं, उस समय मरुद्गण द्वारा उत्कृष्ट मेवोंको नियमित हुए देबकर, पति-रहिता स्त्रीको तरह, पृथिवी काँपने लाहरी है । ऐसे विहरणशील, गति-विक्रिष्ट और प्रदीप्त-युव मरुद्गण पर्वत आदिको कम्पित करके अपनी मद्रिया प्रष्ट करते हैं ।

४ मरुद्गण स्वयमेव संघाशित हैं । क्षेत्र-निन्दु-क गुण सक्षरोंका अक्षर हैं । मरुत लोग उरुण, सीधैवाकी और क्षमता-सम्पन्न हैं । मरुतो, तुम सत्यरूप हो, ऋणसे मुक्त करते हो । तुम निन्द्या-रहित और जल वर्षण करनेवाले हो । तुम इनारे पजके रक्षक हो ।

पितुः प्रज्ञस्य जन्मना वदामसि सोमस्य जिह्वा प्र जिगति चक्षस्ता ।  
यदीन्द्रं शम्यक्काण आशतादिजामानि यद्वियानि दधिरे ॥ ५ ॥  
श्रियसे कं भानुमिः सं मिमिक्षिरे ते रश्मिभि स्त द्रक्षमिः सुजादयः ।  
ते वाशीमन्त इक्षिमणो अभीरवो विद्रे प्रियस्यं मावतस्य धासः ॥ ६ ॥

८८ सूक्त । मरुद्गण देवता हैं । प्रस्तार, पंक्ति, विराट् आदि छन्द हैं ।

आ विद्युन्मद्भिर्मरुतः स्वर्कै रथोभिर्यत ष्टुष्टिमद्विरुहवर्षणः ।  
आ वर्षिष्ठया न हृषा वयो न प्रतता सुमाथाः ॥ १ ॥  
तेऽरुणेभिर्वरमा पिशाङ्गैः शुभे कं यान्ति रथतूर्भिरुधैः ।  
स्वमो न चित्रः स्वधितीडान् पन्था रथस्य जलघ्नन्ता भूम ॥ २ ॥  
श्रिये कं वो अधि तनूषु वाशीर्मधा वना न कृणवन्त उद्धार्या ।  
युष्मभ्यं कं मरुतः सुजादास्तु विद्युन्नासो धनवन्त अधिद्रु ॥ ३ ॥  
अहानि शृङ्गाः पर्या व आगुरिमां धियं वाकर्यां च देवीम् ।  
ब्रह्म कुरवन्तो गोतमासो अकैरुर्ध्वं तुमुद्ग रत्सधिं पिवध्वे ॥ ४ ॥

१ अपने पूजार्थों द्वारा उपविष्ट होकर हम कहते हैं कि, सोमकी आहुतिके साथ मरुतोंको स्तुति-वाक्य प्राप्त होता है । मरुतलोग, वृत्र-वध-कार्यमें, इन्द्रकी स्तुति करते हुए उपस्थित थे और इस तरह धन्व-योग्य नाम धारण किया था ।

६ जीवोंके उपयोगके लिये, वे, मरुद्गण, दीप्तिमान् सूर्यकी किरणोंके साथ वारि-वर्षण करना चाहते हैं । वे स्तुतिवाले ऋषिवाक्योंके साथ आनन्द-दायक हव्यका भक्षण करते हैं । स्तुति-युक्त, वेगवान् और निर्भीक मरुद्गणने सर्वांप्रथ-मरुद्गण-सम्बन्ध विक्रिष्ट स्थानको प्राप्त किया है ।

१ मरुद्गण, तुम बिजली या दीप्तिसे युक्त, सोमल गमनवाले, षष्ठ्यवाली और अहव-संयुक्त मेघ या शपर आरोहण करके आओ । सोमनकर्मा इन्द्र ! प्रभूत अन्वके साथ, पक्षीकी तरह, हमारे पास आओ ।

२ मरुद्गण अरुण और पिङ्गलवाले रथ-प्ररेक वाहनों द्वारा किस स्तोत्राका कल्याण करनेके लिये आते हैं ? सोनेकी तरह दीप्तिमान् और शत्रु-नाशकारी तथा बाल्जवाली मरुद्गण रथ-चक्र द्वारा भूमिको पीछित करते हैं ।

३ मरुद्गण, पेशवर्ष-प्राप्तिके लिये तुम्हारे क्षीरमें द्रव्योंका संक्षारक शस्त्र है । मरुद्गण वन, वृक्ष आदिकी तरह यज्ञको ऊपर करते हैं । सज्जमा मरुद्गण, तुम्हारे लिये प्रभूत-धन-वाकी यज्ञवाच लोग सोम-पितृस्यन्दी पत्यरको धन-सम्पन्न करते हैं ।

४ जलामिकापी गोतमगण, तुम्हारे सुखके दिन आये हैं और आकर जल-निष्पाद्य यज्ञको तु तिमाम्बु किया है । गोतमोंने स्तुतिके साथ हव्य दान करके ऋजुपानाथे कूपको ठकया था ।

एतस्यन्व योजनमचेति सस्वर्ह यन्मस्तो गोतमो वः ।

पश्यन् द्विपयधक्षानयोर्वृष्टान्निधावतो वराह्वर ॥ ५ ॥

एषा स्या नो प्रक्तोऽनुभर्त्री प्रशिञ्जोभति वाधतो न वाणी ।

अस्तोभयद्वृष्टयासामनु स्वधां गमस्तयोः ॥ ६ ॥

— १२११११११ —

८९ सूक्त । विश्वदेवगण देवता हैं । जगतो, विराट्, विश्विष् आदि छन्द हैं ।

आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्रतोऽर्कशासो अपरोतास उद्द्विरः ।

देवा नो यथा सवमिद्रुधे असन्नापयुवो रक्षितारो दिवेदिवे ॥ १ ॥

येशानां भद्रा सुममिर्न जूयतां देवानां रातिरभि नो नि वर्तताम् ।

देवानां सङ्गमृष मेदिमा वयं देवा न आयुः प्र तिरन्तु जीवसे ॥ २ ॥

सान् पूर्वया निदिदा हूमहे वयं भगं मिन्नमदिदिं बक्षमलिभ्रम् ।

अयंमणं वरुणं सोममश्रिका सरस्वती नः सुमगा मयस्करत् ॥ ३ ॥

तन्नो घातो मयोभु घातु भषजं तन्माता वृथिवी तस्पिता द्यौः ।

तद्दमावाणः सोमस्तुतो मयोभुवस्तदश्रिवना ष्टणुतं धिष्ण्या युधम् ॥ ४ ॥

तमोशानं जगतस्तस्युपस्पति धियञ्जिन्वमवसे हूमहे वयम् ।

पूषा नो यथा वेदसाससद्रुधे रक्षिता पायुरद्वयः स्वस्तये ॥ ५ ॥

१ सप्तमगण विराट्, अक-गण, ताल्, तौरमय चक्र-धातये युक्त, ह्यर-वधर दौर्घनेवाले और प्रबल-शत्रु-हन्ता हैं। उद्द्विरुद्धर गोत्रम अश्विने जिम हतोत्रका उपासन किया था, यह यगी स्तुति है ।

६ सप्तमगण, हम लोगोंने प्रणिक्रमो योग्य स्तुति स्तव करतो है । श्रुतियों-जि वाणोने तुम समय, अनायास, इन ऋचा-ओंमें, गुन्डारी स्तुति की है; क्योंकि तुम लोगोंने हमारे आयार बहु-विव अन्न स्थापित किया है ।

१ ऋषयागवादी, अर्हिमित, अग्रनिवध और शत्रु-नाशक समस्त चक्र चारों ओरसे हमें प्राप्त हों या हमारे पास आवें जो हमें न लोह कर प्रतिदिम हमारी रक्षा करते हैं; ये ही देवता सदा हमें परिवर्द्धित करें ।

२ यज्ञमान-प्रिय देवता लोग ऋषयाग-आहुत अनुग्रह हमारे सामने लें जायें और हमका दान भी हमारे सामने जायें । हम सब देवोंका अनुग्रह प्राप्त करें और ये हमारी आयु बढ़ावें ।

३ हम देवोंका पूर्वके वंशस्वरु पाश्य द्वारा हम बुझाते हैं । भव, मित्र, अदिति, दश, अश्वि या मरुद्गण, अर्जना, पदम, सोम और अदिवद्रको बुझाते हैं । सोमवयसात्मिनी सरस्वती हमारे घलका सम्पादन करें ।

४ हमारे पास पायुदेव ऊषरग-आहुत भेषज लें जायें; माता मेदिनी और पिता ध्रुलोक भी लें जायें । सोम-नित्यन्दी और उल्लर प्रसर मा सब जीवको लें जायें । ध्यान द्वारा प्राप्त करने जायक अश्विनोद्गुमारह्य, तुम लोग हमारी वाचना सुनो ।

५ सब देवयज्ञात्मिनी, स्थावर और जंगमके अधिपति और यज्ञतोष द्रुक्को, अपनी रक्षाके लिये, हम बुझाते हैं । जैसे पूरा हमारे सबका वृद्धिके लिये रक्षण-श्रील हैं, वैसे ही अर्हिमित पूषा हमारे भंगकके लिये रक्षक हों ।

स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्तिनः पूषा विश्ववेदाः ।  
 स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु ॥ ६ ॥  
 श्वश्रवा मरुतः पृथिमातरः शुभंयाचानो विदथेषु जरमयः ।  
 अग्निजिह्वा भनत्रः सूरचक्षसो विश्वे नो देवा अदसागमन्निह ॥ ७ ॥  
 भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येसाक्षिर्यजत्राः ।  
 स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवांसस्तनूमिर्व्यशेम देवहितं यदायुः ॥ ८ ॥  
 शशमिन्नु शरदो अन्वि देवा यत्रा नक्षत्रा जरसं तनूनाम् ।  
 पुत्रासो यत्र पिहरो भवन्ति मा नो मघ्या रीरिपतायुर्गन्तोः ॥ ९ ॥  
 अदितिर्धौरदितिरन्वरिक्षमदितिर्माता स पिता स पुत्रः ।  
 विश्वे देवा अदितिः पञ्चजना अदितिर्जातमदितिर्जनिस्त्वम् ॥ १० ॥



६ अपरिमेय-स्तुति-प्राप्त इन्द्र और सर्वाज्ञ पूषा हमें मंगल दें । वृक्षके पुत्र अरिष्टनेमि ( कश्यप ) या अदितिसत रवनेमि-  
 शुक्र वसुध तथा बृहस्पति हमें मंगल-प्रदान करें ।

७ श्वेतविन्दु-चिह्नित मरुतवाले, पृथिवी ( पृथिवी या गौ ) के पुत्र, सोमन-गति-शाको, यज्ञगामी, अग्नि-ब्रिह्वापर  
 अवस्थित, बुद्धिवालो और सूर्यके समान प्रकाशशाली मरुत देव हमारी रक्षाके लिये यहाँ आचें ।

८ देवगण, हम कार्त्तसे मंगल-प्रद वाक्य सुनें, यज्ञबीज देवगण, हम आँसुसे मंगलवाहक वस्तु देखें, हम इडाङ्ग करोरसे  
 सम्पन्न होकर सुन्दारी स्तुति करके प्रजापति द्वारा निर्दिष्ट आयु प्राप्त करें । \*

९ देवगण, मनुष्योंके लिये ( आप लोगोंके द्वारा ) १०० वर्षकी आयु ही कल्पित है । इसी बीच तुमलोग करोरमें  
 बुढ़ापा उत्पन्न करते हो और इसी बीच पुत्र लोभ पिता हो जाते हैं । उस निर्दिष्ट आयुके बीच हमें विनष्ट नहीं करना ।

१० अदिति ( अदीना वा अलण्डनोया पृथिवी या देवमाता ) आकाश, अन्तरीक्ष, माता, पिता और समस्त देव हैं ।  
 अदिति पञ्चजन है और अदिति जन्म और जन्मका कारण है ।\*

\* सायणाचार्यने निर्दिष्ट आयुको ११६ या १२० वर्षकी बताया है । परन्तु अगले ही मंत्रमें उल्लेख है कि, मनुष्योंके  
 लिये देवों द्वारा १०० वर्षकी आयु निर्दिष्ट है ।

\* "पञ्चजनाः" का अर्थ सायणने दो तरहसे किया है । एक अर्थ है—गन्धर्व, पितर, देव, अन्न और राक्षस । दूसरा  
 अर्थ है—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और निषाद । ७ सूक्त, ९ इन्द्र और १०० सूक्त, ११ ऋचामें भी सायणने ऐसा ही अर्थ  
 किया है । "निरुक्त"—कार यास्कने भी हय दोनों अर्थोंको किया है । यास्कका मत है कि, "औपमन्यु लोभ पाँच वर्णोंका  
 जन्म मापते हैं ।"

९० सूक्त । बहुदेवता देवता हैं । गायत्री छन्द है ।

ऋजुनीती नो चरुणो मिधो नयतु विद्वान् । अर्थमा देवेः सजोषाः ॥ १ ॥  
 ते हि वस्वो चसशानास्ते अप्रमूग महोभिः । व्रता रक्षन्ते विश्वाहा ॥ २ ॥  
 ते अस्मभ्यं शर्मं यंलन्नमृता मर्त्येभ्यः । वाधमाना अप द्विषः ॥ ३ ॥  
 वि नः पथः सुविताय चियन्दिबन्द्रो मरुतः । पूषा भगो व्रन्धासः ॥ ४ ॥  
 उत नो धियो गो अग्राः पूषन्निष्णवेवयावः । कर्ता नः स्वस्तिमतः ॥ ५ ॥  
 मधु घाता भ्रष्टायते मधु क्षरन्ति सिन्धवः । माध्वीर्नः सन्त्वोपधीः ॥ ६ ॥  
 मधु नक्तमुतोपसो मधुमत् पार्थिवं रजः । मधु द्यौरस्तु नः पिता ॥ ७ ॥  
 मधुमान्नो वनस्पनिर्मधुर्मा अस्तु सूर्यः । माध्वीर्मावो भवन्तु नः ॥ ८ ॥  
 शं नो मिश्रः शं चरुणः शं नो भवत्वर्थमा ।  
 शं न इन्द्रो वृद्धस्पतिः शं नो विष्णुदकक्रमः ॥ ९ ॥



९१ सूक्त । सोम देवता है । गायत्री, उष्णिक् और त्रिष्टुप् छन्द हैं ।

त्वं सोम प्र वृत्तिको मनोषां त्वं रजिष्ठमनु नेपि पन्थाम् ।  
 तव प्रणीतो पितरो न इन्द्रे देवेषु रत्नममजन्त धीराः ॥ १ ॥

१ वरुण ( जिन्नामिमांशो देव ) और मित्र ( दिनामिमांशो देव ) उत्तम मार्ग जानकर हमें अकुटिल गतिसे के कार्य तथा देवोंके साथ समान प्रेमसे युक्त अर्पणा मो हमें ले जायें ।

२ वे धर्म देते हैं । वे सृष्टि-शून्य होकर अपने तेज द्वारा सदा अपने कार्योंको रक्षा करते हैं ।

३ वे अमरपण, हमारे धनुर्भोज विनाश करके हमें छल प्रदान करें । इस मरण-धर्मा मनुष्य हैं ।

४ वन्दनीय इन्द्र, मरुद्गण, पूषा और सग देवपण उत्तम बल-लाभके लिये हमारा पथ दिखा दें ।

५ पूषन, विष्णु और मरुद्गण, हमारा यज्ञ पशु-वाहक करो और हमें विधाता-शून्य धनको ।

६ यज्ञसाधके लिये समस्त वायु और नदियों मधु (या कर्मरुद्र) धर्मेण करती हैं । सारी जोषियों भी माधुर्न-युक्त हैं ।

७ हमारी रात्रि और तथा मधुर या मधुर-मल-शाला हों । पार्थिव मनुष्य माधुर्न-विशिष्ट हों । जो आकांक्ष सबका रक्षक

है, वह भी मधु-युक्त हो ।

८ हमारे लिये समस्त वनस्पति मधुर हों । सूर्य मधुर हों । सारी गाँयें मधुर हों ।

९ मित्र, वरुण ज्योतिः, मृद्धस्पति, इन्द्र और (वामनावतारमें) विस्तोर्न-याद-क्षेपो विष्णु हमारे लिये सत्तक हों

१ सोमदेव । अपनी पुष्टिसे हम पुन्हीं अच्छी तरह जानते हैं । तुम हमें सब मार्गोंसे ले जाना । इन्द्र अर्पणोंके सोम, इन्द्रोंके द्वारा जाकर हमारे वितारोंके देवोंके बीच रत्न प्राप्त किया था ।



त्वं सोम ऋतुभिः सुकलुर्भूस्त्वं दक्षैः शुद्धक्षो विश्वदेवाः ।  
 त्वं वृषा वृषत्वैर्मिर्महित्वा द्युक्षे भिद्युं मन्दभशो वृत्तक्षाः ॥ २ ॥  
 रात्रौ नु ते वरुणस्य व्रतानि बृहद्गाभीरन्तव सोम धाम ।  
 शुचिष्ट्रमसि प्रियो न मित्रो दक्षायशो अयंमेवासि सोम ॥ ३ ॥  
 या ते धामानि दिवि या पृथिव्यां या पर्वतेष्वोपधीष्वप्सु ।  
 तेभिर्नो विश्वैः सुमना अहेलनाजन्तसोम प्रति हव्या गृभामय ॥ ४ ॥  
 त्वं सोमासि सत्पतिस्त्वं राजोत वृषहा । त्वं भद्रो असि ऋतुः ॥ ५ ॥  
 त्वं च सोम नो वशो जीवातुं न मरामहे । प्रियस्तोत्रो वनस्पतिः ॥ ६ ॥  
 त्वं सोम महे भगं त्वं यन् भरतायते । दक्षं दधासि जीवसे ॥ ७ ॥  
 त्वं नः सोम विश्वतो रक्षा राजन्नवाग्रतः । न रिप्येस्त्राग्रतः सखा ॥ ८ ॥  
 सोम यास्ते मयोभुव ऊतयः सन्ति दाशुपे । तामिर्नोऽविता भव ॥ ९ ॥  
 इमं यज्ञमिदं वचो जुजुषाण उपागहि । सोम त्वं नो वृधे भव ॥ १० ॥  
 सोम गोर्मिष्ट्वा वयं वर्षयामो वचोविदः । सुमृलीको न आ विश ॥ ११ ॥  
 गयस्फानो धमीवहा वसुवित् पुष्टिवन्न नः । सुमित्रः सोम नो भव ॥ १२ ॥

२ सोम, अपने यज्ञके द्वारा गोमन यज्ञसे संयुक्त और अपने वरु द्वारा सोमव बलसे युक्त हो । तुम सर्वज्ञ हो । तुम अभीष्ट ऋतुके वर्णणसे वर्णण-कारी हो; और, तुम महिमामें सहान् यज्ञमागके अभिसत फलका प्रदर्शन करके, यज्ञमानके द्वारा दिव्ये गये अन्नसे तुम बहुल अन्नसे सम्पन्न हो ।

३ सोम ( चन्द्र ), वरुण राजाके सारे कार्य नुम्हारे ही हैं । तुम्हारा तेज विश्वतोर्ण और गम्भीर है । प्रिय बन्धुके समान तुम सबके संस्कारक हो । गर्वमाकी तरह तुम सबके घर्षक हो ।

४ सोम, ध्रुलोक, पृथिवी, पर्वत, ओषधि और जलमें तुम्हारा जो तेज है, उससे तेजसे युक्त हो कर हमना और क्रोध-रहित राजन्, हमारा द्वय्य प्रदत्त करो ।

५ सोम, तुम सत्कर्ममें वर्तमान ब्राह्मणोंके अतिपति हो । तुम राजा हो । तुम गोमन यज्ञ हो ।

६ स्तुति-प्रिय और सारी ओषधियोंके पालक सोम, यदि तुम हमारे जीवनीयकी अभिलाषा करो, तो हम नहीं मरेंगे ।

७ सोम, तुम वृद्ध और नवम याज्ञकको, जबके जीवनके उपयोग योग्य, धन देते हो ।

८ हे राजा सोम, हमें दुःख देनेमें अभिलाषी लोगोंसे हमें बचाओ । तुम्हारे जैसे व्यक्तिका मित्र कभी विनष्ट नहीं होता ।

९ सोम, तुम्हारे पास यज्ञमानोंके लिये सक्षर जो रक्षण हैं, उनके द्वारा हमारी रक्षा करो ।

१० सोम, तुम हमारा यह यज्ञ और स्तुति ग्रहण करके जानो और हमें वर्द्धित करो ।

११ सोम, हमकोण स्तुति-ज्ञाता हैं; स्तुति द्वारा तुम्हें वर्द्धित करते हैं । सख्य होकर तुम जानो ।

१२ सोम, तुम हमारे धन-वर्द्धक, रोग-हन्ता, धन-दाता, सम्पद्बद्धक और समिष्ट-युक्त होओ ।

सोम रारन्धि नो हृदि गावो न यवसेष्या । मर्य एय स्व ओक्वे ॥ १३ ॥  
 यः सोम सख्ये तत्र रारणह व मर्त्यः । तं दक्षः सचते कविः ॥ १४ ॥  
 उरुष्याणो अमिशस्तेः सोम नि पाह्यं हसः । सखा सुशेव पधि नः ॥ १५ ॥  
 आप्यायस्व समंतु ते विश्वतः सोम वृष्णयम् । भवा वाजस्य सङ्गथे ॥ १६ ॥  
 आप्यायस्व मदिन्तम सोम वष्वे भिरङ्गुभिः ।  
 भवा नः सुश्रवस्तमः स वृधे ॥ १७ ॥  
 सन्ते पदांसि समु यन्तु वाजाः सन्वृष्णयान्यभि मातिपाहः ।  
 आप्यायमानो अहृताय सोम दिवि श्रवांस्युत्तमानि शिष्व ॥ १८ ॥  
 या ते धामानि हविषा यजन्ति ता ते विश्वा श्रिभूरस्तु यज्ञम् ।  
 यश्रफानः प्रतरणः सुवीरोऽवीरता प्रचरा सोम हृद्यन् ॥ १९ ॥  
 सोमो धेनुं सोमो अदेन्दुमाशुं सोमो वीरं कर्मणं ददाति ।  
 सादन्यं विदधे समेयं पितृश्रवणं यो ददाशदस्ते ॥ २० ॥  
 धपाहं युस्तु पृतनासु परि स्वर्षामप्सां वृजनस्य गोपाम् ।  
 भरेपुजां सुक्षितिं सुश्रवसं जयन्तं त्वामनु मदेम सोम ॥ २१ ॥

१३ सोम, जैसे गाय छन्द वृणसे वृत्त होती है, जैसे मनुष्य अपने घरमें वृत्त होता है, उसी प्रकार तुम भी हमारे हृदय-में वृत्त होकर अधश्चान करो ।

१४ सोमदेव, जो मनुष्य धन्धुताके कारण तुम्हारी स्तुति करता है, हे अतीत-ज्ञाता और नियुक्त सोम, तुम उसपर अनुपठ करते हो ।

१५ सोम, हमें अभिजाप या निम्नदक्षे दद्याओ । पापसे दद्याओ । हमें सब देकर हमारे हितैषी बनो ।

१६ सोम, तुम वर्द्धित हो, तुम्हारी शक्ति चारों ओरसे तुम्हें प्राप्त हो । तुम हमारे सम्बन्धता बनो ।

१७ अतीथ मदेरे युक्त सोम, सारे कृतायथयो द्वारा वर्द्धित हो । गोमन अहसे युक्त होकर तुम हमारे सखा बनो ।

१८ सोम, तुम दात्रु-मानक हो । तुममें रघु, यज्ञान्न और धीर्य संयुक्त हैं । तुम वर्द्धित होकर हमारे अमरत्वके किये स्वर्गमें उच्छ्रुत जन्म धारण करो ।

१९ यजमान कोम-एव्य द्वारा जो तुम्हारे तेजकी पूजा करते हैं, वह समस्त तेज हमारे यज्ञको व्याप्त करे । धन-पदके, पाप-शाता, धीर सुवर्षोसे युक्त और पुत्र-नक्षक सोम, तुम हमारे घरमें आओ ।

२० जो सोमदेवको हृष्य देता है, उसे सोम भी और तेज घोषा देते हैं, और, उसे लौकिक-कार्य-दक्ष, पुत्रकार्य-परायण, यज्ञानुष्ठान-तत्पर माता द्वारा अहृत और पिताका साम उज्ज्वल करनेवाला पुत्र प्रदान करते हैं ।

२१ सोम, तुम युद्धमें दात्रय हो, सेनारथे घोष धिजयो हो, स्वर्गके प्रापयिता हो । तुम वृष्टि-दाता, बल-रक्षक, यज्ञमें अधश्चान, छन्द्य निवास और यज्ञसे युक्त और जयशाली हो । तुम्हें कक्ष्य कर हम प्रकृत्य हैं ।

त्वमिमा ओषधीः सोम विपवास्त्वमपो अजनयस्त्वं गाः  
 त्वमा ततन्वोर्वन्तरिक्षं त्वं ज्योतिषा वि समो वचथ ॥ २२ ॥  
 देवेन नो मनसा ऐष सोम रायो भागं सहसावन्तभि युध्य ।  
 मा त्वा तनदीशिषे वीर्यस्योभयेभ्यः प्रचिकित्सा गविष्टौ ॥ २३ ॥

२२ सूक्त । उषा और शेष तृचके अश्विद्वय देवता हैं । जगती, षण्णिक् और त्रिष्टुप् छन्व हैं ।

एता उत्या उपसः केतुमक्रत पूर्वे अर्धे रजसो भानुमञ्जते ।  
 निष्कृण्वाना आयुधानीच्च धृष्णवः प्रति गावोऽरुपीर्यन्ति मातरः ॥ १ ॥  
 उदपसन्नरुणा भानवो वृथा स्वायुजो अरुपीर्गा अयुक्षत ।  
 अक्रन्नुपासो वयुनानि पूर्वथा रुशान्तं भानुमरुपीरशिश्रयुः ॥ २ ॥  
 अर्चन्ति नारीरपसो न त्रिष्टिभिः समानेन योजनेना परावतः ।  
 इषं वहन्तीः सुकृते सुदानये विश्वेदह यजमानाय सुन्वते ॥ ३ ॥  
 अधि पेशांसि वपते नृत्तूरियापोणुते वक्ष उल्लेव दर्जहम् ।  
 ज्योतिर्विश्वरुमै भुवनाय कृण्वती गावो न व्रजं व्युषा आवर्तमः ॥ ४ ॥

२२ सोम, तुमने सारी औषधियां, वृष्टि, जल और सारी गायें द्रव्यायी हैं । तुमने इस व्यापक अन्तरीक्षको विस्तृत किया है और ज्योति द्वारा उसका अन्वकार दिष्ट किया है ।

२३ बलशाली सोम, अपनी कान्तिमयी बुद्धि द्वारा हमें धनका जंश प्रदान करो । कोई शत्रु तुम्हारी हिंसा न करे । छद्माई करनेवाके दोनों पक्षोंमें तुम्हीं बलशाली हो । छद्माईमें हमें तुष्टतासे बचालो ।

१ उषा देवताओंने आशोक द्वारा प्रकाश किया है और वे अन्तरीक्षकी पूर्ण दिशामें प्रकाश करते हैं । जैसे अपने सारे पक्षोंको थोडा लोग परिमार्जित करते हैं, वैसे ही अपनी दीप्तिके द्वारा संसारका संस्कार करके गमनशीला, दीप्तिमती और साक्षात् ( उषा देवताएँ ) प्रतिदिन गमन करती हैं ।

२ अथवा भानु-रश्मियाँ ( उषाएँ ) उदित हुईं; जनन्तर रथमें जोतने लायक शुभ्रवर्ण रश्मियों या गायोंको उषा देवताएँ रथमें लगाती हैं एवं पूर्वाकी तरह सारे प्राणियोंको ज्ञान-युक्त बनाया । इसके पश्चात् दीप्तिमती उषानोंने इवेतवर्ण स्वर्गको आश्रित किया ।

३ नेत्र-स्थानीया उषा देवताएँ उज्ज्वल अश्रवारी योद्धाओंकी तरह हैं और उद्योग द्वारा ही दूर देशों तकको, अपने तेजसे, व्याप्त करती हैं । वे बोमब-ऊर्म-ऊर्ता, सोमदाता और दक्षिणा-दाता वज्रमानको साश अन्न देती हैं ।

४ बराँकी या नार्ईकी तरह उषा अपने रूपको प्रकाशित करती हैं; और जैसे दोहन-क्राकमें गायें अपना अवस्तन भाग प्रकट करती हैं, उसी प्रकार उषा भी अपना वक्ष प्रकट करती हैं । जैसे गायें तोछमें लीन जाती हैं; उसी प्रकार उषाने भी पूर्ण दिशामें आकर समस्त भुवनोंको प्रकाश करके अन्वकारको विद्युत् किया ।

प्रत्यर्चीं रुशदस्या भदशि. वि तिष्ठते. वाधते कृष्णमभ्वम् ।  
 स्वरं न पेशो विदथेऽञ्जश्चित्रं दिवो दुहिता भानुमश्रेत् ॥ ५ ॥  
 अतारिष्म तमसस्पा रमस्योपा उच्छन्ती वयुना कृणोति ।  
 श्रिये छन्दो न स्मयते विभाती सुप्रतीका सौमनसायाजीगः ॥ ६ ॥  
 भास्वती नेत्री सूनृतानां दिव स्तवे दुहिता गीतमेभिः ।  
 प्रजावतो नृवतो अश्ववृध्यानुपो गोअग्राँ उप मासि वाजान् ॥ ७ ॥  
 उपस्तमश्यां यशसं सुवीरं दासप्रवर्गं रयिमश्ववृध्वम् ।  
 सुदंससा अचसा या विभासि वाजप्रसूता सुभगे वृहन्तम् ॥ ८ ॥  
 विश्वानि देवी भुवनाभिन्क्ष्या प्रतीची चक्ररुचिया विभाति ।  
 विश्वं जीवं चरसे बोधयन्ती विश्वस्य वाक्ष्मविदन्मनायोः ॥ ९ ॥  
 पुनः पुनर्जायमाना पुराणो समानं वर्णमभि शुभमाना ।  
 श्वज्ञोव कृत्नुर्विज आमिनाना मर्तस्य देवी जरयन्त्यायुः ॥ १० ॥  
 व्यूर्ध्वती दिवो अन्ताँ अबोधय स्रसारं सनुतयुयोति ।  
 प्रमिनती मनुष्या युगानि योपा जारस्य चक्षसा विभाति ॥ ११ ॥

\* पहले उपाका उज्ज्वल तेज पूर्व दिशामें दिखाई देता है, अनन्तर सारी दिशाओंमें व्याप्त होता और अन्धकारको दूर करता है। जैसे पुरोहित यज्ञमें आज्य द्वारा यूप-काण्डको प्रकट करता है, उसी प्रकार उपा अपना रूप प्रकट करती हैं। स्वर्ग-पुत्री उपा दीसिमान् सूर्यकी सेवा करती हैं।

६ हम रात्रिके अन्धकारको पार कर चुके हैं। उवाने सारे प्राणियोंके ज्ञानको प्रकाशित किया है। प्रकाशमयी उपा, सोपानोदकारीकी तरह, प्रति प्राप्त करनेके लिये, अपनी दीसिके द्वारा मानों हँस रही हैं। आलोक-विलसिताङ्गी उपाने, हमारे सखके लिये, अन्धकारका विनाश किया है।

७ दीसिमती और सत्य वचनोंकी उत्पादयित्री आकाश-पुत्री (उपा) की गीतमवंशीय लोग स्तुति करते हैं। उवे, तुम हमें पुत्र-पौत्र, दास-परिजन, अश्व और गौसँ युक्त अन्न दो।

८ हे उवे, हम यय, वीर (सहायक), दास और अश्वसे संयुक्त धन प्राप्त करें। हमने, तुम छन्दर यज्ञमें स्तोत्र द्वारा प्रीत होकर, हमें अन्न देकर, वही यथेष्ट धन प्रकट करो।

९ उज्ज्वल उपा सारे भुवनोंको प्रकाशित करके, आलोक द्वारा, पश्चिम दिशामें विस्तृत होकर, दीसिमती हो रही हैं। उपा सारे जीवोंको अपने-अपने कार्योंमें लगानेके लिये जगा देती हैं। उपा बुद्धिमान् लोगोंकी बातें सुनती हैं।

१० जैसे व्याध-खी उड़ती चिड़ियाका पक्ष काटकर हिंसा करती है, उसी प्रकार पुनः-पुनः आविर्भूत, नित्य और एक-रूप-धारिणी उपा देवी अचुदिन सारे प्राणियोंके जीवनका हास करती हैं।

११ आकाशको, अन्धकारसे हटाकर, सबके पास उपा जीवों द्वारा विदित होती हैं। उपा गमनकारिणी अथवा भगिनी रात्रिको अन्तर्हित करती हैं। प्रणयी (सूर्य) की स्त्री उपा अचुदिन मनुष्योंकी आयुका हास करके, विशेष रूपसे, प्रकाशित होती हैं।

पशून् वित्रा सुभगा प्रथाना सिन्धुर्न क्षोद उर्विया व्यश्वैत् ।

अमिनती दैव्यानि व्रतानि सूर्यस्य चैति रश्मिभिर्द्रशाना ॥ १२ ॥

उपस्तच्चित्रमा भरास्मभ्यं वाजिनीवति । येन तोकं च तनयं च धामहे ॥ १३ ॥

उषो अद्येह गोमत्यश्ववति विभावरि । रैवदस्मे व्युच्छ सूनुतावति ॥ १४ ॥

युध्वा हि वाजिनीवत्यश्वाँ अद्यारुणाँ उपः । अथा नो विश्वा सौभगान्या वह ॥ १५ ॥

अश्विना वर्तिरस्मदा गोमद्स्वा हिरण्यवत् । अर्वाग्रथं समनसा नि यच्छतम् ॥ १६ ॥

यावित्था श्लोकमा दिवो ज्योतिर्जनाय चक्रथुः । आ न ऊर्जं वहतमश्विना युवम् ॥ १७ ॥

एह देवा मयोभुवा दसा हिरण्यवर्तनी । उपबुधो वहन्तुः । सोमपीतये ॥ १८ ॥

१३ सूक्त । अग्नि और सोम देवता हैं । अनुष्टुप् गायत्री; जगती और त्रिष्टुप् छन्द हैं ।

अग्नीषोमाविर्मं सु मे शृणुतं वृषणा हवम् । प्रति सूक्तानि हर्यतं भवतं दाशुपे मयः ॥ १ ॥

अग्नीषोमा यो अद्य वामिदं वचः सपर्यति । तस्मै धत्तं सुवीर्यं गवां पोषं स्व्यश्वम् ॥ २ ॥

१२ जैसे पशु-पालक पशुओंको चराता है, वैसे ही सुभगा और पूजनीया उषा अपना तेज विस्तृत करती हैं और नदीकी तरह विशाल उषा सारे जगत्को व्याप्त करती हैं । उषा देवोंके यज्ञका अनुष्ठान कराकर, सूर्य-रश्मिके साथ, दृष्ट होती हैं ।

१३ अन्नयुक्त उपे, हमें विचित्र धन प्रदान करो, जिसके द्वारा हम पुत्रों और पौत्रोंका पालन कर सकें ।

१४ गौ, अश्व और सत्य वचनसे युक्त तथा दीप्तिमती उपे, आज यहाँ हमारा धनयुक्त यज्ञ जैसे हो, वैसे ही प्रकाशित हो ।

१५ अन्नयुक्त उपे, आज अरुण-वर्ण घोड़े या गौ योजित करो और हमारे लिये सारा सौभाग्य लाओ ।

१६ शत्रु-मर्दक अश्विनीकुमारो, हमारे घरको गौ और रमणीय धनसे युक्त करनेके लिये समान-मनोयोगी होकर अपने रथको हमारे घरकी तरफ ले चलो ।

१७ अश्विद्वय, तुम लोगोंने आकाशसे प्रशंसनीय ज्योति प्रेरित की है । तुम हमारे लिये शक्तिशाली अन्न ले आओ ।

१८ प्रकाशमान, आरोग्य-प्रद, सुवर्ण-रथ-युक्त एवं शत्रु-विजयी अश्विनीकुमारोंको, सोमपान करानेके लिये, उपाकालमें उनके घोड़े जाग कर यहाँ ले आवें ।

१ अभीष्टवर्षी अग्नि और सोम, मेरे इस आह्वानको सुनो; स्तुति ग्रहण करो और हव्य-दाताको सुख प्रदान करो ।

२ अग्नि और सोम, जो तुम्हें स्तुति समर्पण करता है, उसे बलवान् गौ और सुन्दर अश्व दान करो ।

अग्नीषोमा य आहुति यो वां दाशाद्दधिष्कृतिम् ।  
 स प्रजया सुवीर्यं विश्वमायुर्व्यश्नवत् ॥ ३ ॥  
 अग्नीषोमा चेति तद्गीर्यं वां यदमुष्णीतमवसं पणिं गाः ।  
 अवातिरतं वृषयस्य शोपोऽविन्दतं ज्योतिरेकं बहुभ्यः ॥ ४ ॥  
 युवमेतानि दिवि रोचनान्यग्निश्च सोम सक्रन् अघत्तम् ।  
 युवं सिन्धूरमिशस्तेरवघादग्नीषोमावमुञ्जतं गृभीतान् ॥ ५ ॥  
 आन्यं द्विवो मातरिश्वा जभारामघ्नादन्यं परिश्येनो अद्रेः ।  
 अग्नीषोमा ब्रह्मणा वावृधानोरं यथाय चक्रयुक् लोकम् ॥ ६ ॥  
 अग्नीषोमा हविषः प्रस्थितस्य चीतं हर्यतं वृषणा जूपेथाम् ।  
 तुशार्माणा स्ववसा हि भूतमथा घसं यजमानाय शं योः ॥ ७ ॥  
 यो अग्नीषोमा हविषा सपर्यादेवद्रीचा मनसा यो घृतेन ।  
 तस्य व्रतं रक्षतं पातमहसो विशे जनाय महि शर्म यच्छतम् ॥ ८ ॥  
 अग्नीषोमा सवेदसा सहृती वनतं गिरः । सं देवना बभूवयुः ॥ ९ ॥

३ अग्नि और सोम, जो तुम लोगोंको आहुति और हव्य प्रदान करता है, वह पुत्र-पौत्रादिके साथ सारी वीर्यशाली आयु प्राप्त हो ।

४ अग्नि और सोम, तुमने जिस वीर्यके द्वारा पणिके पाससे गो-रूप अन्न, अपहृत किया था, जिस वीर्यके द्वारा वृषयके पुत्र (गुत्र) का बध करके, सबके उपकारके लिये, एकमात्र ज्योतिःपूर्ण सूर्यको प्राप्त किया था, वह सप हमें विदित है । ४

५ अग्नि और सोम, समान-हर्म-परान्न होकर, आकाशमें, तुमने इन उज्ज्वल नक्षत्र आदिको धारण किया है, तुमने दोषाग्रान्त नदियोंको, प्रकाशित द्रोणसे, मुक्त किया है या संशोधित किया है ।

६ अग्नि और सोम, तुममेंसे अग्निको मातरिश्वा (चायु) आकाशसे लाये हैं और सोमको अद्रि (पर्वत) के ऊपरसे ग्येन पक्षी (याज) बल-सूर्यक लाया है । स्तोत्रोंके द्वारा वर्द्धित होकर, यज्ञके लिये, तुम लोगोंने भूमि विस्तीर्ण की है ।

७ अग्नि और सोम, प्रदत्त अन्न भक्षण करो; हमारे ऊपर अनुग्रह करो । अमीष्टवर्षी, हमारी सेवा ग्रहण करो । हमारे लिये सुव्य-श्रद्ध और रक्षण-युक्त बनो एवं यजमानका रोग और भय हटाओ ।

८ अग्नि और सोम, जो यजमान देवता-परायण चित्तसे हव्य द्वारा अग्नि और सोमकी पूजा करता है, उसके प्रतकी रक्षा करो । उसे पापसे बचाओ तथा उस यज्ञ-रत व्यक्तिको प्रभूत छल दो ।

९ अग्नि और सोम, तुम सारे देवोंमें प्रशंसनीय, समान-धन-युक्त और युक्त आदान-योग्य हो । तुम हमारी स्मृति धनो ।

x बहुत लोगोंका कथन है कि, वेदका "वृषय" शीकोके "इलियड" का Brises है ।

अग्नीषोमावनेन वां यो वां घृतेन दाशति । तस्मै दीदयत् वृहत् ॥ १० ॥  
 अग्नीषोमात्रिमानि नो युवं हव्या जुञ्जीपतम् । आ यातमुप नः सत्वा ॥ ११ ॥  
 अग्नीषोमा पिपृतमर्वतो न आप्यायन्तामुस्त्रिया हव्यसूदः ।  
 अस्मे बलानि मघवत्सु धत्तं कृणुतं नो अध्वरं ध्रुष्टिमन्तम् ॥ १२ ॥



१५ अनुशब्द । १४ सूक्त । अग्नि देवता हैं । यहाँसे १८ सूक्तकके अङ्गिरा के पुत्र कुत्स ऋषि हैं ।  
 निष्पृषु और जगती छन्द हैं ।

इमं स्तोममहेते जातवेदसे रथमित्र सं महेमा मनीषया ।  
 भद्रा हि नः प्रमतिरस्य सं सद्यग्ने सख्ये मा रिषामा वयं तव ॥ १ ॥  
 यस्मै त्वमायजसे स साधत्यनवां क्षेति दधते सुवीर्यम् ।  
 स त्वाव नैनमश्रोत्यंहतिरग्ने सख्ये मा रिषामा वयं तव ॥ २ ॥  
 शक्रेम त्वा समिधं साधया धियस्त्रे देवा इधिरदन्त्याहुतम् ।  
 त्वमादित्या आ वह तान्द्युश्मस्यग्ने सख्ये मा रिषामा वयं तव ॥ ३ ॥

- १० अग्नि और सोम, जो तुम्हें धृत प्रदान करता है, उसे प्रभूत धन दो ।  
 ११ अग्नि और सोम, हमारा यह हव्य ग्रहण करो और एकत्र आगमन करो ।  
 १२ अग्नि और सोम, हमारे अश्वोंको रक्षा करो । हमारी क्षीर आदि हव्यकी उत्पादिका गायें वर्द्धित हों । हम  
 धनशाली हैं, हमें बल प्रदान करो । हमारा यज्ञ धन-युक्त हो ।

१ हम पूजनीय और सर्व-भूतज्ञ अग्निके रथकी तरह, बुद्धि द्वारा, इस स्तुतिको प्रस्तुत करते हैं । अग्निकी अर्चनासे हमारी बुद्धि उत्कृष्ट होती है । हे अग्नि, तुम्हारे हमारे मित्र रहनेपर हम हिंसित नहीं होंगे ।

२ अग्नि, जिसके लिये तुम यज्ञ करते हो, उसकी अभिलाषा पूर्ण होती है और वह उत्पीडित न होकर निवास करता, महाशक्ति धारण करता और वर्द्धित होता है । उसे कभी दरिद्रता नहीं मिलती । हे अग्नि, तुम्हारे हमारे बन्धु होनेपर हम हिंसित नहीं होंगे ।

३ अग्नि, हम तुम्हें अच्छी तरह प्रज्वलित कर सकें । तुम हमारा यज्ञ साधन करो; क्योंकि तुममें फेंका हुआ हव्य देवता लोग खाते हैं । तुम आदित्योंको ले आओ । उन्हें हम चाहते हैं । अग्नि, तुम्हारे मित्र होनेपर हम हिंसित नहीं होंगे ।

शरामेर्ध्नं कृणवामा हवीषि ते चितयन्तः पर्वणापर्वणा वयम् ।  
 जीवातये प्रतरं साधया धियोऽग्ने सख्ये मारिपामा वयं तव ॥ ४ ॥  
 विशां गोपा अस्य चरन्ति जन्तवो द्विपच्च यदुत चतुष्पदकुम्भिः ।  
 चित्रः प्रकैत उपसो महौ अस्यग्ने सख्ये मारिपामा वयं तव ॥ ५ ॥  
 रथमध्वयंरुत तांतासि पूर्यः प्रशास्ता पोता जनुपा पुरोहितः ।  
 विश्वाविद्वाँ आर्त्विज्या धीर पुष्यस्यग्ने सख्ये मारिपामा वयं तव ॥ ६ ॥  
 यो विश्वतः सुप्रतीकः सद्रङ्खसि दूरे चित् सन्तडिदिवाति रोचसे ।  
 रात्र्याश्चिदन्वो अति देव पश्यस्यग्ने सख्ये मारिपामा वयं तव ॥ ७ ॥  
 पूर्वा देवा भवन्तु मुन्वतो रथोऽस्माकं शंसो अभ्यस्तु दूढ्यः ।  
 तदा जानीतात पुष्यता वचोऽग्ने सख्ये मारिपामा वयं तव ॥ ८ ॥  
 वधेदःशंसो अप दूढ्यो जदि दूरे वा ये अन्ति वा के चिदन्त्रिणाः ।  
 अथा यताय गृणते सुगं कृध्यग्ने सख्ये मारिपामा वयं तव ॥ ९ ॥  
 यदयुक्था अरया रोहिता रथे चातजूता वृषभस्येव ते रवः ।  
 आदिन्वसि वनिनो धूमकेतुनाग्ने सख्ये मारिपामा वयं तव ॥ १० ॥

४ अग्नि, हम इन्धन इकड़ा करते हैं । तुम्हें ज्ञात कराकर हव्य देते हैं । हमारी आयुर्वृद्धिके लिये तुम, वयः सन्पन्न करो । अग्नि, तुम्हारे मित्र रहनेपर हम हिसित नहीं होंगे ।

५ उन ( अग्नि ) की किरणें प्राणियोंकी रक्षा करती हुई विचरण करती हैं । द्विपद और चतुष्पद जन्तु-उन ( अग्नि ) की किरणोंमें विचरण करते हैं । तुम विश्विद दीसिते युक्त और सारी वस्तुएँ प्रदर्शित करते हो । तुम उपासे भी महात्त हो । अग्नि, तुम्हारे मित्र रहनेपर हम हिसित नहीं होंगे ।

६ अग्नि, तुम अश्वयं, मुख्य होता, प्रशास्ता, पोता और जन्मसे ही पुरोहित हो । ऋत्विक्के सारे कार्योंसे तुम अवगत हो । इत्सालिये तुम यज्ञ सन्पूर्ण करो । अग्नि, तुम्हारे मित्र रहनेपर हम हिसित नहीं होंगे ।\*

७ अग्नि, तुम अन्धर हो, तो भी सवके समान हो । तुम दूर-स्थित हो, तो भी पास ही दीप्यमान हो । अग्नि-देव, तुम रातके अन्धकारको मर्दन करके प्रकाशित होते हो । अग्नि, तुम्हारे मित्र रहनेपर हम हिसित नहीं होंगे ।

८ अग्नि, अज्ञाभूत देव, सोमका अभिषय करनेवाले यजमानका रथ सवसे आगे करो । हमारा अभिषाय शत्रुओंको परास्त करे । हमारी यह स्तुति समझो और हमें प्रवृद्ध करो । अग्नि, तुम्हारे मित्र रहनेपर हम हिसित नहीं होंगे ।

९ सांवातिक अश्व द्वारा तुम दुष्टों और शुद्धि-विहीनोंका विनाश करो । दूरवर्ती और निकटवर्ती शत्रुओंका विनाश करो । अनन्तर अपने स्तुति-कृत यजमानके लिये उगम मार्ग कर दो । अग्नि, तुम्हारे मित्र रहनेपर हम हिसित नहीं होंगे ।

१० अग्नि, जिस समय तुम दीप्यमान, लोहितवर्ण और वायुवति दोनों घोड़ोंको रथमें संयुक्त करते-हो, उस समय तुम वृषभकी तरह घण्टु करते हो और वनके सारे वृक्षोंको धूमरूप फेनु ( पताका ) द्वारा व्यास करते हो । अग्नि, तुम्हारे वन्द्य होनेपर हम हिसित नहीं होंगे ।

\* अश्वयं इत्येव शंसो, सोसा देवोंको गुलाते और पोता वयं देवोंके होनेपर शोचन करते हैं ।



अथ स्वनादुत विन्धुः पतत्रिणो द्रप्सा यत्ते यवसादो व्यस्थिरन् ।  
सुगं तत्ते तावकेभ्यो रथेभ्योऽग्ने सख्ये मा रिपामा वयं तव ॥ ११ ॥  
अयं मित्रस्य वरुणस्य धायसेऽवयातां मरुतां हेडो अद्भुतः ।  
मृडा सु नो भृत्वेपां मनः पुनरग्रे सख्ये मा रिपामा वयं तव ॥ १२ ॥  
दैवो देवानामसि मित्रो अद्भुतो वसुर्वसुतामसि चारुरध्वरे ।  
शर्मन्त्स्थाम तव स प्रथसतमैऽग्ने सख्ये मा रिपामा वयं तव ॥ १३ ॥  
तत्ते भद्रं यत्समिद्धः स्वे दमे सोमाहुतो जरसे मृडयत्तमः ।  
दधासि रत्नं द्रविणं च दाशुपेऽग्ने सख्ये मा रिपामा वयं तव ॥ १४ ॥  
यस्मै त्वं सुद्रविणो ददाशोऽनागास्त्वमदिते सर्वताता ।  
यं भद्रेण शवसा चौदयासि प्रजावता राघसा ते स्याम ॥ १५ ॥  
स त्वमग्ने सौमगतवस्य विद्वानस्माकमायुः प्र तिरेह देव ।  
तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवी उत धौः ॥ १६ ॥

११ तुम्हारे शब्द छनकर चिड़ियां भी उड़ती हैं । जिस समय तुम्हारी शिखाएँ तिनके जलाकर चारो दिशाओंमें विस्तृत होती हैं, उस समय सारा वन तुम्हारे और तुम्हारे रथके लिये छगम हो जाता है । अग्नि, तुम्हारे मित्र होनेपर हम हिंसित नहीं होंगे ।

१२ इस स्तोताको मित्र और वरुण धारण करें । अन्तरीश्रवारी मरुतोंको क्रोध अत्यधिक होता है । हमें छली करो और इन अहान् मरुतोंका मन प्रसन्न हो । अग्नि, तुम्हारे बन्धु रहनेपर हम हिंसित नहीं होंगे ।

१३ धृतिमान् अग्नि, तुम सारे देवोंके परम बन्धु हो । तुम सुशोभन और यज्ञके सारे धनोंके निवास-स्थान हो । तुम्हारे विस्तृत यज्ञ-गृहमें हम अवस्थान करें । अग्नि, तुम्हारे बन्धु रहनेपर हम हिंसित नहीं होंगे ।

१४ अपने स्थानपर प्रज्वलित सोमरस द्वारा आहूत होकर जिस समय तुम पूजित होते हो, उस समय तुम छलक उपभोग करते हो । तुम हमारे लिये छलकर होकर हव्य-दाताको रमणीय फल और धन दान करो । अग्नि, तुम्हारे बन्धु रहनेपर हम हिंसित नहीं होंगे ।

१५ शोभन धनसे युक्त और अखण्डनीय अग्नि, सब यज्ञोंमें वर्तमान जिस यजमानको तुम पापसे उद्धार करते और कल्याणवाही बल प्रदान करते हो, वह समृद्ध होता है । हम भी तुम्हारे स्तोता हैं । हम भी पुत्र-पौत्रादिके साथ तुम्हारे धनसे सम्पन्न हों ।

१६ अग्निदेव, तुम सौभाग्य जानते हो । इस कार्यमें तुम हमारी आयु बढ़ाओ । मित्र, वरुण, अदिति, सिन्धु, पृथ्वी और आकाश हमारी उस आयुकी रक्षा करें ।

## षष्ठ अध्याय समाप्त



## सप्तम अध्याय



६५ सूक्त । अग्नि देवता है । त्रिष्टुप् छन्द है ।

हे विरूपे चरतः स्वर्थे अन्यान्या वत्समुप धापयेते ।

१. हरिरन्वस्यां भवति स्वधावाञ्जुको अन्यस्यां ददृशे सुवर्चाः ॥ १ ॥

दशमे त्वष्टुर्जनयन्त गर्भमतन्द्रासो युवतयो विभृत्रम् ।

निग्मानां कं स्वयशसं जनेषु विरोचमानं परि षीं नयन्ति ॥ २ ॥

श्रीणि जाना परिभूपत्यस्य समुद्र एकं दिव्यैकमप्सु ।

पूर्वामनु प्रदिशं पार्थिवानामृतान् प्रशासद्वि दधावनुष्णु ॥ ३ ॥

क इमं यो निण्यमा चिचेत् वत्सो मातृर्जनयत स्वधाभिः ।

घर्हीनां गर्भो अपसामुपस्थान्महान् कविर्निश्चरति स्वधावान् ॥ ४ ॥

आविष्टयो वर्धते वारुणासु जिह्मानामूध्रः स्वयशा उपस्थे ।

उभे त्वष्टुर्विन्यनुर्जायमानान् प्रतीर्त्वा सिंहं प्रति जोषयेते ॥ ५ ॥

१ विभिन्न रूपों में संयुक्त दोनों समय ( दिन और रात ), शोभन प्रयोजनके कारण, विचरण करते हैं । दोनों दोनोंसे चलरही रक्षा करते हैं । एक ( रात्रि ) के पाससे सूर्य अन्न प्राप्त करते और दूसरे ( दिन ) के पाससे शोभन दीप्तिये युक्त होकर प्रकाशित होते हैं ।

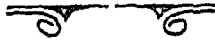
२ इमो भृगुश्रियां इकट्टी होकर अनवरत काष्ठ-घर्षण करके वायुके गर्भ-स्वरूप और सब भूतोंमें वर्तमान अग्निको उत्पन्न करती है । यह अग्नि सांख्य-तंजा, यगन्वी और सांख्य लोकमें दीप्यमान है । इन अग्निको सारे स्थानोंमें ले जाया जाता है ।

३ इन अग्निके तीन जन्म-स्थान हैं—( १ ) समुद्र, ( २ ) आकाश और ( ३ ) अन्तरीक्ष । अग्निने ( सूर्य-रूपसे ) शत्रुभोंका विभाग करके पृथिवीके सांख्य प्राणियोंके अन्नके लिये पूर्व दिशाका यथाक्रम निष्पादन किया है अर्थात् सूर्य-काल ( शत्रु ) और दिग्-दोनोंको बनाया है ।

४ जल, धन आदिमें अन्तर्हित अग्निको तुममेंसे कौन जानता है ? पुत्र होकर भी विद्युद्भूष अग्नि अपनी माताओं ( जल-रूपिणी ) को हृष्य द्वारा जन्म दान करते हैं । महान् संप्राप्ति और हृष्य-युक्त अग्नि अनेक जलोंके गर्भ ( सन्तान )-रूप है । सूर्य-रूप अग्नि समुद्रमें निकलते हैं ।

५ कुटिल ( मेष-जलके ) पार्वर्यवर्ती यगन्वी अग्नि ऊपर जलकर, शोभन दीप्तिके साथ, प्रकाशित होकर बढ़ते हैं । अग्निके दीप्ति या स्वप्ताके साथ उत्पन्न होनेपर उभय ( काष्ठ ) भीत होते और सिद्ध या सहनशीलके सामने आकर बसकी सेवा करते हैं ।

उभे भद्रे जोषयेते न मेने गावो न वाश्रा उप तस्युरेवैः ।  
 स दक्षाणां दक्षपतिर्बभूवाञ्जन्ति यं दक्षिणतो हविर्भिः ॥ ६ ॥  
 उद्यंयमीति सवितेव बाहू उभे स्त्रिभौ यतते भीम ऋञ्जन् ।  
 उच्छ्रुक्रमत्कमजते सिमस्मान्वा मातृभ्यो वमनां जहाति ॥ ७ ॥  
 त्वेषं रूपं कृणुत उच्चरं यत् संपुञ्जानः सद्ने गोभिरद्भिः ।  
 कथिर्बुध्नं परिममृज्यते धीः सा देवताता समितिर्बभूव ॥ ८ ॥  
 उरु ते ज्ञयः पर्येति बुध्नं चिरोऽमानं महिपस्य धाम ।  
 विश्वेभिरग्ने स्वयशोभिरिद्वोऽद्वेषेभिः पायुभिः पाह्यस्मान् ॥ ९ ॥  
 धन्वन्त्वोतः कृणुते गातुर्मूर्तिं शुक्लैर्हृदिभिरभि नक्षति क्षाम् ।  
 विश्वा सनानि जठरेषु धत्तेऽन्तर्नवासु चरति प्रभु ॥ १० ॥  
 एवा नो अग्ने समिधा वृधानो रजत्पात्रक भ्रघसे वि साहि ।  
 तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः ॥ ११ ॥



६ उभय ( काण्ड या दिवारान्नि ) उन्दरो स्त्रीकी तरह उन ( अग्नि ) की सेवा करत और बोलती हुई गौकी तरह, पासमें रहकर, उनके बत्सकी तरह पालित करते हैं । दक्षिण भागमें अवस्थित ऋत्विक् लोग हव्य द्वारा जिस अग्निका सेवन करते हैं, वह सब बलके बीच बलाधिपति हुए हैं ।

७ अग्नि, सूर्यकी तरह, अपनी किरण-रूपिणी भुजाओंको चार-चार विस्तृत करत हैं तथा वही भयंकर अग्नि उभय ( दिवारान्नि ) को अलंकृत करके निज-कर्म साधित करते हैं । वह सारी वस्तुओंते दीप्त और साररूप रस ऊपर खींचते हैं । वह माताओं ( जलों ) के पाससे आच्छादक अभिनव रस बनाते हैं ।

८ जिस समय अग्नि अन्तरीक्षमें गमनशील जल द्वारा संयुक्त होकर दीप्त और उत्कृष्ट रूप धारण करते हैं, उस समय वह मेघावी और सर्वलोक-धारक अग्नि (सारे जलोंके) मूलभूत ( अन्तरिक्षको ) तेज द्वारा आच्छादित करते हैं । उज्ज्वल अग्नि द्वारा विस्तारित वह दीप्ति तेजःशुष्क हुई थी ।

९ अग्नि, तुम महान् हो । सबको पराजित करनेवाला तुम्हारा दीप्यमान और विस्तीर्ण तेज अन्तरिक्षको व्याप्त किये हुए है । अग्नि, हमारे द्वारा प्रज्वालित होकर अपने अर्हिसित और पालन-क्षमतेज द्वारा हमारा पालन करो ।

१० आकाशगामी जल-संघको प्रवाह रूपमें अग्नि युक्त करते और उसी निर्मल जल-संघ द्वारा पृथिवीको व्याप्त कर डालते हैं । अग्नि जठरमें अन्नको धारण करते और इसी लिये ( वृष्टिजात ) अभिनव शस्यके बीचमें निवास करते हैं ।

११ विशुद्धकारी अग्नि, काष्ठों द्वारा वृद्धि प्राप्त कर हमें धन-युक्त अन्न देनेके लिये दोसिमान बनो । मित्र, वरुण, अग्नि, सिन्धु, पृथिवी और आकाश हमारे उस अन्नकी पूजा करें ।

१६ सूक्त । अग्नि देवता है । त्रिष्टुप् छन्द है ।

स प्रलथा सहसा जायमानः सद्यः काव्यानि बद्धधत्त विश्वा ।

आपश्च मित्रं ध्रिपणा च साधन्देवाअग्निं धारयन्द्रधिणोदाम् ॥ १ ॥

स पूर्वया निविदा कव्यतायोरिमाः प्रजा अजनयन्मनूनाम् ।

त्रिवस्वता चक्षसा धामपश्च देवा अग्निं धारयन्द्रधिणोदाम् ॥ २ ॥

तमीडत प्रथमं यज्ञसाध्रं विश आरीराहुतमुञ्जसानम् ।

ऊर्जः पुत्रं भरतं सृप्रदानुं देवा अग्निं धारयन्द्रधिणोदाम् ॥ ३ ॥

स मातरिश्वा पुरुवारपुष्टिर्विदद्नातुं तनयाय स्वर्वित् ।

विशां गोपा जनिता रोदस्योर्देवा अग्निं धारयन्द्रधिणोदाम् ॥ ४ ॥

नक्तोपासा वर्णामामेस्याने धापयेते शिशुमेकं समीची ।

धावाक्षामा रुक्मो अन्तर्विभाति देवा अग्निं धारयन्द्रधिणोदाम् ॥ ५ ॥

रायो वृध्नः सङ्गमनो वरूनां यज्ञस्य केतुर्मन्त्रसाधनो वेः ।

अमृतत्वं रक्षमाणास एतं देवा अग्निं धारयन्द्रधिणोदाम् ॥ ६ ॥

नूच पुरा च सदनं रयीणां जातस्य च जायमानस्य चक्षाम् ।

सतश्च गोपां भवतश्च भूरिदेवा अग्निं धारयन्द्रधिणोदाम् ॥ ७ ॥

१ बल या काष्ठ-घर्षण द्वारा उत्पन्न अग्नि तुरत ही, पुरातनकी तरह, सत्य ही सारे मेधावियौका यज्ञ ग्रहण करते हैं । जल और शब्द उस विद्युद्गुण अग्निको मित्र जानते हैं । देवोंने उन धन-दाता अग्निको दूत-रूपसे नियुक्त किया था ।

२ अग्निने अथु या मनुके प्राचीन और स्तुति-गर्भ मंत्रसे तृष्ट होकर मानवी प्रजाकी सृष्टि की थी । उन्होंने आच्छादक तेज द्वारा आकाश और अन्तरीक्षको व्याप्त किया है । देवोंने उन धन-दाता अग्निको दूत-रूपसे नियुक्त किया था ।

३ मनुष्यो, स्वामी अग्निके पास जाकर उनकी स्तुति करो । वह देवोंमें सुख्य यज्ञ-साधक हैं । वह हव्य द्वारा आहुत और स्तोत्र द्वारा तृष्ट होते हैं । वह अन्नके पुत्र, प्रजा-पोषक और दानशील हैं । देवोंने उन धनद अग्निको दूत नियुक्त किया था ।

४ वह अन्तरीक्षस्थ अग्नि अनेक वरणीय पुष्टि प्रदान करते हैं । अग्नि स्वर्ग-दाता, सर्वलोक-रक्षक और धावा-पृथिवीके उत्पादक हैं । अग्नि हमारं पुत्रको अनुष्ठान-मार्ग दिखा दे । देवोंने उन धन-प्रदाता अग्निको दूत बनाया था ।

५ दिवारान्नि परस्पर रूपांका वार-वार परस्पर विनाश करके भी ऐक्य भावसे एक ही शिशु ( अग्नि ) को पुष्ट करते हैं । वह दीप्तमान् अग्नि आकाश और पृथिवीमें प्रभा विकसित करते हैं । देवोंने उन धनद अग्निको दूत नियुक्त किया था ।

६ अग्नि धन-मूल, निवास-भेदु, अर्थ-दाता, यज्ञ-भेदु और उपासककी अभिलाषाके सिद्धि-कर्ता हैं । अमर देवोंने उन धन-दाता अग्निको दूत बनाया था ।

७ पहले और इस समय अग्नि सारे धनोंका आवास-स्थान हैं । जो कुछ उत्पन्न हुआ है या होगा, उसके निवास-स्थान हैं । जो कुछ है और भविष्यत्में जो अनेकानेक पदार्थ उत्पन्न होंगे, उनके रक्षक हैं । देवोंने उन धनद अग्निको दूत रूपसे नियुक्त किया है ।

द्रविणोदा द्रविणसस्तुरस्य द्रविणोदाः सनरस्य प्रयसत् ।  
 द्रविणोदा वीरवतोमिपं नो द्रविणोदा रासते दीर्घमायुः ॥ ८ ॥  
 एवा नो अग्ने समिधा वृधानो रेवत् पावक भ्रवसे वि भाहि ।  
 तन्नो मित्रो चरुणो मामहस्तामदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः ॥ ९ ॥

१७ सूक्त । अग्नि दैवता हैं । गायत्री छन्द है ।

अप नः शोशुचदधमग्ने शुशुग्ध्या रयि । अप नः शोशुचदधम् ॥ १ ॥  
 सुश्रेत्रिया सुगातुया वसूया च यजामहे । अप नः शोशुचदधम् ॥ २ ॥  
 प्र यद्गन्दिष्ट एषां प्रास्माकासश्च सूरयः । अप नः शोशुचदधम् ॥ ३ ॥  
 प्र यत्ते अग्ने सूरयो जायेमहि प्र ते वयम् । अप नः शोशुचदधम् ॥ ४ ॥  
 प्र यदग्नेः सहस्वतो विश्वतो यन्ति भानवः । अप नः शोशुचदधम् ॥ ५ ॥  
 त्वं हि विश्वतोमुख विश्वतः परिभूरसि । अप नः शोशुचदधम् ॥ ६ ॥

८ धनदाता अग्नि जंगम धनका भाग हमें दान करें । धनद अग्नि स्थावर धनका अंग हमें दें । धनद अग्नि हमें वीरोंसे युक्त अन्न दान करें । धनद अग्नि हमें दीर्घ आयु दान करें ।

९ विशुद्ध कर्ता अग्नि, इस प्रकार काष्ठोंसे वृद्धि प्राप्त कर तुम हमें धन-युक्त अन्न देनेके लिये प्रभा प्रकाशित करो । मित्र, चरुण, अदिति, सिन्धु, पृथिवी और आकाश हमारे उस अन्नकी पूजा करें ।

१ अग्नि, हमारे पाप नष्ट हों । हमारा धन प्रकाश करो । हमारे पाप नष्ट हों । x

२ शोभनीय क्षेत्र, शोभन मार्ग और धनके लिये हम तुम्हारी पूजा करते हैं । हमारे पाप विनष्ट हों ।

३ इन स्तोताओंमें जैसे कुत्स उत्कृष्ट स्तोता हैं, उसी तरह हमारे स्तोता भी उत्कृष्ट हैं । हमारे पाप नष्ट हों ।

४ अग्नि, तुम्हारे स्तोता पुत्र-पौत्रादि प्राप्त करते हैं ; इस लिये हम भी तुम्हारी स्तुति करके पुत्र-पौत्रादि लाभ करेंगे । हमारे पाप नष्ट हों ।

५ शत्रु-विजयी अग्निकी दीप्तियाँ सर्वत्र जाती हैं; इस लिये हमारे पाप नष्ट हों ।

६ अग्नि, तुम्हारा मुख ( शिखा ) चारो ओर है । तुम हमारे रक्षक बनो । हमारे पाप नष्ट हों ।

x "Que notre faute soit effacé" Longlois. "Nostrum eripietur scelus" Rosen.  
 "May our sin be repented of" wilson.

द्विपो नो विश्वतोमुखाति नावेव पारय । अप नः शोशुचदघम् ॥ ७ ॥  
स नः सिन्धुमिव नावयाति पर्पाः स्वस्तये । अप नः शोशुचदघम् ॥ ८ ॥

६८ सूक्त । अग्नि देवता हैं । त्रिष्टुप् छन्द है ।

वैश्वानरस्य सुमती स्याम राजा हि कं भुवनानामभिध्रीः ।  
इतो जातो विश्वमिदं वि चष्टे वैश्वानरो यतते सूर्येण ॥ १ ॥  
पृष्टो दिवि पृष्टो अग्निः पृथिव्यां पृष्टो विश्वा ओपधीरा विवेश ।  
वैश्वानरः सहसा पृष्टो अग्निः स नो दिवास रिपः पालु नक्तम् ॥ २ ॥  
वैश्वानर तव तत् सत्यमस्तश्रुमान्नायो मघवानः सचन्ताम् ।  
तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः ॥ ३ ॥



६९ सूक्त । अग्नि देवता हैं । आर्ष-त्रिष्टुप् छन्द है ।  
जातवेदसे सुनवाम सोममरातीयतो नि दहाति वेदः ।  
स नः पर्पदति दुर्गाणि विश्वा नावेव सिन्धुं दुरितात्यग्निः ॥ १ ॥



७ सर्वतोमुख अग्नि, जैसे नौकासे नदीको पार किया जाता है, वैसे ही हमारे पात्रोंसे हमें पार करा दो । हमारे पाप नष्ट हों ।

८ नदी-पारकी तरह हमारे कल्याणके लिये तुम हमें शत्रुसे पार कराकर हमें पालन करो । हमारे पाप नष्ट हों ।

१ हम वैश्वानर अग्निके अनुग्रहमें रहें । वह सारे भुवनों द्वारा पूजनीय राजा हैं । इन दो काष्ठोंसे उत्पन्न होकर ही वैश्वानरने संसारको देखा और सूर्यके साथ एकत्र गमन किया ।

२ सूर्य-रूपसे आकाशमें और गार्हपत्यादि-रूपसे पृथिवीमें अग्नि वर्त्तमान हैं । अग्निने सारे शस्त्रोंमें रहकर, उन्हें पकानेके लिये, उनमें प्रवेश किया है । वही बलशाली वैश्वानर अग्नि दिन और रात्रिमें हमें शत्रुसे बचावे ।

३ वैश्वानर, तुम्हारे सम्बन्धमें यह यज्ञ सफल हो । हम बहुमूल्य धन प्राप्त हों । मित्र, वरुण, अदिति, सिन्धु, पृथिवी और आकाश हमारे उस धनकी पूजा करें ।

१ हम सर्वभूतज्ञ अग्निको उद्देश्य कर सोमका अभिषेक करते हैं । जो हमारे प्रति शत्रुकी तरह आचरण करते हैं, उनका धन अग्नि दहन करें । जैसे नौकासे नदी पार की जाती है, उसी तरह वह हमें सारे दुःखोंसे पार करा दे । अग्नि हमें पापोंसे पार करा दे ।

१०० सूक्त । इन्द्र देवता हैं । वृषागिरिके ऋजाश्व, अम्बरीष, सहदेव, भयमान और सुराधा

नामक पुत्र ऋषि हैं । त्रिष्टुप् छन्द है ।

स यो वृषा वृषण्येभिः समोका महो दिवः पृथिव्याश्च सम्राट् ।

सतीनसत्वा हव्यो भरेषु मरुत्वान्तो भवत्विन्द्र ऊती ॥ १ ॥

यस्यानासः सूर्यस्येव यामो भरेभरे वृत्रहा शुष्मो अस्ति ।

वृषन्तमः सखिभिः स्वेभिरेवैर्मरुत्वान्तो भवत्विन्द्र ऊती ॥ २ ॥

दिवो न यस्य रेतसो दुधानाः पन्थासो यन्ति शवसापरीताः ।

तरद्द्वे पाभुसासहिः पौंस्येभिर्मरुत्वान्तो भवत्विन्द्र ऊती ॥ ३ ॥

सो अङ्गिरोमिरङ्गिरस्तमो भूद्वृषा वृषभिः सखिभिः सखा सन् ।

ऋग्मिभिर्ऋग्मी गानुमिर्ज्येष्ठो मरुत्वान्तो भवत्विन्द्र ऊती ॥ ४ ॥

स स्रुभिर्न रुद्रभिर्ऋग्भ्या नृपाहो सासहो अमित्रान् ।

सनीडेभिः श्रवस्यानि त्वन्मरुत्वान्तो भवत्विन्द्र ऊती ॥ ५ ॥

स मन्युमीः समदनस्य कर्तास्माकोभिर्नृभिः सूर्यं सनत् ।

अस्मिन्नहन्तसत्पतिः पुरुहूतो मरुत्वान्तो भवत्विन्द्र ऊती ॥ ६ ॥

तमूतयो रणयञ्छूरसातौ तंक्षेमस्य क्षितयः कृणवत त्राम् ।

स विश्वस्य करुणस्येश एको मरुत्वान्तो भवत्विन्द्र ऊती ॥ ७ ॥

१ जो इन्द्र अभीष्टवर्षी, वीर्यशाली, दिव्य लोक और पृथिवीके सम्राट् और वृष्टि-दाता तथा रणक्षेत्रमें आह्वान-के योग्य हैं, वह मत्तोंके साथ, हमारी रक्षामें तत्पर हों ।

२ सूर्यकी तरह जिनकी गति, दूसरेके लिये, अप्राप्य है, जो संग्राममें शत्रु-हन्ता और रिपु-शोषक हैं और जो, अपने गमनशील सखा मत्तोंके साथ, यथेष्ट परिमाणमें अभीष्ट द्रव्य दान करते हैं, वह इन्द्र, मत्तोंके साथ, हमारी रक्षामें तत्पर हों ।

३ सूर्य-किरणोंकी तरह जिसकी सतेज और दुष्प्रापणीय किरणें वृष्टि-जलका दोहन करके चारो ओर फैल जाती हैं, वही शत्रु-पराजयी और अपने पौरुषसे लज्ज-विजय इन्द्र, मत्तोंके साथ हमारी रक्षामें तत्पर हों ।

४ वह गमनशील लोगोंमें अत्यन्त शीघ्रगामी, अभीष्ट-दाताओंमें प्रधान अभीष्ट-दाता और मित्रोंमें उत्तम मित्र होकर पूजनियोंमें विशेष पूजा-पात्र और स्तुति-पत्रोंमें श्रेष्ठ हूय हैं । वह मत्तोंके साथ हमारे रक्षणमें तत्पर हों ।

५ इन्द्र, रुद्र-पुत्र मत्तोंकी सहायतासे, बलशाली होकर, मनुज्योंके संग्राममें शत्रुओंको परास्त करके तथा अपने सहवासी मत्तोंकी अन्वोत्पादक वृष्टि भेजकर, मत्तोंके साथ, हमारी रक्षामें तत्पर बनो ।

६ शत्रु-हन्ता, संग्राम-कर्ता, संस्र्लोकाधिपति और बहुत लोकोंद्वारा आहूत इन्द्र हम ऋषियोंको आज सूर्यका आलोक-या प्रकाश भोग करने दें ( और शत्रुओंको अन्धकार दें ) और वह, मत्तोंके साथ, हमारी रक्षामें परायण हों ।

७ सहायक मत्तु संग्राममें इन्द्रको, शब्द द्वारा, उत्तेजित करते हैं । मनुष्य इन्द्रको धन-रक्षक बनावें । इन्द्र, सर्व-फल-दायी कर्माके-ईश्वर हैं । वह, मत्तोंके साथ, हमारे रक्षण-परायण हों ।

तमप्सन्त शवस उत्सवेषु नरो नरमवसे तं धनाय ।

सो अन्धे चित्तमसि ज्योतिर्विदन्मरुत्वाजो भवत्विन्द्र ऊती ॥ ८ ॥

स सव्येन यमनि द्राघतश्चित् स दक्षिणे संगृहीता कृतानि ।

स कोरिणा चिन् सनिता धनानि मरुत्वाजो भवत्विन्द्र ऊती ॥ ९ ॥

स प्रामेभिः सनिता स एयंभिर्विदे विश्वासिः कृष्टिभिर्न्येध ।

स पौंस्येभिर्गभिभूरशस्तोर्मरुत्वाजो भवत्विन्द्र ऊती ॥ १० ॥

स जामिभिर्यत् समजाति मीहलेऽजामिभिर्वा पुरुहूत एवैः ।

अपां तोक्स्य तनयस्य जेपे मरुत्वाजो भवत्विन्द्र ऊती ॥ ११ ॥

स वज्रभृद्भ्युता भीम उग्रः सहस्रचेताः शतनीथ ऋम्बा ।

चर्मोपो न शवसा पाञ्चजन्यो मरुत्वान्तो भवत्विन्द्र ऊती ॥ १२ ॥

तस्य यज्ञः क्रन्दति स्मत् स्वर्षा दिवो न त्वेषो रथः शिमीवान् ।

तं सचन्ते सनयस्यं धनानि मरुत्वाजो भवत्विन्द्र ऊती ॥ १३ ॥

यस्याजस्रं शवसा मानमुक्यं परिभुजद्रोदसी विश्वतः सीम् ।

स पारिपत् क्रतुभिर्मन्दसानो मरुत्वाजो भवत्विन्द्र ऊती ॥ १४ ॥

८ मरुतोंके मीदानमें, यज्ञा और धनकी प्राप्तिके लिये, नेता लोग इन्द्रकी धारण ग्रहण करते हैं; क्योंकि, इन्द्र दृष्टि-प्रति-बन्धक अन्धकारमें आलोक प्रदान करने अथवा संप्रामेमें चिज्य देते हैं। इन्द्र, मरुतोंके साथ, हमारी रक्षामें परायण हों।

९ इन्द्र याम इत्ये द्वारा द्विपक्षोंको निवारण करते और दक्षिण हस्त द्वारा यजमानका हृद्य ग्रहण करते हैं। वह म्नाय द्वारा म्नुन होकर धन प्रदान करते हैं। इन्द्र, मरुतोंके साथ, हमारी रक्षामें तत्पर हों।

१० वह अपने महायुक्त मरुतोंके साथ धन दान करते हैं। आज इन्द्र, अपने रथ द्वारा, सारे मनुष्योंसे परिचित हो रहे हैं। इन्द्रने अपने, पराक्रममें, दृष्ट शत्रुओंको अभिभूत किया है। वह, मरुतोंके साथ, हमारी रक्षामें तत्पर हों।

११ अनेकों द्वारा आहत होकर चर्मोपोंके संग मिलकर या जो यन्तु नहीं हैं, उनको साथ लेकर समर-क्षेत्रमें इन्द्र जाते हैं तथा इन मरुतोंके पुत्रों और उनके पुत्र-पौत्रोंका जय-साधन करते हैं। वह मरुतोंके साथ हमारी रक्षामें तत्पर हों।

१२ इन्द्र वज्र-धारी, म्नु-रन्ता, भीम, उग्र, सहस्र-ज्ञान-युक्त, बहुस्तुति-भाजन और महायुक्त हैं। इन्द्र, सोम-रसकी तरह, दान द्वारा पाप धोना (चार वर्ण और पञ्चम वर्ण निषाद) के रक्षक हैं। वह मरुतोंके साथ हमारे रक्षण-परायण हों।

१३ इन्द्रका यज्ञ शत्रुओंको नश्वरता है। इन्द्र सोमन जल-दान करते हैं। वह सूर्यकी तरह दीप्तिमान हैं। वह गरजते हैं। यह मार्गाधिक कर्ममें रत रहते हैं। धन और धन-दान इन्द्रकी सेवा करते हैं। मरुतोंके साथ वह हमारी रक्षामें तत्पर हों।

१४ सारे कर्तोंका उपभागभूत जिसका यह उभय (पृथिवी और अन्तरीक्ष) लोकोंका सदा, चारो ओरसे, पालन करता है, वह हमारे यज्ञों परिसृष्ट होकर हमारे पापोंसे हमें पार करा दे। वह मरुतोंके साथ हमारी रक्षामें तत्पर हों।



न यस्य देवा देवता न मर्ता आपश्चन शवसो अन्तमापुः ।  
 स प्ररिका त्वक्षसा क्ष्मो दिवश्च मरुत्वाज्ञो भवत्विन्द्र ऊती ॥ १५ ॥  
 रोहिच्छयावा सुमदंशुर्लामीर्द्युक्षा राय ऋजाश्वस्य ।  
 वृषरवन्तं विभ्रती धूर्षु रथं मन्द्रा चिकेत नाहुपीषु विक्षु ॥ १६ ॥  
 पतन्त्यत्त इन्द्र वृष्ण उक्थं वापीगिरा अभि गृणन्ति राधः ।  
 ऋजाश्वः प्रष्टिभिरम्बरीषः सहदेवो भयमानः सुराधाः ॥ १७ ॥  
 दस्युञ्छिम्पूश्च पुरुहूत एवैर्हत्वा पृथिव्यां शर्वा नि वर्हीत् ।  
 सनत् क्षेत्रं सखिभिः शिवन्त्येभिः सनत् सूर्यं सनदपः सुवज्रः ॥ १८ ॥  
 विश्वाहेन्द्रो अधिवक्ता नो अस्त्वपरिहृताः मनुयाम वाजम् ।  
 तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवी उत धीः ॥ १९ ॥

१०१ सूक्त । इन्द्र देवता हैं । यहाँसे ११५ सूक्तक अङ्गिराके पुत्र कुत्स ऋषि हैं । त्रिष्टुप् और जगती छन्द हैं ।  
 प्र मन्दिने पितुमदचंता वचो यः कृष्णागर्भा निरहन्नुजिश्वता ।  
 अंबस्यवो वृषणं वज्रदक्षिणं मरुवन्तं सख्याय हवामहे ॥ १ ॥

१५ देव, मनुष्य या जल-समूह जिस देव ( इन्द्र ) के बलका अन्त नहीं पाते, वह अपने बल द्वारा पृथिवी और आकाशसे भी अधिक हो गये हैं । वह, मरुतोके साथ, हमारी रक्षामें परायण हो ।

१६ दीर्घावयव, अलङ्कारधारी, आकाशवासी और रोहितवर्ण एवं श्यामवर्ण दोनों इन्द्रके घोड़े, ऋजाश्व नामक राजर्षिको धन देनेके लिये, अभीष्टदाता इन्द्रसे युक्त, रथका सम्मुख भाग धारण करके प्रसन्न-वदन मनुष्य-सेना द्वारा परिचित होते हैं ।

१७ अभीष्ट-दाता इन्द्र, वृषागिराके पुत्र ऋजाश्व, अम्बरीष, सहदेव, भयमान और सुराधा तुम्हारी प्रीतिके लिये तुम्हारा यह स्तोत्र उच्चारण करते हैं ।

१८ इन्द्रने, अनेकों द्वारा आहत होकर और गतिशील मरुतोसे युक्त होकर, पृथिवी-निवासी दस्युओं या शत्रुओं और पिशुनों या राक्षसोंको प्रहार करके, हननशील वज्र द्वारा वध किया । अनन्तर श्वेतवर्ण मित्रों या अलंकार द्वारा दीसाङ्ग मरुतोके साथ क्षेत्रोंका भाग कर लिया । शोभन-वज्र-युक्त इन्द्र सूर्य एवं जल-समूहको प्राप्त हुए ।

१९ सब कालोंमें वर्तमान इन्द्र हमारे पक्षसे बोलें । हम भी अकुटिलगति होकर अन्न भोग करें । मित्र, वरुण, अदिति, सिन्धु, पृथिवी और आकाश उसे पूजें ।

१ जिन इन्द्रने ऋजिश्वा राजाके साथ कृष्ण नामके अरुकी गर्भवती स्त्रियोंको निहत्स किया था, उन्हीं हृष्ट इन्द्रके उद्देशसे, अन्नके साथ, स्तुति अर्पित करो । हम रक्षण पानेकी इच्छासे उन अभीष्ट-दाता और दक्षिण हाथमें वज्र-धारी इन्द्रको, मरुतोके साथ, अपना सला होनेके लिये, आह्वान करते हैं ।

यो व्यसं जाहृषाणेन मन्युना यः शम्बरं यो अहन् पिप्रुमव्रतम् ।  
 इन्द्रो यः शुष्णमशुपं न्यावृणद्मरुत्वन्तं सख्याय हवामहे ॥ २ ॥  
 यस्य द्यावापृथिवी पौंस्यं महद्यस्य व्रते वरुणो यस्य सूर्यः ।  
 यस्येन्द्रस्य सिन्धवः सञ्चति व्रतं मरुत्वन्तं सख्याय हवामहे ॥ ३ ॥  
 यो अश्वानां यो गवां गोपतिर्वशी य आरितः कर्मणिकर्मणि स्थिरः ।  
 वोलोश्चिदिन्द्रो यो असुन्वतो वधो मरुत्वन्तं सख्याय हवामहे ॥ ४ ॥  
 यो विश्वस्य जगतः प्राणतस्पतिर्यो ब्रह्मणे प्रथमो गा अचिन्दत् ।  
 इन्द्रो यो दस्यूरधरां अचातिरन्मरुत्वन्तं सख्याय हवामहे ॥ ५ ॥  
 यः शूरैर्महं व्या यश्च भार्गभिर्यो प्रावन्द्भिर्हयते यश्च जिग्मुभिः ।  
 इन्द्रं यं विश्वा भुवनामि सन्दधुर्मरुत्वन्तं सख्याय हवामहे ॥ ६ ॥  
 रश्नाणामेति प्रदिशा विवक्षणो रुद्रेभिर्योपा तनुते पृथु जयः ।  
 इन्द्रं मनीषा अभ्यर्चति श्रुतं मरुत्वन्तं सख्याय हवामहे ॥ ७ ॥

२. प्रवृद्ध क्रोधके साथ जिन इन्द्रेने विगत-भुज घृत्र या व्यस नामक अक्षरका वध किया था। जिन्होंने शम्बर और यज्ञ-रहित पिप्रुका वध किया था और जिन्होंने दुर्जन शुष्णका समूल नाश किया था, उन्हीं इन्द्रको, मरुतोंके साथ, अपना सखा होनेके लिये, हम बुलाते हैं।

३. जिनके विपुल यन्त्रका दौं और पृथिवी अनुधावन करती हैं, जिनके नियमसे वक्ष्य और सूर्य चलते हैं और जिनके नियमसे अनुसार नदियां प्रवाहित हैं, उन्हीं इन्द्रको, मरुतोंके साथ, अपना सखा होनेके लिये, हम बुलाते हैं।

४. जो अश्वोंके अधिपति, गोपोंके ईश, स्वतंत्र, स्तुति प्राप्त कर जो सारे कर्मोंमें स्थिर और अभिपद-शून्य दुर्द्धर्ष शत्रुओंके हन्ता हैं, उन्हीं इन्द्रको, मरुतोंके साथ, अपना सखा होनेके लिये, हम बुलाते हैं।

५. जो गतिशील और निष्वास-सम्पन्न जीवोंके अधिपति हैं और जिन्होंने अङ्गिरा आदि प्राक्ष्णोंके लिये, पणि द्वारा अपहृत गौका सर्व-प्रथम उद्धार किया था तथा जिन्होंने दस्युओंको निरूप्य करके वध किया था, उन्हीं इन्द्रको, मरुतोंके साथ, अपना यन्त्र होनेके लिये, हम बुलाते हैं।

६. जो शत्रुओं और भीरुओंके आह्वान योग्य हैं, जिनमें समरसे भागनेवाले और समरमें विजयी, दोनों ही आह्वान करते हैं तथा जिनमें सारे प्राणी, अपने-अपने कार्योंके सम्मुख, स्थापित करते हैं, उन्हीं इन्द्रको, मरुतोंके साथ, सखा होनेके लिये, हम बुलाते हैं।

७. सूर्य-रूप आलोकमय इन्द्र सारं प्राणियोंके प्राण-स्वरूप रूद्र-पुत्र मरुतोंको ग्रहण कर उदित होते हैं और उन्हीं रूद्र-पुत्र मरुतों द्वारा वाक्य-यग-युक्त होकर विस्तारित होते हैं। प्रख्यात इन्द्रको स्तुति-रक्षण वाक्य पूजित करते हैं। उन्हीं इन्द्रको, मरुतोंके साथ, सखा होनेके लिये, हम आह्वान करते हैं।

यद्वा मरुत्वः परमे सधस्थे यद्वावमे वृजने मादयासे ।  
 अत आयाहाध्वरं नो अच्छा त्वाया हविश्चक्रुमा सत्यराधः ॥ ८ ॥  
 त्वायेन्द्र सोमं सुषुमा सुदक्ष त्वाया हविश्चक्रुमा ब्रह्मयाहः ।  
 अघा नियुत्वः सगणो मरुद्भिरस्मिन्यज्ञे बर्हिषि मादयस्व ॥ ९ ॥  
 मादयस्व हरिभिर्ये त इन्द्र चिष्यस्व शिश्रे चिरवृजस्व धने ।  
 आ त्वा सुशिप्र हरयो वहन्तुशान् हव्यानि प्रति नो जुपस्व ॥ १० ॥  
 मरुत्स्तोत्रस्य वृजनस्य गोपा वधमिन्द्रेण सनुयाम वाजम् ।  
 तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः ॥ ११ ॥

१०२ सूक्त । इन्द्र देवता है ।

इमां ते धियं प्र भरे महो महीमस्य स्तोत्रे धिपणा यत्त आनजे ।  
 तमुत्सवे च प्रसवे च सासहिमिन्द्र' देवासः शवसामदक्षनु ॥ १ ॥  
 अस्य श्रवो नद्यः सप्त विभ्रति द्यावाक्षामा पृथिवी दर्शतं वपुः ।  
 अस्मे सूर्याचन्द्रमसाग्निवक्षे श्रद्धे कमिन्द्रचरतो चितर्तुरम् ॥ २ ॥

८ मरुत्सूक्त इन्द्र, तुम उत्कृष्ट धर्मों ही हृष्ट हो अथवा सामान्य स्थानमें ही हृष्ट हो हमारे यज्ञमें आगमन करो ।  
 सत्यधन इन्द्र, तुम्हारे लिये उत्सुक होकर हम हव्य प्रदान करते हैं ।

९ शोभन मलसे युक्त इन्द्र, हम तुम्हारे लिये उत्सुक होकर सोमका अभिषव करते हैं । तुम्हें स्तुति द्वारा पाया जाता है । हम, तुम्हारे उद्देशसे, हव्य प्रदान करते हैं । अश्व-युक्त इन्द्र, मस्तोंके साथ दलबद्ध होकर इस यज्ञ-कुशपर बैठ कर हृष्ट बनो ।

१० इन्द्र, अपने घोड़ोंके साथ प्रसन्न हो अपने दोनों शिश्र, हनु या जवड़े खोलो; सोम पानके लिये अपनी जिह्वा और छपजिह्वा खोलो । हे छशिश्र वा छनासिक इन्द्र, तुम्हें यहाँ घोड़े ले आवें । तुम हमारे प्रति जुष्ट होकर हमारा हव्य ग्रहण करो ।

११ जिन इन्द्रका, मस्तोंके साथ, स्तोत्र है, उन शत्रु-हन्ता इन्द्र द्वारा रक्षित होकर तुम उनसे अन्न प्राप्त करो । मित्र, वरुण, अदिति, सिन्धु, पृथिवी और आकाश हमारे उस अन्नकी पूजा करें ।

१ तुम महान् हो । तुम्हारे उद्देशसे मैं इस सहती स्तुतिको सम्पादन करता हूँ; क्योंकि तुम्हारा अनुग्रह मेरी स्तुति पर निर्भर करता है । ऋत्विक्कोने सम्पत्ति और धन लाभके लिये स्तुति-चलद्वारा उन शत्रु-विजयी इन्द्रको हृष्ट किया है ।

२ सात नदियाँ इन्द्रकी कीर्ति धारण करती हैं । आकाश, पृथ्वी और अन्तरीक्ष उनका दर्शनीय रूप धारण करते हैं । इन्द्र, सूर्य, और चन्द्र हमारे सामने, प्रकाश देने और हमारा विश्वास उत्पन्न करनेके लिये, बार-बार एकके बाद एक विचरण करते हैं ।

तं स्मा रथं मघवन् प्राव सातये जैत्रं यं ते अनुमदाम सङ्गमे ।  
 आज्ञा न इन्द्र मनसा पुरुष्युत त्वायद्भ्यो मघवञ्जुर्म यच्छ नः ॥ ३ ॥  
 वयं जयेम त्वया युजा वृतमस्माकमंशमुदवा भरेभरे ।  
 अस्पम्यमिन्द्र वरिवः सुगं कृधि प्र शत्रूणां मघवन्वृष्या रुज ॥ ४ ॥  
 नाना हि त्वा हवमाना जना इमे धनानां धर्तारवसा विपन्नवः ।  
 अस्माकं स्मा रथमा तिष्ठ सातये जैत्रं हीन्द्र निभृतं मनस्त्व ॥ ५ ॥  
 गोजिता वांह अमितक्रतुः सिमः कर्मन्कर्मञ्छतमूतिः खजङ्करः ।  
 अकल्प इन्द्रः प्रतिमानमोजसाथा जना वि ह्यन्ते सिपासवः ॥ ६ ॥  
 उत्ते शतान् मघवन्नुच्च भूयस उत्सहसाद्रिचि कृष्टिपु श्रवः ।  
 अमात्रं त्वा धिपणा तित्त्रिपे मह्यधा वृत्ताणि जिघ्रसे पुरन्दर ॥ ७ ॥  
 द्विधिष्ठिधातु प्रतिमानमोजसस्तिष्ठो भूमीर्नृपते त्रीणि रोचना ।  
 अतीदं चिष्टवं भुवनं वत्रश्चिथाशत्रु रिन्द्र जनुपा सनादसि ॥ ८ ॥  
 त्वां देवेषु प्रथमं हवामहे त्वं वभूथ पृतनासु सासहिः ।  
 सेमन्नः कारुमुपमन्युसुद्धिदमिन्द्रः कृणोतु प्रसवे रथं पुरः ॥ ९ ॥

३ इन्द्र, अपने अन्तःकरणसे हम तुम्हारी बहुत स्तुति करते हैं । तुम्हारे जिस विजयी रथको शत्रुओंके युद्धमें देखकर हम प्रसन्न होते हैं, हमारे धन-लाभके लिये उसी रथको प्रेरण करो । मघवन्, हम तुम्हारी कामना करते हैं । हमें सख दो ।

४ तुम्हें सहायक पाकर हम अवरोधक शत्रुओंको परास्त करेंगे । संग्राममें हमारे अंशकी रक्षा करो । मघवन्, हम सरलतासे धन पा सकें—ऐसा उपाय कर दो । शत्रुओंकी शक्ति तोड़ दो ।

५ घनाधिपति, ये जो अपनी रक्षाके लिये तुम्हारी स्तुति करते हैं और तुम्हें बुलाते हैं, वे नाना प्रकारके हैं । इनमें हमें ही, धन देनेके लिये, रथपर चढ़ो । इन्द्र, तुम्हारा मन व्याकुलता-रहित और जय-शील है ।

६ तुम्हारी आज्ञा, जय द्वारा, गौके लिये लाभकारी है या गौको जय करनेवाली है । तुम्हारा ज्ञान असीम है । तुम श्रेष्ठ हो और पुरोहितोंके कार्योंमें सैकड़ों रक्षण-कार्य करते हो । इन्द्र युद्ध-कर्ता और स्वतंत्र हैं । वह सारे प्राणियोंके बलके परिमाण-स्वरूप हैं । इसीलिये धन-लाभार्थी मनुष्य इन्द्रको विविध प्रकारसे बुलाते हैं ।

७ इन्द्र, तुम मनुष्यको जो अन्नदान करते हो, वह शतसंख्यक धनसे भी अधिक है अथवा उससे भी अधिक है वा सहस्रसंख्यक धनसे भी अधिक है । तुम परिमाण-रहित हो । हमारे स्तुति-वचनोंने तुम्हें दीक्ष किया है । पुरन्दर, तुमने शत्रुओंको हनन किया है ।

८ नर-रक्षक इन्द्र, तुम त्रिगुनी हुई रस्तीकी तरह सारे प्राणियोंके बलके परिमाण-स्वरूप हो । तुम तीनों लोकोंमें तीन प्रकार ( सूर्य, विद्युत् और अग्नि ) के तेज हो । तुम इस संसारको चलानेमें पूर्ण समर्थ हो; क्योंकि, इन्द्र, तुम बहुत समयसे, जन्मावधि, शत्रु-शून्य हो ।

९ तुम देवोंमें प्रथम हो । तुम संग्राममें शत्रु-जयी हो । हम तुम्हें बुलाते हैं । वह इन्द्र हमारे युद्ध-योग्य, तेजस्वी और विभेद-कारी रथको संग्राममें अन्य रथोंके आगे कर दें ।

त्वं जिगेथ न धना रुरोधिताभेष्वजा मघवन्महत्सु च ।  
 त्वामुग्रमवसे संशिशीमप्यथा न इन्द्र हवनेषु चोदय ॥ १० ॥  
 विश्वाहेन्द्रो अघिवका नो अस्त्वपरिहृवृताः सनुयाम वाजम् ।  
 तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः ॥ ११ ॥



१०३ सूक्त । इन्द्र देवता हैं । त्रिष्टुप् छन्द है ।

तत्त इन्द्रियं परमं पराचैरधारयन्त कवयः पुरेदम् ।  
 क्षेमैदमन्यद्विवान्यदस्य समी पृच्यते समनेव केतुः ॥ १ ॥  
 स धारयत् पृथिवीं पप्रयच्च वज्रेण हत्वा निरपः ससर्ज ।  
 अहन्नाहिमभिनद्रौहणं व्यहन्त्यसं मघवा शचीभिः ॥ २ ॥  
 स जातूभर्मा श्रद्धधान ओजः पुरो विभिन्दन्नचरद्वि दासोः ।  
 विद्वान्त्रजिन्दस्यवे हेतिमस्यार्थं सहो वर्धयाद्युन्नमिन्द्र ॥ ३ ॥  
 तदूचुपे मानुपेमा युगानि कीर्तन्यं मघवा नाम विश्रत् ।  
 उपप्रयन्दस्युहत्याय वज्रो यद्ग स्रुः श्रवसे नाम दधे ॥ ४ ॥

१० तुम जय प्राप्त करते हो और विजित धनको छिपाकर रखते नहीं । धनद इन्द्र, तुम उग्र हो । जुद्ध और विशाल युद्धमें, रक्षाके लिये, स्तोत्रद्वारा हम तुम्हें तोत्र करते हैं । इसलिये इन्द्र, हमें युद्धके लिये आह्वानमें उत्तेजित करो ।

११ सदा वर्तमान इन्द्र हमारे पक्षसे बोलें । हम भी अकुटिल-गति होकर अन्न भोग करें । मित्र, वरुण, अदिति, सिन्धु, पृथिवी और आकाश वह पूजें ।

१ इन्द्र, पहले मेधावियोंने तुम्हारे इस प्रसिद्ध परम बलको साक्षात् धारण किया था । इन्द्रकी अग्नि-रूप एक ज्योति पृथिवीपर और दूसरी सूर्य-रूप आकाशमें है । युद्धमें दोनों पक्षोंकी ध्वजाएँ जैसे मिलती हैं, उसी तरह उक्त उभय ज्योतिषां संयुक्त होती हैं ।

२ इन्द्रने पृथ्वीको धारण और विस्तृत किया है । इन्द्रने वज्र द्वारा वृत्रका वधकर बुध्ति-जल बाहर किया है । अहिको मारा है । रौहिण नामक असुरका विदारण किया है । इन्द्रने अपने कार्य द्वारा विगत-भुज वृत्रका नाश किया है ।

३ उन्होंने वज्र-स्वरूप अस्त्र लेकर वीर्य कार्यमें उत्साह-पूर्ण होकर दस्युओंके नगरोंका विनाश करके विचरण किया था । वज्रधर इन्द्र, हमारी स्तुति जानकर दस्युओंके प्रति अस्त्र निक्षेप करो । इन्द्र, आर्योंका बल और यश बढ़ाओ ।

४ वज्रधर और अरिमर्दन इन्द्र, दस्युओंके विनाशके लिये निकलकर, यशके लिये, जो बल धारण किया था, कीर्तन-योग्य उस बलको धारणकर धनवान् इन्द्र, स्तोता यजमानोंके लिये मनुष्योंके युगोंका, सूर्य-रूपसे, निष्पादन करते हैं ।

तदस्येदं पश्यता भूरि पुष्टं श्रदिन्द्रस्य घत्तन वीर्याय ।  
 स गा अविन्दत्सो अविन्ददश्वान्त्स ओपधीः सो अपः स वनानि ॥ ५ ॥  
 भूरिकर्मणे वृषभाय वृष्णे सत्यशुष्पाय सुनवाम सोमम् ।  
 य आद्रत्या परिपन्धीव शूरोऽयज्वनो विभज्जनेति वेदः ॥ ६ ॥  
 तदिन्द्र प्रेव धीर्यं शक्यं यत् ससन्तं वज्रो णावोधयोऽहिम् ।  
 अनु त्वा पत्नीर्हपितं वयश्च विश्वे देवासो अमदन्ननु त्वा ॥ ७ ॥  
 शुष्णं पिष्टुं कुयवं वृत्रमिन्द्र यदावधीर्वि पुरः शम्बरस्य ।  
 तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः ॥ ८ ॥



१०४ सूक्त । इन्द्र देवता हैं ।

योनिष्ट इन्द्र निपदे अकारि तमा निपीद स्वानो नार्वा ।  
 विमुच्या वयोऽवसायाश्वान्दोषा वस्तोर्वंहीयसः प्रपित्ने ॥ १ ॥  
 ओ त्ये नर इन्द्रमूतये गुनू चित्तान्त्सद्यो अध्वनो जगम्यात् ।  
 देवासो मनु्यु दासस्य अन्नन्ते न आ वदन्त्सुविताय वर्णम् ॥ २ ॥

५ इन्द्रके इस प्रयुक्त और विस्तीर्ण वीर्यको देखो । उनकी शक्तिपर श्रद्धा करो । उन्होंने गौ और अश्व प्राप्त किया उन्होंने औषधियों, जन्तों और वनोंको प्राप्त किया ।

६ प्रभूत-रमां, श्रेष्ठ, अमीष्टदाता और सत्य-बल इन्द्रको लक्ष्यकर हम सोम अभिषेक करते हैं । जैसे पथ-निरोधक चौक पथिकोंके पाससे धन ले लेता है, वैसे ही वीर इन्द्र धनका आदर करके यज्ञ-हीन मनुष्योंके पाससे उस धनका भाग-कर लेकर यज्ञ-परायण मनुष्योंके पास वह धन देते जाते हैं ।

७ इन्द्र, तुमने वा प्रसिद्ध वीर-कार्य किया था । उस निद्रित अहिको वज्र द्वारा जागरित किया था । उस समय देव-मणियोंने तुम्हें श्रेष्ठ देखकर हर्ष प्राप्त किया था । गतिशील मरुद्गण और सारे देवगण तुम्हें हष्ट देखकर हष्ट हुए थे ।

८ इन्द्र, तुमने शुष्ण, पिष्टु, कुयव और वृत्रका वध किया है और शम्बरके नगरोंका विनाश किया था । असयुव मित्र, वरुण, अदिति, सिन्धु, पृथिवी और आकाश हमारी उस प्रार्थित वस्तुको पूजित करें ।

१ इन्द्र, तुम्हारे घेठनेके लिये जो वेदी प्रस्तुत हुई है, उसपर शब्दाद्यमान अश्वकी तरह दौरो । अश्वोंको बांधने-बाली रस्सियोंको छुड़ाकर अश्वोंको मुक्त कर दो । वह अश्व, यज्ञ-काल आनेपर, दिन-रात, तुम्हें वहन करते हैं ।

२ रक्षणके लिये ये मनुष्य इन्द्रके निकट आये हैं । इन्द्र उन्हें सुरत, उसी समय, अनुष्ठान-मार्गमें जाने देते हैं । देवता-श्लोक दृष्ट्युओंका प्रार्थन विनष्ट करें और हमारे छल-साधन-स्वरूप यज्ञमें अनिष्ट-निवारक इन्द्रको आने दें ।

अव त्मना भरते केतवेदा अव त्मना भरते फेनमुदन् ।  
क्षीरेण स्नातः कुयवस्य योपे हते ते स्यातां प्रवणे शिफायाः ॥ ३ ॥  
युयोप नाभिरुपरस्यायोः प्रपूर्वाभिस्तिरते राष्ट्रि शूरः ।  
अञ्जसी कुलिशी वीरपत्नी पयो हिन्वाना उदभिर्भरन्ते ॥ ४ ॥  
प्रति यत् स्या नीथादर्शि दस्योरोको नाच्छा सदनं जानती गात् ।  
अथ स्मा नो मघवञ्चकृतादिन्मा नो मघेव निष्पपी परा दाः ॥ ५ ॥  
स त्वं न इन्द्र सूर्ये सो अप्सवनागास्व आ भज जीवशंसे ।  
मान्तरां भुजसा रीरिपो नः श्रद्धितं ते महत् इन्द्रियाय ॥ ६ ॥  
अधामन्ये श्रुते अस्मा अधायि वृषा चोदस्व महते धनाय ।  
मा नो अकृते पुरुहूत थोनाविन्द्र क्षुध्यद्भ्यो वय आसुति दाः ॥ ७ ॥  
मा नो वधीरिन्द्र मा परा दा मा नः प्रिया भोजनानि प्र मोषीः ।  
आण्डा मा नो मघवञ्चक निर्भेन्मा नः पात्रा भेत् सहजानुपाणि ॥ ८ ॥

३ कुयव नामक अछर दूसरेके धनका पता जानकर स्वयं अपहरण करता है। वह जलमें रहकर स्वयं फेन-युक्त जलको चुराता है। कुयवकी दो स्त्रियाँ उसी जलमें स्नान करती हैं। वे स्त्रियाँ शिफा नामक नदीके गम्भीर-निम्न तलमें विनष्ट हों।

४ असु या उपद्रवके लिये इधर-उधर जानेवाला कुयव जलके बीच रहता है। उसका निवास-स्थान गुप्त था। वह शूर, पूर्व-अपहृत जलके साथ, वृद्धि प्राप्त करता और दीप्त होता है। अञ्जसी, कुलिशी और वीर-पत्नी नामकी तीनों नदियाँ स्वकोय जलसे उसे प्रीत करके, जल द्वारा, उसे धारण करती हैं।

५ वत्स-प्रिय गौ जैसे अपनी शाला या गोष्ठका पथ जानती है, उसी प्रकार हमने भी उस अछरके घरकी ओर गये हुए रास्तेको देखा है। उस अछरके बार-बार किये गये उपद्रवसे हमें बचाओ। जैसे कामुक धनका त्याग करता है, उसी प्रकार हमें नहीं छोड़ना।

६ इन्द्र, हमें सूर्य और जल-समूहके प्रति भक्ति-पूर्ण करो। जो लोग, पाप-शून्यताके लिये, जीव मात्रके प्रशंसनीय हैं, उनके प्रति भक्ति-पूर्ण करो। हमारी गर्भ-स्थित सन्तानको हिंसित नहीं करना। हम तुम्हारे महान् बलपर श्रद्धा करते हैं।

७ अन्तःकरणसे हम तुम्हें जानते हैं। तुम्हारे उस बलपर हमने श्रद्धा की है। तुम अभीष्ट-ज्ञाता हो; हमें प्रसूत धन प्रदान करो। इन्द्र तुम बहुत लोगोंके द्वारा आहूत हो। हमें धन-विहीन घरमें नहीं रखना। भूखोंको अन्न और जल दो।

८ इन्द्र, हमें नहीं मारना। हमें नहीं छोड़ना। हमारे प्रिय भक्त्य, उपभोग आदि नहीं लेना। हे समर्थ धनपति इन्द्र, हमारे गर्भ-स्थित अपत्याँको नष्ट नहीं काना। घुटनेके बल चलनेवाले अपत्याँको नष्ट नहीं करना।

अर्वाङ्ङेहि सोमकामं त्वाहुर्ग्र्यं सुतस्तस्य पिता मदाय ।

उरुव्याजा जठर आ चृपस्य पितेव नः शृणुहि ह्यमानः ॥ ६ ॥

१०५ सूक्त । विश्वेदेवगण देवता हैं । इन सूक्तके और १०६ सूक्तके आस्य त्रित भी ऋषि माने जाते हैं । त्रिष्टुप्, यद्यमश्या महागृहती और पंक्ति छन्द हैं ।

चन्द्रमा अप्सर्वतरा सुपर्णो धावते दिवि ।

न वो हिरण्यनेमयः पदं चिन्दन्ति विद्युतो वित्तं मे अस्य रोदसी ॥ १ ॥

अर्थमिद्वा उ अर्थिन आ जाया शुचते पतिम् ।

तुङ्गाते वृष्यं पयः परिदाय रसं दुहे वित्तं मे अस्य रोदसी ॥ २ ॥

मोषु देवा अद्ः स्वरत्र पादि दिवस्पति ।

मा सोम्यस्य शम्भुवः शूने भूम कदाचन वित्तं मे अस्य रोदसी ॥ ३ ॥

यदां पृच्छाम्यवमं स तद्भूतो वि चोचति ।

क ऋतं पूर्वं गतं कस्तद्विभर्ति नूतनो वित्तं मे अस्य रोदसी ॥ ४ ॥

अमी ये देवाः स्यन त्रिष्वा रोचने दिवः ।

कद् ऋतं कदनुतं क प्रत्ना व आहुतिर्वित्तं मे अस्य रोदसी ॥ ५ ॥

६ हमारे सामने आओ । लोगोंने तुम्हें सोम-प्रिय बना डाला है । सोम तैयार है; इसे पान कर हट बनो । विलंबी-पांङ्ग होकर जठरमें सोम-नसकी वगैरे करो । जैसे पिता पुत्रकी बात सुनता है, उसी प्रकार हमारे द्वारा आहुत होकर हमारी बात सुनो ।

१ जलमय अन्तरीक्षमें वर्तमान चन्द्रमा, चन्द्र चन्द्रिकाके साथ आकाशमें दौड़ते हैं । सुवर्ण-नेमिरिमयो, रूपमें परित्त हमारी इन्द्रियां तुम्हारा पद नहीं जाननीं । चावा-शृथिवी, हमारे इस स्तोत्रको जानो ।

२ घनाभिलाषी निश्रय ही घन पाता है । ल्यो पास ही पत्तिको पाती है, सहवास करती है; और, गर्भसे सन्तान उत्पन्न होती है । चावा-शृथिवी, हमारे इस दुःखको जानो अर्थात् पूर्वोक्त प्रकारसे रहित हमारे कष्टको समझो ।

३ देवगण, हमारे स्वर्गस्थ पूर्व पुरा स्वर्गसे च्युत न हों; हम कहीं सोम-पायी पितरोंके सुखके लिये पुत्रसे निराश न हों । चावा-शृथिवी, मेरी यह बात जानो ।

४ देवोंमें सर्व-प्रथम यज्ञार्ह अग्निकी मैं याचना करता हूँ । वह दूत-रूपसे मेरी याचना देवोंको वसोंवे । अग्नि, तुम्हारी पहलुकी वदान्यता कदां गयी ? इस समय कौन नूतन पुरुष उसे धारण करते हैं ? हे चावा-शृथिवी, मेरा यह विषय जानो ।

५ सूर्य द्वारा प्रकाशित इन तीनों लोकोंमें ये देववृन्द रहते हैं । हे देवगण, तुम्हारा सत्य कहाँ है और असत्य कहाँ है ? तुम्हारी प्राचीन आहुति कहाँ है ? चावा-शृथिवी, मेरा यह विषय समझो ।



कद्र ऋतस्य घर्णसि कद्ररुणस्य चक्षणम् ।

कदर्यङ्गो महस्पथाति क्रामेम दूढ्यो वित्तं मे अस्य रोदसी ॥ ६ ॥

अहं सो अस्मि यः पुरा सुते वदामि कानि चित् ।

तं मा व्यंत्याध्योवृको न तृष्णजं मृगं वित्तं मे अस्य रोदसी ॥ ७ ॥

सं मा तपन्त्यभितः सपत्नोरिव पर्शवः ।

मूपो न शिक्षा व्यदन्ति माध्यः स्तोतारं ते शतक्रतो वित्तं मे अस्य रोदसी ॥ ८ ॥

अमी ये सप्त रश्मयस्तत्रा मे नाभिरातता ।

त्रितस्तद्वेदाप्त्यः स जामित्वाय रेभति वित्तं मे अस्य रोदसी ॥ ९ ॥

अमी ये पञ्चोक्षणो मध्ये तस्थुर्महो दिवः ।

देवत्रा नु प्रवाच्यं सग्नीचीना नि वावृतुर्वित्तं मे अस्य रोदसी ॥ १० ॥

सुपर्णा एत आसते मध्य आरोधने दिवः ।

ते सेधन्ति पथो वृकं तरन्तं यद्वतीरपो वित्तं मे अस्य रोदसी ॥ ११ ॥

६ तुम्हारा सत्य-पालन कहां है ? वरुणकी अनुग्रह-दृष्टि कहां है ? महान् अर्यमाका वह मार्ग कहां है, जिसके द्वारा हम पाप-भक्ति व्यक्तियोंका अतिक्रम कर सकें ? धावा-पृथिवी, मेरी यह अवस्था या दुःख जानो अर्थात् दुःख-महोदधिमें पतित मेरे लिये ये सब वस्तुएँ लुप्त-सी हो गयी हैं—इस बातके धावा-पृथिवी साक्षी हैं ।

७ प्राचीन समयमें सोम अभिषुत होनेपर जो मैंने कतिपय स्तोत्र उच्चारण किये थे, वही हैं। जैसे पिपासित मूढको व्याज खा जाता है, वैसे ही मुझे दुःख खा रहा है। धावा-पृथिवी, मेरा यह विषय जानो ।

८ जैसे दो सपत्नियाँ ( सौतेँ ) दोनों ओर खड़ी होकर स्वामीको सन्ताप देती हैं, वैसे ही कृष्णकी दीवारें मुझे सन्ताप दे रही हैं। जैसे चूहा सूता काटता है, हे शतक्रतो, वैसे ही तुम्हारे स्तोत्राको—मुझे दुःख काटता है। धावा-पृथिवी, भेरी यह बात जानो ।

९ ये जो सूर्यकी सात किरणें हैं, उनमें मेरी नाभि, मर्मोत्सा या वासस्थान है। यह बात आसन्न त्रित जानते हैं। राधा कृष्णसे निकलनेके लिये रश्मि-समूहकी स्तुति करते हैं। धावा-पृथिवी, मेरा यह विषय जानो ।

१० विशाल आकाशमें ये जो अग्नि, वायु, सूर्य, इन्द्र और विद्युत् आदि पाँच अमीष्ट-दाता हैं, वे मेरे इस प्रशंसनीय स्तोत्रको शीघ्र देवोंके पास ले जाकर लौट आवें। धावा-पृथिवी, मेरी यह बात जानो ।

११ सर्वव्यापी आकाशमें सूर्यकी रश्मियाँ हैं। विशाल जल-राशिपार करते समय, मार्गमें, सूर्य-रश्मियाँ अरय-कुक्कुर या वृकको निवारण करती हैं। धावा-पृथिवी, मेरा यह विषय जानो।

सायणाचार्यके मतसे—त्रित ऋषिके कृष्णमें गिरनेके पहले, उनको खानेके लिये, एक जंगली वृक बड़ी नदी पार करने गया। अनन्तर सूर्य-रश्मियोंको देखकर भक्षणका अवसर न जानकर लौट गया ।

नव्यं तदुक्थ्यं हितं देवासः सुप्रवाचनम् ।  
 ऋतमर्पन्ति सिन्धवः सत्यं तातान सूर्यो वित्तं मे अस्य रोदसी ॥ १२ ॥  
 अने तव त्यदुक्थ्यं देवेष्वस्त्याप्यम् ।  
 स नः सत्तो मनुष्वदा देवान्यक्षि विदुष्यरो वित्तं मे अस्य रोदसी ॥ १३ ॥  
 सत्तो होता मनुष्वदा देवाँ अच्छा विदुष्यरः ।  
 अग्निर्हव्या सुपूदति देवो देवेषु मेधिरो वित्तं मे अस्य रोदसी ॥ १४ ॥  
 ब्रह्मा कृणोति वरुणो गातुविदं तमीमहे ।  
 द्यूर्णोति हृदा मर्ति नव्यो जायतामृतं वित्तं मे अस्य रोदसी ॥ १५ ॥  
 असाँ यः पन्था आदित्यो दिवि प्रवाच्यं वृतः ।  
 न स देवा अतिक्रमे तं अर्तासो न पश्यथ वित्तं मे अस्य रोदसी ॥ १६ ॥  
 द्वितः कृपेऽवहितो देवान् हवत ऊतये ।  
 तच्छुश्राव गृहस्पतिः वृष्यन्नंहरणादुर वित्तं मे अस्य रोदसी ॥ १७ ॥  
 अरुणो मा सकृद्वृकः पथा यन्तं ददर्श हि ।  
 उज्जिहीते निचाख्या तष्ट्येव पृष्ट्यामथी वित्तं मे अस्य रोदसी ॥ १८ ॥

१२ देवगण, तुम्हारे भीतर वा नव्य, प्रदांसनीय और सुवाच्य बल है। उसके द्वारा वहनशील नदियाँ सदा जल-मद्गायन कानों और सूर्य अपना सर्वदा विद्यमान आलोक विस्तार करते हैं। धावा-पृथिवी, मेरा यह विषय जानो।

१३ अग्नि, देवोंके साथ तुम्हारा वही प्रदांसनीय बन्धुत्व है। तुम अत्यन्त विद्वान् हो। मनुके यज्ञकी तरह हमारे यज्ञमें पैठल देवोंका यज्ञ करो। गावा-पृथिवी, मेरा यह विषय जानो।

१४ मनुके यज्ञकी तरह हमारे यज्ञमें पैठल देवोंके आह्वानकारी, अतिशय विद्वान् और देवोंमें मेघावी अग्निदेव देवोंको हमारे वृष्यकी ओर शास्त्रानुसार प्रेरण करें। धावा-पृथिवी, मेरा यह विषय जानो।

१५ वरुण शत्रु-घार्य करते हैं। उन (वरुण) मार्ग-दर्शकके पास हम याचना करते हैं। अन्तःकरणसे स्तोता चरणको लक्ष्यकर मननीय स्तुतिको प्रचार करता है। वही स्तुति-पात्र वरुण हमारे सत्य-स्वरूप हों। धावा-पृथिवी, मेरा यह विषय जानो।

१६ यह जो सूर्य, आकाशमें, सर्वत्रसद्व पथ-स्वरूप है, देवगण, उन्हें तुम लोग नहीं लांघ सकते। मनुष्य-गण, तुम लोग उन्हें नहीं जानते। धावा-पृथिवी, मेरा यह विषय जानो।

१७ कुँएमें गिरकर त्रितने, रक्षाके लिये, देवोंका आह्वान किया। वृहस्पतिने त्रितका पाप-रूप कुँएसे उद्धार करके उसका आह्वान एना था। धावा-पृथिवी, मेरा यह विषय जानो।

१८ अरुण-वर्ण वृकने, एक समय, मुझे मार्गमें जाते देखा था। जैसे अपना कार्य करते-करते, पीठ पर वेदना होने पर, कोई उठ खड़ा होता है, वैसे ही मुझे देखकर वृक भी उठ खड़ा हुआ था। धावा-पृथिवी, मेरा यह विषय जानो।

एनाङ्गुषेण वयमिन्द्रवन्तोऽभिष्याम वृजने सर्ववीराः ।  
तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः ॥ १९ ॥



१६ अनुवाक । १०६ सूक्त । विश्वेदेवगण देवता हैं ।  
आप्तय त्रित अथवा अङ्गिराके पुत्र कुत्स ऋषि हैं । त्रिष्टुप् और जगती छन्द हैं ।

इन्द्र' मित्र' वरुणमग्निमृतये मारुतं शर्धो अदितिं हवामहे ।

रथं न दुर्गाद्वसवः सुदानवो विश्वस्मान्नो अंहसो निष्पिपर्तन ॥ १ ॥

त आदित्या आ गता सर्वतातये भूत देवा वृत्रत्रयैषु शम्भुवः ।

रथं न दुर्गाद्वसवः सुदानवो विश्वस्मान्नो अंहसो निष्पिपर्तन ॥ २ ॥

अवन्तु न. पितरः सुप्रवाचना उत देवी देवपुत्रे ऋताश्रुधा ।

रथं न दुर्गाद्वसवः सुदानवो विश्वस्मान्नो अंहसो निष्पिपर्तन ॥ ३ ॥

नराशंसं वाजिनं वाजयन्निह क्षयद्वीरं पूषणं सुम्नै रोमहे ।

रथं न दुर्गाद्वसवः सुदानवो विश्वस्मान्नो अंहसो निष्पिपर्तन ॥ ४ ॥

१६ इस घोषणा-योग्य स्तोत्रके द्वारा इन्द्रको पाकर हम लोग, वीरोंके साथ मिलकर, समरमें शत्रुओंको परास्त करेंगे । मित्र, वरुण, अदिति, सिन्धु, पृथिवी और आकाश, हमारी यह प्रार्थना पूजित करें ।

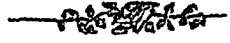
१ रक्षाके लिये हम इन्द्र, मित्र, वरुण, अग्नि और मरुद्गणको बुलाते हैं । जैसे संसारमें लोग रथको दुर्गम पथसे उद्धार कर लाते हैं, वैसे ही दानशील और वास-गृह-दाता देवता लोग हमें, पापोंसे उद्धार कर, पालन करें ।

२ आदित्यगण, युद्धमें हमारी सहायताके लिये, तुम लोग आओ और युद्धमें हमारी विजयके कारण बनो । जैसे संसारमें लोग रथको दुर्गम पथसे उद्धार कर लाते हैं, वैसे ही दानशील और वास-गृह-दाता देवगण, हमें, पापोंसे उद्धार कर, पालन करें ।

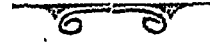
३ जिनको स्तुति छल-साध्य है, वे पितृगण हमारी रक्षा करें । देवोंकी पितृ-मातृ-स्वरूपा और यज्ञ-वद्ध'वित्री धावा-पृथिवी हमारी रक्षा करें । जैसे संसारमें लोग रथको दुर्गम पथसे उद्धार कर लाते हैं, वैसे ही दानशील और वास-गृह-दाता देवगण, हमें, पापोंसे उद्धार कर, पालन करें ।

४ मनुष्योंके प्रशंसनीय और अन्नवान् अश्विको इस समय हम जलाकर स्तुति करते हैं । वीर और विजयी पूषाके पार्श्व, छलकर स्तोत्र द्वारा, याचना करते हैं । जैसे संसारमें लोग रथको दुर्गम पथसे उद्धार कर लाते हैं, वैसे ही दानशील और वास-गृह-दाता-देवगण, हमें, पापोंसे उद्धार कर, पालन करें ।

बृहस्पते सदामिन्तः सुगं कृधि शं योर्यत्ते मनुहितं तदीमहे ।  
 रथं न दुर्गाद्वसवः सुदानवो विश्वस्मान्नो अंहसो निष्पिपर्तन ॥ ५ ॥  
 इन्द्रं कुत्सो वृत्रहणं शचीपतिं काटे निवाह्म ऋपिरह्वदूतये ।  
 रथं न दुर्गाद्वसवः सुदानवो विश्वस्मान्नो अंहसो निष्पिपर्तन ॥ ६ ॥  
 देवैर्नो देव्यदितिर्निपालु देवस्त्राता त्रायतामप्रयुञ्जन् ।  
 तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः ॥ ७ ॥



१०७ सूक्त । विश्वेदेवगण देवता हैं । त्रिष्टुप् छन्द है ।  
 यज्ञो देवानां प्रत्येति सुस्रमादित्यासो भवता मूलयन्तः ।  
 आ वोऽर्वाची सुमतिर्ववृत्यादंहोश्चिद्या वरिवोवित्तरासत् ॥ १ ॥  
 उप नो देवा अवसा गमन्त्वङ्गिरसां सामभिः स्तूयमानाः ।  
 इन्द्र इन्द्रियैर्मरुतो मरुद्गिरादित्यैर्नो अदितिः शर्म शंसत् ॥ २ ॥  
 तन्न इन्द्रस्तद्वरुणरतदग्निस्तदर्यमा तत् सविता चनो श्वात् ।  
 तन्नो मित्रोवरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः ॥ ३ ॥



५ बृहस्पतिदेव, हमें सदा सुख प्रदान करो । मनुष्योंके रोगोंके उपशम और भयोंके दूरीकरणकी जो उपकारिणी क्षमता तुममें है, उसकी भी हम याचना करते हैं । जैसे संसारमें लोग रथको दुर्गम पथसे उद्धार कर लाते हैं, वैसे ही दानशील और वास-गृह-दाता देवगण हमें, पापोंसे उद्धार कर, पालन करें ।

६ कृपमें पतित कुत्स ऋषिने, वचनेके लिये, वृत्र-हन्ता और शचीपति इन्द्रका आह्वान किया था । जैसे संसारमें लोग रथको दुर्गम पथसे उद्धार कर लाते हैं, वैसे ही दानशील और वास-गृह-दाता देवगण हमें पापोंसे उद्धार कर पालन करें ।

७ देवोंके साथ अदिति देवी हमारा पालन करें । सबके रक्षक दीप्यमान सविता जागरूक होकर हमारी रक्षा करें । मित्र, वरुण, अदिति, सिन्धु, पृथिवी और आकाश हमारी यह प्रार्थना पूजित करें ।

१ हमारा यज्ञ देवोंको सुखी करे । आदित्यगण, तृप्त हो । तुम्हारा अनुग्रह हमारी ओर प्रेरित हो और वही अनुग्रह दरिद्र मनुष्योंके लिये प्रयुक्त धनका कारण हो ।

२ अङ्गिरा ऋषियों द्वारा गाये गये मंत्रोंसे स्तुत होकर देवगण, रक्षाके लिये, हमारे पास आवें । धन लेकर इन्द्र, प्राणवायुर्कसाथ मरुत् लोग तथा आदित्योंको लेकर अदिति हमें सुख प्रदान करें ।

३ जिस अन्नके लिये हम याचना करते हैं, उसे इन्द्र, वरुण, अग्नि, अर्यमा और सविता हमें दें । मित्र, वरुण, अदिति, सिन्धु, पृथिवी और आकाश हमारे उस अन्नकी पूजा करें ।

१०८ सूक्त । इन्द्र और अग्नि देवता हैं ।

य इन्द्राग्नी चित्रतमो रथो वामभि विश्वानि भुवनानि चष्टे ।  
 तेना यातं सरथं तस्थिवांसाथा सोमस्य पिवतं सुतस्य ॥ १ ॥  
 यावदिदं भुवनं विश्वमस्त्युरुच्यन्वा वरिमता गभीरम् ।  
 तावाँ अथं पातवे सोमो अस्त्वरमिन्द्राग्नी मनसे युवभ्याम् ॥ २ ॥  
 चक्राथे हि सध्र्यङ्नाम भद्रं सग्नीचीना वृत्रहणा उत स्थः ।  
 ताधिन्द्राग्नी सध्र्यञ्जा निपद्या वृष्णः सोमस्य वृषणा वृषेथाम् ॥ ३ ॥  
 समिद्धे ष्वग्निष्वानजाना यतस्त्रुचा वहिरु तिरितराणा ।  
 तीव्रैः सोमैः परिपिके मिरवाग्निन्द्राग्नी सोमनसाय यातम् ॥ ४ ॥  
 यानीन्द्राग्नी चक्रथुर्वीर्याणि यानि रूपाण्युत वृष्ययानि ।  
 या वां प्रत्नानि सख्या शिवानि तेभिः सोमस्य पिवतं सुतस्य ॥ ५ ॥  
 यद्व्रवं प्रथमं वां वृणानोऽयं सोमो असुरैर्नो विहव्यः ।  
 तां सत्यां श्रद्धामभ्या हि यातमथा सोमस्य पिवतं सुतस्य ॥ ६ ॥

१ इन्द्र और अग्नि, तुम लोगोंके जिस अतीव विचित्र रथने सारे भुवनको उज्ज्वल किया है, उसी रथपर एक साथ बैठकर आओ; अभिपुत सोम पान करो ।

२ इस बहुव्यापक और अपनी गुस्तासे गम्भीर जो सारे भुवनका परिमाण है, इन्द्र और अग्नि, तुम लोगोंके पीने योग्य सोम वही परिमाण हो; तुम लोगोंकी अभिलाषा अच्छी तरह पूर्ण करे ।

३ तुम लोगोंने अपना कल्याणवाही नाम-द्वय एकत्र किया है । वृत्र-हन्तृ-द्वय, वृत्र-वधके लिये, तुम लोग एक साथ हुए थे । अभीष्ट-दाता इन्द्र और अग्नि, तुम लोग एकत्र होकर और बैठकर अभिपुत सोम, अपने उदरोंमें, नेचन करो ।

४ अग्निके अच्छी तरह प्रज्वलित होनेपर दोनों अध्वर्युओंने पात्रसे घृत सेचन करके कुछ विस्तार किया है । इन्द्र और अग्नि, चारो ओर अभिपुत तीव्र सोम-रस द्वारा आकृष्ट होकर, कृपाके लिये, हमारी ओर आओ ।

५ इन्द्र और अग्नि, तुम लोगोंने जो कुछ वीर-कार्य किया है, जितने रूप-विशिष्ट जीवोंकी सृष्टि की है, जो कुछ वर्षण किया है तथा तुमलोगोंका जो कुछ प्राचीन कल्याणकर बन्दुत्व है, वह सब ले आकर अभिपुत सोम पीओ ।

६ पहले ही कहा था कि, तुम दोनोंको वरण करके तुम्हें सोम द्वारा प्रसन्न करूँगा, वही अक्षय्य श्रद्धा देखकर आओ; अभिपुत सोम पान करो । यह सोम हमारे ऋत्विक्कोकी विशेष आहुतिके योग्य हो ।x

x यहाँ अक्षर शब्दका ऋत्विक् अर्थ किया जाता है ।

यदिन्द्राग्नी मदयः स्वे दुरोणे यद्ब्रह्मणि राजनि वा यजत्रा ।  
 अतः परि वृषणावा हि यातमथा सोमस्य पिबतं सुतस्य ॥ ७ ॥  
 यदिन्द्राग्नी यदुषु तुर्वशेषु यद्द्रुं ह्यंष्वनुषु पूरुषु स्थः ।  
 अतः परि वृषणावा हि यातमथा सोमस्य पिबतं सुतस्य ॥ ८ ॥  
 यदिन्द्राग्नी अवमस्यां पृथिव्यां मध्यमस्यां परमस्यामुत स्थः ।  
 अतः परि वृषणावा हि यातमथा सोमस्य पिबतं सुतस्य ॥ ९ ॥  
 यदिन्द्राग्नी परमस्यां पृथिव्यां मध्यमस्यामवमस्यामुत स्थः ।  
 अतः परि वृषणावा हि यातमथा सोमस्य पिबतं सुतस्य ॥ १० ॥  
 यदिन्द्राग्नी दिविण्डो यत् पृथिव्यां यत् पर्वतेष्वोपघ्नीष्वनु ।  
 अतः परि वृषणावा हि यातमथा सोमस्य पिबतं सुतस्य ॥ ११ ॥  
 यदिन्द्राग्नी उदिता सूर्यस्य मध्ये दिवः स्वधया मादयेथे ।  
 अतः परि वृषणावा हि यातमथा सोमस्य पिबतं सुतस्य ॥ १२ ॥  
 पवेन्द्राग्नी पपिवांसा सुतस्य विश्वास्मभ्यं सं जयतं धनानि ।  
 तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदिनिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः ॥ १३ ॥



७ यज्ञ-यात्र इन्द्र और अग्नि, यदि अपने घरमें प्रसन्न होकर रहते हो, यदि पूजक वा राजाके प्रति तुष्ट होकर रहते हो, तो हे अमीष्ट-दातृ-द्वय, इन सारे स्थानोंसे आकर अभिषुत सोम पान करो ।

८ इन्द्र और अग्नि, यदि तुम लोग तुर्वश, द्रुड्य, अनु और पुलगणके बीच रहते हो, तो हे अमीष्ट-दातृ-द्वय, उन सब स्थानोंसे आकर अभिषुत सोम पान करो ।

९ इन्द्राग्नी, यदि तुम लोग निम्न पृथिवी, अन्तरीक्ष अथवा आकाशमें रहते हो, तो हे अमीष्ट-दातृ-द्वय, उन सारे स्थानोंसे आकर अभिषुत सोम पान करो ।

१० इन्द्राग्नी, तुम लोग यदि उच्च पृथिवी ( आकाश ), मध्य पृथिवी ( अन्तरीक्ष ) अथवा निम्न पृथिवीपर अवस्थान करते हो, तो हे अमीष्ट-दातृ-द्वय, उन सब स्थानोंसे आकर अभिषुत सोम पान करो ।\*

११ इन्द्र और अग्नि, यदि तुम आकाश, पृथ्वी, पर्वत, गल्प अथवा जलमें अवस्थान करते हो, तो हे अमीष्ट-दातृ-द्वय, उन सब स्थानोंसे आकर अभिषुत सोम पान करो ।

१२ इन्द्र और अग्नि, सूर्यके उदित होनेपर दीसिमात्र अन्तरीक्षमें यदि तुम लोग अपने तेजसे हृष्ट होते हो, तो हे अमीष्ट-दातृ-द्वय, उन सारे स्थानोंसे आकर अभिषुत सोम पान करो ।

१३ इन्द्र और अग्नि, इस तरह अभिषुत सोम पान करके हमें समस्त धन दान करो । मित्र, वरुण, अदिति, सिन्धु, पृथिवी और आकाश हमारे इस प्रार्थित धनकी पूजा करें ।

\* नवम और दशम मंत्र एकसे हैं—केवल दो-एक शब्द इधर-उधर दिये हुए हैं ।

१०६ सूक्त । देवता, ऋषि और छन्द पूर्वकी ही तरह हैं ।

विहास्यं मनसा वस्य इच्छन्निन्द्राग्नीं ज्ञास उत वा सजातान् ।

नान्या युवत् प्रमतिरस्ति मह्यं स वां धियं वाजयन्तीमतक्षम् ॥ १ ॥

अश्रवं हि भूरिदावत्तरा वां विजामातुस्त वा घा स्यालात् ।

अथा सोमस्य प्रयती युवभ्यामिन्द्राग्नीं स्तोमं जनयामि नव्यम् ॥ २ ॥

मा च्छेन्न रश्मीरिति नाधमानाः पितॄणां शक्तीरनुयच्छमानाः ।

इन्द्राग्निभ्यां कं वृषणो मदन्ति ता ह्यद्रीं धिपणाया उपस्थे ॥ ३ ॥

युवाभ्यां देवीं धिपणा मदायेन्द्राग्नीं सोममुशतीं सुनोति ।

तावशिषना भद्रहस्ता सुपाणी आ धावतं मधुना पुङ्क्तमप्सु ॥ ४ ॥

युवामिन्द्राग्नीं वसुनो विभागे तवस्तमा शुश्रव वृत्रहत्ये ।

तावासद्या बर्हिधि यज्ञे अस्मिन् प्र चर्पणी मादयेथां सुतस्य ॥ ५ ॥

प्र चर्पणिभ्यः पृतनाहवेषु प्र पृथिव्या रिरिचाथे दिवक्ष् ।

प्र सिन्धुभ्यः प्र गिरिभ्यो महित्वा प्रेन्द्राग्नीं विश्वा भुवनात्यन्या ॥ ६ ॥

आ भरतं शिक्षतं वज्रवाहू अस्मां इन्द्राग्नीं अवतं शचीभिः ।

इमे तु ते रश्मयः सूर्यस्य येभिः सपितृव पितरो न आसन् ॥ ७ ॥

१ इन्द्र और अग्नि, मैं घनकी इच्छा करके तुम लोगोंको ज्ञाति वा वन्धुकी तरह जानता हूँ । तुमने ही मुझे प्रकृत्य बुद्धि दी है; अन्य किसीने भी नहीं । फलतः मैंने ध्यान-निष्पन्न और अन्नेच्छा-सूचक स्तुति, तुम्हें लक्ष्य कर, की है ।

२ इन्द्र और अग्नि, तुम लोग अयोग्य जामाता अथवा श्यालककी अपेक्षा भी अधिक, बहुविध, धन दान करते हो—ऐसा सुना है । इस लिये हे इन्द्र और अग्नि, तुम्हारे सोम-प्रदान-कालमें पठनीय एक नया स्तोत्र निष्पादन करता हूँ ।

३ हम पुत्र-पौत्रादि-रूप रज्जु कभी न काटें—ऐसी प्रार्थना करके और पितरोंकी तरह शक्तिशाली पुत्र आदि उत्पादन करके उत्पादन-समर्थ यजमान इन्द्र और अग्निकी सुख-पूर्वक स्तुति करते हैं । शत्रु-हिसक इन्द्र और अग्नि स्तुतिके पास उपस्थित रहते हैं ।

४ इन्द्र और अग्नि, तुम्हारे लिये दीसिमती प्रार्थनाकी कामना करके तुम्हारे हर्षके लिये सोम रसका अभिषेक करते हैं । तुम अन्न-सम्पन्न शोभन-बाहु-युक्त और डपाणि हो । तुम लोग शीघ्र आकर उदकस्थ माधुर्य द्वारा हमारा सोम-रस संयुक्त करो ।

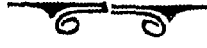
५ इन्द्र और अग्नि, स्तोत्राओंके बीच धन-विभागमें रत रहकर वृत्र-हन्तमें अतीव बल-प्रकाश किया था—यह सुना है । सर्व-दर्शि-द्वय, तुम लोग हमारे इस यज्ञमें कुशपर बैठकर तथा अभिषुत सोमपान करके हृष्ट बनो ।

६ युद्धके समय तुलानेपर तुम लोग आकर अपने महत्त्व द्वारा सारे मनुष्योंमें बड़े बनो । पृथिवी, आकाश, नदी और पर्वत आदिकी अपेक्षा बड़े बनो । इन्द्र और अग्नि, तुम अन्य सारे भुवनोंकी अपेक्षा बड़े हो ।

७ वज्र-हस्त इन्द्र और अग्नि, धन ले आओ, हमें दो और कार्य द्वारा हमारी रक्षा करो । सूर्यकी जिन रश्मियोंके द्वारा हमारे पूर्व पुरुष इकट्ठ हुए थे, वे ये ही हैं ।

पुरन्दरा शिक्षतं वज्रहस्तास्माँ इन्द्राग्रो अवतं भरेषु ।

तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः ॥ ८ ॥



११० सूक्त । ऋभुगण देवता हैं । त्रिष्टुप् और जगती छन्द हैं ।

ततं मे अपस्तदु तायते पुनः स्वादिष्टा धीतिरुचथायं शस्यते ।

अयं समुद्र इह विश्वदेव्यः स्वाहाकृतस्य समु तृष्णुत ऋभवः ॥ १ ॥

आभोगयं प्र यदिच्छन्त ऐतनापाकाः प्राञ्चो मम के चिदापयः ।

सौधन्वनासध्वरितस्य भूमनागच्छत सवितुः दाशुपो गृहम् ॥ २ ॥

तत्सविता धोऽमृतत्वमासुवदगोह्यं यच्छ्रवयन्त ऐतन ।

स्यं चिदामसमसुरस्य भक्षणमेकं सन्तमरुणुता चतुर्वयम् ॥ ३ ॥

विन्ध्वी शमी तरणित्वेन वाघतो मर्तासः सन्तो अमृतत्वमानशुः ।

सौधन्वना ऋभवः सुरचक्षसः संवत्सरे समपृच्यन्त धीतिभिः ॥ ४ ॥

८ वज्रहस्त पुरन्दर इन्द्र और अग्नि, हमें घन दान करो। लड़ाईमें हमें बचाओ। मित्र, वरुण, अदिति, सिन्धु, पृथिवी और आकाश हमारी यह प्रार्थना पूजित करें।

१ ऋभुगण, पहले मैंने बार-बार यज्ञानुष्ठान किया है; इस समय फिर करता हूँ एवं उसमें तुम्हारी प्रशंसाके लिये अत्यन्त मधुर स्तोत्र पढ़ा जाता है। यहां सारे देवोंके लिये यह सोम-रस प्रस्तुत हुआ है। स्वाहा शब्दके उच्चारणके साथ, अग्निमें उस रसके अर्पित होनेपर, उसे पान कर तृप्त बनो।

२ ऋभुगण, तुम मरे जाति-भ्राता हो। जिस समय तुम लोगोंका ज्ञान अपरिपक्व था, उस पूर्वतन समयमें तुम लोग उपभोग्य सोम-रसकी इच्छा की थी। हे सुधन्वाके पुत्र, उस समय अपने कर्म या तपस्याके महत्त्व द्वारा तुम लोग इवि-दांगघोले सविताके घर आये थे।\*

३ जिस समय तुम लोग प्रकाशमान सविताको अपने सोम-पानकी इच्छा घटा आये थे तथा त्वष्टाके बनाये उस एक सोम-पात्रों चार टुकड़े किये थे, उस समय सविताने तुम्हें अमरता प्रदान की थी।\*\*

४ ऋभुओंने वीर्य कर्मानुष्ठान किया था एवं ऋत्विकोंके साथ मिले थे; इसलिये मनुष्य होकर भी अमरत्वं प्राप्त किया था। उस समय सुधन्वाके पुत्र ऋभु लोग सूर्यकी तरह दीप्तिमान् होकर, सांवत्सरिक यज्ञोंमें, हव्याधिकारी हुए।

\* ऋभुगण सुधन्वा नामके अग्निरके पुत्र हैं और इस सूक्ते ऋषि कुत्स भी अग्निरा वंशके हैं। इस लिये कुत्सके ऋभु लोग जाति-भ्राता हुए। यास्कका भी यही मत है। निष्क १११६

७ यहां असुरका अर्थ त्वष्टा है।



क्षेत्रमिव वि ममुस्तेजनेन एकं पात्रसृभवो जेहमानम् ।  
 उपस्तुता उपमं नाधमाना अमर्त्येषु श्रव इच्छमानाः ॥ ५ ॥  
 आ मन्वीपामन्तरिक्षस्य नृभ्यः स्रुचेव घृतं जुहवाम विघ्नना ।  
 तरणित्वा ये पितुरस्य सश्चिर ऋभवो वाजमरुहन्दिवो रजः ॥ ६ ॥  
 ऋभुर्न इन्द्रः शवसा नवीयानृभुर्वाजेभिर्वसुभिर्वसुर्ददिः ।  
 युष्माकं देवा अवसाहनि प्रियेभि तिष्ठेम पृत्सुतीरसुन्वताम् ॥ ७ ॥  
 निश्चर्मण ऋभवो गामपिशत संवत्सेनासृजता मातरं पुनः ।  
 सौधन्वनासः स्रवस्यथा नरो जित्री युवानां पितराकृणोतन ॥ ८ ॥  
 वाजेभिर्नो वाजसातावविद्धयुर्भुर्मा इन्द्र चित्रमादर्षि राधः ।  
 तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवी उत धीः ॥ ९ ॥



५ ऋभुगणने पार्व-वर्षियोकै स्तुति-पात्र होकर उत्कृष्ट सोम-रसकी आकांक्षा करके, और देवोंमें हव्यकी कामना करके उसी प्रकार तीक्ष्ण अस्त्र द्वारा एक यज्ञ-पात्रको चार भागोंमें विभक्त किया था, जिस प्रकार मान-द्रव्य लेकर लेते मापा जाता है ।

६ हम अन्तरीक्षके नेता ऋभुओंको पात्र-स्थित घृत अर्पित करते एवं ज्ञान द्वारा स्तुति करते हैं । ऋभुओंने एक सूर्यकी तरह क्षिप्र-कारिता और दिव्य लोकका यज्ञाज्ञ प्राप्त किया था ।

७ नव-चलशाली ऋभु लोग हमारे रक्षक हैं । अन्न और वास-गृहके दाता ऋभु लोग हमारे निवास-हेतु हैं; इसलिये ऋभुगण हमें वरदान दें । ऋभु आदि देववृन्द, हम लोग तुम्हारी रक्षा प्राप्त कर, अनुकूल दिनमें, अमिषव-विहीन यज्ञोंकी सेनाको परास्त करें ।

८ ऋभुगण, तुमने चमड़ेसे गौको आच्छादित किया था और उस गौके साथ बड़ड़ेका फिर योग कर दिया था । सधन्वाके पुत्र और शन्नके नेता शोभन कर्म द्वारा तुमने वृद्ध माता-पिताको फिर युवा कर दिया था । x

९ इन्द्र, ऋभुओंके साथ मिलकर तुम अन्न-दानके समय हमें अन्न दान करते हो—विचित्र धन-दान करते हो । मित्र, वरुण, अदिति, सिन्धु, पृथिवी और आकाश हमारे उस धनको पूजित करें

x अपना नन्हासा बड़ड़ा छोड़कर किसी ऋषिकी गौ मर गयी थी, बड़ड़ेका वैकल्प्य देखकर ऋषिने ऋभुओंकी स्तुति की । ऋभुओंने तुरत उस गौकी तरह ही एक गौ बना दी और उसे मरी गौके चमड़ेसे ढक दिया । अपनी माँ जानकर बड़ड़ा गौसे मिल गया । २० सूक्तके ४ मंत्रमें भी युवा बनानेकी वास्तका उल्लेख है ।

१११ सूक्त । देवता आदि पूर्ववत् ।

तक्षन्थं सुवृतं विधानापसस्तक्षन् हरी इन्द्रवाहा वृषणवस् ।  
 तक्षन् पितृभ्यामृभवो युवद्वयस्तक्षन्वत्साय मातरं सचाभुवम् ॥ १ ॥  
 आ नो यक्षाय तक्षत ऋभुमद्वयः क्रत्वे दक्षाय सुप्रजावतीमिष्यु ।  
 यथा क्षयाम सर्ववीर्या विशा तक्ष शघीय धासथा स्विन्द्रियम् ॥ २ ॥  
 आ तक्षत सातिमस्मभ्यमृभवः सातिं रथाय सातिमवते नरः ।  
 सातिं नो जैत्रीं संमहेत विश्वहा जामिमजामिं पृतनासु सक्षणिम् ॥ ३ ॥  
 ऋभुक्षणमिन्द्र मा हुव ऊतय ऋभून्वाजान्मरुतः सोमपीतये ।  
 उमा मित्रावरुणा नूनमश्विना ते नो हिन्वन्तु सातयं धिये जिषे ॥ ४ ॥  
 ऋभुर्भगय सं शिश्रातु सातिं समर्यजिद्राजो अस्माँ अविष्टु ।  
 तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्ताममितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः ॥ ५ ॥

११२ सूक्त । अश्विद्वय देवता हैं ।

इंले धावापृथिवी पूर्वचिन्तयेऽग्निं घर्मं सुख्वं यामन्निष्टये ।  
 याभिर्मरे कारमंशाय जिन्वथस्तामिरू पु ऊतिभिरश्विना गतम् ॥ १ ॥

१ उत्तम-ज्ञानशाली और शिल्पी ऋसुओंने अग्निनीकुमारोंके लिये 'सनिमित रथ प्रस्तुत किया था और इन्द्रके वाहक हरि नामके बलवान् दोनों घोड़ोंको बनाया था । ऋसुओंने अपने माता-पिताको यौवन और बलकेको सहचरी गौका दान किया था ।

२ हमारे यज्ञके लिये उज्ज्वल अन्न प्रस्तुत करो । हमारे यज्ञ और बलके लिये सन्तान-हेतु-भूत अन्न प्रस्तुत करो, जिससे हम सारो वीर सन्ततियोंके साथ आनन्दते रहे । हमारे बलके लिये ऐसा ही अन्न हो ।

३ नेता ऋसुगण, हमारे लिये अन्न प्रस्तुत करो । हमारे रथके लिये घन तैयार करो । हमारे घोड़ेके लिये अन्न प्रस्तुत करो । संसार हमारे जयशील घनको प्रतिदिन पूजा करे और हम संग्राममें, अपने वीच उत्पन्न या अनुत्पन्न शत्रुओंको परास्त कर सके ।

४ अपनी रक्षाके लिये सहान् इन्द्रको तथा ऋसु, विष्टु, वाज और मरुतोंको, सोम-पानार्थ, हम बुलाते हैं । मित्र, वरुण और अश्विनीकुमारोंको भी बुलाते हैं । ये हमारे घन, यज्ञ, कर्म और विजयको सिद्ध कर दें ।

५ संग्रामके लिये हमें ऋसु घन दें । समर-विजयी वाज हमारी रक्षा करें । मित्र, वरुण, अश्विनी, सिन्धु, पृथिवी और आकाश हमारी यह प्रार्थना पूजित करें ।

१ में अश्विनीकुमारोंको पहले यतानेके लिये धावा-पृथिवीकी स्तुति करता हूँ । अश्वि-द्वयके आनेपर उनको पूजाके लिये प्रदीप्त और शोभन क्रान्तिते-युक्त अग्निकी स्तुति करता हूँ । अग्नि-द्वय, तुम लोग संग्राममें अपना भाग पानेके लिये जिन सब उपायोंके साथ शत्रु बनाते हो, उन सब उपायोंके साथ आओ ।

युवोर्दानाय सुभरा असञ्चतो रथमा तस्थुर्वचसं न मन्तवे ।

यामिर्धियोऽवथः कर्मन्निष्टये ताभिरू पु ऊतिभिरश्विना गतम् ॥ २ ॥

युवं तासां दिव्यस्य प्रशासने विशां क्षयथो अमृतस्य मज्जना ।

यामिर्धेनुमस्त्वं पिन्वथो नरा ताभिरू पु ऊतिभिरश्विना गतम् ॥ ३ ॥

यामिः परिज्मा तनयस्य मज्जना द्विमाता तूर्पु तरणिर्विभूपति ।

यामिस्त्रिमन्तुरभवद्विचक्षणस्ताभिरू पु ऊतिभिरश्विना गतम् ॥ ४ ॥

यामी रैभं निवृतं सितमद्भ्य उद्वन्दनमैरयतं स्वदृशे ।

यामिः कएवं प्र सिषासन्तमावतं ताभिरू पु ऊतिभिरश्विना गतम् ॥ ५ ॥

यामिरन्तकं जसमानमारणे भुज्युं यामिरव्यथिभिर्जिजिन्वथुः ।

यामिः कर्कन्धुं वय्यं च जिन्वथस्ताभिरू पु ऊतिभिरश्विना गतम् ॥ ६ ॥

यामिः शुचन्ति धनसां सुपंसदं तप्तं धर्ममोम्यावन्तमंत्रये ।

यामिः पृश्निगुं पुरुकुत्समावतं ताभिरू पु ऊतिभिरश्विना गतम् ॥ ७ ॥

२ जैसे न्याय-वाक्योक्ति युक्त परिद्वतके पास शिक्षाके लिये खड़े होते हैं, हे अश्वि-द्वय, वैसे ही अन्य देवोंमें अनासक्त स्तोता लोग, शोभन स्तुतिके साथ, अनुग्रह-प्राप्तिकी आशामें, तुम्हारे रथके पास खड़े होते हैं। अश्वि-द्वय, तुम लोग जिन उपायोंके साथ यज्ञ-सम्पादनके लिये छमति लोगोंकी रक्षा करते हो, उन उपायोंके साथ, आओ।

३ नेत्र-द्वय, तुम लोग स्वर्गीय-अमृत-लब्ध बल द्वारा तोनों भुवनोंमें रहनेवाले मनुष्योंका शासन करनेमें समर्थ हो। जिन सब उपायों द्वारा तुमने प्रसव-रहित शत्रुकी गौओंको दुग्धवती किया था, अश्वि-द्वय, उन उपायोंके साथ, आओ।

४ चारो ओर विचरण करनेवाले वायु अपने पुत्र और द्विमातृक अग्निके बलद्वारा युक्त होकर और शीघ्रगामियोंके बीच अतीव शीघ्र-गन्ता होकर जिन सारे उपायों द्वारा सारे स्थानोंमें व्याप्त हुए हैं तथा जिन सब उपायों द्वारा कक्षीवान् ऋषि विशिष्ट-ज्ञान युक्त हुए थे, उन उपायोंके साथ, आओ।

५ जिन उपायोंसे तुम लोगोंने अक्षरों द्वारा कृषमें फेंके हुए और पाशसे बांधे हुए रेभ नामक ऋषिको जलसे बचाया था एवं इसी प्रकार बन्दन नामके ऋषिको भी जलसे बचाया था तथा जिन उपायों द्वारा अक्षरों द्वारा अन्धकारमें निक्षिप्त आलोकैच्छु कव्य ऋषिकी रक्षा की थी, अश्वि-द्वय, उन उपायोंके साथ, आओ।

६ कृषमें फेंककर अक्षर लोग जिस समय अन्तक नामके राजर्षिको हिंसा कर रहे थे, उस समय तुम लोगोंने जिन उपायों द्वारा उनकी रक्षा की थी; जिन सब व्यथा-शून्य नौका-रूप उपायोंके द्वारा ससुदृमें निमग्न तुय-पुत्र भुज्युकी रक्षा की थी और जिन सब उपायों द्वारा अक्षरों द्वारा पीड्यमान कर्कन्धु और वय्य नामके मनुष्योंकी रक्षा की थी, उनके साथ, आओ।

७ जिन उपायों द्वारा शुचन्ति नामके व्यक्तिको धनवान् और शोभन-गृह-सम्पन्न किया था, जिन उपायों द्वारा अक्षरों द्वारा शतद्वार नामके घरमें प्रक्षिप्त और अग्नि द्वारा दह्यमान अत्रिके गात्र-दाही उत्तापको भी छलकर किया था और जिन उपायों द्वारा पृश्निगु और पुरुकुत्स नामके व्यक्तियोंकी रक्षा की थी, अश्विद्वय, उनके साथ, आओ।

याभिः शचीभिर्वृषणा परावृजं प्रान्त्रं श्रोणं चक्षस एतवे कृथः ।  
 याभिर्वर्तिकां प्रसिताममुञ्चतं ताभिरू पु ऊतिभिरश्विना गतम् ॥ ८ ॥  
 याभिः सिन्धुं मधुमन्तमसञ्चतं वसिष्ठं यामिरजंरावजिन्वतम् ।  
 याभिः कुत्सं श्रुतयं नर्यमावतं ताभिरू पु ऊतिभिरश्विना गतम् ॥ ९ ॥  
 याभिर्विंशपलां धनसामथर्व्यं सहस्रमोह आजाव्रजिन्वतम् ।  
 याभिर्वंशमश्व्यं प्रेणिमावतं ताभिरू पु ऊतिभिरश्विना गतम् ॥ १० ॥  
 याभिः सुदानूः औशिजाय वणिजे दीर्घश्रवसे मधुकोशो अक्षरत् ।  
 कक्षीचन्तं स्तोताः यामिरावनं ताभिरू पु ऊतिभिरश्विना गतम् ॥ ११ ॥  
 यार्भा रसां श्लोदमोदः पिपिन्वथुरनश्वं यामी रथमावतं जिपे ।  
 यामिस्त्रिशोक उन्त्रिया उदाजतं ताभिरू पु ऊतिभिरश्विना गतम् ॥ १२ ॥  
 याभिः सूर्यं परिव्याथः परावति मन्धातारं श्वैत्रपरयेष्वावतम् ।  
 याभिर्विंशं प्र भरद्वाजमावतं ताभिरू पु ऊतिभिरश्विना गतम् ॥ १३ ॥

८ अमोभ्य-वर्षद्वय, जिन सय कर्मों द्वारा पङ्क परावृज ऋषिको गमन-समर्थ किया था, अन्ध ऋजाश्वको दृष्टि समर्थ किया था और भद्रजानु श्रोणको गमन-समर्थ किया था तथा जिन कार्योंद्वारा वृक्से गृहीत वर्तिका नामकी सी-पक्षीको मुक्त किया था, अग्निद्वय, उन उपायोंसे आओ ।

९ अजर अश्विनोक्तुमारद्वय, जिन उपायों द्वारा मधुमयी नदीको प्रवाहित किया था, जिन उपायों द्वारा वसिष्ठको प्रीत और कुत्स, धृतय तथा नर्य नामके ऋषियोंकी रक्षा की थी, अग्निद्वय, उनके साथ आओ ।

१० जिन उपायों द्वारा धनवती और जंबा दूटनेके कारण चलनेमें असमर्थ, अगस्त्य-पुरोहित खेल ऋषिकी पत्नी, चिगपन्नाको बहुपान-मुक्त करनेमें जानेमें समर्थ किया था तथा जिन उपायों द्वारा अश्व ऋषिके पुत्र और स्तोत्र-तत्पर वय ऋषिकी रक्षा की थी, उनके साथ आओ ।

११ दानवीन्द्र अग्निद्वय, जिन उपायों द्वारा दीर्घतमाकी उशिष्वा नाराक लीके पुत्र वणिङ्-वृत्ति दीर्घश्रवाको भेवसे जल दिया था तथा उशिष्वाके पुत्र स्तोता कक्षीवाचरी रक्षा की थी, उनके साथ आओ ।

१२ जिन उपायों द्वारा नदियोंके तटोंको जल-पूर्ण किया था, अपने अन्ध-रहित रथको, विजयके लिये, चलाया था तथा मुन्धाके जिन उपायोंसे कयवपुत्र त्रिशोक नामक ऋषिने अपनी अक्षत गौका उद्धार किया था, अग्निद्वय, उन उपायोंके साथ आओ ।

१३ जिन उपायों द्वारा दूरवर्ती सूर्यके पास, उन्हें प्राणके अन्धकारसे मुक्त करने लिये, जाते हो यथा क्षेत्रपतिके कार्यमें मान्त्राता राजर्षिकी रक्षा की थी और जिन उपायों द्वारा अन्न दान कर भरद्वाज ऋषिकी रक्षा की थी, उनके साथ आओ ।

याभिर्महामतिधिग्वं कशोजुवं दिवोदासं शम्बरहत्य आवतम् ।  
 याभिः पूर्भिद्ये त्रसदस्युमावतं ताभिरू पु ऊतिभिरश्विना गतम् ॥ १४ ॥  
 याभिर्वन्नं विपिपानमुपस्तुतं कलिं याभिर्वित्तजानिं दुवस्यथः ।  
 याभिर्व्यश्वमुत्त पृथिमावतं ताभिरू पु ऊतिभिरश्विना गतम् ॥ १५ ॥  
 याभिर्नरा शयवे याभिरत्रये याभिः पुरा मनवे गानुमीपथुः ।  
 याभिः शारीराजतं स्यूमरश्मये ताभिरू पु ऊतिभिरश्विना गतम् ॥ १६ ॥  
 याभिः पठर्वा जठरस्य मज्जनाग्निर्नादीदैश्चित इन्द्रो अज्जमना ।  
 याभिः शर्यातमवथो महाधने ताभिरू पु ऊतिभिरश्विना गतम् ॥ १७ ॥  
 याभि रङ्गिरो मनसा निरण्यथोऽन्नं गच्छथो विवरे गोअर्णसः ।  
 याभिर्मनुं शूरमिया समावतं ताभिरू पु ऊतिभिरश्विना गतम् ॥ १८ ॥  
 याभिः पत्नीर्विमदाय न्यूहथुरा घ वा याभिररुणीरशिश्रतम् ।  
 याभिः सुदास ऊहथुः सुदैव्यं ताभिरू पु ऊतिभिरश्विना गतम् ॥ १९ ॥

१४ जिन उपायों द्वारा महान, अतिथि-वत्सल और असुरोंके डरसे जलमें पैठे हुए दिवोदासको, शम्बर अस्त्रके हनन-कालमें, बचाया था तथा जिन उपायों द्वारा नगर-विनाश-रूप समरमें पुच्छुत्स-पुत्र सदस्यु ऋषिकी रक्षा की थी, अश्विद्वय, उनके साथ आओ ।

१५ जिन उपायों द्वारा पानरत और स्तुति-पात्र विखनः-पुत्र वन्नको रक्षा की थी, स्त्री पा जानेपर कलि नामके ऋषिकी रक्षा की थी और जिन उपायों द्वारा अश्व-शून्य पृथि नामके वैन राजर्षिकी रक्षा की थी, अश्विद्वय, उनके साथ आओ ।

१६ नेत्रद्वय, जिन उपायों द्वारा शयु, अग्नि और पहले मनुको गमन-मार्ग दिवानेकी इच्छा की थी और स्यूमरमि ऋषिके लिये उनके शत्रुके ऊपर तोर चलाया था, अश्विद्वय, उन उपायोंके साथ आओ ।

१७ जिन उपायों द्वारा पठर्वा नामके राजर्षि शरीर-बलसे संग्राममें काष्ठ-युक्त प्रज्वलित अग्निकी तरह दीप्तिमान हुए थे और जिन उपायों द्वारा युद्ध-क्षेत्रमें शर्यात राजाकी रक्षा की थी, अश्विद्वय, उन उपायोंके साथ आओ ।

१८ अङ्गिरा, अश्विनीकुमारोंकी स्तुति करो । अश्विद्वय, जिन उपायोंसे तुम लोग अन्तःकरणसे प्रसन्न हुए थे, जिनसे पणि द्वारा अपहृत गौके प्रच्छन्न स्थानमें सारे देवोंसे पहले गये थे और जिनसे अन्न देकर शूर मनुकी रक्षा की थी, अश्विद्वय, उन उपायोंके साथ आओ ।

१९ जिन उपायोंसे विमद ऋषिको भायों दी थी, जिनसे अरुण-वर्ण गायें प्रदान की थीं और जिनसे पिजवन-सुत्र सुदास राजाको उत्कृष्ट धन दिया था, अश्विद्वय, उनके साथ आओ ।

याभिः शन्ताती भवथो ददाशुपे भुज्युं याभिरवथो याभिरग्निगुम् ।  
 ओभ्यावतीं सुभरामृतस्तुभं ताभिरू पु ऊतिभिरश्विना गतम् ॥ २० ॥  
 याभिः कृशानुमसने दुवस्यथो जवे यामिर्वूनो अर्धन्तमावतम् ।  
 मधु प्रियं भरथो यत्सरद्भ्यस्ताभिरू पु ऊतिभिरश्विना गतम् ॥ २१ ॥  
 याभिर्नरं गोपुयुधं नृपालो क्षेत्रस्य साता तनयस्य जिन्वथः ।  
 यार्भारथाँ अवथो याभिरर्वतरुताभिरू पु ऊतिभिरश्विना गतम् ॥ २२ ॥  
 याभिः कुत्समाजुनेयं शतक्रतुं प्र तुर्वीति प्र च दधीतिमावतम् ।  
 याभिर्ध्वंसन्ति पुरुषन्तिमावतं ताभिरू पु ऊतिभिरश्विना गतम् ॥ २३ ॥  
 अमस्त्रतीमश्विना वाचमरुमे कृतं नो दस्त्रा वृषणा मनीषाम् ।  
 अद्य द्येऽवसे नि ह्ये वां वृधे च नो भवतं वाजसाती ॥ २४ ॥  
 घुभिरक्तुभिः परि पातमस्मानरिष्टेभिरश्विना सौभगेभिः ।  
 तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः ॥ २५ ॥

२० जिन उपायोंसे हृष्य-दाताको एव प्रदान करते हैं, जिनसे तुम-सुत्र भुज्यु और देवोंके शमिता अग्निगुकी रक्षा की थी तथा जिनसे ऋतस्तुभ ऋषियोंको एलकर और पुष्टकर अन्न दिया था, उनके साथ आओ ।

२१ जिन उपायों द्वारा सोमपाल कृशानुकी, युद्धमें, रक्षा की थी, जिनसे युवा पुरुकुत्सके अश्वको योग प्रदान किया था और मधुनाक्षिकाओंको मधु दिया था, अश्विद्वय, उनके साथ आओ ।

२२ गाँकी प्राप्तिके लिये जिन उपायों द्वारा युद्ध-कालमें मनुष्यकी रक्षा करते हो और जिनसे क्षेत्र और घनकी प्राप्तिमें सहायता करते हो तथा जिन उपायोंसे मनुष्य या यजमानके रथों और अश्वोंकी रक्षा करते हो, अश्विद्वय, उन उपायोंके साथ आओ ।

२३ शतश्रु अश्विद्वय, जिन उपायोंसे अजून अथात् इन्द्रके पुत्र कुत्स, तुर्वीति और दधीतिकी रक्षा की थी तथा जिन उपायों द्वारा ध्वंसन्ति और पुरुषन्ति नामके ऋषियोंको बचाया था, उन उपायोंके साथ आओ ।

२४ अश्विद्वय, हमारे वाक्यको विहित-कर्म-युक्त करो; अभीष्ट-वर्षा दत्तद्वय, हमारी बुद्धिको वेद-ज्ञान-समर्थ करो । हम आलोक-विहीन रात्रिके शेष-शहरमें, रक्षाके लिये, तुम्हें बुलाते हैं । हमारे अन्न-लाभमें वृद्धि कर दो ।

२५ अश्विनीकुमारद्वय, दिन और रातमें हमें विनाश-रहित सौभाग्य द्वारा बचाओ । मित्र, वरुण, अदिति, सिन्धु, पृथिवी और आकाश हमारी इस प्रार्थनाको पूजित करें ।

सप्तमं प्रथमं समाप्तं

## अष्टम अध्याय



११३ सूक्त । उषा और रात्रि देवता हैं ।

इदं श्रेष्ठं ज्योतिषां ज्योतिरागाच्चित्तः प्रकेतो अजनिष्टविभ्वा  
यथा प्रसृता सवितुः सवार्यं एव रात्र्युपसे योनिमारैक् ॥ १ ॥  
रुशद्वत्सा रुशती श्वेत्यागादारैर्यु कृष्णा सदनान्यस्याः ।  
समानयन्धू असृते अनूची द्यावा वर्णं चरत आमिनाने ॥ २ ॥  
समानो अध्वा स्वस्त्रोरनन्तस्तमन्यान्या चरतो देवशिष्टे ।  
न मेथेते न तस्थतुः सुमेके नक्तोपासा समनसा विरूपे ॥ ३ ॥  
भास्वती नेत्री सनृतानामचेति चित्रा, वि दुरो न आवः ।  
प्राप्या जगद्भ्यु नो रायो अख्यदुषा अजोगर्भवनानि विश्वा ॥ ४ ॥  
जिह्वाश्ये चरितवे मघोन्याभोगय इष्ट्ये राय उ त्वम् ।  
दक्षं पश्यद्भ्य उर्विया चित्तक्ष उषा अजोगर्भवनानि विश्वा ॥ ५ ॥

१ ज्योतिषोंमें श्रेष्ठ यह ज्योति ( उषा ) आयी हैं । उषाकी विचित्र और जगत्प्रकाशक रश्मि भी व्याप्त होकर प्रकाशित हुई हैं । जैसे रात्रि सविता द्वारा प्रसृत हैं, वैसे ही रात्रिने भी उषाकी उत्पात्तिके लिये जन्म-स्थानकी कल्पना की है अर्थात् रात्रि सूर्यकी सन्तान हैं और उषा रात्रिकी सन्तान हैं ।

२ दीप्तिमती शुभ्रवर्णा सूर्य-माता उषा आयी हैं । कृष्णवर्णा रात्रि अपने स्थानको गयी हैं । रात्रि और उषा दोनों ही सूर्यकी बन्धुत्व-सम्पन्ना और भरण-रहिता हैं । एक दूसरेके पीछे आती हैं और एक दूसरेका वर्ण विनाश करती हैं ।

३ इन दोनों भगिनियों ( उषा और रात्रि ) का एक ही अनन्त सञ्चरण-मार्ग दीप्तिमान् सूर्य द्वारा आदिष्ट है । वे दोनों एकके पश्चात् एक उसी मार्गपर विचरण करती हैं । सारे पदार्थोंकी उत्पादयित्री रात्रि और उषा, विभिन्न रूप धारण करनेपर भी, समानमनः-सम्पन्ना हैं । वे परस्परको बाधा नहीं देती और कभी स्थिर होकर अवस्थिति नहीं करती ।

४ इस प्रमा-संयुक्ता सनृत-वाक्य-नेत्री विचित्रा उषाको जानते हैं; उन्होंने हमारा द्वार खोल दिया है । उन्होंने सारे संसारको आलोक-पूर्ण करके हमारे धनको प्रकाशित कर दिया है । उन्होंने सारे भुवनोंको प्रकाशित किया है ।

५ जो लोग देढ़े होकर सोये थे, उनमेंसे किसीको भोगके लिये, किसीको यज्ञके लिये और किसीको धनके लिये—सबको अपने-अपने कर्मोंके लिये उषाने जागरित किया है । जो थोड़ा देख सकते हैं, उनकी विशेष रूपसे दृष्टिके लिये उषा अन्धकार दूर करती है । विस्तीर्ण उषाने सारे भुवनोंको प्रकाशित कर दिया है ।

क्षत्राय त्वं श्रवसे त्वं महीया इष्टये त्वमर्थमिव त्वमित्यै ।  
 विसद्रशा जीविताभिप्रन्नक्ष उपा अजीगर्भुवनानि विश्वा ॥ ६ ॥  
 गपा द्विषो दुहिता प्रत्यदर्शि व्युच्छन्ती युवतिः शुक्रवासाः ।  
 विश्वस्येशाना पार्थिवस्य वस्व उपो अद्येह सुभगे व्युच्छे ॥ ७ ॥  
 परायतीनामन्वेति पाश आयतीनां प्रथमा शश्वतीनाम् ।  
 व्युच्छन्ती जीवमुदीरयन्त्युपा मृतं कञ्चन बोधयन्ती ॥ ८ ॥  
 उपो यदग्निं समिधे चकथं चि यदावश्चक्षसा सूर्यस्य ।  
 यन्मानुषान्यक्ष्यमाणः अजीगस्तद्गेषु चरुपे भद्रममः ॥ ९ ॥  
 क्रियात्यां यत् समया भवाति या व्यूपुर्याश्च नूनं व्युच्छान् ।  
 अनु पूर्वाः कृपते चावशाना प्रदीश्याना जोषमन्यामिरेति ॥ १० ॥  
 इयुष्टे ये पूर्वतरामपश्यन् व्युच्छन्तीसुपसं मर्त्यासः ।  
 अस्माभिरू नु प्रतिचक्ष्याभूदो ते यन्ति ये अपरीपु पश्यान् ॥ ११ ॥  
 यावयद्गेषा ऋतपा ऋतेजाः सुग्नावरी स्रुता ईरयन्ती ।  
 सुमङ्गलीर्विभ्रती देववीतिमिहाद्योपः श्रेष्ठतमा व्युच्छ ॥ १२ ॥

६ किसोको घनके लिये, किसीको अन्नके लिये, किसीको महायज्ञके लिये और किसीको अभीष्ट-प्राप्तिके लिये उपा जाता है। उन्होंने विविध जीविकाओंके प्रकाशके लिये सारे भुवनोंको प्रकाशित किया है।

७ यह नित्य-जीवन-सम्पन्ना, शुभ्रवसना, आकाश-पुत्री उपा अन्धकार दूर करती हुई मनुष्योंके दृष्टिगोचर हुई है। यह सारे पार्थिव घनोंको अधीश्वरी है। सुभगे, तुम आज यहाँ अन्धकार दूर करो।

८ पहिलेकी उपाएँ जिस अन्तरीक्ष-मार्गसे गयी हैं, उसीसे उपा जाती हैं और आगे अनन्त उपाएँ भी उसी पथका अनुघावन करेंगी। उपा अन्धकारको दूर करके तथा प्राणियोंको जागृत करके मृतवत् संज्ञा-शून्य लोगोंको चैतन्य प्रदान करती हैं।

९ उपा, तुमने होमार्थ अग्नि प्रज्वलित की है, सूर्यके आलोकसे अन्धकारको दूर कर दिया है और यज्ञरत्न मनुष्योंको अन्धकारसे मुक्त कर दिया है; इस लिये तुमने देवोंका उपकारी कार्य किया है।

१० कबसे उपा उत्पन्न होती है और कबसे उत्पन्न होगी? वर्तमान उपा पूर्वकी उपाओंका साग्रह अनुकरण करती है और आगामिनी उपाएँ इन दीप्तिमती उपाका अनुघावन करेंगी।

११ जिन मनुष्योंने अतीव प्राचीन समयमें, आलोक प्रकाशित करते हुए उपाको देखा था, वे इस समय नहीं हैं। इस उपाको देखते हैं; आगे जो लोग उपाको देखेंगे, वे आ रहे हैं।

१२ उपा विद्वंषो निशाचरोंको दूर करती है, यज्ञका पालन करती है, यज्ञके लिये आचिर्भूत होती है, सुख देती है और सूरत शब्द प्रेरण करती है। उपा कल्याण-वाहिनी है और देवोंका वाञ्छित यज्ञ धारण करती है। उपा, तुम उत्तम रूपसे आज इस स्थानपर आलोक प्रकाशित करो।



शश्वत् पुरोषा व्युवास देव्यथो अद्येदं व्यावो मघोनी ।  
 अथो व्युच्छादुत्तरां अनु धूनजरामृता चरति स्वधामिः ॥ १३ ॥  
 व्यञ्जिभिर्दिव आतास्वद्यौदप कृष्णां निर्णिजं देव्याचः ।  
 प्रबोधयन्त्यरणेभिरश्वैरौषा याति सुयुजा रथेन ॥ १४ ॥  
 आत्रहन्ती पोष्या चार्याणि चित्रं केतुं कृणुते चेकिताना ।  
 ईयुपीणामुपमा शश्वतीनां विभातीनां प्रथमोषा व्यश्वैत् ॥ १५ ॥  
 उदीर्ध्वं जीवो असुर्न आगादप प्रागात्तम आ ज्योतिरेति ।  
 आरैकं पन्थां यातवे सूर्यायागन्म यत्र प्रतिरन्त आयुः ॥ १६ ॥  
 स्थूमना वाच उदियति वह्निः स्तवानो रेभ उषसो विभातीः ।  
 अद्या तदुच्छ गृणते मघोन्यस्मे आयुर्नि दिदीहि प्रजावत् ॥ १७ ॥  
 या गोमतीरुपसः सर्ववीरा व्युच्छन्ति दाशुपे मर्त्याय ।  
 वायोरिव सूनृतानामुदकें ता अश्वदा अश्ववत् सोमसुत्वा ॥ १८ ॥  
 माता देवानामदितैरनीकं यज्ञस्य केतुर्वृहती विभाहि ।  
 प्रशस्तिकृद्ब्रह्मणे नो व्युच्छा नो जने जनय विश्ववारे ॥ १९ ॥

१३ पहले उषा प्रतिदिन उदित होती थी; आज भी धनवती उषा इस जगत्को अन्धकार-मुक्त करती है; इसी प्रकार आगे भी दिन-दिन उदित होंगी; क्योंकि वह अजरा और अमरा होकर अपने तेजसे विचरण करती हैं ।

१४ आकाशकी विस्तृत दिशाओंको आलोक-पूर्ण तेज द्वारा उषा दीक्षिमान् करती हैं । उषाने रात्रिके काले रूपको दूर किया है । सोये हुए प्राणियोंको जगाकर उषा अल्प अश्ववाले रथसे आ रही हैं ।

१५ उषा पोषक और वरणीय धन लाकर और सबको चैतन्य देकर विचित्र रश्मि प्रकाशित करती हैं । वह पहलेकी उषाओंकी उपमा-रूपिणी हैं और आगामिनी प्रभावती उषाओंकी प्रारम्भ-स्वरूपिणी । वह किरण प्रकाश करती हैं ।

१६ मनुष्यो, उठो; हमारा शरीर-संचालक जीवन आ गया है । अन्धकार गया; आलोक आया । उषाने सूर्यको जानेके लिये मार्ग बना दिया है । उषा, जिस देशमें अन्न दान करके वर्द्धन करती हो, वहाँ हम जायेंगे ।

१७ स्तुति-वाहक स्तोता प्रभावती उषाकी स्तुति करके सुप्रथित वेद-वाक्य उच्चारण करते हैं । धनवती उषा, आज उस स्तोताका अन्धकार नष्ट करो और उसे सन्तति-युक्त अर्थ दान करो ।

१८ जो गो-संयुक्त और सर्व-वीर-सम्पन्न उषाएँ वायुकी तरह शीघ्र सूतृत स्तुतिके समाप्त होनेपर हन्यदाता मनुष्यका अन्धकार विलुप्त करती हैं, वे ही-अश्व-दात्री उषाएँ सोमाभिषेक-कारीके प्रति प्रसन्न हों ।

१९ उषा, तुम देवोंकी माता हो, अदितिकी प्रतिल्पदिनी हो । तुम यज्ञका प्रकाश करो; विस्तीर्ण होकर किरण दान करो । हमारे स्तोत्रकी प्रशंसा करके हमारे ऊपर उदित हो । सबकी वरणीया उषे, हमें जनपदमें आविर्भूत करो ।

यच्चित्रमम उपसो वहन्ती जानाय शशमानाय भद्रम् ।  
तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः ॥ २० ॥

११४ सूक्त । रुद्र देवता हैं । जगती और त्रिष्टुप् छन्द हैं ।

हमा रुद्राय तवसे कपर्दिने क्षयद्वीराय प्र भरामहे मतीः ।  
यथा शमसद्विपदे चतुष्पदे विश्वं पुष्टं ग्रामे अस्मिन्नानातुरम् ॥ १ ॥  
मुला नो रुद्रोत नोमयस्कृधि क्षयद्वीराय नमसा विध्रेम ते ।  
यच्छं च योश्च मनुरायेजे पिता तदश्याम तव रुद्र प्रणीतपि ॥ २ ॥  
अश्याम ते सुमतिं देवयज्यया क्षयद्वीरस्य तव रुद्र मोद्ववः ।  
सुभ्नायन्निद्रिशो अस्माकमावरारिष्टवीरा जुहवाम ते हविः ॥ ३ ॥  
त्वेषं वयं रुद्रं यदसाध्रं बहुं ऋविमवसे नि ह्यामहे ।  
आरे अस्मद्देव्यं हेतो अस्त्यतु सुमतिमिद्रयमस्या नृणीमहे ॥ ४ ॥  
द्विशो वराहमरुपं कपर्दिनं त्वेषं रूपं नमसा नि ह्यामहे ।  
हस्ते विभ्रद्रेपजा चार्याणि शर्म चर्म च्छर्दिरस्मभ्यं यंसत् ॥ ५ ॥

२० उपार्ध जो कुछ विचित्र और ग्रहण-योग्य धन लाती हैं, वह यज्ञ-सम्पादक स्तोत्राके कल्याण-स्वरूप हैं ।  
मित्र, वरुण, अदिति, सिन्धु, पृथिवी और आकाश हमारे इस प्रार्थनाको पूजित करें ।

१ महान् कपर्दी या लताधारी और वीरोंके विनाश-स्थान रुद्रको हम यह मननीव स्तुति अर्पण करते हैं, ताकि  
द्विपद और चतुष्पद अन्य रों और हमारे इस ग्राम में सब लोग पुष्ट और रोग-शून्य रहें ।

२ रुद्र, तुम सखी हो; हमें सखी करो । तुम वीरोंके विनाशक हो । हम नमस्कारके साथ तुम्हारी परिचर्या करते  
हैं । पिता या उत्पादक मनुने जिन रोगोंसे उपयाम और जिन भयोंसे उद्धार पाया था; रुद्र, तुम्हारे उपदेशसे हम भी  
वह पायें ।

३ अभीष्ट-दाता रुद्र, तुम वीरोंके क्षयकारी अथवा ऐश्वर्यशाली मरुतोंसे युक्त हो । हम देव-यज्ञ द्वारा तुम्हारा  
अनुग्रह प्राप्त करें । हमारी सन्तानोंके एलकी कामना करके उनके पास आओ । हम भी प्रजाका हित देखकर तुम्हें हज्य  
देंगे ।

४ रक्षणके लिये हम दीसिमान्, यज्ञ-साधक, कुटिलगति और मेधावी रुद्रका आह्वान करते हैं । वह हमारे पाससे  
अपना क्रोध दूर करें । हम उनका अनुग्रह चाहते हैं ।

५ हम उन स्वर्गीय उत्कृष्ट वराहकी तरह दृढ़ाङ्ग, अरुणवर्ण, कपर्दी, दीसिमान् और उज्ज्वल रूपधर रुद्रको  
नमस्कार द्वारा बुलाते हैं । हाथमें वरणीय भेषज धारण करके वह हमें सब, चर्म और गृह प्रदान करें ।

इदं पित्रे मरुतामुच्यते वचः स्वादोः स्वादीयो रुद्राय वर्धनम् ।  
 रास्वा च नो अमृतं मर्तभोजनं तमने तोकाय तनयाय मृल ॥ ६ ॥  
 मा नो भ्रह्मन्तमुत मा नो अर्मकं मा न उक्षन्तमुत मा न उक्षितम् ।  
 मा नो वधीः पितरं मोत मातरं मां नः प्रियास्तन्वो रुद्र रीरिपः ॥ ७ ॥  
 मा नस्तोके तनये मा न आयौ मा नो गोपु मा नो अश्वेषु रीरिपः ।  
 वीरान्मा नो रुद्र भामितो वधीर्हविष्मन्तः सदमित्वा हवामहे ॥ ८ ॥  
 उप ते स्तोमान् पशुषा इवाकरं रास्वा पितर्मरुतां सुन्नमस्मे ।  
 भद्रा हि ते सुमतिमृलयत्तमाथा वयमव इत्ते वृणीमहे ॥ ९ ॥  
 आरे ते गोघ्नमुत पुरुषघ्नं क्षयद्वीर सुन्नमस्मे ते अस्तु ।  
 मृला च नो अधि च ब्रूहि देवाघा च नः शर्म यच्छ द्विवर्हाः ॥ १० ॥  
 अबोचाम नमो अस्मा अवश्यवः शृणोतु नो हवं रुद्रो भरत्वान् ।  
 तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिव्या उत द्यौः ॥ ११ ॥



६ मधुसे भी अधिक मधुर यह स्तुति-वाक्य मरुतोंके पिता रुद्रके उद्देशसे उच्चारित किया जाता है। इससे स्तोता-की बुद्धि होती है। मरण-रहित रुद्र, मनुष्योंका भोजन-रूप अन्न हमें प्रदान करो। मुझे, मेरे पुत्रको और पौत्रको छल दान करो।

७ रुद्र, हममेंसे बड़ेको नहीं मारना, बच्चेको नहीं मारना, सन्तानोत्पादक युवकको नहीं मारना तथा गर्भस्थ शिशुको भी नहीं मारना। हमारे पिताका वध नहीं करना, माताकी हिंसा नहीं करना तथा हमारे प्रिय शरीरमें आघात नहीं करना।

८ रुद्र, हमारे पुत्र, पौत्र, मनुष्य, गौ और अश्वको नहीं मारना। रुद्र, क्रुद्ध होकर हमारे वीरोंकी हिंसा नहीं करना; क्योंकि हृद्य लेकर हम सदा ही तुम्हें बुलाते हैं।

९ जैसे चरवाहे सायंकाल अपने स्वामीके पास पशुओंको लौटा देते हैं, रुद्र, जैसे ही मैं तुम्हारा स्तोत्र तुम्हें अर्पण करता हूँ। मरुतोंके पिता, हमें छल दो। तुम्हारा अनुग्रह अत्यन्त छलकर और कल्याण-वाही हो। हम तुम्हारा रक्षण चाहते हैं।

१० वीरोंके विनाशक रुद्र, तुम्हारा गो-हनन-साधन और मनुष्य-हनन-साधन अलग दूर रहे। हम तुम्हारा दिया छल पावें। हमें छली करो। दोसमाच रुद्र, हमारे पक्षसे कहना। तुम पृथिवी और अन्तरीक्षके अधिपति हो। हमें छल दो।

११ हमने रक्षा-कामना करके कहा है। उन रुद्र देवको नमस्कार है। मरुतोंके साथ रुद्र हमारा आह्वान छवें। मित्र, वरुण, अदिति, सिन्धु, पृथिवी और आकाश हमारी इस प्रार्थनाको पूजित करें।

११५ सूक्त । सूर्य देवता हैं ।

चित्रं देवानामुदगादनीकं ऋधुमित्रस्य वरुणस्याग्नेः ।  
 आप्रा द्यावापृथिवी अन्तरिक्षं सूर्यं आत्मा जगतस्तस्थुपश्च ॥ १ ॥  
 सूर्यो देवीमुपसं रोचमानां मर्यो न योपामभ्येति पश्चात् ।  
 यत्रा नरो देवयन्तो युगानि वितन्वते प्रति भद्राय भद्रम् ॥ २ ॥  
 भद्रा अश्वा हरितः सूर्यस्य चित्रा एतवा अनुमाद्यासः ।  
 नमस्यन्तो दिव आ पृष्ठमस्थुः परि द्यावापृथिवी यन्ति सद्यः ॥ ३ ॥  
 तत् सूर्यस्य देवत्वं तन्मदित्वं मध्या कर्तोविततं सङ्गभार ।  
 यदेदयुक्त हरितः सधस्थादाद्राघ्री वासस्तनुते सिमस्मै ॥ ४ ॥  
 तन्मित्रस्य वरुणस्यामिचक्षे सूर्यो रूपं कृणुते द्यौरुपस्थे ।  
 अनन्तमन्यद्र शदस्य पाजः कृष्णमन्यद्धरितः सं भरन्ति ॥ ५ ॥  
 अद्या देवा उदिता सूर्यस्य निरंहसः पिपृता निरवधात् ।  
 तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः ॥६॥



१ विचित्र तेज-पुञ्ज तथा मित्र, वरुण और अग्नि के चतुःस्वरूप सूर्य उदित हुए हैं । उन्होंने द्यावा-पृथिवी और अन्तरीक्षको अपनी किरणोंसे परिपूर्ण किया है । सूर्य जंगम और स्थावर—दोनोंकी आत्मा हैं ।

२ जैसे पुरुष स्त्रीका अनुगमन करता है, वैसे ही सूर्य भी दीप्तिमती उपाके पीछे-पीछे आते हैं । इसी समय देवा-भिलाषी मनुष्य बहु-युग-प्रचलित यज्ञ-कर्मका विस्तार करते हैं, सुफलके लिये कल्याण-कर्मको सपन्न करते हैं ।

३ सूर्यके कल्याण-रूप हरि नामके विचित्र घोड़े इस पथसे जाते हैं । वे सयके स्तुति-भाजन हैं । हम उनको नमस्कार करते हैं । वे आकाशके पृष्ठ-देशमें उदित हुए हैं । वे घोड़े तुरत ही द्यावा-पृथिवी—चारों दिशाओंका परिभ्रमण कर डालते हैं ।

४ सूर्यदेवका ऐसा ही देवत्व और माहात्म्य है कि, वह मनुष्योंके कर्म समाप्त होनेके पहले ही अपने विशाल किरण-जालका उपसंहार कर डालते हैं । जिस समय सूर्य अपने स्थले हरि नामके घोड़ोंको खोलते हैं, उस समय सारे लोकोंमें रात्रि अन्धकार-रूप आवरण विस्तृत करती है ।

५ मित्र और वरुणको देखनेके लिये आकाशके बीच सूर्य अपना ज्योतिर्मय रूप प्रकाशित करते हैं । सूर्यके हरि नामके घोड़े एक ओर अपना अनन्त दीप्तिमान् बल धारण करते हैं, दूसरी ओर कृष्ण वर्ण अन्धकार करते हैं ।\*

६ सूर्य-किरणों, सूर्योदय होनेपर आज हमें पापसे छुड़ाओ । मित्र, वरुण, अदिति, सिन्धु, पृथिवी और आकाश हमारी इस प्रार्थनाको पूजित करें । †

\* अनेक भाष्यकारोंने "हरित" का अर्थ किरण किया है ।

† ६४ से ६६, ६८ और १०० से १०३ तथा १०५ से ११५ सूक्तोंके अन्तमें "तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः" है ।

१० अनुवाक् । ११६ सूक् । अश्विद्वय देवता है । यहाँसे १२५ सूक्तक दीर्घतमाके

अपत्य कक्षीवान् ऋषि हैं । छन्द पूर्ववत् त्रिष्टुप् है ।  
 नासत्याभ्यां बहिरिव प्र वृञ्जे स्तोमां इयम्यभ्रियेव वातः ।  
 धावभगाय विमदाय जायां सेनाजुवा न्यूहू रथेन ॥ १ ॥  
 चीलुपत्ममिराशुहेममिर्वा देवानां वा जूतिभिः शाशदाना ।  
 तद्रासभो नासत्या सहस्रमाजा यमस्य प्रधने जिगाय ॥ २ ॥  
 तुभ्रो ह भुज्युमश्विनोदमेघे रयिं न कश्चिन्ममृवाँ अवाहाः ।  
 तमूहथुनौर्भिरात्मन्वतीभिरन्तरिक्षप्रु द्विरपोदकाभिः ॥ ३ ॥  
 तिस्रः क्षपस्त्रिरहातिव्रजद्विर्नासत्या भुज्युमूहथुः पतद्गः ।  
 समुद्रस्य धन्वन्तार्द्रस्य पारे त्रिभी रथैः शतपद्भिः पडश्चैः ॥ ४ ॥  
 अनारम्भणे तदवीरयेथामनास्थाने अग्रभणे समुद्रे ।  
 यदश्विना ऊहथुर्भुज्युमस्तं शतारित्रां नावमातस्थिवांसम् ॥ ५ ॥  
 यमश्विना ददथुः श्वेतमश्वमघाश्वाय शश्वदित्स्वस्ति ।  
 तद्वां दात्रं महि कीर्तेन्यं भूत्पैद्वौ वाजी सद्मिद्वच्यो अर्यः ॥ ६ ॥

१-यदके लिये जिस प्रकार यज्ञमान कुण्डका विस्तार करता है तथा वायु मेघको नाना दिशाओंमें प्रेरित करता है, उसी प्रकार मैं नासत्यद्वय या अश्विद्वयको प्रभूत स्तोत्र प्रेरित करता हूँ । अश्विनोक्तमारोंने शत्रु-सेना द्वारा दुष्प्राप्य रथ द्वारा युवक विमद राजर्षिको, स्वयंवरमें प्राप्त, स्त्रीको विमदके पास पहुँचा दिया था ।

२ नासत्यद्वय, तुम लोग बलवान् और शीघ्रगामी अश्व द्वारा नौत और देवोंके उत्साहसे उत्साहित हुए थे । तुम्हारे रथ-वाहक गर्दभने यमके प्रिय सहस्र युद्धोंमें जय लाभ किया था ।

३ जैसे कोई जियमाण मनुष्य धनका त्याग करता है, वैसे ही तुम नामके राजर्षिने ब्रह्मे कष्टसे अपने पुत्र भुज्युको, सेनाके साथ, शत्रु-जयके लिये, नौका द्वारा समुद्र (स्थित द्वीप) में भेजा । मध्य-समुद्रमें निमग्न भुज्युको, अश्विद्वय, तुमने अपनी नौका द्वारा उसके पास पहुँचाया था । तुम्हारी नौका जलके ऊपर अन्तरीक्षमें चलनेवाली और अप्रविष्ट-जलवाली है अर्थात् तुम्हारी नौकामें जल नहीं पैठता ।

४ नासत्यद्वय, तुमने शीघ्रगामी शतचक्र-विशिष्ट और छः अश्वोंसे युक्त रथ-त्रयपर भुज्युको वहन किया था । वह रथ तीन दिन, तीन राततक अर्द्ध सागरके जल-शून्य प्रदेशमें लाये थे ।

५ अश्विद्वय, तुम लोगोंने अवलम्बन-शून्य, भूप्रदेश-रहित, ग्रहणोप शाखादि-वस्तु-रहित सागरमें यह कार्य किया था । सौ ढाँडोंवाली नौकामें भुज्युको बैठाकर तुमके पास लाये थे ।

६ अश्विद्वय, अवध्य अश्वके पति पेटु नामके राजर्षिको तुमने जो श्वेतवर्ण अश्व दिया था, उस अश्वने पेटुका नित्य प्रति जय-रूप मंगल साधन किया था । तुम्हारा वह दान महान् और कीर्तनीय हुआ था । पेटुका वह उत्तम अश्व हमारा सदा पूजनीय है ।

युवं नरा स्तुवते पक्षिणाय कक्षीवते अरदतं पुरन्धिम् ।  
 कारोतराच्छफादश्वस्य वृष्णाः शतं कुम्भां असिञ्चतं सुरायाः ॥ ७ ॥  
 हिमेनाग्निं घ्नं समवारयेथां पितुमतीमूर्जमस्मा अधत्तम् ।  
 ऋर्वीसे अत्रिमश्विनावनीतमुन्निन्यथुः सर्वगणं स्वस्ति ॥ ८ ॥  
 परावतं नासत्यानुदेथामुच्चावुध्रं चक्रयुर्जिह्ववारम् ।  
 क्षरन्नापो न पायनाय राथे सहस्राय नृप्यते गीतमस्य ॥ ९ ॥  
 जुजुरुषो नासत्योतं वृत्रिं प्रामुञ्चतं द्रापिमिच ज्यवानात् ।  
 प्रातिस्तं जहितस्यायुर्दन्नादित् पतिमरुणुतं कनीनाम् ॥ १० ॥  
 तर्हां नरा शंस्यं राश्र्यं चाभिष्टिमन्नासत्या वरुथम् ।  
 यद्विहांसा निधिमिश्रापगृह्णुमुद्गंशतादूपथुर्वन्दनाय ॥ ११ ॥  
 तर्हां नरा सनये दंस उप्रमात्रिष्कृणोमि तन्यतुर्न वृष्टिम् ।  
 दध्यद् ह यन्मध्वाथर्वणो वामश्वस्य शीष्णां प्र यदीमुवाच ॥ १२ ॥

७ नेत्रद्वय, तुमने अग्निराके कुम्भमें उदपन्न कक्षीवानको, स्तुति करनेपर, प्रचुर बुद्धि दी थी। छरापात्रके आधारसे जैसे छरा निकाली जाती है, वैसे ही तुम्हारे संचन-समर्थ अश्वके सुरसे तुमने शतकुम्भ छराका सिञ्चन किया था।

८ तुमने हिम या जल द्वारा शतद्वार-पीढ़ा-यंत्र-गृहमें फँसे हुए अत्रिकी, चारो ओरकी, अक्षरों द्वारा प्रन्वालित और द्योप्यमान अग्निका निवारण किया था तथा अग्निको अन्नयुक्त और बल-प्रद खाद्य दिया था। अश्विनीकुमारद्वय, अत्रि जो निम्नाभिन्नुय होकर अन्धकारमय पीढ़ा-यंत्र-गृहमें प्रक्षिप्त हुए थे, उन्हें तुमने सगियोंके साथ छलसे बहासे उड़ाया था।

९ नामत्यद्वय, तुम मरुभूमिमें गीतम ऋषिके पास कृप उठा लाये थे और कृपका तल-भाग ऊपर तथा मुख-भाग नीचे किया था। उग्र कृपसे तृष्णागुर गीतमके पान और सहस्र घन लाभके लिये जल निर्गत हुआ था।

१० अश्विद्वय, जैसे शरीरका आवरण (कवच आदि) खोल फेंका जाता है, वैसे ही तुमने जीर्ण-ज्यवन ऋषिकी शरीरव्यापिनी जरा गोल फेंकी थी। द्यद्वय, तुमने पुशादि द्वारा परित्यक्त ऋषिके जीवनको बढ़ाया था; अनन्तर उन्हें कन्याओंका पति बना दिया था।

११ नेता नासत्यद्वय, तुम्हारा यह दृष्ट वरणीय कार्य हमारे लिये प्रशंसनीय और आराध्य है—जो तुमने जानकर गुरु पनकी तरह द्रिये उन बन्दन ऋषिको पिपासित पथिकोंके द्रष्टव्य कृपसे निकाला था।

१२ नेत्रद्वय, जैसे संच-नाशन आराधकवृष्टि प्रकटित करता है, मैं धन-प्राप्तिके लिये, तुम्हारे उस उग्र कर्मको जैसे ही प्रकटित करता हूँ—जो अधयके पुत्र द्योचि ऋषिपने घोड़ेका मस्तक पहनकर तुम्हें यह मधु-विद्या सिखायी थी। †

† ८४ सूक्तकी १३ ऋषिका अर्थ देखिये।

अज्ञोहवीन्नासत्याः करा वां महे यामन पुरुभुजा पुरन्धिः ।  
 श्रुतं तच्छासुरिव वधिमत्या हिरण्यहस्तमश्विनावदत्तम् ॥ १३ ॥  
 आसो वृकस्य वर्तिक्रामभीके युवं तरानासत्यामुमुक्तम् ।  
 उतो कविं पुरुभुजा युवं ह कृपमाणमकृणुतं विचक्षे ॥ १४ ॥  
 चरित्रं हि वेरिवाच्छेदि पर्णमाजा खलस्य परितकम्यायाम् ।  
 सद्यो जङ्घामायसीं विश्पलायै धने हिते सतवे प्रत्ययत्तम् ॥ १५ ॥  
 शतं मेपान् वृक्ये चक्षदानमृज्राश्वं तं पितान्धं चकार ।  
 तस्मा अज्ञी नासत्या विचक्ष आश्रुतं दक्षा भिपजावनर्षम् ॥ १६ ॥  
 आ वां रथं दुहिता सूर्यस्य कार्ष्णे वातिष्टुर्ध्वता जयन्तो ।  
 विश्वे देवा अन्वमन्यन्त हृद्भिः समु श्रिया नासत्या सचेये ॥ १७ ॥  
 यदयातं दिवोदासाय वर्तिर्भरद्वाजायाश्विना ह्यन्ता ।  
 रैवदुवाह सचनो रथो वां वृषभश्च शिशुमारश्च युक्ता ॥ १८ ॥

--- १३ बहु-लोकपालक नासत्यद्वय, तुम अभिमत-फल-दाता हो । उद्धिमती वधिमती नामकी ऋषि-पुत्रीने पूजनीय स्तोत्र द्वारा तुम्हें वार-वार पुकारा था । जैसे गिण्य शिक्षककी कथा सुनता है, तुमने वैसे ही वधिमतीका आह्वान सुना था । अश्विद्वय, पुत्राभिलाषिणी नपुंसक-पत्निका वधिमतीको तुमने हिरण्यहस्त नामका पुत्र प्रदान किया था ।

१४ नेता नासत्यद्वय, तुमने वृक अथवा सूर्यके मुखसे वर्तिका नामक पक्षी अथवा उपाको हुड़ाया था । हे बहुलोक-पालक, तुमने स्तोत्र-रत्नर भेदावीको प्रकृत ज्ञान देखने दिया था ।

१५ खेल राजाको स्त्री विश्पलाका एक पैर, चुद्धमें, पक्षीके पंखकी तरह, कट गया था । अश्विद्वय, तुमने रातो रात, विश्पलाके जानेके लिये तथा शल्य-न्यस्त धन-लाभके लिये, उसे लौहमय जंघा दे दी थी ।

१६ जिन ऋजाश्व राजर्षिने अपना वृको ( वृककी स्त्री ) को खानेके लिये सौ भेदोंको काट डाला था, इनको उनके पिता ( वृषागिरि ) ने क्रुद्ध होकर नेत्र-हीन कर दिया था । ऋजाश्वके दोनों नेत्र किसी भी वस्तुको देखनेमें असमर्थ हो गये थे । भिषज-दक्ष नासत्यद्वय, तुमने ऋजाश्वकी आँखें अच्छी कर दीं ।

१७ अश्विद्वय, सारे देवोंमें तुम्हारे घीन्नगामी घोड़ोंके होनेसे सूर्य-पुत्री सूर्या तुम्हारे द्वारा विजित हो गयी और तुम्हारे रथपर आरोहण किया । सुद्धदौड़के जितानेवाले काष्ठ-खण्डके पास तुम्हारे घोड़ोंके पहुँचनेसे सारे देवोंने हृदयके साथ हसे कार्यका अनुमोदन किया । नासत्यद्वय, तुमने सम्पत् प्राप्त की ।

१८ अश्विद्वय, राजर्षि दिवोदासके, हव्यान्न प्रदान कर तुम्हें, बुलानेपर तुम उनके घर गये थे । उस समय तुम्हारा सेव्य रथ धन-संयुक्त अन्न से गया था । वृषभ और ग्राह उस रथमें युक्त हुए थे ।

‡ विवाहका समय आनेपर सूर्या सोम राजाको दी जानेवाली थी । परन्तु सब देवोंने उसे चाहा । सुद्ध-दौड़की बाजी लगी । अश्विद्वयके घोड़े जीत गये । सूर्या उन्हें ही मिली ।

रथि सुक्ष्वं स्वपत्यमायुः सुवीर्यं नासत्या वहन्ता ।  
 आ जहावीं समनसोप वाजैस्त्रिरहो भागं दधतीमयातम् ॥ १६ ॥  
 परिविष्टं जाहुषं विश्वतः सीं सुगेभिर्नक्तमूहथू रजोभिः ।  
 विभिन्दुना नासत्या रथेन वि पर्वतां अजरयू अयातम् ॥ २० ॥  
 एकस्या वस्तोराचर्तं रणाय वशमश्विना सनये सहस्रा ।  
 निरहतं दुच्छुना इन्द्रवन्ता पृथुश्रवसो वृषणावरातीः ॥ २१ ॥  
 शरस्य चिदार्चत्कस्यावतादा नोन्वादुचा चक्रथुः पातवे वाः ।  
 शयवे चिन्नासत्या शचीभिर्जसुरये स्तर्यं पिप्यथुर्गाम् ॥ २२ ॥  
 अवस्यते स्तुवते कृष्णिषाय ऋजूयते नासत्या शचीभिः ।  
 पशं न नष्टमिव दर्शनाय विष्णाप्वं ददथुर्विश्वकाय ॥ २३ ॥  
 दश रात्रीरश्विना नव द्यू नवनद्धं श्रथितमप्स्वन्तः ।  
 विप्रुतं रेभमुदनि प्रवृक्तमुन्नियथुः सोममिव स्रुवेण ॥ २४ ॥  
 प्र वां दंसांस्यश्विनावबोचमस्य पतिः स्यां सुगवः सुवीरः ।  
 उत पश्यन्शुवन्दीर्घमायुरस्तमि वेज्जिरिमाणं जगम्याम् ॥ २५ ॥

१६ नासत्यद्वय, तुम शोभन-बल-सम्पन्न और शोभन अपत्य और वीर्यसे युक्त होकर तथा समान प्रीति-युक्त होकर महर्षि जन्हुकी सन्तानोंके पास आये थे । सन्तानोंने हव्यान्त प्रदान किया था तथा दैनिक सोमामिषवके प्राप्तःस्वन आदि तीन भाग धारण किये थे ।

२० नासत्यद्वय, तुम अजर हों । जिस समय जाहुष राजा शत्रुओं द्वारा चारो ओरसे घेरे गये थे, उस समय अपने सर्व-भेदकारी रथ द्वारा रातो-रात उन्हें छगम्य पथसे बाहर कर ले गये थे; और, शत्रुओं द्वारा दुरारोह पर्वतोंपर गये थे ।

२१ अश्विद्वय, तुमने वश नामके ऋषिकी, एक दिनमें हजार शोभन घन पानेके लिये, रक्षा की थी । अनीप्य-वर्षक अश्विद्वय, तुमने इन्द्रके साथ मिलकर पृथुश्रवा राजाके क्लेशदायका शत्रुओंको मारा था ।

२२ ऋचत्कके पुत्र शर नामक स्तोताके पानके लिये तुमने कृपके नीचेसे जलको ऊपर किया था । नासत्यद्वय, भ्रान्त शयु नामक ऋषिके लिये प्रसव-शून्य गौको, अपने कार्य्य द्वारा, दुग्धवती बनाया था ।

२३ नासत्यद्वय, कृष्ण-पुत्र और श्रुजुता-तत्पर विश्वकाय नामक ऋषिके तुम्हारी रक्षाकी लालसामें, स्तुति करनेपर अपनेकायों द्वारा, तुमने, नष्ट पशुकी तरह, उनके विष्णापु नामक विनष्ट पुत्रको दिखा दिया था ।

२४ अक्षरों द्वारा पाशने बद्ध, कृपमें निक्षिप्त और शत्रुओं द्वारा आहत होकर रेभ नामक ऋषिके दस रात नौ दिन जलमें पड़े रहनेसे व्यथासे सन्तप्त और जलसे विप्लुत होनेपर तुमने उन्हें उसी प्रकार कृपसे निकाल लिया था, जिस प्रकार अश्वर्य्यु श्रुवसे सोम निकालता है ।

२५ अश्विद्वय, तुम्हारे पूर्व-कृत कार्योंका मैंने वर्णन किया । मैं शोभन गौ और वीर्यसे युक्त होकर इस राष्ट्रका अधिपति बनूँ । जैसे गृहव्यामी निष्कंठक घरमें प्रवेश करता है, मैं भी वैसेही नेत्रोंसे स्पष्ट देखकर और दीर्घ आयु भोग कर बुढ़ाया पाऊँ ।



११७ सूक्त । अश्विद्वय देवता हैं ।

मध्वः सोमस्याश्विना मदाय प्रत्नो होता विवासते वाम् ।  
 बहिष्मता रातिर्विश्रिता गोरिषा यातं नासत्योप वाजैः ॥ १ ॥  
 यो वामश्विना मनसो जवीयानथः स्वश्वो विश आजिगानि ।  
 येन गच्छथः सुकृतो दुरोणं तेन नरा वर्तिरस्मभ्यं यातम् ॥ २ ॥  
 ऋषिं नरावंहसः पाञ्जजन्यमृषीसादृषिं मुञ्चथो गणेन ।  
 मिनन्ता दस्योरशिवस्य माया अनुपूर्वं वृषणा चोदयन्ता ॥ ३ ॥  
 अश्वं न गूहूलमश्विना दुरेवैऋषिं नरा घषणा रेभमप्सु ।  
 सन्तं रिषीथो विप्रुतं दंसोभिर्न वां जूर्यन्ति पूर्व्या कृतानि ॥ ४ ॥  
 सुषुप्त्वासं न निऋतेरुपस्थे सूर्यं न दंसा तमसि क्षियन्तम् ।  
 शुभे रुन्मं न दर्शतं निखातमुद्रूपथुरश्विना चन्दनाय ॥ ५ ॥  
 तद्वां नरा शंस्यं पञ्जियेण कक्षीवता नासत्यापरिजमन ।  
 शफादश्वस्य वाजिनो जनाय शतं कुम्भाँ असिञ्चतं मधूनाम् ॥ ६ ॥

१ अश्विद्वय, तुम्हारे चिरन्तन होता तुम्हारे हर्षके लिये मधुर सोमरसके साथ तुम्हारी अर्चना करता है । कुशके ऊपर हव्य स्थापित किया हुआ है; ऋत्विकों द्वारा स्तुत और प्रस्तुत हुआ है । नासत्यद्वय, अन्न और बल लेकर पास आओ ।

२ अश्विद्वय, मनकी अपेक्षा भी वेगवान् और शोभन-अश्व-युक्त रथ सारे प्रजावर्गके सामने जाता है और जिस रथमें तुम लोग शुभकर्माँ लोगोंके घर जाते हो, नेत्रद्वय, उसीपर हमारे घर पधारो ।

३ नेत्रद्वय, अभीष्ट-वर्षकद्वय, तुमलोग शत्रुओंको हिंसा करके और ह्ये शदायिनी दस्यु-मायाका आनुपूर्विक निवारण करके पाँच श्रेणियों ( चार वर्ण और पञ्चम निषाद ) द्वारा पूजित अत्रि ऋषिको शतद्वार-यन्त्र-गृहके पाप-तुषानलसे, सन्तानादिके साथ, मुक्त किया था ।

४ नेत्रद्वय, अभीष्ट-वर्षकद्वय, दुर्दान्त दानवों द्वारा अलमें निगूढ़ रेभऋषिको तुम लोगोंने निकालकर पीहित अश्वकी तरह, उनका विनष्ट अवयव, अपनी द्वाओंसे, डीक किया था । तुम्हारे पहलेके काम जीर्ण नहीं हुए ।

५ दस-अश्विद्वय, पृथिवीके ऊपर सुषुप्त मनुष्यकी तरह और अन्धकारमें क्षय-प्राप्त सूर्यके शोभन दीप्तिमान् आसूषणकी तरह तथा दर्शनीय उस कूपमें प्रक्षिप्त बन्दन ऋषिको तुम लोगोंने निकाला था ।

६ नेता नासत्यद्वय, अङ्गिरोवशीय कक्षीवान् मैं मनोऽनुकूल द्रव्यकी प्राप्तिकी तरह तुम्हारा अनुष्ठान उद्घोषित करूँगा; क्योंकि तुमने शीघ्र-नामी घोड़के खुरोंसे निकाले हुए मधुसे संसारमें सैकड़ों घड़े पूरे कर दिये थे ।

युवं नरा स्तुवते कृष्णियाय विष्णाव्वं ददथुर्विश्वकाय ।  
 घोषायै चित् पितृपदे दुरोणे पतिं जूर्यन्त्या अश्विनावदत्तम् ॥ ७ ॥  
 युवं श्यावाय रुशतीमदत्तं महः क्षोणस्याश्विना कएवाय ।  
 प्रवाच्यं तद्दृपणा कृतं वां यन्नार्पदय श्रवो अध्यधत्तम् ॥ ८ ॥  
 पुरु घर्पां स्याश्विना दधाना नि पेदघ ऊहथुराशुमश्वम् ।  
 सहस्रसां वाजिनमप्रतीतमहिह्वनं श्रवस्यं तस्त्रम् ॥ ९ ॥  
 एतानि वां श्रवस्या सुदानू ब्रह्माङ्गूषं सदनं रोदस्योः ।  
 यद्वां पज्रासो अश्विना हन्ते यातमिषा च विदुषे च वाजम् ॥ १० ॥  
 स्तोमोनिनाश्विना गृणाना वाजं विप्राय भुरणा रदन्ता ।  
 अगस्त्ये ब्रह्मणा वागृधाना सं विश्पलांनासत्यारिणांतम् ॥ ११ ॥  
 कृत यान्ता मुष्टुतिं काच्यस्य दिवा नभाता वृपणा शयुत्रा ।  
 हिरण्यस्यैव फलशं निवातमुदू पथुर्दशमे अश्विनाहन् ॥ १२ ॥  
 युवं च्यवानमश्विना जरन्तं पुनर्युवानं चक्रथुः शत्रीभिः ।  
 युवो रथं दुहिता सूर्यस्य सह श्रिया नासत्यावृणीत ॥ १३ ॥

७ नेत्रद्वय, कृष्णके पुत्र विश्वकायके, तुम लोगोंको स्तुति करनेपर, विनष्ट पुत्र विष्णापुको तुम लोग ल्याये थे । अश्विद्वय, कोढ़ होनेके कारण सुदानुपतक पितृ-नृपयं अविवाहिता रहनेपर घोषा नामकी ब्रह्म-वादिनी स्त्रीको, कोढ़-दूर कर, पति प्रदान किया था ।

८ अश्विद्वय, तुमने सुष्टोत्र-मन्त्र ग्याघ या ग्यामधर्षण ऋषिको अच्छा कर दीसिमती स्त्री दी थी । आँखें न रहनेसे, कृषि नहीं चल सकने थे; तुमने उन्हें आँखें दी थीं । अभीष्ट-वर्षिद्वय, बहरं नृपद-पुत्रको तुमने कान दिये थे; यह कार्य प्रशंसनीय है ।

९ यदृ-स्य-धारी अश्विद्वय, तुमने राजर्षि पेटुको शीघ्रगामी अश्व दिया था । वह घोड़ा-हजारो तरहके धन देता था । बह फलवान् शयुत्रों द्वारा अपराजित, शत्रु-हन्ता, स्तुति-पात्र और विपदमें रक्षक था ।

१० दानघोर अश्विनोक्तुमारी, तुम्हारी ये चीर-कीर्तियां सबको जाननी चाहिये । तुम धावा-पृथिवी-रूप वर्जमान हो । तुम्हारा आण्ड्यादकर घोषणीय मन्त्र निष्पन्न हुआ है । अश्विद्वय, जिस समय अङ्गिराकुलके यजमान तुम्हें बुलाते हैं, उस समय अन्न लेकर आओ तथा सुभ यजमानको बल दो ।

११ पौषक नासत्यद्वय, तुम्हारे पुत्र अगस्त्य ऋषिकी स्तुतिमें स्तुत होकर और मेघावी भरद्वाज ऋषिको अन्नदान कर तथा अगस्त्य द्वारा मंत्र-वर्द्धित होकर तुमने विष्पलाको नीरोग किया था ।

१२ आकाश-पुत्रद्वय, क्षमीष्ट-धर्षक, काच्य ( उग्रना ) की स्तुति करनेके लिये कहाँ उसके घरकी ओर जाते हो ? द्विभायर्षा फल्यकी तरह कृपमें गिरं रेभ ऋषिको तुमने दसवें दिन उवारा था ।

१३ अश्विद्वय, भैषज्यस्य कार्य द्वारा तुमने वृद्ध च्यवन ऋषिको युवा किया था । नासत्यद्वय, सूर्य-पुत्री सूर्या, कान्तिके साथ, तुम्हारे रथपर चढ़ी थी ।

युवं तुग्राय पूर्वोभिरैवैः पुनर्मन्यावभवत् युवाना ।  
 युवं भुज्युमर्णसो निः समुद्राद्विभिरुह्युर्नृजोभिरैवैः ॥ १४ ॥  
 अजोहवीदश्विना तौग्रयो वां प्रोहः समुद्रमव्यथिर्जगन्वान् ।  
 निष्टमूह्युः सुयुजा रथेन मनोजवसा वृषणा स्वस्ति ॥ १५ ॥  
 अजोहवीदश्विना वर्तिका चामास्तो यत् सीममुञ्चतं वृकस्य ।  
 वि ज्युपा ययथुः सान्वद्रेर्जातं विष्वाचो अहतं विपेण ॥ १६ ॥  
 शतं मेपान्वव्ये मामहानं तमः प्रणीतमश्विनेन पित्रा ।  
 आक्षी ऋज्राश्वे अश्विनावधत्तं ज्योतिरन्ध्राय चक्रथुर्विचक्षे ॥ १७ ॥  
 शुनमन्धाय भरमह्यत् सा वृकीरश्विना वृषणा नरेति ।  
 जारः कनीन इव चक्षदानं ऋज्राश्वः शतमेकं च मेपात्र ॥ १८ ॥  
 मही वामूतिरश्विना मयोभूरुत स्वामं धिष्ण्या सं रिणीथः ।  
 अथा युवामिदह्यत् पुरन्धिरागच्छतं सीं वृषणावत्रोभिः ॥ १९ ॥

१४ दुःख-विदारक-द्वय, तुम जैसे पहले स्तोत्र द्वारा तुम्हारी स्तुति करते थे, अनन्तर फिर भी उसी तरह तुम लोगोंकी अर्चना करते थे; क्योंकि उनके पुत्र भुज्युको तुम विक्षिप्त समुद्रसे गमनशील नौका और शीघ्रगति अश्वद्वारा ले आये थे ।

१५ अश्विद्वय, पिता तुम द्वारा समुद्रमें भेजे हुए और जलमें दूबते हुए भुज्युने, सरलतासे समुद्र-पार होकर, तुम्हारा आह्वान किया था । मनोवेग-सम्पन्न अभीष्ट-वर्षिद्वय, तुम लोग उत्कृष्ट-अश्व-युक्त रथार भुज्युको लाये थे ।

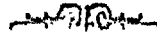
१६ अश्विद्वय, जिस समय तुम लोगोंने वृकके मुखसे वर्तिका नामकी चिड़ियाको छुड़ाया था, उस समय उसने तुम्हारा आह्वान किया था । तुम लोग जयशील रथ द्वारा जाहुषको लेकर पर्वत-प्रदेश चले गये थे । तुमने विष्वाङ्ग अश्वके पुत्रको विषयुक्त तीर द्वारा हत किया था ।

१७ जब कि, ऋज्राश्वने वृकीके लिये सौ भेदोंका वध किया था, तब उनके क्रुद्ध पिताने उन्हें अन्धा बना दिया था । इसके अनन्तर तुमने उन्हें नेत्र प्रदान किया था । देखनेके लिये तुम लोगोंने अन्धको चक्षु दिया था ।

१८ उन अन्धको चक्षु द्वारा छल देनेकी इच्छासे वृकीने तुम्हें आह्वान किया था—अश्विद्वय, अभीष्ट-वर्षिद्वय, नेत्रद्वय, ऋज्राश्वने, तल्ला जारकी तरह, अमितव्ययी होकर एक सौ एक भेदोंको खण्ड-खण्ड किया था ।

१९ अश्विद्वय, तुम्हारा रक्षा-कार्य छलका कारण है; हे स्तुति-पात्र, तुमने रोगियोंके अंगोंको ठीक किया है; इसलिये प्रभूत-बुद्धि-भालिनी घोषाने, तुम्हें रोग-निवृत्तिके लिये, बुलाया था । अभीष्ट-दातृद्वय, अपने रक्षण-कार्योंके साथ आओ ।

अयेनृं दम्ना स्तयं विपकामपिन्वनं शयत्रे अश्विना गाम् ।  
 युवं शनोभिर्विमदाय जायां स्यूतशुः पुरुमिवश्र योषाम् ॥ २० ॥  
 ययं वृष्टेणाश्रुना वपन्तेपं दुहन्ता मनुषाय दम्ना ।  
 अग्निं हन्युं वक्रुरेणा भमन्लोक ज्योतिश्चक्रथुरार्याय ॥ २१ ॥  
 अथर्वणायाश्चन र्ध्यांचेऽश्व्यं शिरः प्रन्त्यरयतम् ।  
 न धां मधु प्र वानृतायन्त्वाप्त्रं यद्भ्रावविकक्ष्यं वाम् ॥ २२ ॥  
 सदा कर्ता मुमतिमा चक्रे धां विश्वा धियो अश्विना प्रावतं मे ।  
 अग्ने रयिं नास्तया वृशन्तवपयसाचं श्रुत्यं रराथाम् ॥ २३ ॥  
 तिरस्यतः तमांश्चनता मनाणां पुदं नरा वधिमत्या अदत्तम् ।  
 विधा ० प्रयायमश्विना विंशकृतमुज्जीवस मेरयतं सुदानू ॥ २४ ॥  
 एतानि वामाश्विना र्ध्याणि प्र पृष्यांश्यायत्रोऽवोचन् ।  
 एता एतान्तो पृषणा युवभ्यां सुवीरास्तो विदथमा वदेम ॥ २५ ॥



२० दशहय, मधुं क्षणिके लिये तुमने दम्ना, प्रसव-वृत्त्या और दुग्ध-रहिता गौको दुग्ध-पूर्ण किया था। तुमने, अग्ने कर्म द्वारा अग्निव्य राजाधी सुमारीको विमद क्षणिकी स्त्री बनाया था।

२१ अग्निहय, तुमने विद्वान् मनु या आर्य मनुष्यके लिये हल द्वारा गेत जुतवाकर, यव वपन कराकर, अन्नके लिये वृष्टि-धर्पन करने तथा गजदारा एक्युता यव कर्मके उत्सर्गके लिये चिस्तीर्ण ज्योति प्रकाश की।

२२ अग्निहय, तुमने अथवा क्षणिके पुत्र र्ध्यांचि क्षणिके स्वरूपपर अन्वका मस्तक जोड़ दिया था। र्ध्यांचिने, भी अन्न-रक्षा कर रक्षा का इन्द्रके प्राप्त नपुषिषा तुमके दिव्यायी थी। दशहय, यही विधा तुम लोकोमें प्रवर्ग-विद्या-बहल्य हुआ थी। ०

२३ मेसावि-दम्ना, मैं यदा तुमराधी एषाके लिये प्रार्थना करता हूँ। तुम मेरे सारे कार्योंकी रक्षा करते हो। नास्तय-इव, हमें विद्या, अन्वका-र्योमेत और प्रमंमनीय धन दो।

२४ तुमगौके परे मेसा अग्निहय, तुमने पशिमहीको दिग्-पहरत नामका पुत्र दिया था। दानशील अग्निहय, तुमने हीम भावोंमें विमद प्रयाव क्षणिके जीवित किया था।

२५ अग्निहय, तुमहारे इन प्राचीन शार्गाके पुत्र-पुत्र गर्भ हैं। अग्नी-द्व-दशहय, इस भी तुमहारी स्तुति करके वीर पुत्र आर्क्षिके रूप होकर तुमको प्रदान करेंगे।

० नपुषिषा और र्ध्यांचि-विधाया विषयः ह्य-दोःशोपनिषत् में हैं।

११८ सूक्त । अश्विनीकुमारद्वय देवता हैं ।

आ वां रथो अश्विना श्येनपत्न्या सुमुलीकः स्ववां यात्वर्वाड् ।  
 यो मर्त्यस्य मनसो जवीयान्त्रिवन्धुरो वृषणा वातरंहाः ॥ १ ॥  
 त्रिवन्धुरेण त्रिवृता रथेन त्रिचक्रेण सुवृता यातमर्वाक् ।  
 पिन्वतं गा जिन्वतमर्घतो नो वर्धयतमश्विना वीरमस्मे ॥ २ ॥  
 प्रवधामना सुवृता रथेन दक्षाचिमं शृणुतं श्लोकमद्रेः ।  
 किमङ्ग वां प्रत्यवर्तितं गमिष्ठाहृषिप्राप्तो अश्विना पुराजाः ॥ ३ ॥  
 आ वां श्येनासो अश्विना वहन्तु रथे युक्तास आशवः पतङ्गाः ।  
 ये अप्तुरो दिव्यासो न गृध्रा अभि प्रयो नासत्या वहन्ति ॥ ४ ॥  
 आ वां रथं युवतिस्तिष्ठदत्र जुष्टी नरा दुहिता सूर्यस्य ।  
 परि वामश्वा वपुषः पतङ्गा वयो वहन्त्वरुपा अभीके ॥ ५ ॥  
 उद्धन्दनमैरतं दंसनाभिरुद्धेभं दक्षा वृषणा शचीभिः ।  
 निष्टौग्रथं पारयथः समुद्रात् पुनश्च्यवानं चक्रथुर्यु वानम् ॥ ६ ॥  
 युवमत्रयेऽवनीताय तसमूर्जमोमानमश्विनावधत्सम् ।  
 युवं कषवायापिरिताय चक्षुः प्रत्यधत्तं क्षुण्डुतिं जुजुपाणा ॥ ७ ॥

१ अश्विद्वय, श्येन पक्षीकी तरह शीघ्रगामी, सुलकर और धन युक्त तुम्हारा रथ हमारे सम्मुख आवे । अभीष्ट-वर्षकन्द्वय, तुम्हारा वह रथ मनुष्यके मनकी तरह वेगवान्, त्रिवन्धुर या त्रिवन्धनाधारभूत और वायु-वेगी है ।

२ अपने त्रिवन्धुर, त्रिकोण या तीनों लोकोंमें वर्त्तमान, त्रिचक्र और शोभन-गति रथपर हमारे सम्मुख आओ । अश्विद्वय, हमारी गायोंको दुग्धवती करो । हमारे घोड़ोंको प्रसन्न करो । हमारे वीर पुत्र आदिको वर्द्धित करो ।

३ दक्षद्वय, अपने शीघ्रगामी और शोभन-गति रथ द्वारा आकर सेवा-परायण स्तोताका यह मंत्र छनो । अश्विद्वय, क्या पहलेके विद्वान् यह नहीं बोले थे कि, तुम स्तोताओंकी दरिद्रता दूर करनेके लिये सर्वदा जाते हो ?

४ अश्विद्वय, रथमें योजित, शीघ्रगन्ता, उड्डलनेमें बहादुर और श्येन पक्षीकी तरह वेग-विशिष्ट तुम्हारे घोड़े तुम्हें लेकर आवें । नासत्यद्वय, जलकी तरह शीघ्रगति अथवा आकाशचारो गृध्रकी तरह शीघ्रगति वे घोड़े तुम्हें हव्यान्नेके सामने ले आ रहे हैं ।

५ नेतृद्वय, प्रसन्न होकर सूर्यकी युवती पुत्री तुम्हारे रथपर चढ़ी थी । तुम्हारे पुष्टाङ्ग, लम्फ-प्रदान-समर्थ, शीघ्रगामी और दीप्तमान् घोड़े तुम्हें हमारे घरकी ओर ले आवें ।

६ अपने कार्यद्वारा तुमने बन्दन ऋषिको बचाया था । कामवर्षिद्वय, अपने कार्य द्वारा तुमने रेम ऋषिको निकाला था । तुमने तुग्र-युत्र भुज्युको समुद्रसे पार कराया था । च्यवन ऋषिको फिर युवक बना दिया था ।

७ अश्विद्वय, तुमने रोके हुए अत्रिकी प्रदीप्त अग्नि-शिखाको निवारित किया था और उन्हें रसवान् अन्न प्रदान किया था । स्तुति ग्रहण करके तुमने अन्वकारमें प्रविष्ट कषव ऋषिको चतु प्रदान किया था ।

युवं धेनुं शयवे नाधितायापिन्वतमश्विना पूर्याय ।  
 अमुञ्चतं घर्तिकामंहसो निः प्रति जङ्घां विश्पलाया अश्वत्तम् ॥ १ ॥  
 युवं श्वेतं पेदव इन्द्रजुतमहिहनामश्विनादत्तमश्वम् ।  
 जोहत्रमर्यो अभिभूतिमुग्रं सहस्रसां वृषणं वीड्वङ्गम् ॥ ६ ॥  
 ता वां नरा स्ववसे सुजाता हवामहे अश्विना नाश्रमानाः ।  
 आ न उप वसुमता रथेन गिरो जुषाणा सुविताय यातम् ॥ १० ॥  
 आ श्येनस्य जवसा नूतनेनास्मे यातं नासत्या सजोषाः ।  
 हवे हि वामश्विना रातह्व्यः शश्वत्तमाया उपसो व्युष्टौ ॥ ११ ॥

११६ सूक्त । अश्विद्वय देवता हैं ।

आ वां रथं पुरुमायं मनोजुवं जीराश्वं यज्ञियं जीवसे हुवे ।  
 सहस्रकेतुं वनिनं शतद्वसुं श्रुष्टीवानं वरिगोधामभि प्रयः ॥ १ ॥  
 ऊर्ध्वा धीतिः प्रत्यस्य प्रयामन्यधायि शस्मन्त्समयन्त आ दिशः ।  
 स्वदामि श्रमं प्रति यन्त्युतय आ वामूर्जानी रथमश्विनारुहत् ॥ २ ॥

८ अश्विद्वय, प्रार्थना करनेपर प्राचीन शयु ऋषिकी दुग्धरहिता गौको दुग्धवती किया था । तुमने वृक-रूप पापसे घर्तिकारको छुड़ाया था । तुमने विश्पलाको एक जंघा बना दी थी ।

६ अश्विद्वय, तुमने पेदु राजाको श्वेतवर्ण घोड़ा दिया था । वह अश्व इन्द्र-प्रदत्त, शत्रु-हन्ता और सं-ग्राममें शब्द करनेवाला था । वह अरि-मर्दन, उग्र और सहस्र या अनेक प्रकारके धन देनेवाला था । वह अश्व सेवन-समर्थ और दृढाङ्ग था ।

१० नेष्टृद्वय, शोभन-जन्मा अश्विद्वय, हम धन-याचना करके रक्षाके लिये तुम्हें बुलाते हैं । हमारी स्तुति ग्रहण करके तुम लोग धनघाटी रथपर, हमें सुख देनेके लिये, हमारे सम्मुख आओ ।

११ नासत्यद्वय, समान-प्रीति-सम्यन्त होकर तथा श्येनपक्षी अथवा प्रदांसनीय गमनकारी अश्वके नूतन वेगकी तरह हमारे निकट आओ । अश्विद्वय, हृद्य लेकर हम नित्य उपाके उदय-कालमें तुम्हें बुलाते हैं ।

१ अश्विद्वय, जीवन धारणके लिये, अन्नके निमित्त, मैं तुम्हारे रथका आवाहन करता हूँ । वह रथ बहु-विधगति-विशिष्ट, मनकी तरह शीघ्रगामी, वेगवान् अथवा युक्त, यज्ञ-पात्र, सहस्रकेतु-युक्त, शतधन-युक्त, सुखकर और धनदाता है ।

२ उस रथके गमन करनेपर अश्विद्वयकी प्रार्थनामें हमारी बुद्धि ऊपर उठ जाती है । हमारी स्तुतियाँ अश्विद्वयको प्राप्त हुई हैं । मैं हृद्यको स्वादिष्ट करता हूँ । सहायक ऋत्विक् लोग आते हैं । अश्विद्वय, सूर्य-पुत्री उर्जानी तुम्हारे रथपर चढ़ी हैं ।

सं यन्मिथः पस्पृधानासो अग्मत शुभे मखा अमिता जायत्रो रणे ।  
युवोरह प्रवणे चेकिते रथो यदश्विना वहथः सूरिमा चरम् ॥ ३ ॥  
युवं भुज्युं भुरमाणं विभिर्गतं स्वयुक्तिभिर्निवहन्ता पितृभ्य आ ।  
यासिष्त्वं वर्तिवृषणा विजेन्यं दिवोदासाय महि चेति वामवः ॥ ४ ॥  
युवोरश्विना वपुषे युवायुजं रथं वाणी येमतुरस्य शर्धर्म ।  
आ वां पतित्वं सख्याय जग्मुषी योपावृणीत जेन्या युवां पती ॥ ५ ॥  
युवं रेभं परिपतेरुष्यथो हिमेन धर्मं परितप्तमत्रये ।  
युवं शयोरवसं पिप्यथुर्गवि प्र दीर्घेण चन्दनस्तार्यायुषा ॥ ६ ॥  
युवं चन्दनं निऋतं जरण्यया रथं न दत्त्वा करणा समिन्वथः ।  
क्षेत्रादा विप्रं जनथो विपन्यया प्र वामत्र शिथते दंसना भुवत् ॥ ७ ॥  
अगच्छतं कृपमाणं परावति पितुः स्वस्य त्यजत्ता निवाधितम् ।  
स्वर्वतीरित ऊतीयु चोरह चित्रा अभीके अमवन्नभिष्टयः ॥ ८ ॥

३ जिस समय यज्ञ-परायण असंख्य जय-शील मनुष्य संग्राममें धनके लिये परस्पर स्पर्दां करके एकत्र होते हैं, हे अश्विद्वय, उस समय तुम्हारा रथ पृथ्वीपर आता हुआ मालूम पड़ता है। उसी रथपर तुम लोग स्तोताके लिये श्रेष्ठ धन लाते हो।

४ अश्विद्वय, जो भुज्यु अपने घोड़ोंके द्वारा लाये जाकर समुद्रमें निमज्जित हुए थे, उन्हें तुम लोग स्वयं अपने संयोजित घोड़ोंके द्वारा लाकर उनके पिताके पास उनके दूरस्थ घरमें पहुँचा गये थे। दिवोदासको भी जो तुम लोगों ने महान् रक्षण प्रदान किया था, वह हम जानते हैं।

५ अश्विद्वय, तुम्हारे प्रशंसनीय दोनों घोड़े, तुम्हारे संयोजित रथको, उसकी सीमा—सूर्य—तक सारे देवोंके पहुँचे ही ले गये थे। कुमारी सूर्याने, इस प्रकार विजित होकर, मैत्री भावके कारण, “तुम मेरे पति हो”—कहकर तुम्हें पति बना लिया था।

६ तुमने रेभ ऋषिको, चारो ओरके उपद्रवोंसे, बचाया था। तुमने अत्रिके लिये, हिम द्वारा, अत्रिका निवारण किया था। तुमने शत्रुकी गौको दुग्ध दिया था। तुमने बन्दन ऋषिको दीर्घ आयु द्वारा वर्द्धित किया था।

७ जैसे पुराने रथको शिल्पी नया कर देता है; हे निपुण दत्तद्वय, उसी प्रकार तुमने भी वाद्धक्य-पीडित बन्दनको फिर युवां कर दिया था। गर्भस्थ वामदेवके तुम्हारी स्तुति करनेपर तुमने उन मेधावीको गर्भसे जन्म दियो था। तुम्हारा यह रक्षण-कार्य इस परिवर्षा-परायण यजमानके लिये परिणत हो।

८ भुज्युके पिताने उनको छोड़ दिया था। भुज्युने दूर देशमें पीडित होनेपर तुम्हारी कृपाके लिये प्रार्थना की। तुम उनके पास गये। फलतः तुम्हारी शोभनीय गति और विचित्र रक्षण-कार्य सबलोग संमुख पानेकी इच्छा करते हैं।

उत स्या वां मधुमन्मक्षिकारपन्मदे सोमस्यौशिजो हुवन्यति ।

युवं दधोन्नो मन आ विवासथोऽथा शिरः प्रतिवामश्च्यं वदत् ॥ ६ ॥

युवं पेदधे पुरुवारमश्विना स्पृधां श्वेतं तस्तारं दुवस्यथः ।

शयैरभिधुं पृतनासु दुष्टरं चर्कृत्यमिन्द्रमिव चर्षणीसहम् ॥ १० ॥



(२०) सूक्त । अश्विद्वय देवता हैं । गायत्री, करुण, काविराट्, उष्णिक्, कृति, विराट् आदि छन्द हैं ।

का राधद्वौत्राश्विना वां को वां जोष उभयोः । कथा विधात्यप्रचेताः ॥ १ ॥

विद्वांसाविद्वरः पृच्छेदविद्वानित्यापरो अचेताः । नु चिन्नु मर्ते अकौ ॥ २ ॥

ताविद्वासा हवामहे वां तानो विद्वांसा मन्म वोचेतमद्य । प्रार्चद्दयमानो युवाकुः ॥ ३ ॥

वि पृच्छामि पाक्या नदेवान्पद्कृतस्याद्दुतस्य दस्त्रा । पातं च सखसो युवं च रभ्यसो न ॥ ४ ॥

प्र या घोपे भृगवाणे न शोभे यथा वाचा यजति पञ्जियो वाम् । प्रैप्युर्न विद्वान् ॥ ५ ॥

श्रुतं गायत्रं तकवानस्याहं चिद्धि रिरेभाश्विना वाम् । आश्री शुभरूपती दन् ॥ ६ ॥

६ तुम मधु-युक्त हो । मधु-कामिनो उस मक्षिकाने तुम्हारी स्तुति की है । उष्णिक्पुत्र में कक्षीवान् तुम्हें सोमपानमें प्रसन्नता पानेके लिये पुन्याता हूँ । तुमने द्योवि ऋषिका मन तृप्त किया था । उनके अश्व-मस्तकने तुम्हें मधुविद्या प्रदान की थी ।

१० अश्विद्वय, तुमने पंडु राजाको बहुमन-वान्छित और शत्रु-पराजयी शुभ्रवर्ण अश्व दिया था । वह अश्व युद्ध-रत, दीप्तिमान् युद्धमें अपराजय, सारं कार्योंमें संयाज्य और इन्द्रकी तरह मनुष्य-विजयी है ।

१ अश्विद्वय, कौनसी स्तुति तुम्हें प्रसन्न कर सकती है ? तुम दोनोंको कौन परितुष्ट कर सकता है ? एक अज्ञानी जीव तुम्हारी कैसे सेवा कर सकता है ?

२ अनभिज्ञ प्राणी हमी प्रकार उन दोनों सर्वज्ञोंकी परिचयके उपायभूत मार्गकी जिज्ञासा करता है । अश्विनी-कुमारोंके सिवा सभी अज्ञ हैं । शत्रु द्वारा आक्रमण-हित अश्विद्वय शीघ्र ही मनुष्यपर अनुग्रह करते हैं ।

३ सर्वज्ञद्वय, हम तुम्हारा आह्वान करते हैं । तुम अभिज्ञ हो, हमें मननीय स्तोत्र बताओ । वही मैं तुम्हारी कामना करके, हव्य प्रदान करते हुए, स्तुति करता हूँ ।

४ मैं तुम्हें ही जिज्ञासा करता हूँ ; अपनी पक्ष बुद्धिसे जिज्ञासा नहीं करता । दक्षद्वय, "वषट्" शब्दके साथ अग्निमें प्रयत्न, अद्भुत और शुद्धिकर सोम-रस पान करो । हमें प्रौढ़ बल प्रदान करो ।

५ तुम्हारी जो स्तुति घोषापुत्र सहास्ति और भृगु द्वारा उच्चारित होकर स्योमित हुई थी, उसी स्तुति द्वारा पञ्चवर्णीय ऋषि में कक्षीवान् तुम्हारी अर्चना करता हूँ । इसलिये यह स्तुतिज मैं अन्न-कामनामें सफल-यत्न करूँ ।

६ स्थलद्वस्ति वा गति-रहित ऋषि अर्थात् अन्ध ऋजाश्वकी स्तुति छनो । शोमनीय कर्मके प्रतिपालक, उसने मेरी तरह स्तुति करके कञ्चुद्वय प्राप्त किया था । फलतः मेरा मनोरथ भी पूर्ण करो ।



युवं ह्यास्तं महोरन्युवं वा यन्निरततंसतम् ।

ता नो वसू सुगोपा स्यातं पातं नो वृकादघायोः ॥ ७ ॥

मा कस्मै धातमभ्यमित्रिणे नो माकुत्रा नो गृहेभ्यो धेनवो गुः । स्तनाभुजां अशिष्वीः ॥ ८ ॥

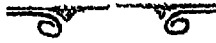
दुहीयन्मित्रधितये युचाकु राये च नो मिमीतम् वाजवत्यै ।

इपे च नो मिमीतं धेनुमत्यै ॥ ९ ॥

अश्विनोरसनं रथमनश्वं वाजिनीघतोः । तेनाहं भूरि चाकन ॥ १० ॥

अयं समह मा तनूह्याते जनां अनु । सोमपेयं सुखो रथः ॥ ११ ॥

अथ स्वप्नस्य निर्विदेऽभुञ्जतश्च रेवतः । उभा ता वसि नःशतः ॥ १२ ॥



१८ अनुवाक् । १२१ सूक्त । इन्द्र देवता है । त्रिष्टुप् छन्द है ।

कदित्था नः पात्रं देवयतां श्रवद्विरो अङ्गिरसां तुरययन् ।

प्र यदानद्विषि आहर्म्यस्योरु कंसते अध्वरे यजत्रः ॥ १ ॥

७ तुमने महान् धन दान किया है तथा उसे फिर छुप्त कर डाला है । गृह-दातृद्वय, तुम हमारे रक्षक बनो । पापी वृक वा तस्करसे हमारी रक्षा करो ।

८ किसी शत्रुके सामने हमें नहीं अर्पण करना । हमारे घरसे दुग्धवती गायें, यज्ञद्वेषी अलग होकर, किसी अगम स्थानको न चली जायँ ।

९ जो तुम्हें उद्देश्य कर स्तुति करता है, वह मित्रोंकी रक्षाके लिये धन पाता है । हमें अन्नयुक्त धन प्रदान करो तथा धेनु-युक्त अन्न दो ।

१० मैंने अन्नदाता अश्विद्वयका अश्व-रहित, परन्तु गमन-समर्थ, रथ प्राप्त किया है । उसके द्वारा मैं अनेक प्रकारके काम प्राप्त करनेकी इच्छा करता हूँ ।

११ धन-पूर्ण रथ, मैं सामने ही हूँ । मुझे समृद्ध करो । उस सबकर रथको अश्विद्वय, स्तोताओंके सोम-पान स्थानपर ले जाते हैं ।

१२ मैं प्रातःकाल स्वप्नसे घृणा करता हूँ और जो धनी दूसरोंका प्रतिपालन नहीं करता, उसे भी घृणित समझता हूँ । दोनों शीघ्र नाम प्राप्त होते हैं ।

१ मनुष्योंके पालन-कर्ता और गो-रूप धनके दाता इन्द्र कब देवाभिलाषीवाङ्गिरा लो गोंकी स्तुति सुनेगे ? जिस समय वह गृहपति यजमानके ऋत्विकोंको सामने देखते हैं, उस समय वह यज्ञमें यजनीय होकर प्रभूत उत्साहसे पूर्ण होते हैं ।

स्तम्भोद्घां स धरुणं प्रुपायद्वभुर्वाजाय द्रविणं नरो गोः ।  
 अनु स्वजां महिपश्चक्षत त्रां मेनामश्वस्य परि मातरं गोः ॥ २ ॥  
 नक्षत्रमरुणीः पूर्व्यं राट् तुरो विशामङ्गिरसामनु धून ।  
 तक्षत्रं नियुतं तस्मिन्मृग्यां चतुष्पदे नर्याय द्विपादे ॥ ३ ॥  
 अस्य मदे स्वयं दा स्रतायापां वृतमुस्त्रियाणामनीकम् ।  
 यद् प्रसर्गे त्रिकशुम्निवर्तदप द्रुहो मानुपस्य दुरो वः ॥ ४ ॥  
 तुभ्यं पयो यत् पितराशनीतां राधः सुरेतस्तुरणे भुरग्यु ।  
 शुनि यन्ने रेवण आयजन्त सवर्दघायाः पय उस्त्रियायाः ॥ ५ ॥  
 अथ प्र जजे तरणिर्ममत्तु प्र रोच्यस्या उपसो न सूरः ।  
 इन्दुर्येभिराप्ट स्वेदुहच्यैः स्रुवेण सिञ्चज्जराणामि धाम ॥ ६ ॥  
 स्त्रिभ्रमा यद्गन्धितिरपस्यात् सूरौ अध्वरे परि रोधन्ता गोः ।  
 यद् प्रभासि कृत्वा अनु धूनविशे पश्वपे तुराय ॥ ७ ॥  
 अप्टा महो दिव आदो हरी इह द्युम्नासाहमभि योधान उत्तसम् ।  
 हरि यत्ते मन्दिनं धुक्षन्वृधे गोरभसमद्रिभिर्वाताप्यम् ॥ ८ ॥

२. उन्होंने निर-रूपते आकाशको धारण किया है। वह अक्षरों द्वारा अपहत गायके नेता हैं। वह विस्तोर्गप्रभासे तु-ह होकर सारे प्राणियोंके द्वारा सेवनीय हैं और स्वार्थके लिये जीवन-वारक वृष्टि-जल प्रेरित करते हैं। महान् सूर्यरूप इन्द्र, अशतो पुत्री उषाके अन्तर्गत उदित होते हैं। उन्होंने अग्निकी गोको गौका माता किया था अथवा घोड़ीसे गाय उत्पन्न की थी।

३. वह अण्यवर्ण उषाको रंजित करके हमारा उच्चारित पुरातन मंत्र सुने। वह प्रति दिन अङ्गिरा गोत्रवालोंको अन्न देते हैं। उन्होंने हननशील यज्ञ बनाया है। वह मनुष्यों, चतुष्पदों और द्विपदोंके हितके लिये, इन्द्ररूपसे, आकाश धारण करते हैं।

४. इस सोमपानसे ऋष्ट होकर तुमने स्तुति-पात्र और पणि द्वारा छिपायी हुई गौओंको यज्ञार्थ दान किया था। जिस समय त्रिलोक-अंष्ट्र इन्द्र युद्धमें रत होते हैं, उस समय वह मनुष्योंके छेश-दाता पणि अक्षरका द्वार, गौओंके निष्कलनेके लिये, खोल देते हैं।

५. क्षिप्रकारी तुम्हारे लिये जगत्के पालक पिता धौ और माता पृथिवी समृद्धिवाली और उत्पादन-शक्ति-युक्त दुग्ध लागे थे। जिस समय उनने दुग्धवती गौओंका विशुद्ध धन-युक्त दुग्ध तुम्हारे सामने रखा था, उस समय तुमने पणिका द्वार खोल दिया था।

६. इस समय इन्द्र प्रकट हुए हैं। वह उषाके समीपमें विद्यमान सूर्यकी किसी तरह दीप्तिमान् हुए हैं। यह शत्रु-विजयो इन्द्र हमें मन या प्रसन्न करें। हम भी इच्छा अर्पण करके, स्तुति-भाजन सोम-रसको, पात्र द्वारा, यज्ञ-स्थानमें सिञ्चित करके, दसी सोम-रसका पान करें।

७. जिस समय सूर्य-किरण द्वारा प्रकाशित मेघमाला जल-वर्षण करनेको तैयार होती है, उस समय प्रेरक इन्द्र, यज्ञके लिये, वृष्टिके आवरणका निवारण करते हैं। इन्द्र, जिस समय तुम सूर्य-रूपसे कर्मके दिनमें किरण दान करते हो, उस समय गादीवान्, पशु-रक्षक और क्षिप्रगामी अपने-अपने कार्यमें सिद्धि प्राप्त करते हैं।

८. जिस समय श्रुतिवक लोग तुम्हारे वर्द्धनके लिये मनोहर, प्रसन्नकर, बलदायक और तुम्हारे उपभोग्य सोमसे, प्रस्तर द्वारा, रस निकालते हैं, उस समय दर्प-दायक सोम-रसके उपभोक्ता अपने हरि नामके दोनों घोड़ोंको, दक्ष-यज्ञमें, सोमपान कराओ। तुम युद्ध-निपुण हो। हमारे घनापहारी शत्रुका दमन करो।

त्वसायसं प्रति वर्तयो गोदिवो अश्मानमुपनीतमृग्या ।  
 कुत्साय यत्र पुरुहूत वन्वन्धुष्णामनन्तैः परियासि वधैः ॥ ६ ॥  
 पुरा यत् सूस्वतमसो अपीतिस्तमद्रिचः फलिगं हेतिमस्य ।  
 शुष्णस्य चित् परिहितं यदोजो दिघस्परि सुग्रथितं तदादः ॥ १० ॥  
 अन्तु त्वा मही पाजसी अचक्रे चावाक्षामा मदतामिन्द्र कर्मन् ।  
 त्वं वृत्रमाशयानं सिरासु मही वज्रेण सिष्वपो वराहुम् ॥ ११ ॥  
 त्वमिन्द्र नयो यौ अवो नृन्तिष्ठा वातस्य सुयुजो वहिष्ठात् ।  
 यं ते काव्य उशना मन्दिनं दादवृत्रहणं पार्यं ततश्च वज्रम् ॥ १२ ॥  
 त्वे सरो हरितो रामयो नृन् भरश्चक्रमेतशो नायमिन्द्र ।  
 प्रास्य पारं नवतिं नाव्यानामपि कर्तमवर्तयोऽयज्यन् ॥ १३ ॥  
 त्वे नो अस्या इन्द्र दुर्हणायाः पाहि वज्रिवो दुरितादभीके ।  
 प्रजो वाजान्शयो अश्ववृध्यानिषे यन्धि श्रवसे स्रुतायै ॥ १४ ॥  
 मा सां ते अस्मत् सुमतिर्वि दसद्वाज प्रमहः समिषो वरन्त ।  
 आ नो भज मघवद्गोष्वर्यो मंहिष्ठास्ते सधमादः रयाम् ॥ १५ ॥



१० जिस समय सूर्य अन्धकारके साथ संग्रामसे युक्त हुए, उस समय हे वज्रधारिन्, तुमने उनके मेघ-रूप शत्रुका  
 विनाश कर दिया। उस शुष्णका जो बल सूर्यको आच्छादित किये हुए था और सूर्यके ऊपर ग्रथित हुआ था, उसे तुमने

मग्न कर दिया था।

११ इन्द्र, महान् बली और सर्व-व्यापक द्यौ और पृथिवीने वृत्र वध-कार्यमें तुम्हें उत्साहित किया था। तुमने  
 उस सर्वत्र व्यापक और श्रेष्ठाहार-युक्त वृत्रको महान् वज्रसे, प्रवहमान जलमें, फेंक दिया था।

१२ इन्द्र, तुम मानव-बन्धु हो। तुम जिन अश्वोंकी रक्षा करते हो, उन वायु-तुल्य, शोभन और वाहक अश्वोंपर  
 चढ़ो। कविके पुत्र उशाने जो हर्षदायक वज्र तुम्हें दिया था, तुमने उसी वृत्र-ध्वंसक और शत्रु-नाशक वज्रको तीक्ष्ण किया है।

१३ सूर्य-रूप इन्द्र, हरि नामक अश्वोंको रोको। इन्द्रका एतथा नामका घोड़ा रथका चक्रा खींचता है। तुम  
 नौका द्वारा नव्ये-नदियोंके पार पहुँच कर वहाँ यज्ञ-विहीन अश्वों या अनाथोंसे कर्तव्य कर्म कराओ।

१४ वज्रधर इन्द्र, तुम हमें इस दुर्दान्त दुरिद्रतासे बचाओ; समीप-वर्ती संग्राममें हमें पापसे बचाओ। उन्नत-  
 कीर्ति और सत्यके लिये हमें रथ, अश्व, धन आदि दान करो।

१५ धनके लिये पूजनीय इन्द्र, हमारे पाससे अपना अनुग्रह नहीं हटाना। हमें अन्न-पुष्टि देने में मघवन्, तुम  
 धनपति हो। हमें गौ दोगे। हम तुम्हारी पूजामें तत्पर हैं। हम पुत्र, पौत्र आदिके साथ धन प्राप्त करेंगे।

अष्टम अध्याय समाप्तः

प्रथम अष्टक समाप्त

द्वितीय अष्टक छप रहा है  
“सानुवाद ऋग्वेद-संहिता”

ऐसा ग्रन्थ आपने नहीं देखा होगा

अत्यन्त सरल हिन्दीमें सम्पूर्ण ऋग्वेदका सरल-सुन्दर अनुवाद  
प्रत्येक पृष्ठमें मार्मिक सूचनाएँ  
मूलके साथ-साथ शुद्ध हिन्दीमें मनोहारिणी टीका  
और विस्तृत गवेषणापूर्ण टिप्पनियाँ

हिन्दुजातिकी संस्कृति और सभ्यताका अध्ययन कीजिये

वेदोंकी ज्ञान-मङ्गलमें अवगाहन कर पवित्र होनेका ऐसा सुयोग फिर न मिलेगा।  
आठ धाने पेशगी भेजकर “वैदिकपुस्तक-माला” के तुरत स्थायी ग्राहक बन जाइये  
स्थायी ग्राहकोंसे डाकखर्च नहीं लिया जायगा

इस कार्यके लिये संसार भरकी भाषाओंमें ऋग्वेदके सम्बन्धमें जितनी पुस्तकें, निबन्ध-प्रबन्ध और  
आलोचना-ग्रन्थ छपे हैं, उन सबका संग्रह कर लिया गया है। वेदोंके अनेक अधिकारी  
विद्वान् और सिद्धहस्त हिन्दी-लेखक इस विशाल अनुवाद-यज्ञमें लगे हुए हैं।

५) ६० वार्षिक मूल्य भेजकर “गंगा” का ग्राहक बननेवालोंको वेदकी  
सारी पुस्तकें पौन मूल्यमें मिलेंगी।

**अर्थ सनातनधर्मानुकूल रहेगा**

—“गंगा” कार्यालय, कृष्णगढ़, सुलतानगञ्ज, भागलपुर

## क्यों "गंगा" का भक्त बनियेगा ?

इसलिये कि, यह—

जानदार और शानदार पत्रिका है

इसलिये कि, यह—

"वेदांक" जैसे विशेषांक निकालती है

इसलिये कि, यह—

आश्चर्यमयी उन्नति करती चली जा रही है; क्योंकि, इसमें एक लाख रूपयोंको पूजा लगायी गयी है।

इसलिये कि, यह—

बिहारकी एकमात्र पत्रिका है

इसलिये कि, यह—

संसार भरमें विख्यात वेदज्ञोंके अमूल्य लेखोंसे अलंकृत "वेदांक" और दिग्गज पुरातत्त्वज्ञोंके गवेषणा-पूर्ण निबन्धोंसे विभूषित "पुरातत्त्वांक" जैसे दो अनूठे विशेषांक एक ही वर्षमें दे रही है। प्रत्येकका मूल्य २।५० है; किन्तु जो सज्जन "गंगा" का ५।०० वार्षिक मूल्य देकर ग्राहक बनेंगे, उन्हें ये दोनों अंक मुफ्त मिलेंगे।

स्टेशनोंमें हीलरके बुकस्टालोंपर भी "गङ्गा" मिलती है

"पुरातत्त्वांक"के सम्पादक,

आचार्य नरेन्द्रदेव एम० ए०; त्रिपिटकाचार्य राहुल सांकृत्यायन

(काशीविद्यापीठ, बनारस)

(विद्यालंकार कालेज, लंका)

—"गंगा" कार्यालय, कृष्णगढ़, सुलतानगंज, भागलपुर

मुद्रक, सुन्धी महेंद्रनारायण, मिथिला प्रेस, सुलतानगंज।

